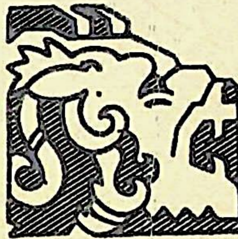
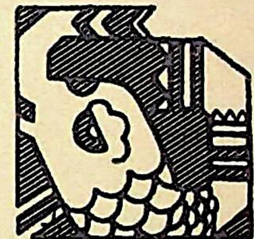
बाबूलाल ठाकुर ज्योतिषाचार्य

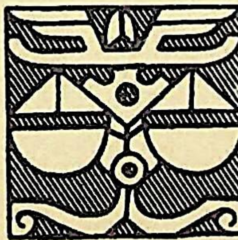
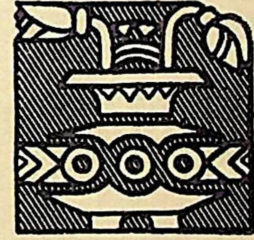
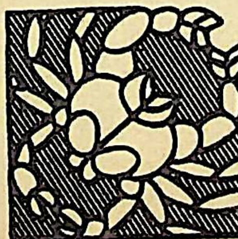
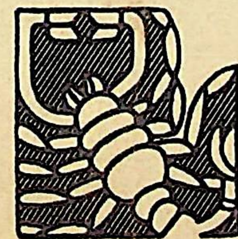
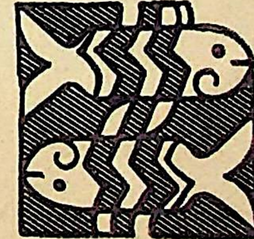
सचित्र ज्योतिष शिक्षा

(प्रारम्भिक ज्ञान खण्ड)





सचित्र ज्योतिष-शिक्षा

प्रारम्भिक ज्ञान खण्ड

रचयिता
बी० एल० ठाकुर, ज्योतिषाचार्य

मोतीलाल बनारसीदास
दिल्ली वाराणसी पटना बंगलौर मद्रास

द्वितीय संशोधित एवं परिवर्धित संस्करण: वाराणसी, १९८२
पुनर्मुद्रण : दिल्ली, १९८९, १९९४

बंगलो रोड, जवाहरनगर, दिल्ली ११० ००७
१२० रॉयपेट्टा हाई रोड, मैलापुर, मद्रास ६०० ००४
१६ सेन्ट मार्क्स रोड, बंगलौर ५६० ००१
अशोक राजपथ, पटना ८०० ००४
चौक, वाराणसी २२१ ००१

मूल्य: रू० ६५

नरेन्द्रप्रकाश जैन, मोतीलाल बनारसीदास, बंगलो रोड,
दिल्ली ११० ००७ द्वारा प्रकाशित तथा जैनेन्द्रप्रकाश जैन, श्री जैनेन्द्र प्रेस,
ए-४५ नारायणा, फेज-१, नई दिल्ली ११० ०२८ द्वारा मुद्रित

समर्पण

पुण्य प्रताप पुंज से जिनके,
मैंने ज्योतिष शास्त्र पढ़ा ।।
जिनके उत्साहित करने से,
इसमें मेरा ज्ञान बढ़ा ।।१।।
परम पूज्यवर पिता आपकी,
पुण्य स्मृति ये सञ्चित है ।।
सेवा में लघु सेवक की यह,
सादर भेंट समर्पित है ।।२।।

प्राक्कथन

वैदिक काल से भारतीय विज्ञानों में ज्योतिष शास्त्र का एक प्रमुख स्थान रहा है। विना दूर्बीन के गणित और फलित ज्योतिष दोनों ही में, प्राचीन काल में जितना विशद विवेचन ज्योतिष के सम्वन्ध में भारतवर्ष में हुआ है, शायद ही किसी अन्य राष्ट्र में हुआ हो। जब से हिन्दी भारत की राष्ट्र-भाषा घोषित की गई है, तब से आधुनिक भौतिक विज्ञान के अनेकानेक ग्रन्थ हिन्दी मे लिखे जा रहे हैं। इस कार्य में अनेक कठिनाइयाँ सम्मुख आती हैं। पारिभाषिक शब्द ही हजारों की संख्या में गढ़ने पड़ते हैं। परन्तु यह दुःख की बात है कि जहाँ पारिभाषिक शब्दों का कोई सवाल नहीं, जो विद्याएँ हमारी पैतृक सम्पत्ति हैं, उनकी भी सरल सुन्दर और विस्तृत व्याख्याएँ हिन्दी में आज भी दुष्प्राप्य हैं।

हर्ष का विषय है कि ज्योतिष शास्त्र सम्वन्धी इस कमी को पूरा करने में 'सिंहसदन' नरसिंहपुर के श्री बी० एल० ठाकुर सलग्न हैं। उन्होंने अपने "सचित्र ज्योतिष शास्त्र" का प्रथम भाग पूर्ण कर लिया है। इस शास्त्र में स्वयं मुझे रुचि है।

यह सुन्दर ग्रन्थ पढ़ कर मुझे संतोष हुआ। पुस्तक में यथा स्थान अनेक चित्र दिये हैं और यद्यपि ठाकुर साहब ने अनेक भागों का काफी विस्तार से समझाया है, भाषा सरल है और ठाकुर साहब ने इस बात को सदा ध्यान में रक्खा है कि पुस्तक उनके लिये लिखी जा रही है जिन्होंने पहिले कभी भारतीय ज्योतिष शास्त्र में कोई शिक्षा प्राप्त नहीं की।

आशा है, ठाकुर साहब का यह स्तुत्य प्रयत्न सफल होगा और हिन्दी ससार उनके ज्योतिष शास्त्र को पूर्णतया अपनावेगा।

नागपुर
दिनांक २२ फरवरी १९५४

कुञ्जीलाल दुबे
उपकुलपति
नागपुर विश्वविद्यालय

लेफ्ट० कर्नल पंडित के० एल० दुबे
बी० ए०, एल-एल० बी०, एम० एल० ए०
वाइस चान्सलर नागपुर यूनिवरसिटी
व स्पीकर मध्य प्रदेश लेजिसलेटिव असेम्वली
नागपुर म० प्र०

उद्देश्य

बहुत से ज्योतिष ग्रन्थों के होने पर भी इस पुस्तक के लिखने की क्यों आवश्यकता हुई यहाँ संक्षेप में यह बता देना अनुचित न होगा।

आज कल पाश्चात्य देशों में भी फलित में विश्वास बढ़ने लगा है। कई पुरुष स्वयं भी अनुभव कर फलित पर विश्वास करने लगे हैं, इस कारण इस शास्त्र के अध्ययन की ओर लोगों की रुचि बढ़ रही है, परन्तु ज्योतिष के अधिकतर ग्रन्थ संस्कृत में ही हैं और वे ग्रन्थ विद्वानों के समझने योग्य ही लिखे गये हैं, अर्थात् वे ही उनको समझ सकते हैं जो उस विषय में कुछ जानते हों। परन्तु जो उस विषय में कुछ भी न जानते हों उनके समझने में वे पुस्तकें भाषा टीका में होने पर भी समझ में नहीं आ सकतीं। कारण कि नवीन विद्यार्थी को उन पुस्तकों के समझने में बड़ी कठिनाई होती है। संस्कृत की भी उतनी योग्यता प्राप्त करने का समय या साधन का अभाव भी बहुत खटकता है।

इस कारण राष्ट्रभाषा हिन्दी में एक ऐसी पुस्तक की आवश्यकता है कि जिससे कोई विद्यार्थी यदि ज्योतिष का एक अक्षर भी न जानता हो तो बिना किसी दूसरी पुस्तक का सहारा लिये घर बैठे स्वयं ज्योतिष का अध्ययन कर सके।

मैंने भी ज्योतिष शास्त्र के अध्ययन में बहुत वर्ष व्यतीत किये हैं और कई पण्डितों से मिल कर इसका अध्ययन करते समय आवश्यक संक्षिप्त नोट भी तैयार करता गया जिससे उस विषय की विस्मृति न हो।

कई मित्रों ने जिनको इस विषय के अध्ययन की तीव्र इच्छा हुई ये नोट देख कर प्रसन्न हुए और जन साधारण के लाभार्थ प्रकाशित करा देने की सम्मति दी। इस कारण इस पुस्तक के प्रकाशित करने की आवश्यकता हुई।

यह पुस्तक इस बात को ध्यान में रखकर लिखी गई है कि पाठक इस विषय से अनभिज्ञ हैं, इसी कारण किसी विषय को समझाते समय नवीन विद्यार्थी को अध्ययन करते समय कठिनाई न हो, कहीं-कहीं एक बात की पुनरुक्ति भी करनी पड़ी है और इस बात का भी ध्यान रखा गया है कि कोई कठिन शब्द न आवे जिससे भावार्थ समझने में कठिनाई जान पड़े। जहाँ आवश्यक हुआ है वहाँ कठिन शब्दों को समझा दिया गया है। पारिभाषिक शब्द तो सर्वत्र ही समझा दिये गये हैं। इसमें स्थान स्थान पर विशेष शब्दों के अंग्रेजी में भी अर्थ दे दिये गये हैं जिससे अंग्रेजी जानने वालों को इसके अतिरिक्त भी इतर अंग्रेजी के ज्योतिष ग्रंथों को भी समझने की योग्यता प्राप्त हो जायगी। तात्पर्य यह है कि शास्त्ररूपी सागर को पार करने के लिये पाठक इस पुस्तक को नौका रूप में पायेंगे।

केवल इस ज्ञान खण्ड के ही पढ़ लेने से कोई पूरा ज्योतिषी नहीं वन सकता, किन्तु यह खण्ड ज्योतिष शास्त्र के ज्ञान की वृद्धि में सहायक होगा, एवम् ज्योतिष शास्त्र में प्रवेश करने के लिये सच्चे मार्ग दर्शक का काम देगा।

नवीन विद्यार्थी को क्रमानुसार इसके सम्पूर्ण खण्डों का अध्ययन करना होगा। ज्ञान खण्ड अध्ययन कर लेने से ज्योतिष सम्बन्धी बहुत सी महत्त्वपूर्ण मुख्य मुख्य वातें समझ में आने लगेंगी। इसमे ज्योतिषियों के लाभार्थ वहुत से उपयोगी चुटकुले भी दिये हैं। जैसे किसी का जन्म सम्वत् मास पक्ष दिन समय आदि न ज्ञात हो तो केवल कुंडली चक्र को देख कर ही ये सब बातें किस प्रकार वताई जा सकती हैं या बिना पंचांग के तिथि नक्षत्र करण वार सूर्य चन्द्र स्पष्ट आदि किस प्रकार वताये जा सकते हैं समझाया है। इनके अतिरिक्त तारीख से तिथि आदि कैसे जानना भी बताया है और अनन्त वर्षों की जन्त्री देकर जन्त्री बनाने की युक्ति भी वताई गई है। इस ज्ञान खण्ड के अध्ययन करने के उपरान्त आगे अध्ययन करना चाहिए। इस ज्ञान खण्ड के अध्ययन कर लेने से किसी की टिप्पणी (संक्षिप्त जन्मपत्रिका) वना लेना आ जाता है। अन्त में फलित सम्वन्धी मुख्य मुख्य बातें संक्षेप में बताई गई हैं जिनको जानना आवश्यक है और जिनके जान लेने पर फलित समझने की योग्यता बढ़ेगी। इसके उपरान्त ज्यों ज्यों आप आगे के और भी खण्ड अध्ययन करते जायेंगे योग्यता बढ़ती जायगी और पूर्ण अध्ययन कर लेने पर आप ज्योतिष के अच्छे जानकार अवश्य वन जायेंगे।

गणित खण्ड के अध्ययन से आप किसी की भी पूरी जन्मपत्री वना सकेंगे, और जन्मपत्र बनाने के सम्बन्ध की सम्पूर्ण बातें आप को आ जावेगी। इसमें समय ज्ञान, इष्ट साधन, ग्रह साधन, लग्न साधन, द्वादश भाव साधन, वर्ग साधन, अष्टक वर्ग साधन, ग्रह षड्बल साधन, भाव षड्बल साधन, आयु साधन, दशा साधन, अहर्गण साधन, अहर्गण से ग्रह साधन आदि अनेक प्रकार का गणित उदाहरण देकर सरलता पूर्वक समझाया है, जिससे नवीन विद्यार्थी को समझने में अड़चन न हो। इसके उत्तरार्द्ध में प्रत्येक गणित की क्रिया करने की रीति भी समझाई गई है।

फलित खण्ड— फलित सम्वन्धी शेष सब बातें रहेंगी और महान् पुरुषों की कुंडली से उदाहरण देकर अभ्यास कराया जायगा जिससे फल कथन करने की योग्यता आ जायगी। यह योग्य विद्वानों के अध्यक्षता में तैयार होगा जिन्होने सारा जीवन इसे अध्ययन कर व इसमें अनुभव प्राप्त कर फलादेश कथन में कीर्ति प्राप्त की है।

वर्षफल खण्ड—वर्षफल बनाने का पूरा गणित उदाहरण देकर समझाया जायगा और वर्ष भर का सम्पूर्ण फल रहेगा जिससे आप अपना या किसी का भी वर्षफल बना सकेंगे।

प्रश्न खण्ड—प्रश्न ज्योतिष सम्बन्धी सम्पूर्ण बातें रहेंगी और किसी प्रश्न का उत्तर देने का अभ्यास उदाहरण देकर कराया जायगा।

मुहूर्त खण्ड—मुहूर्त सम्बन्धी सम्पूर्ण बाते इसमें रहेंगी।

संहिता खण्ड—ज्योतिष की शेष बातें मेदनीसंहिता आदि सम्बन्धी बातें इसमें रहेंगी। इसमें वर्षा का विचार देश के फल का विचार वस्तु की मंहगाई आदि का विचार इत्यादि बातें रहेंगी।

यह पुस्तक ज्योतिष के नवीन विद्यार्थी को लाभ पहुँचाने की दृष्टि से लिखी गई है। इस कारण यदि इसके प्रकाशन से जनता का कुछ भी लाभ हुआ तो मैं अपना उद्देश्य सफल समझूंगा।

पाठक यदि इस ज्ञान खण्ड को अपना कर यदि मेरा उत्साह बढ़ायेंगे तो इसके इतर खण्डों के प्रकाशन में शीघ्रता होगी।

अंत में विशेष प्रार्थना है कि भूल होना मानुषीय है, यदि किसी विषय को समझाने में कोई त्रुटि हुई हो तो या अन्य प्रकार की कोई भूल हुई हो तो सज्जनों से आशा है कि क्षमा प्रदान कर भूल की सूचना देंगे या अपनी कठिनाई सूचित करेंगे तो मैं अति अनुगृहीत होऊँगा और भविष्य में भूल सुधार दी जायेगी और कठिनाई दूर कर आवश्यक बातों का समावेश कर दिया जायगा।

इस खण्ड के लिखने में श्री उमाप्रसाद जी पोतदार हस्तरेखा शास्त्री और ज्योतिषाचार्य और मेरे भाई नर्मदा प्रसाद ठाकुर (जो हस्तरेखा और ज्योतिष शास्त्र में दक्ष हैं) ने उचित परामर्श देकर बहुत सहायता की है। इसलिये उनको धन्यवाद है।

भवदीय

बी० एल० ठाकुर ज्योतिषाचार्य
सिंह सदन
नरसिंहपुर म० प्र०

नरसिंहपुर
दिनांक १८-७-१९४५

ज्योतिष शिक्षा

(ज्ञान खण्ड)

अध्यायानुसार विषय-सूची

चित्रों की सूची

ॐ

ज्योतिष-शिक्षा

[प्रारम्भिक ज्ञानखण्ड]

बुद्धि विनायक विघ्न हर, बिनवौं बारम्वार।
विनय करूं वागीश की, विमल बुद्धि दातार ॥ १ ॥
जय महेश जिन तन लसै, वर नक्षत्र की माल ।
जाकी आज्ञा से भ्रमत, ग्रह आदिक अरु काल ॥ २ ॥
ग्रह प्रभाव से प्रगट हो, पूर्व जन्म का कर्म ।
कष्ट कटैं प्रभु ध्यान से, अरु प्रगटैं शुभ धर्म ॥ ३ ॥
धरूं ध्यान कल्यान हित, किरपा करहु कृपाल ।
शीघ्र पूर्ण हो ग्रन्थ यह, दो शक्ती तत्काल ॥ ४ ॥

अध्याय १

ज्योतिष शास्त्र के भेद

ज्योतिष शास्त्र का अध्ययन करने से पूर्व यह जान लेना आवश्यक है कि ज्योतिष शास्त्र के कितने भेद हैं। इसके मुख्य दो भेद हैं—

(१) गणित ज्योतिष Astra-Nomy (एस्ट्रा नमी) = जिससे पंचाङ्ग आदि बनाये जाते हैं।

(२) फलित ज्योतिष Astra-logy (एस्ट्रा लजी)=जिससे ग्रहों के फल का विचार होता है।

इनके भी कई भेद हो गये हैं जो नीचे समझाये जाते हैं:—

१ गणित ज्योतिष—इससे ग्रहों का स्वरूप अवस्था गति आदि का निश्चय किया जाता है। इसके तीन भेद हैं—

(१) सिद्धान्त—जिसमें कल्प (सृष्टि के आदि) से ग्रह आदि स्पष्ट करने के लिए गणित करने की रीति दी है।

(२) तन्त्र—जिसमें युग (वर्तमान कलियुग) से गणित करने की रीति दी है।

(३) करण—जिसमें इष्ट शाका से गणित करने की रीति दी है।

गणित ज्योतिष के अन्तर्गत वह गणित भी है जिसमें जोडना, घटाना, गुणा, भाग वर्गमूल आदि निकालना तथा भूमि, आकाश आदि के नापने की विधि बतलाई गई है। इसी गणित द्वारा ग्रहों की स्थिति आदि निकाली जाती है।

२ फलित ज्योतिष (नजूम)—ग्रहों की स्थिति पर से शुभाशुभ फलों का विचार इससे होता है। इसके भेद इस प्रकार हैं—

(१) होरा अर्थात् जातक—आधान कुंडली से दुःख सुख का विचार।

(२) मूहूर्त—कार्य आरम्भ करने में ग्रह, तिथि, नक्षत्र, वार आदि के प्रमाण से शुभाशुभ फल का विचार।

(३) ताजिक—वर्ष प्रवेश, मास प्रवेश, दिन प्रवेश आदि बनाकार वर्ष भर के शुभाशुभ फल का विचार।

(४) प्रॅश्न ज्योतिष—किसी भी समय इष्टकाल पर से किसी भी प्रश्न का तत्सम्बन्धी दुःख सुख आदि के परिणाम का विचार।

(५) मेदनीय किंवा राष्ट्र ज्योतिष—किसी देश या राष्ट्र की उन्नति-अवनति दुःख सुख आदि का विचार।

(६) संहिता खण्ड—किसी सम्बत का शुभाशुभ, भूकम्प, इन्द्र धनुष, केतु उदय आदि का फल, शुभाशुभ शकुन, शरीर चिह्न द्वारा मरण होने का ज्ञान, स्वरोदय, पल्लीपतन, सामुद्रिक, अङ्ग स्फुरण आदि का विचार।

अध्याय २

ज्योतिष शास्त्र में विश्वास

इस ग्रन्थ में फलित ज्योतिष का अध्ययन करने के लिए ही प्रारम्भिक बातें बताई गई हैं। फलित ज्योतिष में कई मनुष्य विश्वास करते हैं कई नहीं करते और कहते हैं कि ग्रह इतने दूर होते हुए पृथ्वी पर किस प्रकार प्रभाव पहुंचा सकते हैं। इस कारण प्रारम्भ में ही संक्षेप में ग्रहों के प्रभाव के विषय में थोड़ा बता देना अनावश्यक न होगा।

यह निर्विवाद सिद्ध है कि सूर्य के आस-पास पृथ्वी आदि कई ग्रह परिक्रमा करते हैं और समस्त ग्रह आदि एवं सूर्य अनन्त विश्व के अन्तरिक्ष में निराधार लटके हुए निरन्तर नियमित रूप से गतिशील रहते हैं। सूर्य के आस पास चन्द्र सहित पृथ्वी एवं बुध, शुक्र, मंगल, गुरू, शनि आदि ग्रह घूम रहे हैं। इन सबों के समुदाय को सौर जगत् या सूर्य का परिवार कहते हैं।

ये सब ग्रह सूर्य की आकर्षण शक्ति के वशीभूत होकर विशेष नियम के अनुसार सूर्य के आस पास घूम रहे हैं। इनमें प्रत्येक ग्रहों की भी पृथक-पृथक आकर्षण शक्ति है जैसे पृथ्वी का उपग्रह चन्द्रमा, पृथ्वी की आकर्षण शक्ति के प्रभाव से खिचा हुआ पृथ्वी के आस पास घूम रहा है और सूर्य की आकर्षण शक्ति से खिचे हुए चन्द्र और पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा कर रहे हैं। इसी प्रकार शनि आदि ग्रहों के भी उपग्रह है जो उन ग्रहों के आकर्षण के प्रभाव से इन ग्रहों की परिक्रमा करते हुए सूर्य के आकर्षण से प्रभावित होकर सूर्य की भी परिक्रमा कर रहे हैं।

पृथ्वी से ९.३८ लाख मील दूर होते हुए भी जब समस्त पृथ्वी पर सूर्य की आकर्षण शक्ति का प्रभाव पड़ता है तो पृथ्वी में रहने वाले जड़ एवं चैतन्य पशु-पक्षी, मनुष्य आदि भी सूर्य के प्रभाव से प्रभावित होने से कैसे बच सकते हैं।

प्रत्यक्ष देखने में आता हैं कि जब सूर्य विशेष राशियों में आता है तो किस प्रकार जाड़ा, गर्मी, बरसात आदि ऋतुओं में परिवर्तन होता है जिसका प्राणी मात्र पर प्रभाव पड़ता है। सूर्य के ही कारण प्रकाश, उष्णता, ग्रह गति होती है। सूर्य न हो तो प्राणी मात्र का जीना असम्भव हो जाय। आज कल सूर्य की किरणों से चिकित्सा भी होने लगी है।

प्रातः काल सूर्य की किरणें तिरछी पड़ती हैं। मध्याह्न में सीधी पड़ती है और रात्रि में किरणों का अभाव रहता है। इस प्रकार जैसे समय में जिस बालक का जन्म हो उस समय का प्रभाव उसके स्वभाव में परिणत हो जाता है। अर्थात् समय के अनुसार ही स्वभाव पड़ जाता है। ग्रीष्म में (वृष और मिथुन के सूर्य में) सूर्य की किरणें सीधी पड़ती हैं। हेमन्त ऋतु में (वृश्चिक-धनु के सूर्य में) तिरछी पड़ती

है। इस लिए इन सूर्य की राशियो में जिस बालक का जन्म होगा उसी के अनुसार शरीर में प्रभाव बढ़ेगा।

सूर्य का प्रभाव पौधों और वृक्षों पर भी पड़ता है। वर्षा ऋतु में इल्लियाँ अधिक उत्पन्न होती है और कृषि को हानि पहुँचाती है। बुखार का प्रकोप भी समयानुसार बढ़ता है। इस प्रकार समस्त जड़ चैतन्य पर सूर्य का प्रभाव पड़ता है। सब ग्रहों में सूर्य बड़ा बलवान् है इसी कारण सूर्य को मनुष्य की आत्मा कहा है।

जहाँ जो जिस परिस्थिति में उत्पन्न हुआ है वही उसका प्राकृतिक स्वभाव बन जाता है। इसी प्रकार विशेष ग्रह स्थिति और समय से उत्पन्न बालक का विशेष स्वभाव बन जाता है। जैसे ठंडी प्रकृति में उत्पन्न हुए वृक्ष को यदि उष्ण प्रकृति के स्थान में लगाओ तो नहीं होगा, यदि हुआ भी तो शक्ति हीन, रोगी होगा। कारण कि ठंडे वातावरण में उत्पन्न होने से उसका जीवन भी जन्म समय के वातावरण से प्रभावित होकर वहीं की प्रकृति का स्वभाव ग्रहण करता है। इसी कारण भिन्न-भिन्न स्थिति में उत्पन्न हुए बालकों की प्रकृति भी भिन्न-भिन्न हो जाती हैं। किसी विशेष ग्रह का प्रभाव भिन्न-भिन्न मनुष्यों पर भिन्न-भिन्न प्रकार से होता है।

Dr. Maurice Faure (डाक्टर मारिस फाउर) ने सन् १९२७ में फ्रेंच अकादमी के समक्ष डाक्टरी और ज्योतिष सम्बन्धी रिकार्ड उपस्थित कर बताया था कि सूर्य के धब्बे भी सूर्य के आस पास एक ही दिशा में परिक्रमा करते हैं। २५½ दिन में उनकी एक परिक्रमा होती है। जब धब्बे दिखाई देते हैं तो उस समय साधारण मृत्यु संख्या से दुगनी मृत्यु संख्या हो जाती है। इसका पूरा प्रमाण भी उपस्थित किया गया था।

चन्द्र का प्रभाव सूर्य से दूसरे नम्बर का है। इसका महत्तम पृथ्वी से अन्तर २५२९४८ मील है। यह पृथ्वी के सब ग्रहों से समीप होने के कारण अधिक प्रभावित करता है। चन्द्र की भी आकर्षण शक्ति समूची पृथ्वी पर पड़ती है, जिससे जड़ चैतन्य सभी प्रभावित हो रहे हैं। प्रत्यक्ष में देखा जाता है कि चन्द्र की घटाबढ़ी के कारण समुद्र की लहरों पर प्रभाव पड़ता है। पूर्णिमा को ज्वारभाटे का पूर्ण प्रभाव देखने में आता है। जब समुद्र सरीखे जड़ पदार्थ पर भी इतना प्रभाव पड़ता है कि जल राशि को अपनी ओर आकर्षित कर बड़ी-बड़ी लहरों का उत्पादक होता है तो यह इतर प्राणियों पर क्यों न प्रभाव करेगा ?

मनुष्य के चित्त पर इसका बड़ा प्रभाव पड़ता है, इसी कारण चन्द्रमा को मनुष्य का मन कहते है। बहुधा देखा जाता है कि चन्द्र के घटाव बढ़ाव का प्रभाव पागल पर अधिक पड़ता है इसी कारण पागलपन को चन्द्र के नाम से अंग्रेजी में ल्यूनेसी Lunecy कहते हैं। सर इसाक न्यूटन Isaac Neutan ने सिद्ध कर बताया है कि पागलपन चन्द्र से सम्बन्धित है और मानसिक दशा पर चन्द्र का बहुत प्रभाव पड़ता है।

केवल जीवों पर ही नहीं वनस्पतियों आदि पर भी इसका पूरा प्रभाव पड़ता है। जंगल में जो बांस आदि उजेले पक्ष में काटे जाते हैं, वे शीघ्र घुन जाते हैं क्योंकि शुक्ल पक्ष का अधिक प्रभाव वृक्ष आदि की उत्पादक शक्ति पर पड़ता हैं। इससे उनमें कीड़े शीघ्र उत्पन्न हो जाते हैं।

अभी ब्रिटिश कालोनियल (उपनिवेश) आफिस के विशेषज्ञ ने खोजकर प्रगट किया है कि मछलियों पर चन्द्र का विशेष प्रभाव पड़ता है। पूर्णमासी के समय मछलियाँ अधिक पकड़ी जाती हैं, कृष्ण पक्ष में इस सम्बन्ध से लाभजनक स्थिति नहीं रहती।

खोज से यह भी पता लगा है कि अपनी मध्यान्ह रेखा के अनुसार चन्द्र की विशेष तिथियों को ही ओस्टर और मुसेल (घोंघा मछलियों की जाति) अपने घोंघे खोलते और अपना पालन करते हैं।

इसी प्रकार इतर ग्रहों की भी आकर्षण शक्ति सूर्य की आकर्षण शक्ति से प्रभावित होकर पृथ्वी आदि समस्त ग्रहों पर प्रभाव उत्पन्न करती है और वे ग्रह भी अपने डीलडौल के अनुसार सम्पूर्ण सूर्य सम्प्रदाय पर प्रकाश डालते हैं तो फिर जीव जन्तु वनस्पति आदि प्रभावित होने से कैसे बच सकते हैं ?

ग्रह के प्रभाव से हीरा आदि अमूल्य रत्न भी अपना विचित्र प्रभाव धारण करते हैं। अभी हाल में एक होप (आशा) नाम के प्रसिद्ध हीरे के विचित्र प्रभाव की कथा प्रकाशित हुई थी। यह हीरा जिसके-जिसके पास गया उसका नाश हुआ। यह हीरा भारतवर्ष के किसी मन्दिर की मूर्ति की आँख में लगा था। वह किसी प्रकार बेलजियम के निवासी के हाथ लगा। उसने फ्रांस के बादशाह लुइस–१४ को बेचा। पश्चात् मेरी एण्टोनिटी ने उसे पहिना, उसकी अपघात से मृत्यु हुई। अमस्टरडाम के विलियम फल्स ने उस हीरे को काटा, उसका सर्वनाश हुआ। फ्रांसिस बिऊलिऊ ने उसे प्राप्त किया, उसकी मृत्यु क्षुधा पीड़ा से हुई। सन् १९०१ में इशाक कोलोट ने उसे मोल लिया, उपघात से उसकी मृत्यु हुई। उपरान्त वह हीरा रूस के राजकुमार कन्टोस्की के पास पहुँचा जिसने अभिनय के समय एक सुन्दर नर्तकी को पहिनने को दिया था, वह अभिनय करते समय गोली से मारी गई। उपरान्त राजकुमार भी शस्त्राघात से मारा गया। इसके बाद वह हीरा किसी यूनान निवासी के पास पहुँचा, उसकी अपनी स्त्री और बच्चे सहित फिसलने से मृत्यु हुई। पूर्व सुलतान अब्दुल हमीद ने वह हीरा कान्स्टेन्टनोपल में अपनी प्रेमिका को पहिनने को दिया वह गोली से मारी गई। बाद में हबीब नाम के अरमेनियन के पास पहुँचा। वह सिंगापुर में डूब कर मर गया। सन् १९११ में एवलिन मेकलीन ने उसे मोल लिया, उसका लड़का विन्सेन्ट मोटर से दब कर मर गया; स्त्री मिसेस एवलिन मेकनील रेनोल्ड ने उसे पहिना तो उसकी अचानक मृत्यु हो गई।

इन्हीं सब सिद्धान्तों पर पाश्चात्य देशों में भी ग्रहों के प्रभाव को मान कर फलित ज्योतिष पर विश्वास करने लगे हैं। यहाँ तक कि भविष्य कथन करते हैं। उनके

सम्बन्ध की वातें भी प्रमाणित की जाती हैं कि कहाँ तक भविष्य कथन सत्य निकला जिन पर विचार करने से भविष्य कथन की सत्यता पर लोगों का विश्वास होने लगा है।

प्रायः यह भी देखा जाता है कि कई लोगों की भविष्यवाणी असत्य भी निकल जाती है। इसका मुख्य कारण कल्पना शक्ति है। क्योंकि यह तो कल्पना और तर्क शास्त्र है, जिसमें कल्पना और तर्क करने के सिद्धान्त दिये हैं, उनमें वे प्रभाव घटित होने का संकेत मिलता है। यदि कल्पना में भूल हुई तो भविष्य कथन में अवश्य अन्तर पड़ेगा। डाक्टर जो कई वर्षों तक अंग्रेजी पढ़ कर डाक्टरी विद्या अध्ययन कर पद प्राप्त करता है, जब डाक्टर होकर किसी रोग का निदान करता है तो उस रोग के विषय में भिन्न-भिन्न डाक्टरों की भिन्न-भिन्न राय हो जाती है। जब असली रोग की जड़ पा जाते हैं तो निदान पक्का हो जाता है।

इस विषय में श्री स्टेनली लीफ इंगलैण्ड के प्रमुख प्राकृतिक चिकित्सक एवं "हैल्थ फार आल" मासिक पत्रिका के सम्पादक ने लिखा है। सर डेविड् ड्रमंड ने ग्लासगो की रायल फेकल्टी आफ सर्जरी के सभापति की हैसियत से अपने भाषण में कहा था कि 'शव परीक्षा से यह बात भलीभाँति प्रमाणित हो चुकी है कि औसत दर्जे के चिकित्सकों का निदान ८० प्रतिशत गलत हुआ करता है"।

बोस्टन के सुप्रसिद्ध चिकित्सक और निदान शास्त्री डाक्टर रिचर्ड केवट ने, जिन्होंने निदान पर एक शास्त्रीय पुस्तक लिखी और हार्वड विश्वविद्यालय में सम्मानित अध्यापक है, अमेरिकन मेडिकल असोशियेशन के वार्षिक अधिवेशन में अपने विस्तृत अनुभव के आधार पर लिखित एक निबन्ध प्रस्तुत किया था। जिसमें उन्होंने एक हजार रोगियों का विवरण देकर विश्लेषण कर यह परिणाम निकाला था कि सब मिलाकर ५० प्रतिशत निदान सही और ५० प्रतिशत बिलकुल गलत थे।

हृदय रोग के प्रसिद्ध चिकित्सक सर जेम्स मैकेंजी ने अपनी मृत्यु के कुछ समय पूर्व एक भाषण में यह धारणा व्यक्त की थी कि जीवन पर्यन्त अनुसंधान और शव-परीक्षण करने के उपरान्त मैं इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि चिकित्सक लोग साधारण रोगों में ७० प्रतिशत गलत निदान करते हैं। असाधारण रोगों में यह संख्या और अधिक होगी। जब उन्नति के शिखर पर पहुँची डाक्टरी विद्या का यह हाल है तो फिर ज्योतिष शास्त्र को क्यों बदनाम किया जाता है?

इसी प्रकार बड़े-बड़े जज जो अनेक वर्षों तक विद्या अध्ययन कर कानूनी पुस्तकों का पूरा ज्ञान प्राप्त कर चुकते हैं किसी अभियोग का निर्णय कर अपराधी को प्राण दण्ड की सजा देते हैं। परन्तु अपील करने पर ऊँची अदालत उस जज के निर्णय को पलट कर अपराधी को उन्ही साक्षियों के आधार पर निर्दोष पाकर छोंड़ देती है। इसी को कहते हैं विचार शक्तियों में अन्तर। विचार करने में असावधानी या कोई विशेष बात की सूझ का अभाव या समझ की भूल वहाँ पर होने के कारण फल कथन में अन्तर पड़ सकता है।

इस कारण बड़ी सावधानी से ज्योतिष के एक-एक विषय का क्रम पूर्वक अध्ययन और मनन करने की आवश्यकता है। अनुभव होने पर उसका परिणाम प्रत्यक्ष गोचर होने लगेगा।

अध्याय ३

सौर जगत् और ग्रह Solar System and Planets

उस सर्वव्यापी जगन्निर्माता परमेश्वर की लीला कितनी विचित्र है। आप आकाश की ओर ध्यान दें तो विदित होगा कि आकाश में अनेक तारागण अधर में लटके हुए हैं। आकाश में करोड़ों तारागण हैं जो साधारण दृष्टि से गोचर नहीं होते। उनमें कई तारागण तो केवल बड़ी-बड़ी दूरबीनों के सहारे ही देखे जा सकते हैं।

अन्य तारागणों के मध्य तारागणों का एक मंडल है जिसे सौर जगत् या सौर परिवार या सूर्य सम्प्रदाय कहते हैं। उनके मध्य में अपना एक ही सूर्य है जिसके आस पास अपनी पृथ्वी और इतर ग्रह बुध, शुक्र, गुरु आदि परिक्रमा करते हैं, जिन सबका सूर्य से सम्बन्ध है और जो सब, सूर्य की आकर्षण शक्ति के प्रभाव से सूर्य को छोड़ कर कहीं दूसरी जगह भटक कर नहीं जा सकते। इसी कारण इन सब ग्रहों के समुदाय को और उन तारागणों को जो इन ग्रहों की परिक्रमा के मार्ग के आस पास पड़ते हैं, सौर जगत् कहते हैं।

आकाश में कई प्रकाशवान् तारागण दिखते हैं। उनमें कई तो अपने सूर्य से भी कई गुने बड़े हैं। बहुत दूरी के कारण यहाँ से छोटे दिखते हैं। इसी प्रकार जो ग्रह शुक्र, गुरु आदि देखने में छोटे दिखते हैं बड़े भीमकाय ग्रह हैं, जो अधर में लटके हुए हैं। इन सबके आकार आदि का वर्णन आगे होगा।

एक विचित्र तारे का पता लगा है जो सूर्य से १६० गुना बड़ा है। १० हजार वर्ष में उसका प्रकाश पृथ्वी पर पहुँचता हैं और वह पृथ्वी से ५२५६० लाख मील की दूरी पर है। ऐसे कई तारे हैं जो सूर्य से करोड़ गुना तेजस्वी हैं। इस प्रकार आकाश में अनेक सूर्य हैं। उनमें से अपना सूर्य एक हैं और इस अपने सूर्य का परिवार अलग है और इस परिवार के ग्रह इसी सूर्य की परिक्रमा करते है।

खोज से पता लगा है कि अपना सौर जगत् किसी और शक्तिशाली सूर्य के आस पास अपने परिवार सहित घूम रहा है। कृतिका नक्षत्र को केन्द्र मान कर अपना सौर जगत् घूम रहा है। अमेरिकन साइन्टिस्ट्स असोशियेशन ने कई वर्षों की जाँच के उपरान्त बताया है कि अपना सूर्य एक सेकेन्ड में १२० मील के हिसाब से Dragon ड्रैगोन (अजगर) नक्षत्र की ओर अपने परिवार सहित घूम रहा है। यह नक्षत्र उत्तर ध्रुव तारे के पास है।

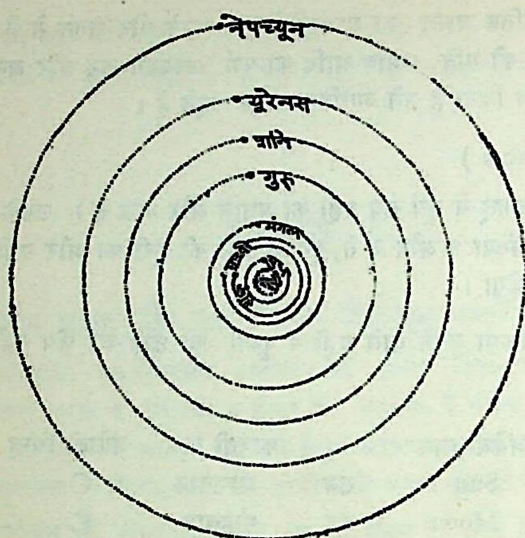
यहाँ के ज्योतिष शास्त्र का सम्बन्ध केवल अपने सौर जगत् से है। महर्षियों ने सूर्यादि सब ग्रहों की गति प्रभाव आदि का पूर्ण अध्ययन कर और अनुभव कर जिस शास्त्र का निर्माण किया है उसे ज्योतिष शास्त्र कहते हैं।

ग्रह (Planets)

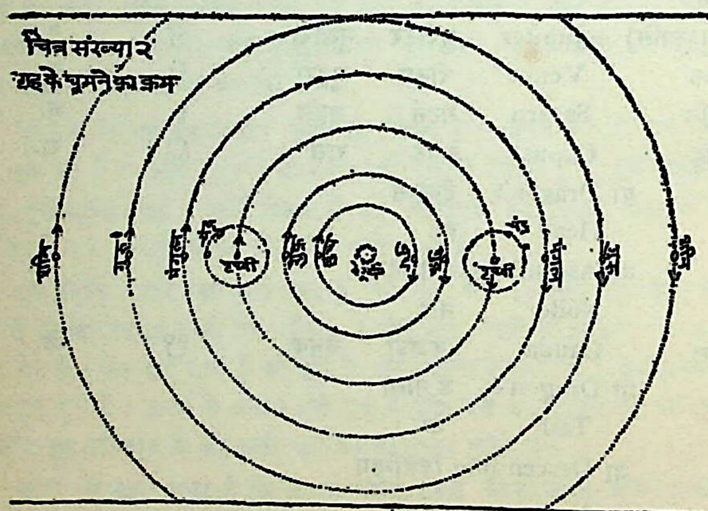
अपने सौर जगत् में सूर्य सब ग्रहों का प्रधान और केन्द्र है। उसके आस पास ग्रह घूमते हैं। चित्र संख्या १ और २ से, सूर्य से ग्रहों की दूरी का और ग्रहों की परिक्रमा का क्रम समझ पड़ेगा।

सूर्य की परिक्रमा करने वाले ग्रहों में पृथ्वी को छोड़ कर शेष ग्रहों के नाम नीचे दिये हैं।

क्रम ग्रह	अंग्रेजी नाम		फारसी नाम	अंग्रेजी चिन्ह	हिन्दी चिन्ह
१ सूर्य	Sun	सन	आफताब	○	र. या सू.
२ चंद्रमा	Moon	मून	माहताब (कमर)	☾	चं.
३ मंगल	Mars	मार्स	मिर्रीख	♂	मं.
४ बुध	Mercury	मरकरी	उत्तारुद	☿	बु.
५ गुरु (बृहस्पति)	Jupiter	जुपीटर	मुश्तरी	♃	गु.
६ शुक्र	Venus	वीनस	जुहरा	♀	शु.
७ शनि	Saturn	सेटर्न	जुहल	♄	श.
८ राहु	Caput या Dragon's Head या Ascending Node	केपुट ड्रैगोन्स हैड असेन्डिग नोड	रास	☊	रा.
९ केतु	Cauda या Dragon's Tail या Descending Node	कअडा ड्रैगोन्स टेल डिसेन्डिग नोड	जनव	☋	के.
१० वरुण	Naptune	नेपच्यून		♆ या ♆	व.
११ प्रजापति	Herschel या Uranus	हरसल		♅	प्र.



चित्र संख्या १—सूर्य के आसपास ग्रह इस प्रकार घूमते हैं ।



ग्रह और तारे में अन्तर

किसी निर्मल रात्रि को आकाश की ओर देखें तो अनेक तारागण दृष्टि गोचर होंगे; उनमें मुख्य दो प्रकार के तारागण हैं। एक साधारण तारे और दूसरे ग्रह।

इनमें से ग्रह और तारे इस प्रकार पहिचाने जा सकते हैं—

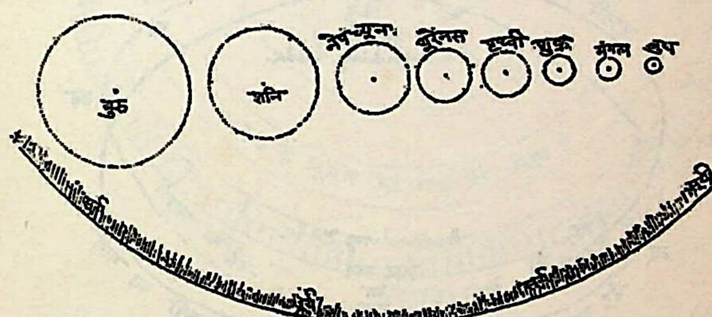
(१) तारे Stars : आकाश में कई तारे ऐसे हैं जो स्वयं प्रकाशवान् है। ऐसे तारागण रात्रि को दीपक की लव सदृश जुग जुगाते दिखाई देते हैं अर्थात् उनके प्रकाश की लव या किरणें छोटी बड़ी होती दिखती हैं। इन्हें तारागण कहते हैं।

(२) ग्रह Planets : दूसरे प्रकार के ऐसे तारे दिखेंगे जिनका प्रकाश एक-सा रहता है अर्थात् जुग जुगाते नहीं दिखते। ऐसे दिखते हैं जैसे बिना लव की अंगार हो जिनका एक सरीखा प्रकाश दिखता है। ये ग्रह सूर्य के प्रकाश पड़ने से प्रकाशित होते हैं। वे स्वतः प्रकाशवान् नहीं हैं। ये ही ग्रह कहलाते हैं।

शुक्र ग्रह सूर्य के उदय होने के बहुत पहिले आकाश में देखा जाता है। इसे लोग 'भुन सरिया' तारा भी कहते है और उसे अधिकतर लोग इसे पहिचानते हैं। इसको ध्यान से देखो तो समझ पड़ेगा कि यह तारा है या ग्रह। कभी यह शुक्र ग्रह सूर्यास्त के बाद दिखता है तब भी इसे पहिचान सकते हैं।

प्रतिदिन शुक्र, गुरु आदि ग्रहों और इतर तारागणों को अवलोकन करते रहने से ग्रह और तारागण में अन्तर समझ पड़ेगा।

अंग्रेजी के ज्योतिष ग्रन्थों में ग्रहों के स्थान में उपरोक्त चिन्हों का उपयोग हुआ



चित्र संख्या ३-ग्रहों के आकार का अनुपातिक मिलान

है उस कारण उन चिन्हों को ध्यान में रखना चाहिए। इनमें से केवल ९ मुख्य ग्रह हैं। हर्शल और नेपच्यून ग्रह नवीन खोज किये हुए हैं और पाश्चात्य पद्धति में उनका भी वर्णन रहता है इस कारण उनको भी बता दिया है, जिनको मिलकर ११ ग्रह हो जाते हैं। इस प्रकार हर्शल और नेपच्यून के निकालने से बचे हुए ९ ग्रहों में से ७ ग्रह आकाश में दिखते है। दो ग्रह राहु और केतु अदृश्य ग्रह है।

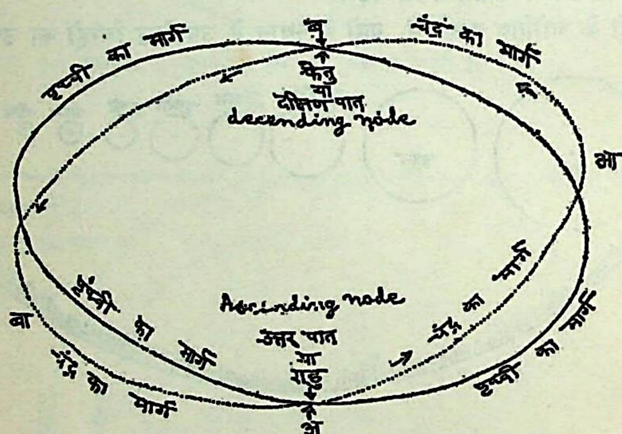
राहु-केतु

यद्यपि राहु और केतु की गणना ग्रहों में की गई है परन्तु वास्तव में ये ग्रह नहीं है। इनको अप्रकाश ग्रह Shadow Planets कहते हैं। अर्थात् आकाश में ये ग्रह नहीं दिखते और न इनका कोई आकार ही हैं। पृथ्वी के आस-पास चन्द्रमा परिक्रमा

करता है और चन्द्रमा सहित पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती है। इस प्रकार पृथ्वी की परिक्रमा की परिधि को चन्द्र अपनी परिक्रमा में दो जगह काटता है। अर्थात् पृथ्वी और चन्द्र की परिक्रमा की परिधि एक दूसरे को दो जगह काटती है, उनमें से एक बिन्दु को राहु कहते हैं जो नीचे से उपर की ओर जाने वाला बिन्दु है। और दूसरे बिन्दु को जो उसके ठीक विरुद्ध है, केतु कहते हैं। यह ऊपर से नीचे आने वाला बिन्दु है इसीसे राहु को Ascending Node (असेडिंग नोड) और केतु को Descending Node (डिसेन्डिग नोड) भी कहते हैं।

ये दोनों ग्रह बिन्दु मात्र हैं। एक दूसरे से सदा ६ राशि के अन्तर पर रहते हैं और सदा दूसरे ग्रहों की दिशा से विरुद्ध क्रम से चलते हैं। जब चन्द्रमा पूर्णमासी के समय या सूर्य अमावस्या के समय इन्हीं पातों के पास पहुँचता है तो चन्द्र ग्रहण या सूर्य ग्रहण होता है। इस कारण राहु और केतु को भी ग्रह माना गया है।

जिस प्रकार चन्द्र और सूर्य ग्रहण के समय संसार के वातावरण में विचित्र प्रभाव



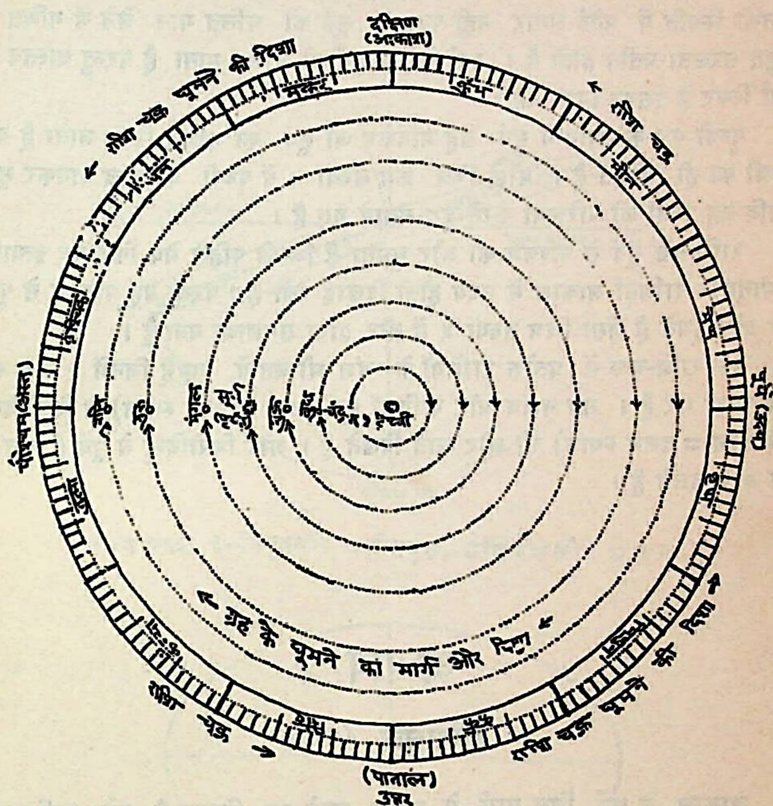
चित्र संख्या ४–राहु केतु की स्थिति

होता है इसी प्रकार राहु केतु की स्थिति के कारण भी मनुष्य पर प्रभाव पड़ता है। चित्र संख्या ४ से राहु केतु की स्थिति समझ में आवेगी।

पृथ्वी का भ्रमण-मार्ग ही सूर्य का भ्रमण-मार्ग कहा जाता है। इसे ही क्रान्ति वृत्त कहते हैं। इसी प्रकार चन्द्र पृथ्वी की परिक्रमा करते समय क्रान्ति वृत्त को २ स्थानों में काटता है जो चित्र सख्या ४ में तीर की नोक से बताये गये हैं इन्हीं स्थानों को चन्द्र के पात भी कहते हैं।

देखें चित्र संख्या ४। चन्द्रमा अ बिन्दु में पहुंचकर आ होते हुए ब बिन्दु पर जाता है इसलिए इस चढ़ाव के बिन्दु अ को उत्तर पात या राहु कहते हैं। चन्द्रमा

व विन्दु से वा होते हुए अ विन्दु पर आता है इस व विन्दु को दक्षिण पात या केतु कहते हैं।



चित्र संख्या ५

राशिचक्र और ग्रहों के घूमने की दिशा सूचक चित्र, इसमें पृथ्वी के आस-पास ग्रह घूमते हुए बताये है।

चन्द्रमा जिस मार्ग में परिक्रमा करता है उसे चन्द्रकक्षा कहते हैं। चन्द्रकक्षा क्रान्ति वृत्त को लगभग ५ अंश कोण बनाये हुए काटती है। अर्थात जहाँ चन्द्र का मार्ग पृथ्वी के मार्ग को काटता है वहाँ लगभग ५ अंश का कोण बनता है इसी कोण को चन्द्र का विक्षेप कहते हैं। विक्षेपं = शर = Celestial Latitue

सूर्य स्थिर है

सूर्य आकाश में पूर्व दिशा में उदय होता है और पश्चिम में अस्त होते दिखता है, परन्तु वास्तव में सूर्य स्थिर है। पृथ्वी इतर ग्रहों के सदृश पश्चिम से पूर्व की ओर घूमती है इस कारण पृथ्वी लोक के रहने वालो को सूर्य भ्रमण करता हुआ

दिखता है। परन्तु ज्योतिष शास्त्र में गणित की सुविधा के लिए पृथ्वी को स्थिर मान कर सूर्य को चलित माना है। चाहे सूर्य को या पृथ्वी को स्थिर मानें परन्तु उनकी स्थिति में कोई अन्तर नहीं पड़ता। सूर्य को चलित मान लेने में गणित में बहुत सरलता प्रतीत होती है। इसी कारण सूर्य को चलित माना है परन्तु वास्तव में सूर्य स्थिर है इसका ध्यान रहे।

पृथ्वी ग्रह के स्थान में सूर्य ग्रह मानकर जो सूर्य का गणित किया जाता है वह पृथ्वी का ही गणित है। पीछे चित्र क्रम संख्या ५ में पृथ्वी को केन्द्र मानकर सूर्य आदि ग्रह पृथ्वी की परिक्रमा करते हुए बताये गए हैं।

राशि-चक्र पूर्व से पश्चिम की ओर घूमता हैं जिससे पहिले मेष फिर वृष इत्यादि क्रमानुसार राशियाँ आकाश में उदय होती दिखाई देती हैं। परन्तु ग्रह पश्चिम से पूर्व की ओर घूमते हैं जैसा चित्र संख्या ५ में तीर द्वारा समझाया गया है।

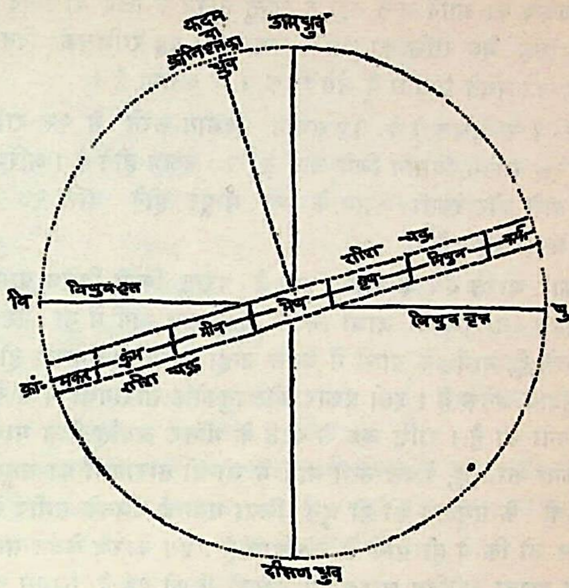
इस राशि-चक्र में प्रत्येक राशियों के अंश भी बताये गए हैं जिनमें २ अंश का एक छोटा घर है। सब नक्षत्र और राशियाँ पूर्व (लग्न = उदय स्थान) से शिरोबिन्दु (आकाश = दशम स्थान) की ओर जाते दिखते हैं। और शिरोबिन्दु से पूर्व (लग्न) की ओर चलते है।

अध्याय ४

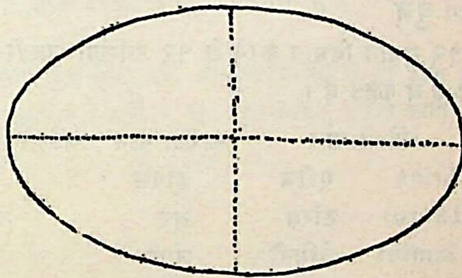
राशिचक्र Zodic

आकाश में सूर्य जिस मार्ग से भ्रमण करते हुए दिखता है उसे क्रान्तिवृत्त Ecliptic कहते हैं। इसे आपामंडल या क्रांतिमंडल भी कहते हैं। देखें चित्र संख्या ६। सब ही ग्रह इसी मार्ग से या इसके समीप होकर सूर्य की परिक्रमा करते हैं। इसे रवि का मार्ग भी कहते हैं क्योंकि सूर्य एक वर्ष में १२ राशियों में प्रायः इसी मार्ग से एक बार परिक्रमा कर लेता है। क्रान्तिवृत्त वास्तव में पृथ्वी का परिक्रमा करने का मार्ग है और पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा एक वर्ष में प्रायः १२ राशियों में कर लेती है। परन्तु साधारण प्रकार से यही कहा जाता है कि सूर्य क्रांतिवृत्त की १२ राशियों में एक वर्ष में परिक्रमा कर लेता है, इस बात का ध्यान रहे। यह क्रांतिवृत्त अंडाकार है। देखें चित्र संख्या ७

भचक्र या राशिचक्र—यह क्रान्तिवृत्त के उत्तर दक्षिण ९-९° की चौड़ाई का एक कल्पित पट्टा माना जाता है। इसे भचक्र या राशिचक्र कहते हैं, क्योंकि सब ही ग्रह इस कल्पित पट्टे के भीतर क्रांतिवृत्त पर या उसके उत्तर या दक्षिण होकर घूमा



चित्र संख्या ६–विषुववृत्त, क्रान्तिवृत्त, राशिचक्र और ध्रुव



चित्र संख्या ७–पृथ्वी की कक्षा (परिक्रमा का मार्ग) Orbit of the Earth

करते हैं देखो चित्र संख्या ६ ।

क्रांति=क्रांतिवृत्त है जिसके उत्तर और दक्षिण में ९-९° का चौड़ा पट्टा है । इस पूरे चौड़े पट्टे को राशि चक्र कहते हैं ।

विषूवत्रृत्त=यह आकाशीय विषुववृत्त, पृथ्वी के विषुववृत्त के सीध में आकाश में एक कल्पित रेखा है ।

आकाशीय विषुववृत्त=Celestial Equator इस विषुववृत्त पर क्रांतिवृत्त २२°-२८′ का कोण बनाते हुए एक दूसरे को काटते हैं ।

इस राशिचक्र का आदि अन्त नहीं हैं किन्तु नापने के लिये जो बिन्दु स्थान नियत किया गया है वह मेष राशि का आदि स्थान है। यह राशिचक्र दिन में एक बार पूर्व से पश्चिम को घूमते दिखता है जैसे चित्र ५ में बताया है।

इसे पट्टे (राशिचक्र) के १२ समान विभाग करने से १२ राशियाँ बनी हैं और इसी के २७ समान विभाग किये जायँ तो २७ नक्षत्र होते हैं। अश्विनी नक्षत्र से आरम्भ होने वाले और रेवती नक्षत्र के अन्त में पूरे होने वाले २७ नक्षत्र केइसी चक्र को भी भगण कहते हैं।

जिस प्रकार भारत वर्ष में अनेक ग्राम है परन्तु किसी विशेष ग्राम को जाने में चाहे पक्की सड़क या रेल से जाओ जितने ग्राम उस मार्ग में या उसके आस पास समीप ही मिलते हैं, मार्ग के ग्रामों में केवल उन्ही ग्रामों की गणना होती है, यद्यपि अन्य ग्राम समुदाय अनेक हैं। इसी प्रकार कोटयनुकोटि तारागणों में से केवल २७ ही नक्षत्रों की गणना की है। राशि चक्र के पट्टे के भीतर अर्थात् जिस मार्ग से सब ग्रह सूर्य की परिक्रमा करते हैं, केवल उसी मार्ग में जो-जो तारागणों का समुदाय है, उनमें से २७ तारागणों के समुदाय को ही चुन लिया गया है, जिनके समीप से ग्रह भ्रमण करते हैं। मान लो कि ये ही मार्ग के २७ ग्राम हैं। इस कारण केवल उन्हीं तारागणों के समुदाय की गणना ज्योतिष शास्त्र में नक्षत्रों में की गई है, जिससे ग्रहों के स्थान आदि प्रकट करने में सुविधा हो कि अमुक ग्रह अमुक समय पर अमुक स्थान पर है। इन नक्षत्रों के नाम और परिचय आगे दिये हैं।

राशियाँ Sign बुर्ज

राशिचक्र के १२ समान विभाग करने से १२ राशियाँ बनती हैं। उनके नाम ये हैं। फारसी में इन्हें बु.र्ज कहते हैं।

क्रम	राशि	अंग्रेजी नाम		फारसी नाम	अंग्रेजी चिन्ह	हिन्दी चिन्ह
१	मेष	Aries	एरीज	हामल	♈	मे०
२	वृष	Taurus	टॉरस	सूर	♉	वृ०
३	मिथुन	Gemini	जेमिनी	जोझा	♊	मि०
४	कर्क	Cancer	केन्सर	सर्तान	♋	क०
५	सिंह	Leo	लियो	असद	♌	सिं०
६	कन्या	Virgo	विरगो	सुंवला	♍	क०
७	तुला	Libra	लिब्रा	मीझान	♎	तु०
८	वृश्चिक	Scorpio	स्कॉरपियो	अक्रंब	♏	वृ०
९	धन	Sagittarus	सगीट्टारस	कौस	♐	ध०
१०	मकर	Capricorn	केप्रीकार्न	ज़दी	♑	म०
११	कुंभ	Aquarius	अक्वारियस	दलु	♒	कुं०
१२	मीन	Pisces	पिसेस	हूत	♓	मी०

राशिचक्र विभाग

प्रत्येक चक्र Circle में ३६० अंश होते हैं। इनके १२ विभाग करने से ३६० ÷ १२=३० अंश की प्रत्येक राशि होती है।

इसी प्रकार ३६० अंश के २७ विभाग किये =३६० ÷ २७=१३°-२०' तो प्रत्येक विभाग १३ अंश २० कला का हुआ अर्थात् राशिचक्र को २७ नक्षत्रों में बाँटने से प्रत्येक १३ °-२०' का हुआ। अर्थात् एक राशि में २$\frac{1}{4}$ नक्षत्र हुए।

प्रत्येक नक्षत्र के ४ विभाग किये तो प्रत्येक विभाग को चरण कहते हैं। इसकारण १ राशि=३०°=२$\frac{1}{4}$ नक्षत्र=९ चरण। १ चरण=३'-२०"

१ चक्र= ३६० अंश degree (डिगरी)
१ राशि=३०° (कला)
१ अंश=६०' (कला) minute (मिनट)
१ कला=६०" (विकला) Second (सेकेण्ड)

} ये कोणात्मक अंशादि है। इनके चिन्ह अंश° कला' विकला"

ये चिन्ह अंश कलादि के अंकों की इकाई वाली संख्या के ऊपर दाहिनी ओर कुछ तिरछे लगाये जाते हैं जैसा ऊपर बताया गया है। जहाँ अंश, कला आदि लिखना हो वहाँ केवल ये चिन्ह लगा देते हैं जिसे समझ लेना चाहिये।

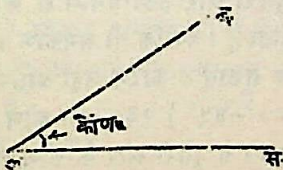
कोणात्मक अंश Angular distance

ऊपर जो कोणात्मक अंशादि बताये गये हैं इनके विषय में अच्छी प्रकार समझ लेना चाहिये, क्योंकि उनका अधिक काम पड़ता है।

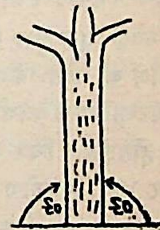
कोणात्मक अंश को कुछ उदाहरण देकर समझाते हैं।

कोण Angle

जब दो रेखाएँ किसी एक विन्दु पर परस्पर मिलती हैं तो बीच में एक कोण बन जाता है। देखें चित्र संख्या ८। यहाँ अ. व. एक लकीर, दूसरी लकीर अ. स. पर अ.



चित्र संख्या ८—कोण Angle

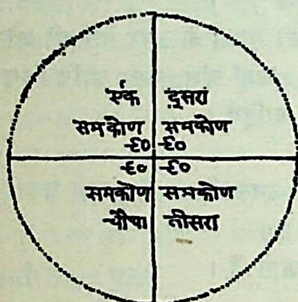


चित्र संख्या ९—समकोण

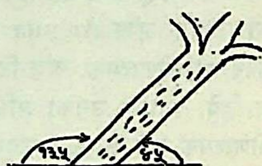
विन्दु पर मिली है जिससे ब अ स कोण बन गया है। वह कोण चित्र में तीर और विन्दुओं से बताया गया है। इसी कोण का नाप अंश, कला, विकला में होता है।

अब चित्र संख्या ९ को देखें। एक वृक्ष भूमि पर बिलकुल सीधा खड़ा है। इसके कारण वृक्ष और भूमि के बीच में दोनों ओर यहाँ एक-एक समकोण बन गया है। वृक्ष सीधा होने के कारण ९० अंश का समकोण दोनों ओर बनाता है। किसी भी समकोण Right Angle में ९० अंश होते है। उसके दूसरी ओर भी ९० अंश का दूसरा समकोण बनता है। दोनों समकोणों का योग ९०+९०=१८०° होता है।

वृक्ष की तरह किसी भूमि या रेखा पर जो सीधी खड़ी रेखा होती है उसे लम्ब Perpendicular Line कहते हैं। इस प्रकार किसी आधार (भूमि आदि) पर लम्ब खड़ा करने से दोनों ओर एक-एक समकोण ९०°-९०° होते हैं। पूरे चक्र में ३६०° होते हैं। पूरे चक्र में ४ समकोण होते है। अर्द्ध चक्र में २ समकोण और चौथाई चक्र में १ समकोण होता है। जैसा चित्र संख्या १० में बताया गया है। इसी प्रकार एक



चित्र संख्या १०
एक चक्र के ४ समकोण



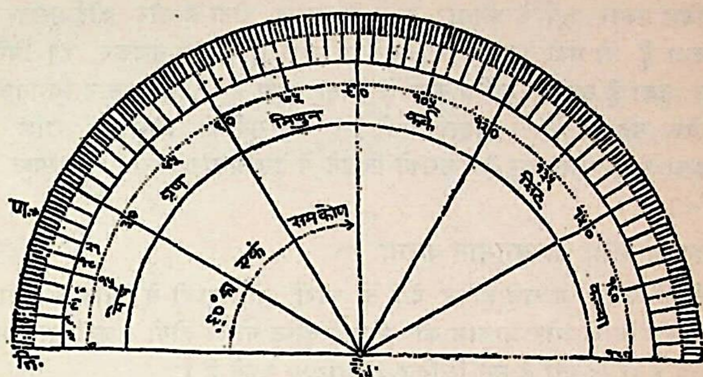
चित्र संख्या ११
उर्द्ध रेखा के दोनों ओर के कोण

राशि चक्र में ३६० अंश होते हैं और इन अंशों को १२ राशियों में विभक्त करने से प्रत्येक राशि ३६०÷१२=३०° की हुई।

यदि कोई एक वृक्ष एक ओर सीधा झुक जाता है तो उसी मान से झुकाव की ओर के कोण का अंश कम हो जाता है परन्तु दूसरी ओर उसी प्रमाण से कोण बढ़ जाता हैं, परन्तु दोनों कोणों का योग १८०° ही होता हैं। क्योंकि दो समकोण का योग १८०° ही होता है। चित्र संख्या ११ देखें। वृक्ष के झुकाव के कारण जहाँ अधिक झुका है उस ओर ४५° का कोण है तो दूसरी ओर (१८०°-४५°) १३५° का कोण अवश्य होगा। अर्थात् १८०° में से एक ओर का कोण घटाने से दूसरी ओर के कोण का अंश प्रकट हो जाता है।

कोण और कोणात्मक दूरी का नाप

किसी नाप का कोण बनाने के लिये एक पैमाने की आवश्यकता पड़ती है जैसा चित्र संख्या १२ में बताया है।



चित्र संख्या १२–कोण नापने का चक्र

एक अर्द्धवृत्त Semi circle बनाओ (इसमें २ समकोण और १८०° होते हैं क्योंकि प्रत्येक समकोण में ९०° होते हैं)। अब इस १८०° के अर्द्धवृत्त में एक-एक अंश का चिह्न यहाँ चित्र में बताये अनुसार बनाकर विभाग कर लें तो यह कोण नापने का चक्र या पैमाना बन जायगा। इससे किसी भी नाप का कोण बना सकते हैं।

मान लो २३°का कोण बनाना है तो १५°के आगे ८° और लो। जहाँ चित्र में तीर का निशान बनाया है वहाँ २३° हो जाते हैं। फिर जिस कागज में कोण बनाना है एक सीधी लकीर खींचकर उसमें किसी एक बिन्दु पर (को.) स्थान मान कर चिन्ह लगा दो। फिर उस सीधी लकीर पर इस पैमाने को इस प्रकार जमा दो जिससे पैमाने के नीचे की लकीर कागज की लकीर के ठीक ऊपर रहे और उसका (को.) चिन्ह पैमाना के (को.) बिन्दु के ठीक नीचे रहे। फिर पैमाने में जहाँ २३° पूरे हुए थे (ण.) स्थान के ठीक नीचे एक बिन्दु का चिह्न कागज में बनाकर उस (ण.) स्थान के बिन्दु से और (को.) बिन्दु से मिलती हुई रेखा खींचो तो (ति. को. ण.) से जो कोण बनेगा वह २३° का होगा।

इसी प्रकार किसी भी इच्छित अंश का कोण बना सकते हैं और किसी भी कोण को नापकर जान सकते हैं कि वह कितने अंश का है। कोण नापने का पैमाना धातु आदि का बना हुआ बाजार में ड्राइंग का सामान बेचने वाले के यहाँ मिल सकता है।

अंश के विभाग

जिस प्रकार घड़ी में १२ बजे तक के सब अंक अंकित रहते हैं और प्रत्येक खण्ड १ घण्टे का होता है; एक घण्टे के ६० विभाग करने से प्रत्येक विभाग एक मिनट का और १ मिनट के ६० विभाग करने से प्रत्येक विभाग एक सेकेन्ड का माना जाता है, इसी प्रकार राशि-चक्र के भी विभाग हैं। जहाँ राशि अंश आदि का उपयोग हुआ है।

जिस प्रकार सूर्य के अनुसार घड़ी का समय होता है और कोई पूछता है कि क्या बजा है तो घड़ी देखकर ठीक बतला सकते हैं कि ४ बजकर ४१ मिनट १० सेकेण्ड हुआ है अर्थात् सूर्य आकाश में इतना चढ़ा है। इसी प्रकार ज्योतिष गणना में प्रत्येक ग्रह की स्थिति बताई जाती है। जैसे सूर्य की स्थिति २ राशि ४ अंश ४१ कला १० विकला पर है। उसको लिखने में इस प्रकार लिखेंगे सूर्य स्पष्ट २–४°–४१'–१०"।

आकाश में अंशों का अनुमान करना

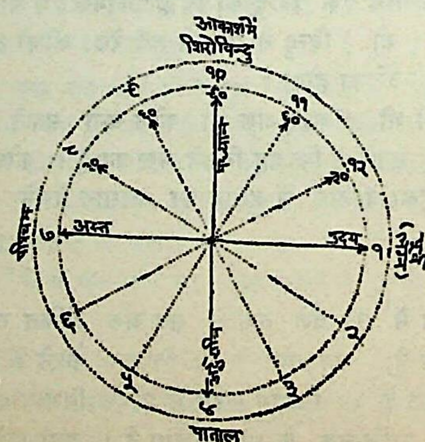
किसी मैदान में खड़े होकर देखें तो चारों ओर पृथ्वी से आकाश लगा हुआ दिखेगा और चारों ओर आकाश की गोलाई दृष्टि गोचर होगी। जहाँ आकाश पृथ्वी से मिला हुआ दिखता है उसे क्षितिज Horizon कहते हैं।

जिस स्थान पर खड़े हैं वह उस स्थान का केन्द्र हुआ। उससे ठीक सिर के ऊपर जो आकाश का बिन्दु है उसे ख स्वस्तिक या शिरोबिन्दु Zenith कहते हैं। इसी का नाम 'ख' भी है।

क्षितिज से शिरोबिन्दु तक एक गोलाई (वृत्त) का चतुर्थांश हुआ, जिसमें ९०° होते हैं। इस प्रकार यदि क्षितिज से अंश गिनना आरम्भ करें तो शिर पर ९०° होते हैं।

शिरोबिन्दु को सदा दशम स्थान समझें। जैसा चित्र संख्या १३ में बताया है। क्षितिज में पूर्व की ओर लग्न का स्थान होता है। उसके विषय में और भी अधिक बातें भाव के वर्णन क्रम में मिलेंगी।

लग्न (क्षितिज) और दशम (शिरोबिन्दु) के बीच के स्थान के ३ भाग करें ९०÷३=३०° हुए। यही एक-एक भाग की १-१ राशि हुई। प्रत्येक राशि ३०° की



चित्र संख्या १३—आकाश में अंशों का अनुमान

होगी। प्रत्येक विभाग (१ राशि) ३०° का होगा। देखें चित्र संख्या १३। इसका अभ्यास आकाश की ओर देखकर प्रत्येक दिशा में करें।

उत्तर की ओर ध्रुव तारे को देखें। वह जितने अंश ऊँचा है वही ऊँचाई उस स्थान का अक्षांश होगा। इसी प्रकार सब दिशाओं में आकाश के विभाग कर १ राशि=३०° कितना होगा, अनुमान करें तो १° कितना होगा इसका भी अनुमान हो जायगा।



अध्याय ५

नक्षत्र Constallations या Asterisms

पहिले बता चुके हैं कि राशि-चक्र के २७ सम विभाग करने से २७ नक्षत्र होते हैं। प्रत्येक नक्षत्र १३°—२०' का होता है और १ राशि में सवा दो नक्षत्र होते हैं। नक्षत्र का प्रत्येक चरण (चतुर्थ भाग) ३°—२०' का होता है।

नक्षत्रों के नाम ये हैं—

क्रम	नक्षत्र	अंग्रेजी नाम		फारसी नाम	हिन्दी चिन्ह
१	अश्विनी	Beta Arictis	बीटा अरायटिस	शरती	अ.
२	भरणी	41 arictis	४१ अरायटिस	वर्तान	भ.
३	कृतिका	Eta Tauri	ईटा टाउरी	सुरैया	कृ.
४	रोहिणी	Aldebaran	अल्डे बरान	दवरा	रो.
५	मृगशिर	Lambda Orionis	लामडा ओरयोनिस	हकुआ	मृ.
६	आर्द्रा	Gamma Geminorum	गामा जेमिनोरम	हनझा	आ.
७	पुनर्वसु	Pollux	पोल्लाक्स	झिरा	पुन.
८	पुष्य	Delta Cancri	डेल्टा कंकरी	नसरा	पु.
९	आश्लेषा	Zeta Hydrac	झीटा हायड्राई	तुर्फा	श्ले.
१०	मघा	Regulus	रेगुलस	जवहा	म.
११	पूर्वाफाल्गुनी	Theta leonis	थीटा लियोनिस	झाहेरा	पूफा.
१२	उत्तराफाल्गुनी	Denebola	डेनेबोला	सफा	उफा.
१३	हस्त	Delta Corvi	डेल्टा कोरवी	अवा	ह.
१४	चित्रा	Spica	स्पीका	समाक	चि.
१५	स्वाती	arcturus	आर्कटचूरस	गफरा	स्वा.

१६	विशाखा	Alpha Librae	अल्फा लिब्राई	ज्ञवा	वि.
१७	अनुराधा	Delta Scorpii	डेल्टा स्कारपी	अकली	अनु.
१८	ज्येष्ठा	Antares	अंटारेश	कल्ब	ज्ये.
१९	मूल	Lambada Scorpii	लामडा स्कार्पी	सोला	मू.
२०	पूर्वाषाढ़ा	Delta Sagittarii	डेंल्टा सागिट्टारी	नआ	पूषा.
२१	उत्तराषाढ़ा	Phi Sagittari	फी सागिट्टारी	वलदा	उषा.
२१अ	अभिजित्	Vega	व्हेगा	ज्ञावे	अभि.
२२	श्रवण	Altair	आल्टायर	वला	श्र.
२३	घनिष्ठा	Alpha Delphini	अल्फा डेल्फिनी	सोऊद	ध.
२४	शतभिषक्	Lambada Aquarii	लामडा अक्वेरी	अखवा	श.
२५	पूर्वाभाद्रपद	Markab	मर्काब	मुकइ	पूभा.
२६	उत्तराभाद्रपद	Algenib	अलगेनिव	मुअख	उभा.
२७	रेवती	Zeta Piscium	झीटा पीशियम	रिशा	रे.

२७ नक्षत्रों में अभिजित् नक्षत्र (२१ अ) की गणना नहीं होती । क्योंकि यह नक्षत्र क्रान्ति प्रदेश के बाहर है । इसका उपयोग मुहूर्त विषय में होता है । यह नक्षत्र आकाश में उत्तराषाढ़ा और श्रवण के बीच में कुछ हट कर है ।

उत्तराषाढ़ा नक्षत्र का चतुर्थ चरण अर्थात् अन्तिम चतुर्थ भाग और श्रवण नक्षत्र के आदि का एक भाग जो ४ घड़ी का है अर्थात् श्रवण नक्षत्र के आदि का पन्द्रहवाँ भाग इतना सब मिलाकर अभिजित् नक्षत्र का भोग माना जाता है । अर्थात् इतना अभिजित् नक्षत्र होता है ।

प्रत्येक राशि में २¼ नक्षत्र=९ चरण होते हैं । प्रत्येक राशि में किस नक्षत्र का कौन-कौन चरण आता है नीचे के चक्र से समझ में आ जायेगा ।

क्रम	राशि	नक्षत्र	चरण
१	मेष	(१) अश्विनी	IIII
		(२) भरणी	IIII
		(३) कृतिका	I०००
२	वृष	(३) कृतिका	०III
		(४) रोहिणी	IIII
		(५) मृगशिर	II००
३	मिथुन	(५) मृगशिर	००II
		(६) आर्द्रा	IIII
		(७) पुनर्वसु	III०
४	कर्क	(७) पुनर्वसु	०००I
		(८) पुष्य	IIII

क्रम	राशि	नक्षत्र	चरण
		(९) आश्लेषा	IIII
५	सिंह	(१०) मघा	IIII
		(११) पू. फा.	IIII
		(१२) उ. फा.	I०००
६	कन्या	(१२) उ. फा.	०III
		(१३) हस्त	IIII
		(१४) चित्रा	II००
७	तुला	(१४) चित्रा	००II
		(१५) स्वाती	IIII
		(१६) विशाखा	III०
८	वृश्चिक	(१६) विशाखा	०००I

(१७) अनुराधा ||||
(१८) ज्येष्ठा ||||
९ धन (१९) मूल ||||
(२०) पू. षा. ||||
(२१) उ. षा. |०००
१० मकर (२१) उ. षा. ०|||
(२२) श्रवण ||||

(२३) धनिष्ठा ||००
११ कुम्भ (२३) धनिष्ठा ००||
(२४) शतभि० ||||
(२५) पू. भा. |||०
१२ मीन (२५) पू. भा; ०००|
(२६) उ. भा. ||||
(२७) रेवती ||||

प्रत्येक नक्षत्र के ४ चरण होते हैं। इन चरणों में से जो चरण लिए गए हैं उनके लिए खड़ी लकीर और जो नहीं लिए गए उनके लिए ० बताया गया है। एक खड़ी लकीर को १ चरण समझना चाहिए।

ऊपर बताये १ चरण का चिन्ह ।
२ " " " ||
३ " " " |||
४ " " " ||||

जैसे अश्विनी के ४ चरण, भरणी के ४ चरण और कृतिका का आदि का १ चरण मिल कर मेष राशि बनी है। अब कृतिका के अन्तिम ३ चरण बचे।

ये कृतिका के अन्तिम ३ चरण, रोहिणी के ४ चरण और मृगशिर के आदि के २ चरण मिल कर वृष राशि बनती है। मृगशिर के अन्तिम २ चरण मिथुन राशि में चले जाते हैं। इसी प्रकार चक्र देखकर समझ लेना चाहिए। प्रत्येक राशि में इस प्रकार ९ चरण होते हैं। ये ९ चरण मिलकर २$\frac{१}{४}$ नक्षत्र पूरे हो जाते हैं।

प्रत्येक चरण के लिए एक अक्षर होता है। जिस चरण में किसी बालक का जन्म होता है उसी चरण के अक्षर पर बालक का नाम रखा जाता है। चरण के अनुसार अक्षर बताने वाले चक्र को होड़ाचक्र कहते हैं। प्रत्येक पंचाग में यह चक्र दिया रहता है। यह विषय आगे समझाया जायेगा।

●

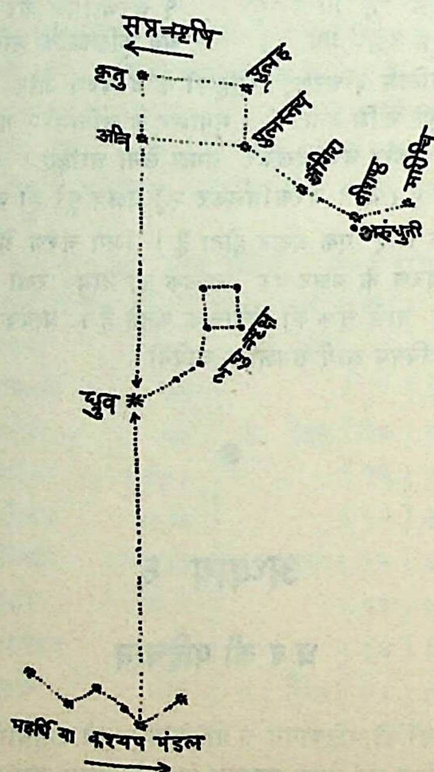
अध्याय ६

ध्रुव की पहिचान

आकाश में नक्षत्रों को पहिचानने के पहिले ध्रुव को पहिचान लेना आवश्यक है। क्योंकि सब ग्रह आदिक एवं नक्षत्र-समुदाय ध्रुव के आस पास घूमते हुए प्रतीत होते हैं। ध्रुव की पहिचान हो जाने पर नक्षत्रों का उदय अस्त और क्रान्तिवृत्त की गोलाई आदि समझ में आ जायेगी।

जिस प्रकार पृथ्वी का उत्तर और दक्षिण ध्रुव है और जिस प्रकार पृथ्वी का झुकाव ध्रुव की ओर जमीन के धरातल से २३°-१७′ पर है उसी प्रकार आकाशीय उत्तर ध्रुव भी नीचे के धरातल से ऊपर उठा हुआ दिखता है। धरातल से यह ध्रुव का झुकाव वहाँ के स्थानिक अक्षांश के अनुसार ही होता है। इस विषय का वर्णन आगे होगा।

ध्रुव तारा Pole Star के आस पास सप्तऋषि Great Bear के ७ तारे हैं। वे ध्रुव की परिक्रमा करते रहते हैं जिससे ध्रुव तारे की पहिचान सरलता से हो सकती है। इस लिए इन सप्तऋषि तारों को पहिचानना आवश्यक है। सप्तऋषियों के पास ही लघुऋक्ष little Bear के तारे भी हैं जिन्हें लघु सप्तऋषि भी कहते हैं। कभी-कभी सप्तऋषि तारागण नीचे की ओर रहने से नहीं दिखते उस समय उसके विरुद्ध दिशा में और सीध में एक तारागणों का समुदाय दिखता है, जो अंग्रेजी के 'एम' M के आकार के हैं जिन्हें महर्षि या कश्यप मंडल Cassiopea



चित्र संख्या १४—सप्तऋषि लघुऋक्ष ध्रुव और महार्ष

कहते हैं। इनसे भी ध्रुव तारे की पहिचान हो सकती है। चित्र संख्या १४ देखने से ये तारागण और ध्रुव पहिचाने जा सकते हैं।

सप्तऋषि

यह ७ तारों का झुण्ड है जो सदा उत्तर में ध्रुव की परिक्रमा करते रहते हैं। ये ७ तारे ७ ऋषि माने गये हैं। इनमें से ४ तारे खाट के पाये सदृश हैं जिनसे कुछ लम्बाई लिए एक चौकोन बनता है। इनके नीचे की ओर से एक तिरछी, छोर में कुछ उठी हुई पूँछ सरीखी गई है जिसमें ३ तारे हैं। इस चौखटे के सबसे आगे के दो पाये एक ऊपर एक नीचे है जिनको क्रतु और अत्रि कहते हैं। इन दोनों की सीध में यदि एक लकीर आगे उसी सीध की ओर बढ़ती हुई खींची जाये तो उसी सीध में एक तारा साधारण प्रकाश का दिखेगा। उसी तारे की ओर प्रतिदिन ध्यान दें तो वह कभी चलता नहीं दिखेगा और उसी तारे के आस पास सप्तऋषि घूमते दिखेंगे। दो चार बार ध्यान पूर्वक उत्तर की ओर देखने से यह ध्रुव तारा पहिचान में आ जायेगा।

कश्यप मण्डल में बाँई ओर ऊपर जो तारा है उससे एक लम्बी रेखा लम्ब स्वरूप खींची जावे तो वह भी ध्रुव में आकर मिलेगी। चित्र संख्या १४ के देखने से यह समझ में आ जायेगा। सप्तऋषि और महर्षि के बीचों बीच यह ध्रुव तारा है। इस ध्रुव के आस पास सप्तऋषि आदि पूर्व से पश्चिम को घूमते दिखते हैं।



अध्याय ७

नक्षत्रों की पहिचान

क्रान्ति प्रदेश में २७ तारागणों का समुदाय या नक्षत्र हैं और अभिजित् नक्षत्र क्रान्ति मण्डल के बाहर है। इन सबको पहिचान लेना चाहिए। इन सब नक्षत्रों को पहिचान लेने से ज्योतिष की कई बातें शीघ्र समझ में आने लगेंगी। इस कारण इन सबकी पहिचान यहाँ देते हैं। आगे इनके नक्शे भी दिए हैं, जिनके सहारे आकाश में नक्षत्रों को पहिचानने का प्रयत्न करते रहना चाहिए। देखें चित्र संख्या ३९,४०,४१ (आकाश के तीन चित्र पट)। इनके अतिरिक्त पृथक्-पृथक् नक्षत्रों को पहिचानने के लिए अलग चित्र दिये हैं। उनकी पहिचान यहाँ बताई जाती है।

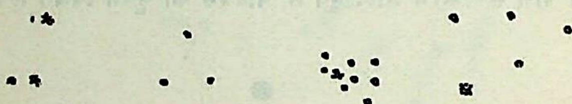
१ अश्विनी—के ३ तारे हैं परन्तु उनकी पहिचान के लिए एक और आगे का तारा मिला देने से शीघ्र पहिचाने जा सकते हैं। २ तारे बीच में पास-पास कुछ तिरछे एक से दूसरा कुछ नीचा परन्तु बराबरी से है और ऊपर छोर पर १ तारा और नीचे १ तारा है। ये दोनों तारे चमकदार हैं परन्तु उत्तर का तारा अधिक

चमकदार है और तीसरा तारा जो पूर्व में है वह सबसे तेजस्वी है। इसके पश्चिम में भी एक तारा है। देखें चित्र संख्या १५। यह नक्षत्र कुँआर के महीने में ८-९ बजे रात को पूर्व बिन्दु से कुछ उत्तर की ओर हट कर उदय होने के ६½ घण्टा के उपरान्त सिर पर आता है और ६½ घण्टा के उपरान्त पश्चिम बिन्दु से कुछ उत्तर की ओर अस्त होता है।

यह नक्षत्र जनवरी के आरम्भ में व्यालू के समय सिर पर आता है और शिरोबिन्दु से कुछ उत्तर की ओर दिखता है। इसके ३ तारों का आकार घोड़े के मुख सदृश होने से अश्विनी कहते हैं। कुँआर की पूर्णिमा के लगभग चन्द्रमा इस नक्षत्र पर रहता हैं।

२ भरणी—इसके ३ छोटे-छोटे तारे हैं जिनसे छोटा सा त्रिकोण बनता है। अश्विनी और भरणी के बीच में रेखा खींचने पर उस रेखा के उत्तर में यह त्रिकोण पड़ता है। यह अश्विनी के आगे पूर्व की ओर है इसका आकार योनि सरीखा बताया है परन्तु यह त्रिकोणाकार है। देखें चित्र संख्या १६।

३ कृतिका—यह तारागणों का गुच्छा सा दिखता है किसान लोग इसे अच्छी तरह पहिचानते हैं। वे लोग इसे धोबी का मोंगरा कहते हैं। कार्तिक के महीने में व्यालू के समय यह पूर्व में दिखता है और इसी को देखकर कार्तिक स्नान करने वाले समय



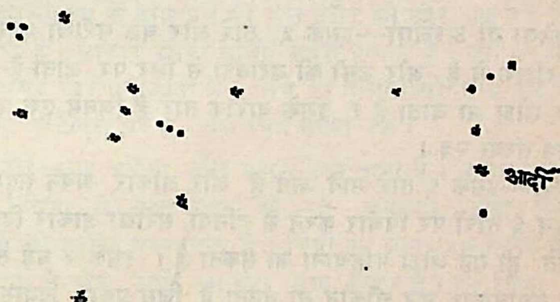
चित्र संख्या–१५ चित्र संख्या–१६ चित्र संख्या–१७ चित्र संख्या–१८
१ अश्विनी २ भरणी ३ कृतिका ४ रोहिणी

का अनुमान करते हैं। इसके ६ तारे माने जाते हैं और इसका आकार छुरा सदृश कहा है। फरवरी में यह व्यालू के समय सिर पर आता है। कार्तिक की पूर्णिमा के लगभग चन्द्र इस नक्षत्र पर रहता है। देखें चित्र संख्या १७।

४ रोहिणी—इसमें ५ तारे माने जाते हैं और आकार गाड़ी सदृश बताया गया हैं। परन्तु देखने में यह एक कोण सा दिखता है। यह कृतिका के कुछ बाजू से नीचे की ओर दिखता है। इसमें नीचे का तारा अधिक प्रकाशवान् है। ये तारे कृतिका से कुछ दक्षिण की ओर हैं। फरवरी में व्यालू के समय ये सिर पर आते हैं और कुछ दक्षिण की ओर रहते हैं। इनका आकार चित्र संख्या १८ देखने से समझ पड़ेगा।

कहते हैं शनि और मंगल जब इस शकट (गाडी) का भेदन करते हैं (इस त्रिकोण में से होकर जाते हैं) तब प्रलय होता है। इसलिए ये ग्रह शकट भेदन नहीं करते। केवल चन्द्र ही यहाँ से जाता है। इसी कारण रोहिणी को चन्द्र की स्त्री कहा है।

५ मृगशिर या मृगशिरा—इसे बहुधा सब किसान पहिचानते हैं। इसे वे हिरनी या खटोला कहते हैं। इसके चारों ओर चौकोन बनाते हुए ४ प्रकाशवान् तारे हैं। इनके बीच में ३ तारे एक दूसरे की सीध में हैं। इसे व्याध का तीर कहते हैं। व्याध का तारा बहुत नीचे हटकर अतिप्रकाशवान् है और शीघ्र पहिचाना जा सकता है। मृगशिर के अन्त में ३ तारे पास-पास एक सीध में हैं। इसे हिरन की पूंछ कहते हैं और सामने की ओर ३ तारों का एक छोटा त्रिकोण हैं उसे हिरन का मुख कहते हैं। अगहन के महीने में ब्यालू के समय यह पूर्व में दिखता है। अगहन की पूर्णिमा के लगभग चन्द्र इस नक्षत्र पर रहता है। इन तारों में मृगशिर के ३ ही तारे माने जाते हैं। और आकार हिरन सदृश माना जाता है। ये तारे आकाश गंगा के किनारे हैं और जब सिर पर आते हैं तब दिखते हैं। ये रोहिणी से कुछ दूर हट कर दक्षिण की ओर हैं। मार्च के महीने में व्यालू के समय ये सिर पर आते हैं। उदय के ६ घण्टा बाद सिर पर आते हैं। देखें चित्र संख्या १९।



चित्र संख्या—१९
५ मृगशिर

चित्र संख्या—२०
६ आर्द्रा

६ आर्द्रा—इसका एक तारा है। यह प्रायः भरणी के सीध में हैं और मृगशिर तथा पुनर्वसु के बीच में दिखता है। मार्च के महीने में लगभग व्यालू के समय सिर पर आता है और सिर से कुछ दक्षिण की ओर दिखता है। इसका आकार मणि सदृश माना है। इसका प्रकार साधारण है। यह भी आकाश गंगा के बाहरी किनारे पर है। इसकी पहिचान के लिए और तारों को पहिचान कर इसे खोजें। देखें चित्र सं० २०।

७ पुनर्वसु—इसके ४ तारे हैं। घर सदृश इसका आकार बताया है। २ तारे इसके पहिली श्रेणी के (अधिक प्रकाशवान्) और तीसरा तारा भी पहिली श्रेणी का है। इस प्रकार उत्तर की ओर २ तारे हैं और दक्षिण की ओर २ तारे हैं। उत्तर की ओर के २ तारे सबसे पहिले उगते हैं। देखें चित्र संख्या २१। तारे कितनी श्रेणियों के हैं उनकी श्रेणी का क्रम चित्रपट ३९–४०–४१ देखने से प्रगट होगा।

८ पुष्य—इसके ३ तारे लिये जाते हैं और बाण सदृश इसका आकार माना जाता है। देखें चित्र संख्या २२। ये बारीक-बारीक तारे हैं जिनका छोटा त्रिकोण बनता

है। जो देखने में एक ही तारा सदृश दिखता है। अप्रेल के महीने में व्यालू के समय यह सिर पर आता है। पूष के महीने में पूर्णिमा के लगभग चन्द्रमा इस नक्षत्र पर रहता है।

चित्र संख्या २१ — ७ पुनर्वसु

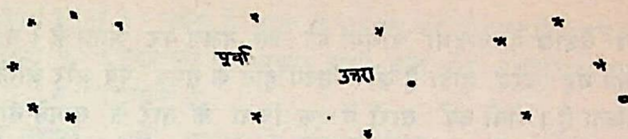
चित्र संख्या २२ — ८ पुष्य

चित्र संख्या २३ — ९ आश्लेषा

९ आश्लेषा या अश्लेषा—इसके ५ तारे और चक्र सरीखा आकार बताया है। यह पुष्य के दक्षिण में है और उसी की बराबरी से सिर पर आता है। चन्द्र पुष्य से आश्लेषा पर शीघ्र आ जाता है। इसके बारीक तारे हैं जिनमें एक प्रकाशवान् तारा है। देखें चित्र संख्या २३।

१० मघा—इसके ६ तारे माने जाते हैं और आकार भवन सदृश बताया गया है। परन्तु इन ६ तारों पर विचार करने से हंसिया सरीखा आकार दिखाई देता है। ध्यान में आते ही यह शीघ्र पहिचाना जा सकता है। इसके ४ बड़े तारे हैं। इनका आकार एक समानान्तर भुज चौकोन सा बनता है, जिस प्रकार दियासलाई की डिब्बो के ऊपर के ढक्कन को दबा देने से कुछ तिरछा चौकोन बनता है। इसके पश्चिम की ओर दक्षिण कोण का तारा तेजस्वी है और पहली श्रेणी का है। इसके दक्षिण में एक बारीक तारा है जो पाँचवाँ तारा है। पूर्व बाजू से दोनों दक्षिण के तारे अधिक तेजस्वी हैं। मई महीने के आरम्भ में व्यालू के समय यह सिर पर कुछ दक्षिण की ओर हटा हुआ दिखता है। माघ की पूर्णिमा को चन्द्रमा इसके समीप रहता है। कोई इसके ५ तारे मानते हैं। देखें चित्र संख्या २४।

११ पूर्वा फाल्गुनी
१२ उत्तरा फाल्गुनी } मघा के पूर्व में कुछ उत्तर को दोनों फाल्गुनी के ४ तारे हैं जो चौकोन सरीखे दिखते हैं। उसके पूर्व-पश्चिम बाजू का उत्तर-दक्षिण बाजू से अन्तर दुगने से कुछ कम है। पश्चिम की ओर के २ तारे पूर्वा फाल्गुनी हैं। इसके उत्तर की ओर का अधिक तेजस्वी है। पूर्व बाजू के दोनों तारों को उत्तरा फाल्गुनी कहते हैं। इसके नीचे दक्षिण का तारा अधिक तेजस्वी है। उत्तर का बारीक है। फाल्गुन में इस नक्षत्र पर पूर्णिमा को चन्द्र आता है फाल्गुन में ये दो नक्षत्र व्यालू के समय पूर्व में दिखते हैं। कोई जून में व्यालू के समय सिर पर दिखते हैं। और ठीक सिर पर आते हैं। देखें चित्र संख्या २५।



चित्र संख्या २४ — १० मघा

चित्र संख्या २५ — ११ पूर्वा फाल्गुनी, १२ उत्तरा फाल्गुनी

चित्र संख्या २६ — १३ हस्त

१३ हस्त—इसके ५ तारे हैं। आकार हाथ सदृश है। यह मघा के दक्षिण ओर है। शीघ्र पहिचाना जा सकता है। हाथ की अंगुलियों की ५ नोक सदृश ये पाँचों तारे दिखते हैं। जून के महीने में ये व्यालू समय सिर पर दिखते हैं और शिरोबिन्दु से ३०-४० अंश दक्षिण की ओर रहते हैं। देखें चित्र संख्या २६।

१४ चित्रा—हस्त के बाजू पूर्व को कुछ उत्तर की ओर यह एक ही तारा है जो बड़ा प्रकाशवान् है। आकार इसका मोती सदृश बताया है। जून के अन्तिम भाग में यह व्यालू के समय सिर पर आता है। चैत्र की पूर्णिमा को चन्द्र इस पर आता है। यह तारा प्रायः क्रांतिवृत्त पर है। देखें चित्र संख्या २७।

१५ स्वाती—यह अकेला और बहुत बड़ा तारा है। सरलता से पहिचाना जा सकता है। चित्रा से बहुत उत्तर को यह चमकता हुआ दिखता है। यह तारा चित्रा से भी अधिक प्रकाशवान् है। चित्रा के प्रायः ५० मिनट बाद यह शिरोबिन्दु पर आता है और उसके १॥ घंटा बाद डूबता है। यह चित्रा से प्रायः ३०° दक्षिण को है। इसका एक ही तारा है और आकार मूँगा सदृश बताया है। यह कुछ लाल रंग का है। देखें चित्र संख्या २८।

१६ विशाखा—इसके २ तारे हैं। चित्रा के सामने ही नीचे की ओर २ तारे चमकते हुए दिखते हैं, परन्तु चित्रा से उनका तेज कम है। फरवरी में ५ बजे प्रातः के लगभग ये सिर पर दिखते है। पहिले तारे के उपरान्त दूसरा तारा २६ मिनट के अन्तर से उगता है। उसकी बराबरी से २ और छोटे तारे हैं जिनको मिला कर देखने से एक चौकोन सा बन जाता है। इसके ४ तारे और आकार तोरण सदृश

चित्र संख्या २७ — १४ चित्रा

चित्र संख्या २८ — १५ स्वाती

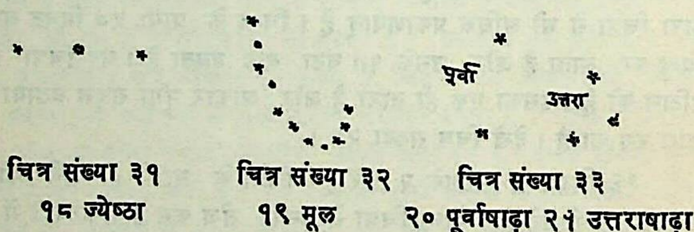
चित्र संख्या २९ — १६ विशाखा

चित्र संख्या ३० — १७ अनुराधा

मानते हैं। वैशाख में चन्द्रमा पूर्णिमा को इस नक्षत्र पर आता है। मई महीने में ब्यालू समय यह उदय होता है और उदय होने के समय पूर्व और आग्नेय कोण के बीच दिखता है। दोनों बड़े तारों में एक चित्रा के तारे के सामने नीचे की ओर दिखता है और दूसरा उसके बांई ओर दिखता है। दोनों तारे एक से तेजस्वी हैं, परन्तु चित्रा से तेज कम है। कभी चन्द्र दोनों बड़े तारों के बीच से होकर जाता है। देखें चित्र संख्या २९।

१७ अनुराधा—इसके ४ तारे हैं, जो प्राय: एक सीध में उत्तर दक्षिण को हैं और विशाखा के नीचे पूर्व को हैं। विशाखा के बड़े तारों से एक सीधी रेखा अनुराधा के तारों की सरल रेखा के छोरों से मिलाई जावे तो उत्तर की अपेक्षा दक्षिण का अन्तर अधिक प्रगट होगा। इन तारों का आकार भात की बलि (पिंड) सदृश बताया है अर्थात् किसी ने भात की बलि के ४ कौर उठाकर ४ जगह में एक रेखा में एक के नीचे एक रख दिये हों। देखें चित्र संख्या ३०।

१८ ज्येष्ठा—इसके ३ तारे प्राय: एक सीध में पूर्व पश्चिम को हैं। अनुराधा से सीधी रेखा में बीच से पूर्व को एक लम्ब खींचा जावे तो उसकी सीध में ३ अनुराधा के तारे खड़े एक के नीचे एक हैं तो ज्येष्ठा के तारे आड़े एक के बाद एक हैं। ज्येष्ठा के बीच का एक तारा पहिली श्रेणी का है। ज्येष्ठ मास में पूर्णमासी को चन्द्र इस नक्षत्र पर रहता है। इसका आकार कुण्डली सरीखा बताया है देखें चित्र संख्या ३१।



चित्र संख्या ३१ — १८ ज्येष्ठा

चित्र संख्या ३२ — १९ मूल

चित्र संख्या ३३ — २० पूर्वाषाढ़ा २१ उत्तराषाढ़ा

१९ मूल—ज्येष्ठा के पूर्व में ११ तारे हैं, जो सिंह की पूंछ सरीखा या बिच्छू के डंक सरीखा आकार गोलाई लिये बनाते हैं। यह शीघ्र पहिचाना जा सकता है। आकाश गंगा में यह क्रांतिवृत्त के दक्षिण को है। देखें चित्र संख्या ३२। इसका आकार सिंह पुच्छ सरीखा माना है। यह जून के उत्तरार्द्ध में ब्यालू के समय उदय होता है। सितम्बर में ५ बजे संध्या को और अप्रैल में प्रात: के समीप सिर पर दिखता है। अनुराधा आदि के तारों को मिला कर देखने से आकाश में एक बड़ा बिच्छू सरीखा आकार सिर से ५०-६० अंश दक्षिण की ओर लटकता हुआ दिखता है।

२० पूर्वाषाढ़ा }
२१ उत्तराषाढ़ा } इनमें प्रत्येक के २-२ तारे हैं। इनके २-२ तारे मिल कर एक समकोण सरीखा बन जाता है। २ तारे पूर्वाषाढ़ा के आकाश गंगा के बाहर हैं। उत्तराषाढ़ा की उत्तर-दक्षिण लम्बाई से पूर्व-पश्चिम लम्बाई

का प्रमाण प्रायः दुगुना है। अप्रैल के प्रातः के लगभग यह चौकोन सिर पर आता है। देखें चित्र संख्या ३३। पूर्वाषाढ़ा का आकार हाथी दांत और उत्तराषाढ़ा का आकार मंच (मचैया) सरीखा माना है।

२१½ अभिजित्—दोनों आषाढ़ा के बाद अभिजित् का तारा लिया जाता है। परन्तु यह क्रांतिवृत्त प्रदेश से दूर और बाहर है इस कारण इसे नक्षत्र की गणना करते समय छोड़ देते हैं। यह तारा उत्तर की ओर आकाश गंगा के किनारे है और बड़ा प्रकाशवान् है। इसके पास दो छोटे-छोटे तारे हैं जिनसे एक त्रिकोण सरीखा दिखता है। इस नक्षत्र को मिलाने से २८ नक्षत्र हो जाते हैं परन्तु इसे छोड़कर केवल क्रांति प्रदेश के ही २७ नक्षत्र लिये जाते हैं। यह प्रायः प्रथम श्रेणी का है। देखें चित्र संख्या ३४।

२२ श्रवण—इसके ३ तारे हैं जिनमें बीच का तारा पहिली श्रेणी का और बहुत चमकीला है। ये तारे आकाश गंगा में उत्तराषाढ़ा से बहुत उत्तर को कुछ पूर्व कोने में हैं। श्रावण मास की पूर्णमासी को चंद्र इस नक्षत्र के समीप आता है। ये तारे शीघ्र

चित्र संख्या ३३ चित्र संख्या ३५ चित्र संख्या ३६
२१½ अभिजित् २२ श्रवण २३ धनिष्ठा

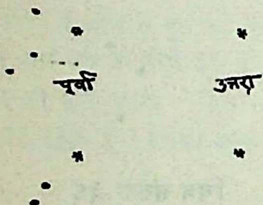
पहिचाने जा सकते हैं। एक सीध में ये तीनों तारे हैं और प्रायः उत्तर दक्षिण कुछ तिरछे हैं। इन तीन तारों का आकार वामन औतार के चरण सदृश माना जाता है परन्तु देखने में ये बाण सरीखे दिखते हैं। देखें चित्र संख्या ३५।

२३ धनिष्ठा—इसके ५ तारे हैं जो पास-पास हैं। श्रवण के पूर्व कुछ उत्तर बाजू इसका झुमका दिखता है। इसका आकार मृदंग सरीखा कहा गया है। नीचे का छोटा तारा छोड़ कर ४ तारों को देखें तो चपटा चौकोन सरीखा दिखता है। यह आकाश गंगा के बाहर है। ये ४ तारे पास-पास और मंद ज्योति के हैं। देखें चित्र संख्या ३६।

२४ शतभिषक या शतभिषा—इसे शततारक भी कहते हैं। कहा जाता है कि इसमें १०० तारों का झुण्ड है। इसका आकार वृत्त Circle सरीखा बताया गया है परन्तु कोई इसमें से १० तारा को कोई १ ही तारा को ही शतभिषक् मानते हैं। यह नवम्बर में व्यालू के समय सिर पर आता है और प्रायः २८ अंश सिर से दक्षिण की ओर दिखता है। इसीके सीध में बहुत नीचे दक्षिण में १ बहुत ही प्रकाशवान् तारा है जिसे याममत्स्य कहते हैं। दोनों का अन्तर ८ अंश का है। १०० तारे होने से इसका नाम शततार पड़ा है। वहाँ बहुत से तारेगण पास-पास हैं।

२५ पूर्व भाद्रपद } यामसत्स्य और शतभिषक् के प्रकाशवान् तारा को सरल
२६ उत्तर भाद्रपद } रेखा से मिलाओ और इस रेखा को उत्तर की ओर बढ़ाते जाओ तो इस रेखा के कुछ पश्चिम की ओर पूर्व भाद्रपद के २ तारे आते हैं। याममत्स्य से जितने अंश पर उत्तर में शतभिषक् है उतने ही अन्तर पर शतभिषक् से उत्तर में पूर्व भाद्रपद का १ तारा है और उसके बाजू ठीक उत्तर में १३° पर पूर्व भाद्रपर का दूसरा तारा है। ये दोनों तारे एक से तेजस्वी हैं। नवम्बर में व्यालू के समय सिर पर आते हैं इस समय शिरोबिन्दु के दक्षिण ५-६ अंश पर रहते हैं और दूसरा उतने पर ही उत्तर को रहता है। इन दोनों तारों के बीच जितना अन्तर है उससे भी अधिक अन्तर पर प्रत्येक के पूर्व में एक-एक तारा है इस प्रकार २ तारे हैं। इन दोनों को उत्तर भाद्रपद कहते हैं। इन दोनों में उत्तर का अधिक तेजस्वी है यह दूसरी श्रेणी का तारा है।

पूर्व भाद्रपद के २ तारे और उत्तर भाद्रपद के २ तारे मिलकर एक चौकोन सरीखा बनता है। देखें चित्र संख्या ३७। भाद्रपद मास की पूर्णिमा को चन्द्रमा इस नक्षत्र के



चित्र संख्या ३७
२५ पूर्वा भाद्रपद, २६ उत्तरा भाद्रपद



चित्र संख्या ३८
२७ रेवती

समीप आता है। पूर्व भाद्रपद का आकार मञ्च सरीखा और उत्तर भाद्रपद का आकार यमल (जोड़ा) सरीखा बताया है।

२७ रेवती—इनमें ३२ तारे हैं। आकार मृदङ्ग सरीखा है और वैसा ही दिखता है। ये छोटे-छोटे तारे हैं। उत्तर भाद्रपद के दोनों तारों में से दक्षिण के तारे के आग्नेय कोण के लगभग १०-१० अंश पर तारों की १ कतार है जो पूर्व-पश्चिम गई है। इसमें ६-७ तारे तेजस्वी हैं और प्रायः एक दूसरे के समानान्तर पर हैं। इनके दक्षिण में अश्विनी है। देखें चित्र संख्या ३८।

इन नक्षत्रों के अतिरिक्त आकाश गंगा याममत्स्य आदि चित्र में दिये हैं जिनको देखकर आकाश में पहिचानने का प्रयत्न करें।

आकाश गंगा Milk way

यह आकाश में उत्तर से दक्षिण की ओर तिरछी गई हैं। इससे बहुत से तारों का घना समुदाय होता है, जिसके कारण आकाश का वह भाग श्वेत सरीखा दिखता है जैसे बादल के टुकड़े छाये हों।

क्रांति प्रदेश का वर्णन आगे मिलेगा।

अश्विनी से १२ नक्षत्र तक सब तारे विषुवत्‌वृत्त के उत्तर में हैं और स्वाती अभिजित् श्रवण धनिष्ठा पूर्वाभाद्रपद उत्तराभाद्रपद रेवती इनके तारे भी विषुवत् वृत्त के उत्तर में हैं। शेष तारे दक्षिण में हैं।

चन्द्र का भ्रमण मार्ग—चन्द्रमा इस प्रकार नक्षत्रों में से होकर जाता है।

१—इन १० नक्षत्रों के दक्षिण की ओर से चन्द्रमा जाता है। नक्षत्रों के नाम के आगे उनकी क्रम संख्या दी है।

(१) अश्विनी १, (२) भरणी २. (३) पुनर्वसु ७, (४) पू० फा० ११, (५) उ० फा० १२, (६) स्वाती १५, (७) श्रवण २२, (८) धनिष्ठा २३, (९) पू० भा० २५, (१०) उ० भा० २६।

२—इन ५ नक्षत्रों के उत्तर से चन्द्रमा जाता है।

(१) मृग० ५, (२) आर्द्रा ६, (३) आश्लेषा ९, (४) हस्त १३, (५) मूल १९।

३—शेष १२ नक्षत्रों के दोनों ओर से, कभी पास से कभी उन को डाकते हुए, चन्द्रमा जाता है।

(१) कृतिका ३, (२) रोहिणी ४, (३) पुष्य ८, (४) मघा १०, (५) चित्रा १४, (६) विशाखा १६, (७) अनुराधा १७, (८) ज्येष्ठा १८, (९) शतभिषक् २४, (१०) पू० षा० २०, (११) उ० षा० २१, (१२) रेवती २७।

आकाश के नकशे को देखने की रीति

नकशे में जो दिशाएँ दी हैं उनके सम्बन्ध में कुछ भ्रम हो सकता है। कारण यह है कि उत्तर के उपरान्त बांई ओर पूर्व फिर दक्षिण फिर पश्चिम दिया है। पूर्व के स्थान में पश्चिम होने का कारण नीचे समझाया गया है।

नकशे को आकाश से मिलान करने के लिये खुले मैदान में बैठें जहाँ से आकाश अच्छी तरह दिखे। मुँह ऊपर की ओर कर आकाश को देखें फिर नकशे को लौटाकर सिर के ऊपर रखें जिससे नकशे की पीठ आकाश की ओर रहे और नकशा पढ़ने में आ सके। नकशे में उत्तर द्यिा है वह उत्तर ध्रुव की ओर करें और नकशे के पूर्व को पूर्व की ओर रखें तो नकशे की शेष दिशाएँ ठीक स्थिति पर आ जायेंगी। इसके उपरान्त तारा देखने का जो समय बताया है उन्हीं महीनों की उन्हीं तारीखों को जैसा आगे बताया है उस नकशे के अनुसार ताराओं को खोजें तो अवश्य मिलेंगे।

इसी प्रकार आकाश में देखते-देखते और पहिचानने का प्रयत्न करते रहने से मुख्य-मुख्य नक्षत्रों की अवश्य पहिचान होने लगेगी। जब आकाश खुला रहे और अँधेरी रात हो, तारा गणों का अवलोकन कर नक्षत्र पहिचानने का प्रयत्न करते हैं।

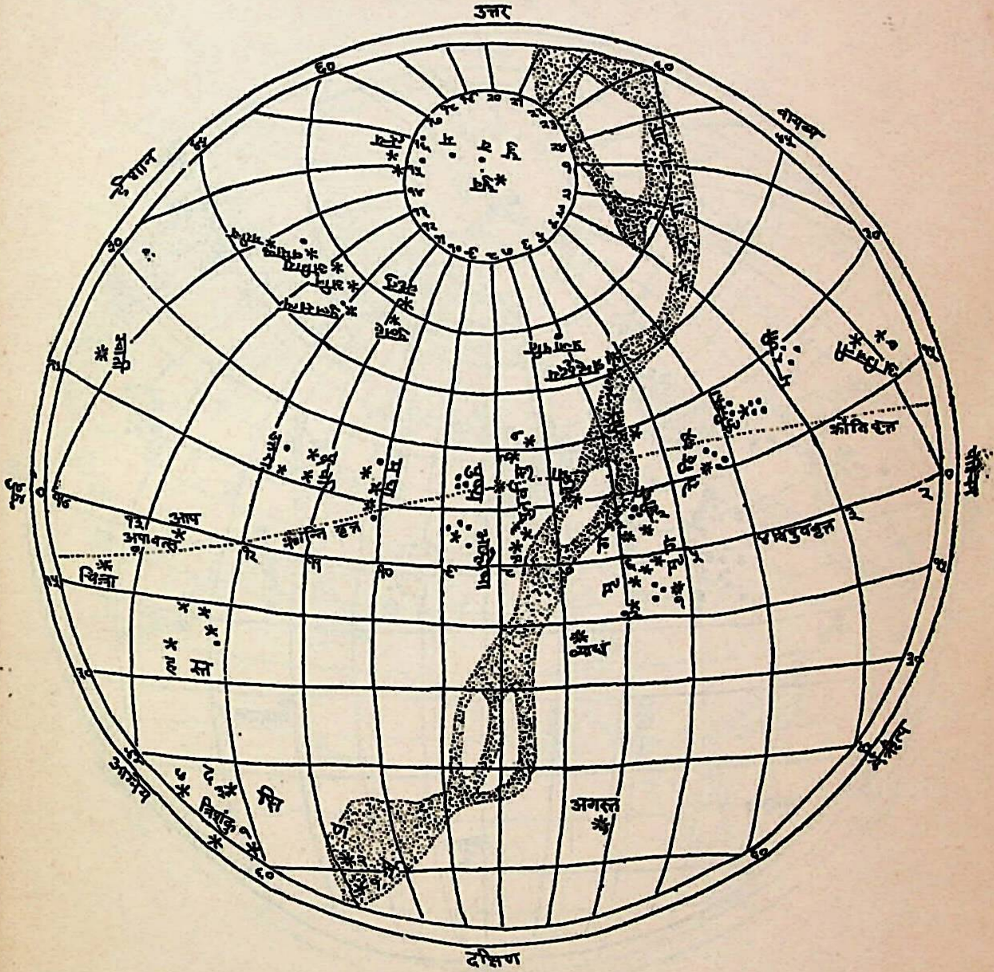
जब नक्षत्रों की पहिचान हो जावे तो ग्रहों की भी खोज करें। किसी पञ्चांग से प्रगट हो सकता है कि अमुक ग्रह अमुक नक्षत्र या राशि पर है। इनको समझ लेने से ज्योतिष शास्त्र की और बातें शीघ्र समझ में आने लगेंगी।

आकाश का नकशा देखने का समय

तारागण प्रतिदिन पश्चिम को १° पीछे हटते हैं। जो तारा आज संध्या को ७ बजे सिर पर है वह कल ७ बजने को ४ मिनट शेष रहेंगे तब सिर पर आवेगा। अर्थात् ४ मिनट पहिले दिखेगा।

वृत्त में ३६०° होते हैं और २४ घण्टे में एक वृत्त का चक्कर पूरा होता है। अर्थात् एक दिन रात में सूर्य या नक्षत्र का पूरा एक चक्कर हो जाता है। इस प्रकार से १ घण्टे में १५° या ४ मिनट में १° नक्षत्र चलते हैं। इसी हिसाब से प्रति दिन नक्षत्रों की चाल में १° का अन्तर पड़ जाता हैं। अन्तर=१ दिन में=४ मिनट। १५ दिन=१ घण्टा। १ मास=२ घण्टा। ३ मास=६ घण्टा।

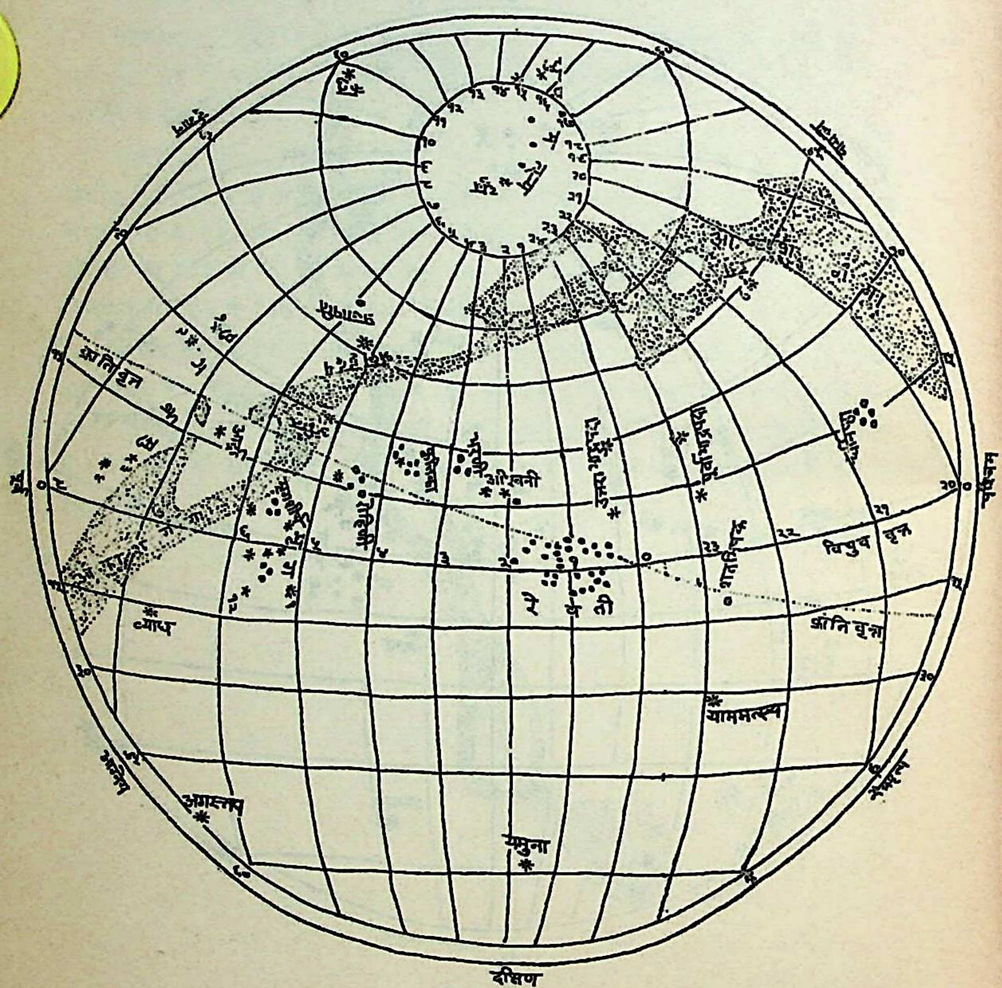
कारण यह है कि सावन मास से नक्षत्र दिन का मान २३ घण्टा ५६ मि० ४.०९०६ से० का है अर्थात् सावन दिन से नक्षत्र दिन लगभग ४ मिनट छोटा है। नक्षत्र उदय होने से अस्त होकर फिर दूसरे दिन उदय होने तक १ नक्षत्र दिन होता है। वह सूर्य के समय से ४ मिनट छोटा है अर्थात् सूर्य का विषुवांश प्रतिदिन ४ मिनट बढ़ता है।



चित्र संख्या ३९—फागुन मास का आकाश का चित्र पट

तारा की श्रेणी

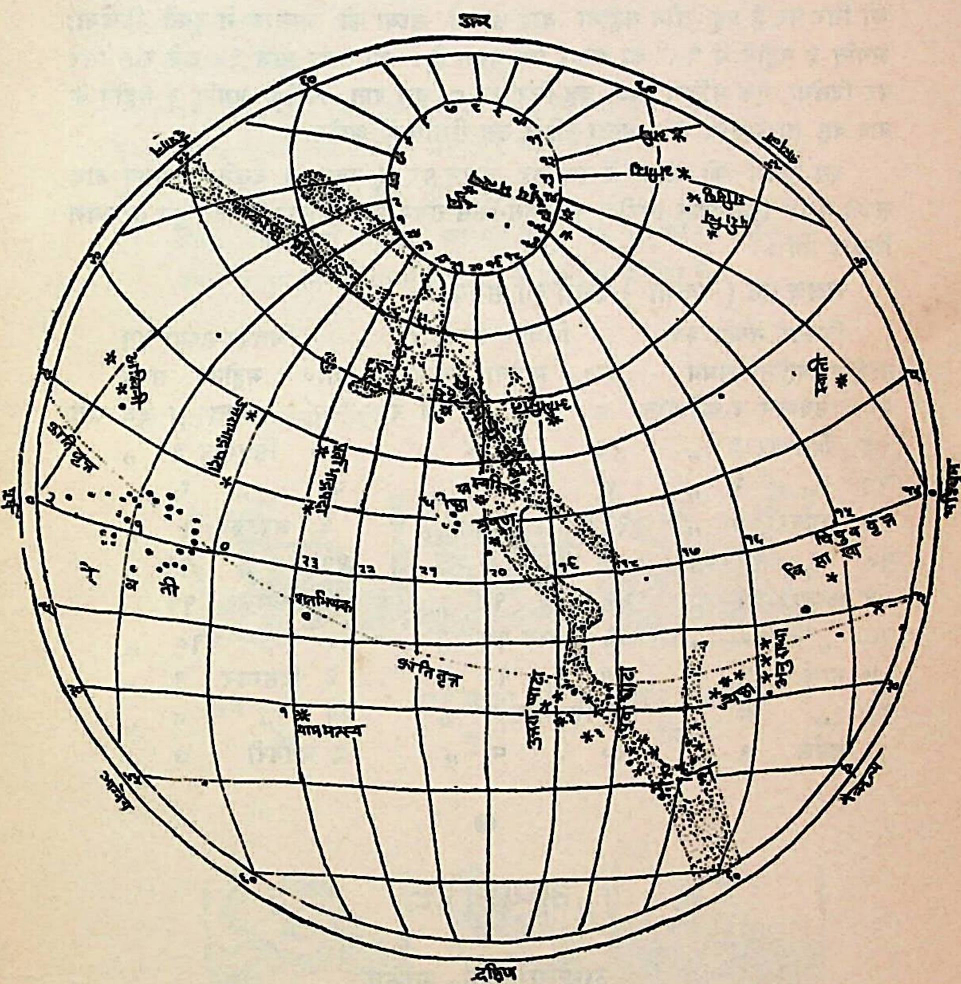
पहिली दूसरी तीसरी चौथी पांचवीं छटवीं



चित्र संख्या ४०—भाद्रपद मास का आकाश का चित्र पट

तारा की श्रेणी

पहिली दूसरी तीसरी चौथी पांचवी छटवीं



चित्र संख्या ४१—मार्गशीर्ष मास का आकाश का चित्र पट

इस हिसाब से आज ७ बजे संध्या को जो नक्षत्र सिर पर दिखेगा वह कल ७ बजे संध्या को १° पश्चिम में हटा दिखेगा। १५ दिन में वहीं तारा (१५ × ४)=६० मिनट (१ घण्टा) पहिले अर्थात् ६ बजे संध्या को सिर पर आवेगा। ७ बजे संध्या को उसे देखेंगे तो १५° पश्चिम को वह तारा हटा दिखेगा। जो नक्षत्र आज ७ बजे संध्या को सिर पर है वह तीन महीना बाद ७ बजे संध्या को आकाश में डूबते दिखेगा; अर्थात् ३ महीने में ९०° का अन्तर पड़ जाता है। जो तारा आज १० बजे रात सिर पर दिखेगा, एक महिना बाद वह सिर पर ८ बजे रात दिखेगा अर्थात् १ महीने के बाद वह तारा आज से २ घण्टा पहिले उस स्थिति में आवेगा।

इस नियम को ध्यान में रख कर नक्षत्र पर (नकशा) देखने का समय जान सकते हैं कि किस-किस तारीख को किस-किस समय पर चित्रपट में दिए हुए तारागण दिखाई देंगे।

नक्षत्र पट (नकशा) देखने का समय।

चित्रपट संख्या ३९			चित्रपट संख्या ४०			चित्रपट संख्या ४१		
तारीख	महीना	समय	ता०	महीना	समय	ता०	महीना	समय
२०	नवम्बर	४ बजे रात	८	मई	५ बजे रात	२२	अगस्त	४ बजे रात
६	दिसम्बर	३ ,,	२३	,,	४ ,,	६	सितम्बर	३ ,,
२१	,,	२ ,,	७	जून	३ ,,	२१	,,	२ ,,
५	जनवरी	१ ,,	२२	,,	२ ,,	६	अक्टूवर	१ ,,
२०	,,	१२ ,,	७	जुलाई	१ ,,	२१	,,	१२ ,,
४	फरवरी	११ ,,	२२	,,	१२ ,,	५	नवम्बर	११ ,,
२०	,,	१० ,,	६	अगस्त	११ ,,	२०	,,	१० ,,
७	मार्च	९ ,,	२१	,,	१० ,,	६	दिसम्वर	९ ,,
१२	,,	८ ,,	५	सितम्बर	९ ,,	२१	,,	८ ,,
६	अप्रैल	७ ,,	२०	,,	८ ,,	५	जनवरी	७ ,,



अध्याय ८

राशियों के स्वरूप

आकाश में इन नक्षत्रों का आकार यदि ध्यान पूर्वक देखें तो कुछ आकृतियाँ बनी हुई प्रतीत होंगी।। इन्हीं आकृतियों के अनुमान से राशियों का नाम पड़ा है। जैसे :-

१—मेष=मेढ़ा

२—वृष=बैल

३—मिथुन=स्त्री पुरुष का जोड़ा।
४—कर्क=केकड़ा।
५—सिंह=सिंह।
६—कन्या=नाव में बैठी कुमारी।
७—तुला=तराजू।
८—वृश्चिक=विच्छू।
९—धन=धनुषधारी पुरुष जिसका धड़ घोड़े सरीखा है।
१०—मकर=सिर हिरन सरीखा और धड़ घोड़े सरीखा।
११—कुम्भ=हाथों में घड़ा लिए हुए पुरुष।
१२—मीन= मछलियाँ जिनमें १ का मुँह दूसरी की पूछ की ओर है।

इनके आनुमानिक चित्र संख्या ४२ से ५३ तक में दिए हैं।

राशियों के कल्पित चित्र



चित्र संख्या ४२ मेष | चित्र संख्या ४३ वृष | चित्र संख्या ४४ मिथुन



चित्र संख्या ४५ कर्क | चित्र संख्या ४६ सिंह | चित्र संख्या ४७ कन्या



चित्र संख्या ४८ तुला | चित्र संख्या ४९ वृश्चिक | चित्र संख्या ५० धन



चित्र संख्या ५१ मकर | चित्र संख्या ५२ कुंभ | चित्र संख्या ५३ मीन

अध्याय ६

पृथ्वी के अक्षांश और देशान्तर का स्पष्टीकरण

पृथ्वी के आक्षांश और देशान्तर का अधिक काम पड़ता है। इस कारण इनको समझ लेना चाहिए।

पृथ्वी नारंगी के सदृश गोल है और दोनों सिरों पर चपटी है। पृथ्वी के इन दोनों सिरों को ध्रुव Pole कहते हैं। उत्तर के छोर को उत्तर ध्रुव और जो ठीक उसके विरुद्ध नीचे का छोर है उसे दक्षिण ध्रुव कहते हैं। दोतों ध्रुवों के बीचोंबीच एक कल्पित रेखा गई है उसे धुरी axle कहते हैं। दोनों ध्रुवों के बीचोंबीच ध्रुवों से समानान्तर दूरी पर जो एक कल्पित रेखा पूर्व पश्चिम पृथ्वी की सतह पर से पृथ्वी को घेरते हुए गई है उसे विषुववृत्त या विषुवत् रेखा या भूमध्य रेखा Equator कहते हैं। इस रेखा से उत्तर या दक्षिण ध्रुव समानान्तर दूरी पर हैं। इसे भूमध्य रेखा कहते हैं।

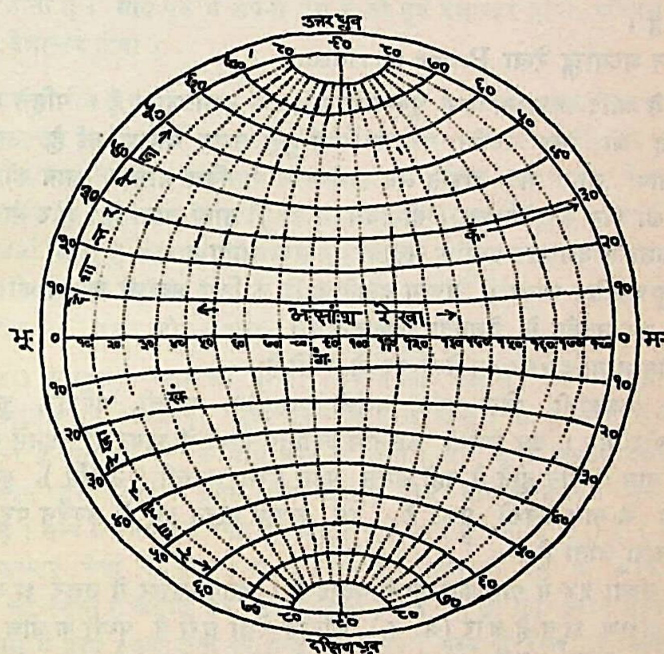
अक्षांश Latitude

भूमध्य रेखा से उत्तर या दक्षिण को समानान्तर दूरी पर जो कल्पित रेखाएँ पथ्वी की सतह पर पूर्व-पश्चिम बनाई गई हैं वे रेखाएँ अक्षांश कहलाती हैं। इन

रेखाओं से प्रकट होता है कि किसी स्थान की उत्तर या दक्षिण दूरी भूमध्य रेखा से कितनी हैं।

अक्ष=धुरी, अक्ष+अंश=धुरी का कोणात्मक अंश।

अर्थात् उससे प्रगट होता है कि उस स्थान में पृथ्वी की धुरी का झुकाव कोणात्मक अंश क्या है और भूमध्य रेखा से उत्तर या दक्षिण किसी स्थान विशेष की कोणात्मक दूरी का ही नाम अक्षांश है।



चित्र संख्या ५४—अक्षांश और देशान्तर

चित्र संख्या ५४ देखने से अक्षांश समझ में आ जायेगा। भूमध्यरेखा पर अक्षांश ० होता है और उसे निरक्ष देश कहते हैं क्योंकि वहाँ कुछ भी अक्षांश नहीं रहता। यहाँ से ज्यों-ज्यों उत्तर या दक्षिण की ओर जाओ तो अक्षांश बढ़ता जायेगा।

देशान्तर Longitude देश+अंतर=देशों का अंतर।

इसे मध्याह्न रेखा Meridian भी कहते हैं। किसी प्रधान रेखा Prime meridian से पूर्व या पश्चिम में किसी स्थान का अन्तर इससे नापा जाता है।

किसी प्रधान मध्याह्न रेखा से आरम्भ कर समानान्तर दूरी पर भूमध्य रेखा पर जो रेखाएँ पूर्व-पश्चिम की दूरी बताने को खींची जाती हैं, वे ही देशान्तर रेखाएँ कहलाती हैं। इन रेखाओं का एक छोर उत्तर ध्रुव में और दूसरा छोर दक्षिण ध्रुव

में मिलता है। ये रेखाएँ भूमध्य रेखा को काटते हुए उत्तर और दक्षिण को जाती हैं। इनके बीच का हिस्सा अपने शिर के ऊपर से होकर जाता है। ये भी कल्पित रेखाएँ हैं। यद्यपि ये रेखाएँ उत्तर दक्षिण खींची गई हैं परन्तु इससे किसी स्थान का पूर्व पश्चिम अन्तर प्रधान मध्याह्न रेखा के स्थान से मालूम होता है जैसा चित्र संख्या ५४ के देखने से प्रकट होगा। जब सूर्य इस रेखा पर आता है तो उन सब स्थानों में एक ही समय मध्याह्न (दोपहर) होता है, जहाँ-जहाँ से वह रेखा जाती है, उसके पैर के नीचे वाले देशों में उस समय अर्द्धरात्रि होती है। इसी कारण इसे मध्याह्न रेखा भी कहते हैं।

प्रधान मध्याह्न रेखा Prime meridian

जहाँ से आदि स्थान मानकर पूर्व-पश्चिम अन्तर नापा जाता है। पहिले उज्जैन से—अर्थात् जो रेखा उज्जैन पर से होते हुए उत्तर दक्षिण गई है, उससे—देशान्तर नापा जाता था। परन्तु अब इंग्लैण्ड के ग्रीनविच नामक स्थान को प्रधान मध्याह्न रेखा मान कर देशान्तर (ग्रीनविच से ही) नापा जाता है। और आज कल के सब नकशों में देशान्तर इसी के अनुसार बताया जाता है।

परन्तु ज्योतिष शास्त्र में पंचांग बनाने आदि के लिए अब भी उज्जैन को प्रधान रेखा मान कर उज्जैन से देशान्तर निकालते हैं।

प्राचीन मध्याह्न रेखा इन देशों पर से जाती है :—

लंका, देवकांची, श्वेत पर्वत, पर्जली, वत्सगुल्म, अवन्ती, गर्गराट, कुरुक्षेत्र, रोहितक और मेरु। इन स्थानों का नाम ज्योतिष ग्रन्थों में आया है। इनमें से कुछ स्थानों के नाम प्राचीन होने से नहीं समझ पड़ते परन्तु अवन्ती (उज्जैन), कुरुक्षेत्र, लंका आदि के नाम सबको प्रकट हैं। इस कारण भारत वर्ष में उज्जैन पर से ही देशान्तर नापा जाता है।

चित्र संख्या ५४ में गोलाकार पृथ्वी बताई है। इसके उत्तर में उत्तर ध्रुव और दक्षिण में दक्षिण ध्रुव है और (अ. ब.) कल्पित रेखा धुरी है पृथ्वी के बीच से जो (भू. म.) रेखा दोनों ध्रुवों के समानान्तर पर पूर्व-पश्चिम गई है वही भूमध्य रेखा है।

इस रेखा के उत्तर और दक्षिण को जो आड़ी रेखाएँ लकीर द्वारा बताई गई हैं ये अक्षांश हैं। ये रेखाएँ पूर्व-पश्चिम खींची गई हैं। ये आड़ी रेखाएँ उत्तर-दक्षिण नाप के लिए मानों नाप सूचक हदबंदी है।

भूमध्य रेखा पर अक्षांश ० है। यहाँ से उत्तर ध्रुव तक १ से ९० अंश तक अक्षांश बने हैं। इसी प्रकार दक्षिण ध्रुव की ओर भी १ से ९० अंश तक अक्षांश दिये हैं क्योंकि एक वृत्त के चौथाई भाग में ९० अंश होते हैं। भूमध्य रेखा से उत्तर या दक्षिण में कोई स्थान जितने अंश दूरी पर होगा, वही अंश उस स्थान का अक्षांश है। वह स्थान उत्तर में होगा तो उत्तर अक्षांश कहलायेगा, दक्षिण में होगा तो दक्षिण अक्षांश कहलायेगा। इन अक्षांशों का नाप चित्र संख्या ५४ में गोला के किनारे-किनारे बताया है।

देशान्तर—जो रेखाएँ उत्तर ध्रुव से होकर भूमध्य रेखा को काटती हुई दक्षिण ध्रुव में जाकर मिली हैं ये देशान्तर रेखाएँ हैं, जो बिन्दुओं द्वारा चित्र में बताई गई हैं। ये रेखांश भी कहलाती हैं। इनका नाप पूर्व पश्चिम होता है। उत्तर-दक्षिण रेखाएँ तो केवल नाप बताने वाली हदबंदी रेखाएँ हैं।

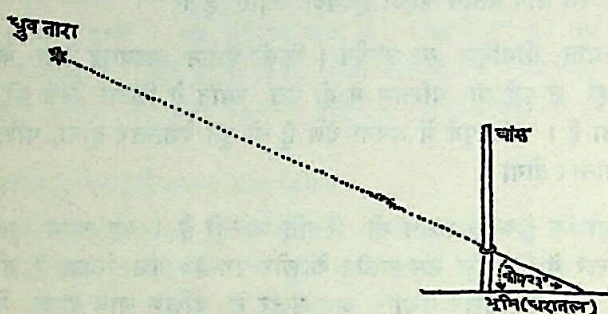
कोई स्थान ग्रीनविच या उज्जैन (किसी प्रधान मध्याह्न रेखा के स्थान से) चाहे वह वहाँ से पूर्व या पश्चिम में हो उस स्थान से कितने अंश की दूरी पर है, बताया जाता है। यदि पूर्व में अपना देश है तो पूर्व देशान्तर होगा, पश्चिम में है तो पश्चिम देशान्तर होगा।

मान लो कि (क.) स्थान की स्थिति जाननी है। यह स्थान भूमध्य रेखा से ३० अंश उत्तर में है। देखें उस लकीर के छोर पर ३० अंश लिखा है, तो उस स्थान का अक्षांश ३० अंश उत्तर हुआ। अब उत्तर से दक्षिण जाने वाली रेखा का नाप देखें जो (क.) स्थान पर से जाती है। यह देशान्तर रेखा बिन्दुओं से बताई गई है। नीचे १४०° लिखा है यह नाप पश्चिम से पूर्व का है। यदि ० स्थान पर प्रधान मध्याह्न रेखा का देश है तो वहाँ से (क.) का देशान्तर १४०° पूर्व हुआ। इस प्रकार (क.) का अक्षांश ३०° उत्तर और देशान्तर १४०° पूर्व हुआ।

दूसरा उदाहरण—मान लो (ख.) स्थान का अक्षांश देशान्तर जानना है। आड़ी अक्षांश की रेखायें १०° और २०° के बीच में हैं (ख.) दोनों के बीच १० का अन्तर है मान लो १०° के आगे और ५° आगे (ख.) है तो भूमध्य रेखा से १०° +५°=१५° दूरी पर है। इससे इसका अक्षांश १५° दक्षिण हुआ। अब देशान्तर जानना है। मान लो मध्याह्न रेखा का स्थान ८१°—पर है जहाँ (ग.) है। ३०° और ४०° देशान्तर रेखा के बीच (ख.) स्थान है। मान लो ३०° के आगे ४° और चलकर यह स्थान है अर्थात् ३४° पर (ख.) स्थान है, तो यह स्थान मध्याह्न रेखा से पश्चिम में हुआ। अब दोनों का अन्तर निकाला (मध्यान्ह रेखा ८१° अपना स्थान ३४°)=४७° देशान्तर हुआ। इससे (ख.) का देशान्तर ४७° पश्चिम हुआ। क्योंकि (ग.) से ४७° पश्चिम में है।

(१) किसी स्थान के अक्षांश जानने की युक्ति

एक पतली सुतली लेकर उसका एक छोर सम धरातल (भूमि) में लगाकर रखें और दूसरा छोर ध्रुव तारा की सीध मिलाकर किसी ऊँची चीज पर (या किसी बाँस को गाड़ कर या किसी वृक्षादि से) इस प्रकार बाँध दें कि सुतली का ऊपरी छोर ठीक ध्रुव तारा की सीध में रहे, तो उस सुतली से जमीन के धरातल पर एक कोण बनेगा। उस कोण को नाप लें, जितने अंशादि वह कोण नाप में होगा वही वहाँ का अक्षांश होगा। यहाँ पर २३° का कोण बना है इससे अक्षांश २३° हुआ। देखें चित्र संख्या ५५।



चित्र संख्या ५५–अक्षांश और ध्रुव की ऊँचाई का नाप

सारांश इसका यह है कि उस स्थान पर ध्रुव तारा की जो ऊँचाई है उसी ऊँचाई का कोणात्मक अंश वहाँ का अक्षांश होता है। उत्तरी गोलार्द्ध के किसी भी स्थान का अक्षांश ध्रुव तारा की उँचाई से ज्ञात हो सकता है। जैसे लाहौर में ध्रुव तारा की ऊँचाई ३१°–३०′ है तो वहाँ अक्षांश भी ३१°–३०′ होगा। नरसिंहपुर में ध्रुव की ऊँचाई का कोण २२°–५७′ है तो यहाँ का अक्षांश २२°–५७′ हुआ।

उत्तरी गोलार्द्ध North Hemis Phere

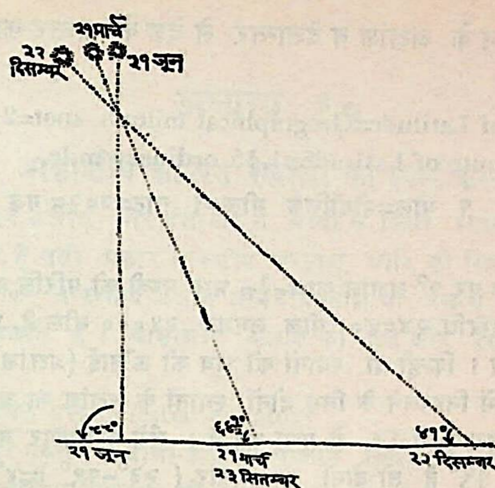
भूमध्य रेखा से पृथ्वी के २ भाग हो जाते हैं। एक भूमध्य रेखा से उत्तर का आधा भाग, दूसरा दक्षिण का आधा भाग। भूमध्य रेखा से जो उत्तर का भाग है वही उत्तरी गोलार्द्ध है। इसके दक्षिण का भाग दक्षिणी गोलार्द्ध कहलाता है।

ध्रुव तारा उत्तर में है इसलिए वह केवल उत्तरी गोलार्द्ध वालों को दिखता है, यह दक्षिणी गोलार्द्ध वालों को नहीं दिखता।

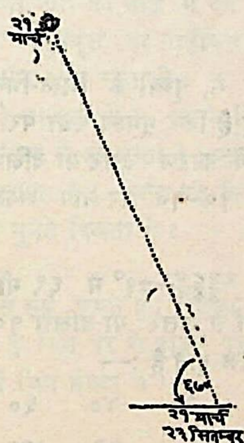
(२) अक्षांश जानने की दूसरी रीति।

२१ मार्च या २३ सितम्बर को (जब दिन-रात बराबर रहता है) किसी स्थान के मध्याह्न कालीन (दोपहर के) सूर्य की जो ऊँचाई है वह ऊँचाई ९०° से घटा दें, घटाने से जो शेष रहे, वह उस स्थान का अक्षांश होगा।

जिस प्रकार ध्रुव तारा की ऊँचाई निकाली गई थी उसी प्रकार सूर्य की ऊँचाई भी निकाली जाती है। देखें चित्र संख्या ५६ और ५७



चित्र संख्या ५६-इलाहाबाद में मध्याह्न के समय सूर्य की ऊँचाई



चित्र संख्या ५७-नरसिंह पुर में मध्याह्न के समय सूर्य की ऊँचाई

जैसे यहाँ इलाहाबाद की भिन्न-भिन्न समय की सूर्य की ऊँचाई नापी गई है, २१ मार्च या २३ सितम्बर को मध्याह्न समय की ऊँचाई ६४½° है तो (९०-६४½)= २५½ अक्षांश हुआ।

नरसिंहपुर में ऊँचाई (उसी समय की) ६७° है तो (९०-६७)=२३° वहाँ का अक्षांश हुआ।

(३) स्कूल के नक्शों में प्रायः प्रत्येक स्थान का अक्षांश मिल सकता है। नक्शे में अपना स्थान खोजकर अक्षांश जान लें। यदि अपना स्थान न मिले तो समीप के किसी बड़े स्थान को खोज कर उससे अक्षांश जान लें।

किसी स्थान के अक्षांश व देशान्तर से देश के अन्तर का नाप मील में करना।

A mile of Latitude=Geographical mile=A knot=2028 yards. A knot=one minute of Latitude=1.15 ordinary mile.

अक्षांश का १ मील=भौगोलिक मील=१ नाट=२०२८ गज १ कला=१.१५ साधारण मील।

भूमध्य रेखा पर १° अक्षांश का=$\frac{१}{३६०}$ भाग पृथ्वी की परिधि का। भूमध्य रेखा पर पृथ्वी की परिधि २४८४० मील, लगभग २५००० मील है, इस हिसाब से १° में ६९ मील पड़ा। किन्ही दो स्थानों की ध्रुव की ऊँचाई (अक्षांश) से दोनों स्थानों का अन्तर मील में निकालने के लिए दोनों स्थानों के अक्षांश का अन्तर निकालें फिर अन्तर के मील बनाने को ६९ से गुणा कर दें। जैसे नरसिंहपुर का अक्षांश २३° है और पूना का १९° है तो दोनों का अन्तर (२३°–१९°)=४° हुआ। ४ × ६९ =२७६ मील दोनों देशों का अन्तर हुआ। इसी प्रकार किसी भी स्थान का अन्तर नापा जा सकता है।

देशान्तर का नाप

देशान्तर रेखाओं के अंश में, पृथ्वी के भिन्न-भिन्न भागों में भिन्न-भिन्न नाप होती है। इसका कारण यह है कि भूमध्य रेखा पर तो पृथ्वी की परिधि २४८४० मील है। पृथ्वी गोल होने के कारण उत्तर या दक्षिण में जाने पर परिधि घटती जाती है। इस कारण प्रत्येक १०–१०° पर नाप लगभग कितने मील होते हैं, नीचे दिया है—

भूमध्य रेखा पर परिधि $\frac{२४८४०}{३६०}$=१° में ६९ मील लगभग हुआ। भूमध्य रेखा पर ० अक्षांश होता है। यहाँ से उत्तर या दक्षिण १०-१० अक्षांश आगे बढ़ने पर प्रति अक्षांश में इस प्रकार मील होते हैं :—

अक्षांश	०	१०	२०	३०	४०	५०	६०	७०	८०	९०
मील	६९	६८	६५	६०	५३	४४	३४॥	२३	११॥	०

अन्त में ९०° पर अर्थात् ध्रुव स्थान में अन्तर शून्य हो जाता है।

इन्हीं अक्षांशों पर से जिस अक्षांश के देशान्तर का अन्तर मील में निकालना हो, ऊपर बताये चक्र के अनुसार निकाल सकते हैं।

अध्याय १०

आकाशीय कल्पित रेखाओं का स्पष्टीकरण

जिस प्रकार अक्षांश और देशान्तर से पृथ्वी के किसी स्थान की ठीक स्थिति प्रकट की जाती है उसी प्रकार आकशीय तारागण आदि की स्थिति ठीक प्रकार से प्रकट करने के लिए आकाशीय अक्षांश और विषुवांश या रेखांश भी होते हैं। आगे इन्हीं को समझाते हैं। आकाशीय अक्षांश को शर और रेखांश को भोग या भोगांश कहते हैं।

आकाशीय विषुव वृत्त Celestial equator

जिस प्रकार पृथ्वी के बीचों-बीच पूर्व-पश्चिम विषुववृत्त (भूमध्यरेखा) गई है उसी प्रकार आकाशीय विषुववृत्त भी है।

पृथ्वी की विषुव रेखा के सीध में प्रत्येक विन्दु से यदि सीधे आकाश तक रेखा बढ़ाई जावे तो आकाश में भी उसी की सीध में एक कल्पित रेखा बन जायगी। इसी आकाशीय कल्पित रेखा को विषुववृत्त या नाड़ीवृत्त भी कहते हैं। इसे निरक्ष भी कहते हैं अर्थात् यहाँ पर अक्षांश शून्य रहता है।

विषुववृत्त (नाड़ीवृत्त) आकाश के २ समान विभाग करता है। इसका १ भाग उत्तर में और दूसरा भाग दक्षिण में हो जाता है। उत्तर में जो है वह उत्तर गोल और दक्षिण का दक्षिण गोल कहलाता है। ध्यान रहे कि सूर्य इस नाड़ीवृत्त पर से नहीं घूमता, वह क्रांतिवृत्त पर से घूमते दिखता है।

क्रांतिवृत्त Ecliptic

आकाश में जिस मार्ग से सूर्य घूमते हुए दिखता है वही क्रांतिवृत्त है। वास्तव में यही पृथ्वी की कक्षा Orlit है जिस पर से होकर पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती है। यह मार्ग अण्डाकार है। देखें चित्र संख्या ७।

क्रांति प्रदेश Zodic

क्रांतिवृत्त के दोनों ओर ९°–९° का एक कल्पित चौड़ा पट्टा है जिसके भीतर सब ही ग्रह घूमते हैं। इस प्रकार १८° के चौड़े पट्टे को क्रांतिप्रदेश कहते हैं। इसके भीतर १२ राशियां और २७ नक्षत्र हैं।

क्रांतिवृत्त का धरातल Plane of ecliptic

क्रांतिवृत्त के जिस धरातल में ग्रह परिक्रमा करते हैं उसे क्रांतिवृत्त का धरातल कहते हैं।

आकाशीय ध्रुव Celestial pole

जिस प्रकार पृथ्वी के उत्तर और दक्षिण ध्रुव हैं उसी प्रकार ठीक इन्हीं के सीध में आकाश में आकाशीय उत्तर या दक्षिण ध्रुव हैं। ये भी कल्पित स्थान हैं।

यामोत्तरवृत्त meridian

आकाशीय दोनों ध्रुवों से जो रेखाएँ आकाशीय नाड़ीवृत्त पर लम्ब होकर जाती हैं वे कल्पित रेखाएँ यामोत्तरवृत्त कहलाती हैं। यह रेखा उसी प्रकार की हैं जैसे पृथ्वी की देशान्तर रेखा हैं। यामोत्तर=याम+उत्तर। याम=दक्षिण। उत्तर से दक्षिण जाने वाली कल्पित रेखाएँ जो नाड़ीवृत्त को काटती हुई जाती हैं वे ही रेखायें यामोत्तरवृत्त हैं।

इसी यामोत्तरवृत्त से पूर्व या पश्चिम का जो अन्तर है वह भोग का भोगांश या क्षेप Celestial longitude कहलाता है। आकाश में एक मुख्य यामोत्तरवृत्त से यह पूर्व या पश्चिम को नापा जाता है और यह अन्तर क्रांतिवृत्त पर नापा जाता है। इसका मुख्य यामोत्तरवृत्त वसन्त सम्पात है जिसके विषय में आगे बताया गया है।

ऊपर जो नाड़ीवृत्त का वर्णन किया है उसके विषय में ध्यान रहे कि इस नाड़ीवृत्त का आकाश में कोई स्थिर और पक्का वृत्त नहीं है। जैसे पृथ्वी में भूमध्य रेखा की स्थिति निश्चित है ठीक वैसी स्थिति इस आकाशीय नाड़ीवृत्त की नहीं है। क्योंकि बहुत वर्षों के उपरान्त उसके स्थान में कुछ परिवर्तन हो जाता है,जिसके कारण भिन्न-भिन्न काल में वह आकाश का भिन्नता पूर्वक भाग करता है, क्योंकि सारा विश्व चल रहा है। इसी कारण नाड़ीवृत्त से आकाशीय अक्षांश नहीं नापा जाता।

क्रांति Declination

आकाशीय नाड़ीवृत्त से क्रांतिवृत्त की ओर ग्रहों का अन्तर इस नाड़ीवृत्त से नापा जाता है जिससे प्रकट हो कि कोई तारा नाड़ीवृत्त से उत्तर या दक्षिण को कितने अन्तर पर है। जितने अंश की दूरी पर वह ग्रह या तारा उपरोक्त नाप से निकलेगा वही नाप उस ग्रह या तारे की उत्तर या दक्षिण क्रांति होगी।

अक्षांश=शर=celestial latitude

आकाश में अक्षांश क्रांतिवृत्त से नापे जाते हैं क्योंकि क्रांतिवृत्त की स्थिति स्थिर और निश्चित हैं।

क्रांतिवृत्त के समानान्तर उत्तर या दक्षिण दूरी पर जितने अंश की दूरी पर वह ग्रह होगा वही उसका अक्षांश होगा। आकाशीय अक्षांश को शर भी कहते हैं। इसी को विक्षेप भी कहते है।

क्रांतिवृत्त से उत्तर या दक्षिण के ग्रहों या तारा के अन्तर को शर या अक्षांश कहते हैं परन्तु नाड़ीवृत्त से ग्रह आदि की उत्तर या दक्षिण की दूरी को क्रांति कहते हैं।

सूर्य सदा क्रांतिवृत्त पर ही चलता है। इससे उसका कोई शर नहीं होता परन्तु नाड़ीवृत्त से उसका अन्तर घटता बढ़ता-रहता है, इस कारण सूर्य की क्रांति घटती-बढ़ती रहती है। उसी प्रकार चन्द्र आदि ग्रह जब क्रांतिवृत्त पर रहते हैं तब उनका कोई शर नहीं रहता।

क्रांति से प्रगट होता है कि वह ग्रह नाड़ीवृत्त से कितने कोणात्मक अन्तर पर उत्तर या दक्षिण गोल में है अर्थात् नाड़ीवृत्त से उत्तर या दक्षिण किसी तारा या ग्रह का अन्तर याम्योत्तरवृत्त पर नापने से जो मिले वही क्रांति कहलाती है।

ये सब बातें आगे चित्र संख्या ५८, ५९ और ६० देखने से समझ में आ जायेंगी।

सम्पात विन्दु Equinox

आकाशीय विषुववृत्त और क्रांतिवृत्त एक दूसरे को (२३°–२८° का कोण बनाते हुए) दो स्थानों में काटते हैं। उन दो विन्दुओं को सम्पात विन्दु कहते हैं। इसे ही अयन विन्दु या विषुव विन्दु भी कहते हैं।

मेष का आरम्भ बिन्दु जिसे उत्तर सम्पात या वसन्त सम्पात Vernal equinox कहते हैं, इससे आकाशीय रेखांश का पूर्व पश्चिम नाप होता है और यह पृथ्वी की गति की दिशा में, अर्थात् पश्चिम से पूर्व की ओर नापा जाता है।

यहाँ पर यह बात ध्यान में रखने की है कि ध्रुव भी दो प्रकार के हैं। नाड़ीवृत्त के ध्रुव को ध्रुव Pole of the celestial equator कहते हैं। और ध्रुव से जो याम्योत्तरवृत्त नाड़ीवृत्त पर समकोण बनाते हुए खीचे जावें उन्हें ध्रुव प्रोतवृत्त meridian of the celestial equator कहते हैं। और क्रांतिवृत्त के ध्रुव को कदम्ब pole of the ecliptic कहते हैं। कदम्ब से जो वृत्त समकोण बनाते हुए क्रांतिवृत्त पर खीचे जावें वे कदम्ब प्रोतवृत्त कहलाते हैं।

किसी ग्रह से विषुववृत्त (नाड़ीवृत्त) पर जो अन्तर ध्रुव प्रोतवृत्त पर से नापा जावे उसे क्रांति कहते हैं ग्रह से ध्रुव प्रोतवृत्त विषुववृत्त एक खींचा जावे तो ध्रुव प्रोतवृत्त के नापने से जो अन्तर ग्रह और विषुववृत्त का होगा वही अन्तर उस ग्रह की क्रांति होगी

किसी ग्रह से क्रांतिवृत्त का अन्तर कदम्ब प्रोतवृत्त पर होता है। वही अन्तर उस ग्रह का शर या विक्षेप होता है। कदम्ब से एक कदम्ब प्रोतवृत्त उस ग्रह से होते हुए इस प्रकार खीचें जो क्रांतिवृत्त पर समकोण बनाती हुई मिले तो उस ग्रह का जो अन्तर क्रांतिवृत तक होगा वह अन्तर, कदम्ब प्रोतवृत्त पर से नापने में जो मिले, वह अन्तर उस ग्रह का शर होगा । ग्रह से जो ध्रुव का अन्तर होता है वह ध्रुव अन्तर Palar distance कहलाता है। ग्रह दक्षिण ध्रुव के पास हो तो दक्षिण ध्रुव से और उत्तर ध्रुव के पास हो तो उत्तर ध्रुव से अन्तर निकाला जाता है।

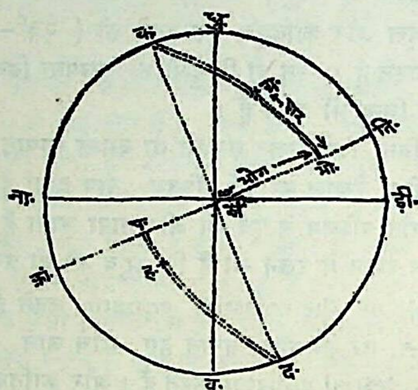
भोग या भोगांश Longitude

कदम्ब प्रोतवृत्त जो कदम्ब से निकल कर ग्रह या तारा पर से होते हुए क्रांतिवृत्त पर समकोण बनाते हुए मिले, तो उत्तर सम्पात विन्दु से उस मिलन बिन्दु तक नापने से जो अन्तर होगा वही उस ग्रह का भोगांश होगा। और उस ग्रह से उस मिलन बिन्दु तक नाप में जो अन्तर होगा वह उस ग्रह का शर होगा।

विषुवांश Right Assession

R. A. M. C. =Ark in Right assession of the meridian

उत्तर सम्पात से नाड़ीवृत्त पर यह नापा जाता है। ध्रुव प्रोतवृत्त जो ग्रह से होकर नाड़ीवृत्त पर समकोण बनाते हुए जहाँ मिलता है उस बिन्दु तक उत्तर सम्पात से नापने में जो अन्तर आवे वह उस ग्रह का विषुवांश होगा। यह ग्रह की गति की ओर अर्थात् पश्चिम से पूर्व को नापा जाता है। यह सब आगे उदाहरण देकर समझाया गया है।



चित्र संख्या ५८—नाड़ीवृत्त, क्रांतिवृत्त, भोग और शर

विषुववृत्त (नाड़ीवृत्त) के नाप के अंश होने से इन्हें विषुवांश भी कहते हैं।

चित्र संख्या ५८ में ग्रह का शर और भोग समझाया है। शर और भोग क्रांति वृत्त पर ही नापे जाते हैं। देखो चित्र संख्या ५८।

ना. डी=नाड़ीवृत्त

ध्रु. व=उत्तर और दक्षिणध्रुव

क्रां. ति=क्रांतिवृत्त

क=कदम्ब=क्रांतिवृत्त का उत्तर ध्रुव

द= „ „ „ दक्षिण „

सं=उत्तर सम्पात बिन्दु जहाँ नाड़ीवृत्त
और क्रांतिवृत्त एक दूसरे को काटते हैं।

ग्र. एक ग्रह।

क. ग्र. भो.=कदम्ब से एक कदम्ब प्रोतवृत्त ग्रह पर से होते हुए इस प्रकार खींचा गया है जो क्रांतिवृत्त पर भो. स्थान पर समकोण बनाते हुए मिला है।

ग्र. भो.=उस ग्रह का शर हुआ।

सं. भो.=उस ग्रह का भोग हुआ। ग्रह सं. (सम्पात विन्दु) से भो. स्थान तक जो अन्तर है वही भोग हुआ। यह भोग उत्तर सम्पात विन्दु से आरम्भ होकर पश्चिम से पूर्व को नापा जाता है, जैसा दूसरे उदाहरण से समझ पड़ेगा।

दूसरा उदाहरण (चित्र संख्या ५८)

ह. दूसरा ग्रह है

द. ह. प.=दक्षिण कदम्ब से एक कदम्बवृत्त ह. ग्रह पर से होते हुए इस प्रकार खींचा गया है जो क्रांतिवृत्त पर समकोण बनाते हुए प. स्थान पर मिला है।

ह. प.=यह ग्रह का शर हुआ यह दक्षिण में होने से दक्षिण शर हुआ।

सं. भो. ति. क्रां. प. यह ग्रह का भोग हुआ अर्थात सम्पात बिन्दु से पूर्व की ओर जाकर, फिर घेरते हुए क्रां से प. विन्दु आने तक जो दूरी होगी, उसी का नाप भोगांश होगा।

या प. सं. अन्तर को ३६०° में घटा दे तो भी ग्रह का भोग निकल आवेगा।

ग्रह की क्रांति और विषुवांश नाड़ीवृत्त से नापे जाते हैं। उसका उदाहरण देकर समझाते हैं। देखें चित्र संख्या ५९।

ना. ड़ी. नाड़ीवृत्त

ध्रु.=नाड़ीवृत्त का उत्तर ध्रुव

व.= ,, दक्षिण ,,

क्रां. ति=क्रांतिवृत्त

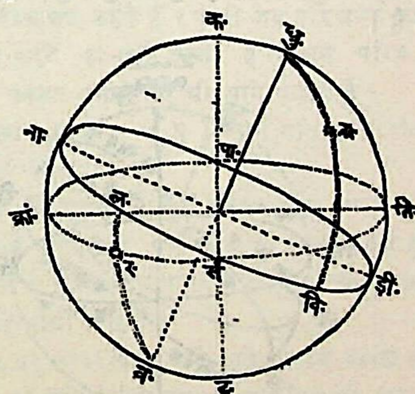
क. द.=कदम्ब उत्तर-दक्षिण

सं. पा.=दो सम्पात बिन्दु

सं=उत्तर सम्पात

ग्र.=एक ग्रह

ध्रु. ग्र. वि.=ध्रुव से एक ध्रुव प्रोतवृत्त ग्र. (ग्रह) पर से होते हुए इस प्रकार खींचा गया है जो नाड़ीवृत्त पर समकोण बनाते हुए वि. स्थान पर मिलता है।



चित्र संख्या ५९—भोग, शर, नाड़ीवृत्त, क्रांतिवृत्त, आदि

ग्र. वि.=ग्रह की उत्तर क्रांति

ध्रु. ग्र.=ग्रह का ध्रुवान्तर=(९०°–ग्र. वि.)

सं. वि=ग्रह का विषुवांश

दूसरा उदाहरण देखें चित्र संख्या ५९।

र.=रवि यह सदा क्रान्तिवृत्त पर रहता है।

व. र. ल=एक ध्रुव प्रोतवृत्त (यामोत्तरवृत्त) जो व. दक्षिण ध्रुव से र. (रवि) पर से होते हुए नाड़ी वृत्तपर ल. स्थान पर समकोण बनाते हुए मिला है।

व. र.=ध्रुवान्तर हुआ।

र. ल.=सूर्य की दक्षिण क्रांति हुई

सं. वि. ड़ी. पा. ना. ल.=यह सूर्य का विषुवांश हुआ।

यह विषुवांश सं.=उत्तर सम्पात से पूर्व की ओर नापा जाता है। इस कारण सं. बिन्दु से होकर ड़ी. पर से पूरा चक्कर घूमते हुए ना पर से होते हुए ल. तक आने में जितनी दूरी होगी वही विषुवांश होगा।

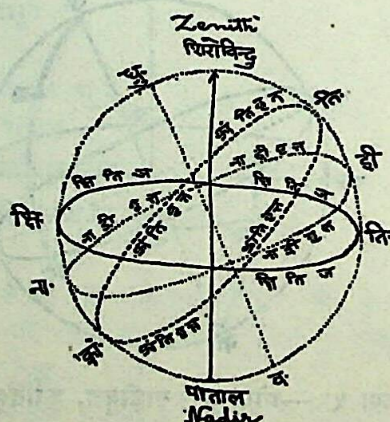
या=(३६०—ल. सं. की दूरी=सूर्य का विषुवांश)

आकाश में नक्षत्र आदि या ग्रह क्यों तिरछे घूमते हुए दृष्टिगोचर होते हैं ? चित्र संख्या ६० के देखने से समझ में आयेगा।

पृथ्वी के ध्रुव का झुकाव उत्तर की ओर है। इसी प्रकार आकाश का भी उत्तर ध्रुव कुछ उत्तर की ओर झुका हुआ है। इसी कारण यह तिरछापन दिखता है।

किसी स्थान में खड़े होकर चारों ओर देखें तो पृथ्वी के चारों ओर आकाश लगा हुआ दिखेगा। इसी को क्षितिज कहते हैं। जहाँ आकाश पृथ्वी से लगा हुआ दिखता है वही उस स्थान का (जहाँ से खड़े होकर देख रहे हैं) क्षितिज है।

क्षितिज के ठीक ऊपर शिरोबिन्दु है। नाड़ीवृत्त पर, नाड़ीवृत्त के शिरोबिन्दु से उत्तर ध्रुव लम्ब रूप है, परन्तु उत्तर ध्रुव कुछ झुका हुआ होने के कारण नाड़ीवृत्त भी तिरछा दिखता है।



चित्र संख्या ६०—क्षितिज, नाड़ीवृत्त, क्रांतिवृत्त और ध्रुव

अपना आधा विषुववृत्त (नाड़ीवृत्त) क्षितिज पर दिखता है। अपने स्थान से ध्रुव जितना ऊँचा दिखता है उतना ही आकाश का नाड़ीवृत्त अपने सिर के स्थान

से दक्षिण को दिखता है। इस कारण नाड़ीवृत्त में पूर्व-पश्चिम को तिरछापन है। इसका एक छोर ठीक पूर्व बिन्दु पर है दूसरा पश्चिम में है।

अब क्रांतिवृत्त भी २३°-२८′ का कोण बनाते हुए इस नाड़ीवृत्त को काटता हुआ तिरछा जाता है, इस कारण क्रांतिवृत्त में अधिक तिरछापन आ जाता है। इसी कारण नक्षत्र आदि क्रांतिवृत्त से तिरछे घूमते हुए दिखते हैं क्योंकि क्रांति प्रदेश ही तिरछा है।

—×—

अध्याय ११

ग्रहों की गति Velocity or motion & Planets

प्रत्येक ग्रह की पृथक् २ गति (चाल) होती है। सब ग्रहों के साथ राहु केतु भी आकाशमार्गीय क्रांति प्रदेश के पथ पर घूमते हैं।

गति दो प्रकार की होती है (१) परिभ्रमण Rotetion और (२) परिक्रमण Revolution

परिभ्रमण—जब ग्रह अपनी धुरी पर अपने ही आस पास पश्चिम से पूर्व को घूमता है, उस गति को परिभ्रमण कहते हैं।

परिक्रमण—ग्रह जब अपने मार्ग से चलते हुए सूर्य के आस-पास घूमता है, जैसे परिक्रमा दे रहा हो, तो उस गति को परिक्रमण कहते हैं।

पृथ्वी जब अपनी धुरी पर दिन-रात में अर्थात् २४ घण्टे में अपने ही चहुं ओर घूम लेती है तो उसे परिभ्रमण कहते हैं। पृथ्वी जब परिभ्रमण करते हुए अपनी कक्षा पर सूर्य की परिक्रमा करने को आगे बढ़ती है तो उसे परिक्रमण कहते हैं। जैसे भौंरा अपने आस-पास चक्कर लगाते हुए भी आगे बढ़ता है।

परिक्रमण दो प्रकार का है ;—(१) मार्गी गति Acceleration or direct (२) वक्री गति Retrograde

(१) मार्गी—जब ग्रह अपने मार्ग में सीधा बढ़ते चला जाता है तो उसे मार्गी ग्रह कहते हैं। यह गति पश्चिम से पूर्व को होती है जैसे कि सूर्य चलता है। जैसे कोई ग्रह मेष राशि में है तो उसके उपरान्त वृष फिर मिथुन आदि की ओर बढ़ता जायेगा। यही ग्रहों की सीधी गति है।

(२) वक्री—जब ग्रह सीधी चाल जाते-जाते एकदम वापस लौट पड़ता है तो उसे वक्री ग्रह कहते हैं। यह गति पूर्व से पश्चिम को सूर्य की चाल के विरुद्ध होती है। जैसे कोई ग्रह मिथुन राशि में है तो उसके उपरान्त कर्क की ओर जाना था परन्तु आगे न बढ़कर फिर वृष की ओर लौट पड़े तो उसे ग्रह का वक्री होना कहते हैं।

ग्रह जब वक्री होकर फिर सीधा-सीधा रास्ता चलने लगता है तो उसे फिर मार्गी कहने लगते हैं।

इस प्रकार प्रत्येक ग्रह की पृथक्-पृथक् गति होती है। कोई शीघ्र चलता है कोई धीरे-धीरे चलता है। इस प्रकार क्रांति प्रदेश में कोई ग्रह कभी आगे रहते हैं, कभी पीछे रहते हैं, कभी-कभी चलते-चलते मिल जाते हैं।

प्रत्येक ग्रहों की गति

(१) चन्द्र—सबसे शीघ्र चलने वाला ग्रह है। पृथ्वी के आस-पास प्रायः ३० दिन में घूम कर अपनी परिक्रमा पूरी करता है।

(२) शनि—सबसे धीमी चाल चलने वाला ग्रह है। यह ३० वर्ष में अपनी परिक्रमा पूरी करता है।

(३) सूर्य—१ वर्ष (३६५¼ दिन) में परिक्रमा पूरी कर लेता है। प्रतिदिन लगभग १° चलता है। इस प्रकार स्थूल मान से १ राशि में १ मास रहता है।

इस प्रकार १ राशि में चन्द्र २। दिन, मंगल १॥ मास, बुध १ मास, गुरु १३ मास, शुक्र १ मास, शनि ३० मास, राहु १८ मास, केतु १८ मास, हर्शल १ राशि में ७ वर्ष और नेपच्यून १३ वर्ष रहता है।

इस प्रकार कम ज्यादा समय परिक्रमा में लगने का कारण यह है कि जो ग्रह पास हैं उनकी परिक्रमा में अल्प समय लगता है और जो ग्रह दूर हैं उनकी परिक्रमा में दूरी के अनुसार अधिक समय लगता है। चित्र संख्या १ से परिक्रमा की दूरी समझ पड़ेगी। ग्रहों की प्रतिदिन की मध्यम गति (औसत गति) भी इस प्रकार है :-

	दैनिक मध्यम गति				दैनिक मध्यम गति		
ग्रह	अंश	कला	विकला	ग्रह	अंश	कला	विकला
सूर्य	०	५९	८	मंगल	०	३१	२६
चन्द्र	१३	१०	३४	गुरु	०	४	४९
बुध	१	५	३२	शनि	०	२	०
शुक्र	१	३६	७	राहु, केतु	०	३	११

राहु केतु को छोड़ कर शेष ग्रहों की गति सदा बदलती रहती है। राहु केतु की गति कभी नही बदलती, सदा इनकी एक सरीखी गति रहती है। राहु केतु सदा वक्री रहते हैं अर्थात् सदा एक सरीखी चाल से उल्टे चलते रहते हैं।

सूर्य और चन्द्र कभी वक्री नहीं होते शेष ग्रह बुध, शुक्र, मंगल, गुरु, शनि, हर्शल और नेपच्यून सदा वक्री और मार्गी होते रहते हैं और उनकी दैनिक गतियों में भी परिवर्तन होता रहता है।

उपरोक्त ग्रह अपनी इच्छानुसार वक्री मार्गी नहीं होते परन्तु एक प्रबल शक्ति सूर्य के कारण ही गतियों में यह सब परिवर्तन होता है, क्योंकि सब ग्रह सूर्य की आकर्षण शक्ति के प्रभाव से खिचे हुए हैं।

सूर्य के आस-पास जो परिक्रमा का मार्ग है वह एक सरीखा गोल नहीं अण्डाकार है, जिसके बीच में सूर्य है। देखें चित्र संख्या ७। चित्र से प्रकट होगा कि इस मार्ग

का कुछ भाग सूर्य के समीप पड़ जाता है कुछ दूर हो जाता है। कोई ग्रह जब चलते-चलते सूर्य के अधिक पास पहुँच जाता है तो उसे सूर्य के समीप Perihelion कहते हैं (यह घटना पृथ्वी के सम्बन्ध में लगभग १ जनवरी को होती है)। जब सूर्य से ग्रह अधिक दूरी पर चला जाता है तब उसे सूर्य से अधिक दूर Aphelion कहते हैं। पृथ्वी १ जुलाई के लगभग अधिक दूरी में होती है।

ग्रह जब सूर्य के समीप हो जाता है तो सूर्य की आकर्षण शक्ति बढ़ती है जिसके कारण सूर्य के खिचाव से ग्रह की गति में अधिक तेजी आ जाती है और ज्यों-ज्यों वह ग्रह सूर्य से दूर होता जाता है उसकी गति धीमी होती जायेगी क्योंकि सूर्य से दूरी होने के कारण सूर्य का खिचाव (आकर्षण शक्ति) कम होने लगता है और उस समय ग्रह वक्री हो जाता है अर्थात् फिर लौट पड़ता है। परन्तु जब दूर से लौट कर ग्रह सूर्य की ओर बढ़ता है तो फिर ग्रह में भी सूर्य के प्रभाव से बल आ जाता है और सम्हल कर फिर आगे बढ़ता है तब मार्गी ग्रह हो जाता है। अब समझ गये होंगे कि इसी अण्डाकार वृत्त के कारण उन पर सूर्य की आकर्षण शक्ति का घटाव-बढ़ाव होता है जिससे ग्रह वक्री-मार्गी होते हैं।

कुचस्तंभ Stationary

जब ग्रह वक्र होने से उसकी गति मन्द हो जाती है तब उस ग्रह का स्तम्भ होना कहते हैं। उस समय ग्रह एक राशि पर बहुत दिनों तक रहता है, इसे ही कुचस्तंभ कहते हैं। परन्तु मंगल ग्रह के सम्बन्ध में ही कुचस्तम्भ शब्द का प्रयोग होता है। शेष ग्रहों की ऐसी स्थिति में स्तंभ ही कहेंगे।

साधारण प्रकार से कौन ग्रह कितने दिनों में वक्री मार्गी होता है, यह नीचे चक्र में बताया है।

उदय अस्त वक्री मार्गी चक्र

ग्रह	अस्त होने के इतने मास उपरान्त उदय होगा	उदय के उपरान्त इतने मास में वक्री होगा	वक्री के उपरान्त इतने मास में मार्गी होगा	मार्गी के उपरान्त इतने मास में अस्त होगा
मंगल	४ मास	१० मास	२ मास	१० मास
गुरु	१ मास	४¼ मास	४ मास	४¼ मास
शनि	१¼ मास	३ मास	४ मास	३½ मास

ग्रह	पूर्व में अस्त होने के उपरांत पश्चिम में इतने दिनों में उदय होगा	पश्चिम में उदय उपरांत इतने दिनों में वक्री होगा	वक्री के इतने दिनों बाद पश्चिम में अस्त होगा	पश्चिम में अस्त के बाद इतने दिनों में उदय होगा	पूर्व में उदय के बाद इतने दिनों में मार्गी होगा	मार्गी के इतने दिनों बाद पूर्व में अस्त होगा
बुध	३२ दिन	३२ दिन	४ दिन	१६ दिन	४ दिन	३२ दिन
शुक्र	७५ दिन	२४० दिन	२३ दिन	९ दिन	२३ दिन	२४० दिन

राहु केतु सदा वक्री रहते हैं। सूर्य और चन्द्रमा कभी वक्री नहीं होते। शेष ग्रह वक्री मार्गी होते रहते हैं।

उदय अस्त ज्ञान Heliacal rising and satting of planets

सूर्य के पास कोई ग्रह आ जाने से उस ग्रह को अस्त होना कहते हैं। यदि वह ग्रह सूर्य के आगे चला जावे तो उसे उदय होना कहते हैं।

सूर्य के पास ग्रह आ जाने से ग्रह नहीं दिखता इस कारण उसे अस्त कहते हैं। जब सूर्य के दूर चले जाने के कारण वह ग्रह दिखने लगता है तो उसे उदय होना कहते हैं।

सूर्य को छोड़कर शेष ग्रहों का उदय अस्त होता है। इसमें भी यह प्रमाण है कि सूर्य से विशेष अंश दूर हो जाने पर कोई ग्रह दिखने लगता है कोई नहीं दिखता।

सूर्य के कितने अन्तर पर ग्रह चले जाने पर दिखने लगता हैं अर्थात् उदय होता है, नीचे दिया है। सूर्य से इतने अंशों के भीतर ग्रह हो तो वह ग्रह अस्त ही समझा जायेगा। जैसे सूर्य से चन्द्र का अन्तर १२ अंश के भीतर रहने तक चन्द्र अस्त ही रहेगा (नहीं दिखेगा) परन्तु १२° हो जाने पर चंद्र उदय होगा (दिखने लगेगा)। इसी प्रकार सब ग्रहों के विषय में समझना।

ग्रहों का कालांश

ग्रह	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
सूर्य से अंतर–कालांश (अंशोंमें)	१२	१७	१३	११	९	१५

इस अन्तर को कलांश भी कहते हैं।

अस्तोदय—२ प्रकार का है। एक तो प्रतिः दिन ग्रह उदय होते हैं और अस्त होते हैं। यहाँ जो बताया गया है वह इससे भिन्नः है अर्थात् सूर्य के पास जब ग्रह होता है तो अस्त होना कहा जाता है। जब सूर्य के पास ग्रह होता है तो उसे सूर्य संनिध भी कहते हैं। उदय अस्त को और भी अच्छी तरह समझाते हैं।

उदय—सूर्य से अल्प गति वाले ग्रह (मंगल, गुरु, शनि) सूर्य से कालांश तुल्य अंतर पर (कालांश अंतर जो ऊपर बनाया है) पूर्व दिशा में और थोड़ी रात्रि रहने पर उदय होते हैं सूर्य से अधिक गति वाला ग्रह चंद्र है। यह सूर्य से, अपने कालांश से अधिक होने पर पश्चिम दिशा में संध्या को उदय होता है। बुध, शुक्र, के लिये विशेष बात यह है कि ये सूर्य के अधिक पास हैं। ये दोनों दिशाओं (पूर्व और पश्चिम) से उदय और अस्त होते हैं। क्योंकि ये दोनों ग्रह वक्र होकर फिर सूर्य के कालांश तुल्य अंतर में आ जाने से इनका अस्त और उदय होता है अर्थात् दोनों ग्रह सूर्य से अधिक गति वाले होने के कारण अपने कालांश अन्तर होने पर सूर्य के आगे पश्चिम में संध्या को उदय होते हैं फिर वक्र होकर सूर्य के पास आकर पश्चिम में ही इनका अस्त होता है। फिर वक्र गति ही से सूर्य के पीछे होकर अपने कालांश अन्तर पर पूर्व दिशा में थोड़ी रात्रि रहने पर उदय होते हैं फिर मार्गी होकर पूर्व में ही अस्त होते हैं।

अस्त—सूर्य से अल्प गति वाले ग्रह (मंगल, गुरु, शनि) सूर्य से, अपने कालांश के भीतर होने से पश्चिम दिशा में अस्त होते हैं और अधिक गति वाला ग्रह चंद्र अपने कालांश के भीतर सूर्य के समीप आ जाने पर पूर्व दिशा में अस्त होता है।

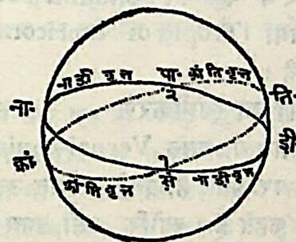
वक्री बुध, शुक्र का कालांश १° कम लेना अर्थात् बुध का कालांश १२° है तो वक्री बुध का ११° लेना। शुक्र का ९° है तो वक्री शुक्र का ८° लेना। वक्रीग्रह होने के कारण कालांश कम लिया जाता है।



अध्याय १२

सम्पात equinox

पहिले बता चुके हैं कि क्रांतिवृत्त और नाड़ीवृत्त दोनों पृथक्-पृथक् वृत्त हैं, जो एक दूसरे को २३° २८° का तिरछा कोण बनाते हुए दो स्थानों में काटते हैं, जिससे दो पृथक्-पृथक् भाग हो जाते हैं। देखें चित्र संख्या ६१।



चित्र संख्या ६१–सम्पात बिन्दु

भाग (१) क्रांतिवृत्त का ऊपर का आधा भाग सं० ति० प० और नाड़ीवृत्त का नीचे का आधा भाग सं० डी० पा०।

भाग (२) क्रान्तिवृत्त का नीचे का आधा भाग सं० क्रा० पा० और नाड़ीवृत्त का ऊपर का आधा भाग सं० ना० पा०।

जहाँ एक दूसरे को काटते हैं वे दो बिन्दु सं० और पा० संपात बिन्दु हैं।

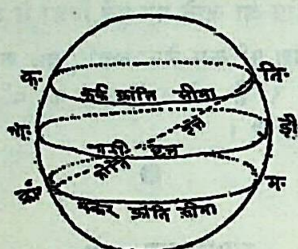
इनमें से १ सं० को अयन मेष या सायन मेष या वसंत सम्पात Autumnal equinox कहते हैं। दूसरे को अयनतुला या सायनतुला या शरद सम्पात Aatumnal equinox कहते है।

इस प्रकार सूर्य क्रान्ति वृत्त में घूमते हुए दो बार नाड़ीवृत्त को पार करता है, उस समय दिन रात बराबर होता है।

क्रांतिवृत्त की वक्रता के ही कारण सूर्य ६ मास उत्तर और ६ मास दक्षिण को उदय होता है। इसी से सूर्य की उत्तरायण और दक्षिणायन संज्ञा होती हैं।

ज्यों ज्यों अयन बिन्दु के आगे बढ़ते हुए सूर्य जाता है त्यों त्यों दिन बढ़ता जाता

है। सूर्य जब क्रांतिवृत्त के अंतिम छोर पर पहुंच जाता है तो वहाँ सूर्य की सबसे बड़ी क्रांति होती है और यह स्थान क्रांतिसीमा कहलाता है।



चित्र संख्या ६२–क्रान्तिवृत्त, नाड़ीवृत्त और क्रान्तिसीमा

चित्र संख्या ६२ देखें। ऊपर बताया गया ति० और नीचे का क्रा० स्थान ही क्रान्ति सीमा है। ये स्थान नाड़ीवृत्त से २३° २८° की दूरी पर हैं।

क्रांति सीमा Tropic

पृथ्वी के नकशे में ये दो छोटे छोटे वृत्त नाड़ीवृत्त के समानान्तर २३° २८° की दूरी पर खींचे गये हैं। उत्तर में कर्क की क्रांतिसीमा Tropic of cancer और दक्षिण में मकर की क्रांतिसीमा Tropic of capricorn कहलाती है। यही चित्र संख्या ६२ में समझाया गया है।

सम्पात और अयन बिन्दुओं का स्पष्टीकरण

१ सायन मेष, उत्तर सम्पात या वसंत Vernal equinox—

सूर्य २१ मार्च को विषुववृत्त पर आता है, इसके उपरांत उत्तर गोलार्द्ध की ओर जाने लगता है। इसे बसंत सम्पात कहते हैं। क्योंकि इसी समय बसंत ऋतु होती है और सायन मेष संक्रमण होता है। इस समय सूर्य ठीक पूर्व को उदय होता है और दिन रात बराबर होती है। अर्थात् सूर्य प्रातःकाल ठीक ६ बजे उदय होता है। नाड़ीवृत्त और क्रांतिवृत्त एक दूसरे को काटते हैं उनका यह पहिला स्थान है। इस स्थान से ग्रहों का भोगांश और विषुवांश नापा जाता है।

२. सायन तुला—दक्षिण सम्पात या शरद सम्पात Autumnal equinox नाडीवृत्त और क्रांतिवृत्त के एक दूसरे को काटने का यह दूसरा स्थान है। २१ सितम्बर के लगभग सूर्य उत्तरी गोलार्द्ध की क्रांतिसीमा पर से लौट कर ६ मास में उत्तरी गोलार्द्ध की यात्रा समाप्त कर जिस सम्पात बिन्दु पर आता है उसे सायन तुला कहते हैं। इस समय सूर्य लौटकर विषुववृत्त पर आ जाता है और ठीक पूर्व में उगता है तथा दिन रात्रि बराबर होती है। इसके उपरांत सूर्य की दक्षिण गोल की यात्रा आरम्भ होती है। इसी से इसे दक्षिण सम्पात भी कहते हैं। और इसके बाद ही शरद ऋतु आरम्भ होती है। अर्थात् सूर्य उत्तर गोल में सायन मेष से सायन तुला तक रहता है और दक्षिण गोल में सायन तुला से सायन मेष तक।

३. ग्रीष्म क्रांति—दक्षिणायन बिन्दु Summer solstice

यह २१ जून के लगभग होता है जब सूर्य सायन मेष से चल कर उत्तर गोलयात्रा में वह इस क्रांतिसीमा पर २१ जून के लगभग पहुँच जाता है, उस समय सूर्य की किरणें कर्क रेखा पर समकोण बनाती हैं। इस समय सूर्य सबसे दूर रहता है और सूर्य के उदय अस्त का घेरा बहुत बड़ा होता है अर्थात् उस दिन, दिन मान सबसे बड़ा होता है। इसी को सायन कर्क संक्रमण कहते हैं। इसके. उपरांत सूर्य लौट कर २१ जून के लगभग उत्तर गोलार्द्ध की यात्रा समाप्त कर सायन तुला पर आता है। इस बिन्दु पर पहुँच कर सूर्य दक्षिण की ओर मुड़ता है और सूर्य दक्षिणायन हो जाता है इस कारण ग्रीष्म क्रांति को दक्षिणायन बिन्दु भी कहते हैं।

४. शरदक्रांति—उत्तरायण बिन्दु winlet solstice—यह २१ दिसम्बर को होता है, जब सूर्य विषुवरेखा से बहुत दूरी पर बहुत दक्षिण की ओर रहता है। यह क्रांति वृत्त की दक्षिण सीमा है। लगभग २२ दिसम्बर को जब सूर्य की किरणें मकर रेखा पर समकोण बनाती हैं उस समय सायन मकर संक्रांति होती है। इस समय सूर्य की दक्षिण क्रांति २३°–२८′ होती है। उसी दिन सूर्य पूर्व बिन्दु के दक्षिण में प्रायः २५° पर उगता है। उस दिन से सूर्य उत्तर की ओर जाने लगता है। उस दिन, रात्रि (रात्रि मान) सबसे बड़ी होती है। इस बिन्दु पर पहुँच कर सूर्य उत्तर की ओर जाने लगता है तब उत्तरायण का आरम्भ होता हैं। इसी कारण इसे उत्तरायण बिन्दु कहते हैं।

अयनबिन्दु आकाश में सदा एक ही जगह नहीं रहते, ये पश्चिम की ओर खिसकते रहते हैं। जिस नक्षत्र के पास आजकल उत्तरायण या दक्षिणायन होता है पुराने समय में उस स्थान में नहीं होता था। आजकल उत्तरायण का आरम्भ मूल के आधे भाग पर और दक्षिणायन का आरम्भ आर्द्रा के आरम्भ में होता है।

सूर्य की उत्तर-दक्षिण गति का स्पष्टीकरण

सूर्य जब २१ मार्च को उत्तर सम्पात पर आता है तो दिन रात बराबर होते हैं अर्थात् ६ बजे प्रातः काल ठीक पूर्व में उदय होता है और ठीक पश्चिम दिशा में अस्त होता है। इसके उपरान्त अवलोकन करेंगे तो प्रकट होगा कि सूर्य ठीक पूर्व बिन्दु पर उदय नहीं हो रहा है। वह कुछ उत्तर की ओर बढ़ रहा है। सूर्य इस प्रकार ३ मास तक उत्तर की ओर बढ़ता ही जाता है और २१ जून को विषुव रेखा से सबसे अधिक दूरी पर चला जाता है। उस समय सबसे बड़ा दिन होगा। क्योंकि सूर्य इस समय सबसे दूर हो जाता है और पूर्व में बहुत दूर हट कर उत्तर को उदय होगा। पूर्व और उत्तर के बीच का जो अन्तर है उस अन्तर का लगभग $\frac{1}{4}$ भाग सूर्य उत्तर को चला जाता है। यही क्रान्तिसीमा है। उस समय सूर्य पश्चिम में क्रान्तिसीमा पर ही डूबता दिखेगा।

इसके उपरान्त सूर्य विषुवरेखा की ओर जाने लगता है और २१ सितम्बर को फिर विषुववृत्त पर आ जाता है और उसी प्रकार उदय अस्त होगा जैसे २१ मार्च को होता है। उस समय दिन रात बराबर होती है। क्रांति सीमा से विषुववृत्त में

सूर्य को आने में ३ मास लगते हैं। इस प्रकार ६ महीने में, जिसमें गर्मी की भी ऋतु सम्मिलित है, सूर्य अपनी पूरी यात्रा कर ठीक उसी जगह आ जाता है। सूर्य इस समय तक उत्तरी गोलार्द्ध में रहा और इसके उपरान्त दक्षिण गोलार्द्ध में आ जाता है।

सूर्य जब दक्षिण को जाने लगता है तो दिन छोटा होने लगता है। २१ दिसम्बर को जब सबसे छोटा दिन होता है, सूर्य दक्षिण क्रांतिसीमा पर ३ मास की यात्रा कर पहुंच जाता है। दक्षिण में क्रांतिसीमा में उदय अस्त होते दिखता है। उपरान्त ३ मास की और विषुववृत्त की ओर यात्रा कर २१ मार्च को विषुववृत्त पर फिर आ जाता है।

इस कारण जब सूर्य के उदय अस्त में अन्तर पड़ता है तो मध्याह्न (दोपहर) की ऊँचाई में भी अन्तर पड़ता है जिसके कारण दिन छोटे-बड़े होते हैं। जून के बीच सबसे अधिक ऊँचाई होती है इससे सबसे बड़ा दिन होता है। सूर्य के उदय काल पर दिन की लम्बाई छुटाई अवलम्बित है। सूर्य ज्यों-ज्यों विषुव रेखा से उत्तर को जाता है दिन की लम्बाई बढ़ती जाती है।

पहिले सम्पात, अयन विन्दु, और सूर्य की उत्तर दक्षिण गति समझा चुके हैं इन्हीं के कारण भिन्न-भिन्न ऋतुएँ होती है।

सायन राशियाँ संक्रांति की तारीख एवं ऋतुएँ

उच्च नीच राशियाँ	राशि	सायन संक्रांति की तारीख	ऋतु	
उच्च	१ मेष	२१ मार्च	वसंत और	ये ६ राशियाँ
,,	२ वृष	१९ अप्रैल	ग्रीष्म की	नाड़ी
,,	३ मिथुन	२० मई	राशियाँ	मंडल के
नीच	४ कर्क	२१ जून	वर्षा और	उत्तर
,,	५ सिंह	२२ जुलाई	शरद की	में
,,	६ कन्या	२२ अगस्त	राशियाँ	हैं

उच्च या नीच	राशि	सायन संक्रांति की तारीख	ऋतु	
उच्च	७ तुला	२३ सितम्बर	शरद और	ये ६ राशियाँ
,,	८ वृश्चिक	२३ अक्टूबर	हेमन्त की	नाड़ी
,,	९ धन	२२ नवम्बर	राशियाँ	मंडल के
नीच	१० मकर	२१ दिसम्बर	शिशिर और	दक्षिण
	११ कुंभ	२० जनवरी	वसंत की	में
	१२ मीन	१९ फरवरी	राशियाँ	हैं

जब सूर्य उपरोक्त ३ राशियों में से किसी में होता है तो उसकी क्रांति बढ़ती है और दूसरी ३ राशियों में होता है तो क्रांति घटती है। इस कारण पहिली उच्च राशियाँ और दूसरी नीच राशियाँ हैं।

अध्याय १३

सायन और निरयन

राशि ग्रह आदि २ प्रकार के हैं (१) सायन movable
(२) निरयन fixed zodic

सायन—अयन सहित with Procession

निरयन—अयन रहित without Procession

अयनांश—अयन के अंश। हिन्दूमत से माना हुआ प्रथम बिन्दु और शरद सम्पात के बीच जो अन्तर है वह निश्चित विन्दु से नापा जाता है,उसे अयनांश कहते हैं।

अयन Procession of equinoxes

अयन क्या है ? यह जानने के लिए सम्पातविन्दु का जानना आवश्यक है, जिसके विषय में पहिले अच्छी प्रकार समझा चुके हैं। नाड़ीवृत्त और क्रान्तिवृत्त एक दूसरे को जगह-जगह काटते हैं, वे ही सम्पातबिन्दु equinox ctial points हैं। इनमें १ शरद सम्पात दूसरा वसंत सम्पात है। इन्हीं दोनों बिन्दुओं को अयन भी कहते हैं। इन्हीं बिन्दुओं पर सूर्य आने से दिन रात बराबर होता है।

इन सम्पात बिन्दुओं की वक्र गति होती है अर्थात् उल्टे चलते हैं। (जिस प्रकार राहु केतु उल्टे चलते हैं)। शरद सम्पात का विन्दु अपनी पूर्व स्थिति से पीछे हटता जा रहा है इसी कारण इसे वक्र गति कहते हैं। पहिले वता चुके हैं कि अयन विन्दु पश्चिम की ओर खिसक रहे हैं।

इस सम्पात विन्दु की पूर्व स्थिति, ज्योतिष शास्त्र में रेवती नक्षत्र से मानी है, परन्तु ज्योतिष चक्र (भचक्र) में सम्पात विन्दु मेष के प्रथम अंश से माना गया है।

इस सम्पात विन्दु की वार्षिक गति होती है और यही गति अयन चलन कहलाता है। इसे विषुवत्क्रांति–वलय पात चलन भी कहते हैं।

जहाँ इस सायन का उपयोग होता हैं उसे सायन (चलित ग्रह) movable zodic कहते हैं। निरयन में स्थिर मेष के पहिले अंश से यह सम्पात बिन्दु आरम्भ होना मानते हैं और इसमें अयन का उपयोग नहीं होता इस कारण निरयन को स्थिर fixed zodic कहते हैं।

इसी सम्पात की गति को अयनांश Frocession कहते हैं। इस सम्पात का पूर्ण चक्र २५८६८ वर्ष में अर्थात् लगभग २६००० वर्ष में पूरा होता है। इस कारण इस प्रमाण से इसकी गति १ अंश चलने को ७२ वर्ष लगते हैं। अर्थात् १ वर्ष में प्राय ५० विकला के हिसाब से अयन की गति होती है।

अयनांश सहित ग्रह—चलित ग्रह—सायन ग्रह—सायन मत

अयनांश रहित ग्रह—स्थिर ग्रह—निरयन ग्रह—निरयन मत

सायन मत को पाश्चात्य लोग भविष्य कथन में उपयोग करते हैं और उनके पंचांग में सायन ग्रह दिये रहते हैं, परन्तु हिन्दू लोग प्रायः निरयन मत से ही भविष्य कथन करते हैं। कहीं कहीं महाराष्ट्र में भी सायन मत का उपयोग करते हैं।

जो कोई ग्रह में अयनांश मिलाकर ग्रह को सायन बनाकर सायन ग्रह का उपयोग करते हैं वे सायन मत के हैं और जो सायन में से अयनांश निकाल कर (घटा कर) उसे निरयन बनाकर या निरयन ग्रह हो तो बिना अयनांश मिलाए ही ग्रह का बहुधा उपयोग करते हैं वे निरयन मत के हैं।

सायन मतवालों का कहना है कि ग्रह को सायन बनाकर सायन ग्रह की स्थिति पर से जो फल कहा जायगा वह सच्चा निकलेगा। निरयन मतवालों का कहना है कि बिना अयनांश मिलाए ही ग्रह की स्थिति पर से जो फल कहा जायगा वह सच्चा उतरेगा। यही सायन और निरयन वाद है अर्थात् दोनों मतवालों में इस प्रकार मतभेद है।

अयनांश का उपयोग निरयन मत में भी कई जगह होता है। जैसे भाव स्पष्ट करने के लिए निरयन सूर्य मे अयनांश मिलाकर उसे सायन सूर्य बनाकर उस पर से लग्न साधन करते हैं और फिर सायन लग्न निकलने पर अयनांश घटाकर निरयन ग्रहण करते हैं। अयनांश का उपयोग आगे जन्म कुंडली आदि बनाने के गणित में काम पड़ेगा इस लिए इसको जानना आवश्यक है।

किसी वर्ष के अयनांश निकालने की ग्रह लाघव मत के अनुसार सरल रीति :—

शाके ४४४ में रेवती का तारा सम्पात बिन्दु पर था। उस समय पर से किसी वर्ष का अयनांश निकालने के लिए इष्ट, शाका में ४४४ घटाना, इसके घटाने से जो शेष बचे वही अयनांश की कला होती है। उनमें ६० का भाग देकर उनके अंश बनालें तो वही अयनांश वर्ष आरम्भ का होगा।

अयनांश– (इष्ट शाका–४४४) ÷ ६०=अयनांश

जैसे शाका १७६९ का अयनांश निकालना है तो शाका में ४४४ घटा कर शेष में ६० का भाग दिया तो उत्तर अंश कला में अयनांश आता है।

इष्ट शाका	१७६९	६०)१३२५(२२° उत्तर	२२-६ अंश कला यह वर्ष
	४४४	१२०	आरम्भ का अयनांश हुआ।
शेष	१३२५	१२५	
		१२०	
		५	

अध्याय १४

कुछ प्रारम्भिक ज्ञान होने के उपरान्त यही इच्छा होती है कि हमें पंचाङ्ग देखना आ जावे। पंचाङ्ग के मुख्य ५ अंग (१) तिथि, (२) वार, (३) नक्षत्र, (४)

योग, और (५) करण, होने से उसे पंचाङ्ग कहते हैं। ये सब क्या हैं यह बतलाने के उपरान्त पंचाङ्ग देखना बतायेंगे। पंचाङ्ग के उपरोक्त ५ अंगों के अतिरिक्त सम्वत्सर, मास, अयंन, ऋतु, ग्रह स्थिति, दिनमान, सूर्योदय आदि कई और आवश्यक विषय भी पंचाङ्ग में दिये रहते हैं। इन सबको पहिले समझ लेना चाहिए। वर्ष प्रमाण आदि जानने के पूर्व काल प्रमाण प्रत्येक को जानना आवश्यक है।

काल प्रमाण Division of Time

त्रुटि—कमल के कोमल से कोमल १ पत्र में अति नुकीली सुई चुभाने में जो समय लगता है उसे त्रुटि कहते हैं।

निमेष—पलक झपकाने में जो समय लगता है उसे निमेष कहते हैं।

गुरु अक्षर—एक गुरु अक्षर के उच्चारण में जो समय लगे वह गुरु अक्षर है।

प्राण—एक गुरु अक्षर के उच्चारण में जो समय लगे उसके १० गुने समय को प्राण कहते हैं।

भगण काल—कोई ग्रह १ भगण (३६०°) चक्कर पूरा करने में जो समय लगावे।

सावन दिन—एक दिन सूर्योदय होने के उपरान्त दूसरे दिन के सूर्योदय होने तक का जो समय है वह सावन दिन कहलाता है।

१०० त्रुटि=१ लव=१ तत्पर

३० लव=१ निमेष

१० गुरु अक्षर=१ प्राण=१ असु

४५ निमेष=१ प्राण

६ प्राण=१ पल=विनाड़ी=विघटिका
या=विघटी

१० विपल=१ प्राण या असु

६० विनाड़ी=१ नाड़ी=घटी
(पल)=घड़ी-दंड

६० नाड़ी=१ नक्षत्र दिन
(घटी)=अहोरात्रि=१ दिन रात

७½ घटी=१ प्रहर

८ प्रहर=२४ घण्टा (होरा)
=१ दिन रात

२ घटी=१ मुहूर्त

३० मुहूर्त=१ दिन रात

७ दिन=१ सप्ताह

३० दिन= १मास

१२ मास=१ वर्ष

३० नक्षत्र अहोरात्रि=१ सावन मास

३० सावन दिन=१ सावन मास

३० चान्द्र तिथि=१ चान्द्र मास

१ संक्रांति से दूसरी संक्रांत तक } =१ सौर मास

१२ मास (१ वर्ष)=१ दिव्य दिन

३६० वर्ष=१ दिव्य वर्ष

---

६० तत्प्रति विकला=१प्रति विकला

६० प्रतिविकला=१ विकला

६० विकला=१ कला

६० कला=१ अंश

३० अंश=१ राशि

१२ राशि=१ भचक्र=भगण=ज्योतिष चक्र

६० तत्परस=१ परस
६० परस=१ विलिप्ता
६० विलिप्ता=१ लिप्ता
६० लिप्ता=१ विघटिका=पल
६० विघटिक=१ घटिका=दंड
६० घटिका=१ दिन रात्रि
६० अनुपल=१ विपल=$\frac{२}{५}$ सेकेण्ड

६० विपल=१ पल=२४ सेकेण्ड
६० पल=१ घड़ी=२४ मिनट
६० घड़ी=१ दिन रात्रि=२४ घण्टा
२$\frac{१}{२}$ विपल=१ सेकेण्ड
२$\frac{१}{२}$ पल=१ मिनट
२$\frac{१}{२}$ घड़ी=१ घण्टा
११$\frac{३}{४}$ निमेष=१ सेकेण्ड
१ असु (प्राण)=४ सेकेण्ड

स्मरण रहे कि अंग्रेजी समय घण्टा मिनट में रहता है। वह अर्द्ध रात्रि के १२ बजे के उपरान्त से आरम्भ होता है और हिन्दू समय घड़ी पल में सूर्योदय के उपरान्त में आरम्भ होता है।

सूर्योदय का समय प्रत्येक पंचाङ्ग में घण्टा मिनट में दिया रहता है। इष्ट समय यदि घण्टा मिनट में हो तो सूर्योदय का समय घटा देने से सूर्योदय के बाद के घण्टा मिनट निकल आवेंगे। जैसे ८ बजे दिन किसी बालक का जन्म है। पंचाङ्ग में देखा उस दिन ६ वजे प्रातः सूर्योदय है।। ८ घण्टा में से ६ वजे सूर्योदय को घटाये तो शेष २ घण्टा बचे। अब दो घन्टा के घड़ी पल बना लो। २×२॥=५ घड़ी हुई। बस यही सूर्योदय के उपरान्त का अपना समय घड़ी पल में हुआ। इसी प्रकार जहाँ घड़ी पल में समय दिया हो आवश्यक होने पर उसके घण्टा मिनट बना लो।

नाप का प्रमाण Measurement

६० तत्प्रति अंगुल=१ प्रति अंगुल=व्यंगुल

६० व्यंगुल=१ अंगुल

नवीन नाप	प्राचीन नाप	अंग्रेजी मील और योजन का मिलान
२$\frac{३}{४}$ इंच=१ गिरह	८ जव की चौड़ाई=१ अंगुल	यदि १$\frac{१}{२}$ फुट का १ हाथ
४ गिरह=१ बीता	२४ अंगुल=१ हाथ	माना जावे तो
४ बीता-१ गज	४ हाथ=१ दण्ड	१ दण्ड २ गज
१२ इंच=१ फुट	२००० दण्ड=१ कोस	१ कोस=४०००गज
३ फुट=१ गंज	४ कोस=१ योजन	अर्द्ध कोस (मील)=२०००गज
१७६० गज=१ मील	१० हाथ=१ बाँस	अंग्रेजी मील=१७६० गज
२ मील-१ कोस		दोनों का अन्तर=२४० गज
१ नाट Knot=अक्षांश		अंग्रेजी मील २४० गज छोटा है।
की १ कला		इस प्रकार
		४ कोस=१ योजन में=१९२०

१ नाट=१०१५ साधारण
मील=२०२८ गज

गज या मील–गज
१–१६० का
अन्तर पड़ेगा
∴ १ योजन=९ १/१० मील
या=मील–गज
९–१६०

[१] युग प्रमाण

काल प्रमाण जानने के उपरान्त युग प्रमाण भी जानना चाहिए, क्योंकि पंचाङ्ग में दिया रहता है कि कलियुग के इतने वर्ष बीत गये हैं इत्यादि।

कलियुग ४३२००० वर्ष का होता है। कलियुग का दूना द्वापर, तिगुना त्रेता, चौगुना सतयुग होता है। इन ४ युग का १ महायुग होता है। ७१ महायुग का १ मन्वंतर और १००० महायुग का १ कल्प या ब्रह्मा का एक दिन होता है। ३६० कल्प का ब्रह्मा का १ वर्ष होता है। प्रत्येक मन्वंतर के आदि और अन्त में सतयुग प्रमाण की १ संधि होती है। संधि को प्रलय काल भी कहते हैं। १५ संधि समेत एक मन्वंतर का १ कल्प होता है। ब्रह्मा की आयु ३६० कल्प × १०० वर्ष की होती है।

सतयुग=१७२८००० वर्ष
त्रेता=१२९६००० ,,
द्वापर=८६४००० ,,
कलियुग=<u>४३२०००</u> ,,
१ महायुग=४३२०००० वर्ष
७१ महायुग=१मन्वंतर=
३०६७२०००० वर्ष
१००० महायुग=१ कल्प
४३२००००००० वर्ष
=ब्रह्मा का १ दिन
३६० कल्प=१ वर्ष ब्रह्मा का
आयु १०० वर्ष
प्रत्येक मन्वंतर के आदि और अन्त से १ संधि सतयुग प्रमाण=१७२८०००

मनु १४ हैं उनके नाम
१ स्वायम्भुव
२ स्वारोचिष
३ उत्तमज (औत्तमि)
४ तामस
५ रैवत
६ चाक्षुष
७ वैवस्वत
८ सावर्णि
९ दक्ष सावर्णि
१० ब्रह्म ,,
११ धर्म ,,
१२ रुद्र ,,
१३ देव ,,
१४ इन्द्र ,,

वर्तमान कल्प के आरम्भ से ७ संधियों समेत ६ मनु व्यतीत हो चुके हैं उनके नाम–
(१) स्वायम्भुव मनु
(२) स्वरोचिष ,,
(३) उत्तमज (औत्तमि) ,,
(४) तामस ,,
(५) रैवत ,,
(६) चाक्षुष ;,
इस समय सातवाँ वैवस्वत मनु वर्तमान हैं। इसके आरम्भ से आज तक २७ महायुग बीत चुके हैं २८ वें महायुग में ३ युग बीत कर चौथा युग कलियुग वर्तमान है।

प्रत्येक मन्वंतर के आदि अन्त में प्रलय काल की सन्धि होती है। इस प्रकार ६ मन्वंतर में आदि सन्धि मिलकर ७ सन्धि गत हो चुकी और सातवें मन्वंतर के २७ महायुग बीत चुके हैं। अब देखना है कि कलियुग के आरम्भ तक कितने वर्ष व्यतीत हो चुके हैं।

१ महायुग=४३२०००० वर्ष   १ सन्धि=१२२८०००   १ सतयुग १७२८०००
× २७   × ७   २ त्रेता १२९६०००
△ २७ महायुग=११६६४००००,,   ⊠७ संधि=१२०९६०००   ३ द्वापर ८६४०००
⊙ ३युग=३८८८०००

१ सतयुग=४३२००० × ४=१७२८००० वर्ष
२ त्रेता= ,, × ३=१२९६००० ,,
३ द्वपर= ,; × २= ८६४००० ,,
४ कलियुग= ,, × १= ४३२००० ,,
एक महायुग=४३२०००० ,,
× ७१
७१ महायुग=१ मन्वंतर=३०६७२०००० ,,
× ६ ,:
६ मन्वंतर............=१८४०३२००००,:
⊠इनकी ७ संधियाँ + १२०९६०००,,
७ संधियों समेत गत मन्वंतर } योग=१८५२४१६०००
△गत २७ महायुग + ११६६४०००० ,,
योग=१९६९०५६००० ,:
○गत ३ युग सतयुग त्रेता,द्वापर के वर्ष } +३८८८००० ,,
योग=१९७२९४४००० ,,
कलि आरम्भ होने के समय से सन् ईस्वी आरम्भ तक } +३१०२ ,,
योग=१९७२९४७१०२ ,,

यहाँ ६ मन्वंतर के वर्ष निकाल कर उनकी संधियाँ जोड़ी तो गत ६ मन्वंतर तक के वर्ष हुए। वर्तमान सातवें मन्वंतर में २७ महायुग बीत चुके है। इससे इनके वर्ष और जोड़ा। २८ वें महायुग में ३ युग केवल बीते हैं, इस कारण ३ युग के वर्ष और जोड़े तो कलियुग आरम्भ होने तक के सृष्टि आरम्भ के वर्ष निकल आये। सन् ईस्वी के आरम्भ तक कलियुग के गत वर्ष ३१०२ और जोड़ा तो सन् ईस्वी आरम्भ समय तक के वर्ष सृष्टि आरम्भ के प्राप्त हुए।

सृष्टि आरम्भ होने से वर्तमान कलियुग आरम्भ होने तक १९७२९४४००० वर्ष या ईसा के जन्म समय तक (सन् ईस्वी आरम्भ होने तक) = १९७२९४७१०२ वर्ष हो चुके हैं।

इसके आगे वर्तमान सन ईस्वी जोड़ दो तो वर्तमान सन ईस्वी तक सृष्टि आरंभ होने का वर्ष निकल आयेगा।

या द्वापर तक के वर्ष १९७२९४४००० में ३०४५ और जोड़ दो तो सम्वत आरम्भ होने तक का सृष्टि आरम्भ का समय निकल आयगा।

सन् ईस्वी के ३१०२ वर्ष पहिले कलियुग आरम्भ हुआ था। सन् ईस्वी आरम्भ होने के ५७ वर्ष पहिले विक्रम सम्वत प्रचलित हुआ था। इस प्रकार (३१०२–५७)= ३०४० वर्ष हुए। ये वर्ष, सम्वत के आरम्भ होने के समय तक के कलि के गत वर्ष हुए।

द्वापर तक के वर्ष	१९७२९४४०००	इतने वर्ष सृष्टि आरंभ से सम्वत आरंभ तक के हुए।
सम्वत आरंभ तक कलि वर्ष+	३०४५	
योग	१९७२९४७०४५	

इसमें इष्ट सम्वत और जोड़ दो तो इष्ट सम्वत तक के वर्ष प्राप्त होंगे।

कलियुग–सन् ईस्वी के ३१०२ B. C. (वी. सी.) (इतने वर्ष पहिले) आरंभ हुआ था। सम्वत २००० में ५०४४ वर्ष कलि के बीत चुके और ४२६९५९ वर्ष व्यतीत होने को शेष रहे। ता० १८ फरवरी ३१०२ वी.सी.(ईसा के जन्म के पहिले) अर्धरात्रि से कलियुग आरम्भ हुआ था। भाद्रपद मास, कृष्णपक्ष १३ रविवार आश्लेषा नक्षत्र व्यतीपात योग में अर्द्धरात्रि के समय कलियुग की उत्पत्ति हुई थी।

इस प्रकार यह कलियुग का प्रथम चरण है, ब्रह्मा का दूसरा पहर है, श्वेत वाराह कल्प है और वैवस्वत मन्वन्तर है। जब कलियुग आरम्भ हुआ था सूर्य चन्द्र आदि सब ग्रह एक ही राशि पर थे।

विक्रमादित्य ने ५७ वी. सी. में पहिले विदेशियों को भारत से भगाया था, उस समय से विक्रम सम्वत चला है। ईसा के जन्म के ७८ वर्ष के उपरान्त शालिवाहन राजा ने शाका चलाया है।

[२] वर्ष प्रमाण—

	वर्ष
शाके + ७८ वर्ष=सन् ईस्वी	सन् ईस्वी—५८३=सन् हिजरी
सम्वत—५७ „ = „ „	सन् हिजरी—१०=सन् फसली
सन् ईस्वी+५७„ =सम्वत	सन् फसली—१ =बंगला सन्
„ —७८ =शाका	
सम्वत—१३५ =शाका	

विक्रम सम्वत चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से आरंभ होता है। सन् ईस्वी में सम्वत बनाने में यह ध्यान रहे कि सम्वत मार्च के महिना में बदल जाता है और पूस मास में सन् बदलता है। इस प्रकार एक सम्वत् में २ सन् या १ सन् में २ सम्वत् आ जाते है। इस कारण मास का विचार कर सन् या संवत् का निर्णय करना चाहिए। अर्थात् संवत् में ५७ घटाने से जो सन् आता है वह वर्ष आरम्भ का सन् होता है। आगे पूस में सन् बदल कर दूसरा सन् लग जाता है। जैसे सम्वत् २००२–५७=१९४५ सन् ईस्वी, यह सन् सम्वत् के आरम्भ में होगा और सम्वत् २००२ के पूस मास में सन् बदल कर १९४६ सन् हो जायगा।

वर्ष मान—वर्ष ४ प्रकार के हैं

	दि०	घ०	पल	
(१) सौर वर्ष =	३६५	१५	३०	=सूर्य १२ राशियों में १ बार घूम लेने से होता है। इस प्रकार १२ सौर मास का १ वर्ष होता है।
	दि०	घ०	पल	
(२) चांद्र वर्ष =	३५४	३०	०	=शुक्ल प्रतिपदा से अमावस तक १२ मास का या मलमास होने से १३ मास का एक वर्ष होता हैं।

(३) सावन वर्ष = ३६० सावन दिन का=१२ सावन मास का

	दि०	घ०	पल	
(४) नाक्षत्र वर्ष=	३२४	०	०	=१२ नाक्षत्र मास का १ वर्ष

सम्वत्सर

पंचांग में सम्वत्सर का नाम दिया रहता है। संकल्प तर्पण आदि में जिसका उपयोग होता है और इससे फल भी विचारते हैं

सम्वत्सर ६० होते हैं। किसी शाका में २४ जोड़कर ६० का भाग देने से जो शेष बचे उसी क्रमानुसार सम्वत्सर का नाम होता है। जैसे शाका १८५६+२४÷६०= १८८०/६० शेष २०=२० व्यय नाम का सम्वत्सर हुआ या सम्वत्+९÷६० = शेष सम्वत्सर। जैसे सम्वत् १९९१/६० + ९ = २०००/६० =शेष २० =व्यय सम्वत्सर।

इसके अनुसार सम्वत्सर होता है,परन्तु कभी २ एक सम्वत् में २ सम्वत् आ जाते हैं। सम्वत् १९९३ में २२ वाँ सर्वधारी सम्वत्सर के उपरान्त २३ वाँ विरोधी सम्वत्सर भी उसी वर्ष लग गया था, जिससे १ अधिक हो जाता है। वास्तव में गुरु की गति के अनुसार गणित से सम्वत्सर निकाले जाते हैं। यहाँ तो सम्वत्सर निकालने की मोटी रीति दी है।

सम्वत्सर के नाम

१ प्रभव	१६ चित्रभानु	३१ हेमलम्वी	४६ परिधावी
२ विभव	१७ सुभानु	३२ विलंबी	४७ प्रमादी
३ शुक्ल	१८ तारण	३३ विकारी	४८ आनन्द
४ प्रमोद	१९ पार्थिव	३४ शार्वरी	४९ राक्षस
५ प्रजापति	२० व्यय	३५ प्लव	५० नल
६ अंगिरा	२१ सर्वजित्	३६ शुभकृत्	५१ पिंगल
७ श्रीमुख	२२ सर्वधारी	३७ शोभन	५२ कालयुक्त
८ भाव	२३ विरोधी	३८ क्रोधी	५३ सिद्धार्थी
९ युवा	२४ विकृति	३९ विश्वावसु	५४ रौद्र
१० धाता	२५ खर	४० पराभव	५५ दुर्मति
११ ईश्वर	२६ नन्दन	४१ प्लवंग	५६ दुदुभि
१२ बहुधान्य	२७ विजय	४२ कीलक	५७ रुधिरोद्गारी
१३ प्रमाथी	२८ जय	४३ सौम्य	५८ रक्ताक्षी
१४ विक्रम	२९ मन्मथ	४४ साधारण	५९ क्रोधन
१५ वृष	३० दुर्मुख	४५ विरोधकृत्	६० क्षय

जैसे सम्वत २००३ + ९=२०१२ ÷ ६०=शेष ३२ + १=३३ विकारी सम्वत्सर। गुरु मध्यमगति जितने समय में १ राशि चलता हैं उसे सम्वत्सर कहते हैं। गुरु के १ भगण में १२ सम्वत्सर या ४३३२.३२०६ सावन दिन होते हैं। या १ सम्वत्सर में ३६१·०२६७२ सावन दिन होते हैं।

[३] अयन

अयन २ होते हैं १ उत्तरायण २ दक्षिणायन

१ उत्तरायण=मकर संक्रांति से आरम्भ होता है और मिथुन संक्रांति की समाप्ति-तक रहता है। इसमें दिन क्रम-क्रम से बढ़ता है।

२ दक्षिणायन—कर्क संक्रांति से लेकर धनु संक्रांति के अन्त तक दक्षिणायन सूर्य कहलाता है इसमें रात्रि क्रम-क्रम से बढ़ती है। इसमें जो संक्रांति की राशियाँ बताई हैं वे सायन नहीं हैं अर्थात् निरयन हैं।

[४] गोल

गोल २ हैं। आकाश के २ भाग इस प्रकार किए जांय कि ऊपर भाग के मध्य में आकाश का उत्तर ध्रुव हो और दूसरे भाग के मध्य में दक्षिण ध्रुव हो तो पहिले को उत्तर गोल और दूसरे को दक्षिण गोल कहेंगे।

सायन, मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह और कन्या ६ ये राशियाँ उत्तर गोल में हैं और शेष ६ राशियाँ सायन तुला, वृश्चिक, धन, मकर, कुंभ और मीन ये ६ राशियाँ दक्षिण गोल में हैं।

[५] ऋतुएँ

१२ मास में ६ ऋतुएँ होती हैं।

अयन	ऋतु	सूर्य	चन्द्रमास
१ उत्तरायण	१ शिशिर	मकर-कुंभ	माघ-फाल्गुन
,,	२ वसन्त	मीन-मेष	चैत-वैशाख
,,	३ ग्रीष्म	वृष-मिथुन	ज्येष्ठ-अषाढ
२ दक्षिणायन	४ वर्षा	कर्क-सिंह	श्रावण-भाद्रपद
,,	५ शरद	कन्या-तुला	आश्विन-कार्तिक
,,	६ हेमंत	वृश्चिक-धन	मार्गशीर्ष-पौष

अध्याय १५

[६] मास और पक्ष विचार (Month and fortnight)

मास ४ प्रकार के हैं—

१ चान्द्रमास = शुक्ल प्रतिपदा से अमावस्या तक १ चान्द्रमास है।

२ सौरमास = सूर्य की १ संक्रांति से दूसरी संक्रान्ति तक।

सूर्य जब १ राशि से दूसरी राशि में प्रवेश करता है उस समय दूसरी राशि की संक्रान्ति होती है। जैसे मेष राशि के बाद सूर्य वृष राशि में जिस दिन आया उसी दिन वृष की संक्रांति कहलायगी।

३ सावन मास = ३० सावन दिन = सूर्य के एक उदय से दूसरे उदय तक के समय को १ सावन दिन कहते हैं। इस प्रकार ३० दिन का १ सावन मास होता है। सावन दिन यह नाक्षत्र दिन से ४ मिनट बड़ा होता है। सावन दिन का मान समान नहीं होता, इस कारण मध्यम सावन दिन का मान लिया जाता है और उसी का समय घड़ियों से जाना जाता है।

४ नाक्षत्र मास=आश्विनी आदि २७ नक्षत्रों में चन्द्र एक बार पूरा घूम लेता है तब चन्द्र मास होता है।

चन्द्र के बारह मास के नाम

१ चैत्र (चैत)	४ आषाढ़ (आसाढ़)	७ आश्विन (कुआर)	१० पौष (पूस)
२ वैशाख	५ श्रावण (सावन)	८ कार्तिक (कातिक)	११ माघ
३ ज्येष्ठ (जेठ)	६ भाद्रपद (भादों)	९ मार्गशीर्ष (अगहन)	१२ फाल्गुन (फागुन)

इन महीनों के उपरोक्त नाम पड़ने का कारण यह है कि इन महीनों की पूर्णिमा के लगभग ये नक्षत्र पड़ते हैं।

क्रम	चन्द्रमास	नक्षत्र	क्रम	चन्द्रमास	नक्षत्र	क्रम	चन्द्रमास	नक्षत्र
१	चैत्र	चित्रा	५	श्रावण	श्रवण	९	मार्गशीर्ष	मृगशिर
२	वैशाख	विशाखा	६	भाद्रपद	भाद्रपद	१०	पौष	पुष्य
३	ज्येष्ठ	ज्येष्ठा	७	आश्विन	अश्विनी	११	माघ	मघा
४	आषाढ़	आषाढ़ा	८	कार्तिक	कृत्तिका	१२	फाल्गुन	फाल्गुनी

चन्द्र मास २ प्रकार के हैं।

१ अमान्त मास=शुक्ल प्रतिपदा से अमावस्या तक १ मास होता है। यह दक्षिण में और महाराष्ट्र देश में चालू है।

२ पूर्णिमांत मास=कृष्ण प्रतिपदा से पूर्णिमा तक १ मास यह उत्तर भारत में चालू है।

दोनों प्रकार के मास में कोई अन्तर नहीं आता, क्योंकि एक जगह पूर्णिमा या अमावस्या हुई तो सर्वत्र ही उस दिन पूर्णिमा या अमावस्या अवश्य होगी। केवल मास गणना में कृष्ण पक्ष में अपने यहाँ १ मास का अन्तर पड़ जाता है। जैसे अपने यहाँ चैत्र कृष्णपक्ष हुआ तो महाराष्ट्र लोग उसे फाल्गुन कृष्ण पक्ष कहेंगे अर्थात् कृष्ण पक्ष में अपने मास से १ मास कम महाराष्ट्र लोगों का मास होता है। मराठी पंचांग मिले तो कृष्णपक्ष में १ मास बढ़ा कर लेना चाहिए। परन्तु शुक्ल पक्ष में दोनों प्रकार के पञ्चांग में कोई अन्तर नहीं पड़ता।

बंगला मास

सूर्य की निरयन संक्रांत्ति से आरम्भ होता है और मेषार्क (मेष की संक्रान्ति) से नया बंगला सन् आरम्भ होता है। मीनार्क से चैत्र मास आरम्भ होता है और मेषार्क में वैशाख मास होता है। जब वर्ष आरम्भ होता है तब संक्रांति जिस दिन होती है उसके दूसरे दिन से बंगला की पहली तारीख (तिथि) गिनी जाती है। किसी महीने में २९, ३०, ३१ या कभी ३२ दिन पड़ जाते हैं।

अंग्रेजी महीनों के नाम

क्रम	अंग्रेजी महीना	दिन	चान्द्रमास	क्रम	अंग्रेजी महीना	दिन	चान्द्रमास	क्रम	अंग्रेजी महीना	दिन	चान्द्रमास
१	जनवरी	३१	पूस	५	मई	३१	वैशाख	९	सितम्बर	३०	भाद्रपद
२	फरवरी	२८	माघ	६	जून	३०	ज्येष्ठ	१०	अक्टूबर	३१	आश्विन
३	मार्च	३१	फाल्गुन	७	जुलाई	३१	आषाढ़	११	नवम्बर	३०	कार्तिक
४	अप्रैल	३०	चैत्र	८	अगस्त	३१	श्रावण	१२	दिसम्बर	३१	मार्गशीर्ष

प्लुत वर्ष=Leap year लीप इयर=में फरवरी २९ दिन की होती है। जिस सन् में ४ का भाग पूरा लग जाय या सदी century में ४०० का भाग पूरा लग जावे तो उसे प्लुत वर्ष कहते हैं। शेष वर्षों में फरवरी २८ दिन की होती है।

मुसलमानी महीनों के नाम अर्थात् हिजरी सन् के महीने

१ मोहर्रम	५ जमादि उल अव्वल	९ रमजान
२ सफर	६ जमादिउल आखर (सानी)	१० सव्वाल
३ रविउल अव्वल	७ रज्जब	११ जीकाद
४ रविउल आखर (सानी)	८ साबान (शअबान)	१२ जिल हिज्ज

चाँद दिखने से महीना आरम्भ होता है और इनमें लौंद का वष या अधिक मास नहीं होता। इस कारण प्रत्येक तीसरे वर्ष इनके महीनों से अन्तर पड़ता रहता है अर्थात् कभी मुहर्रम जाड़े में कभी बरसात में कभी गरमी में पड़ता है। मुहर्रम की १ तारीख से हिजरी सन् आरम्भ होता है और चाँद दिखने के दूसरे दिन महीने की पहली तारीख होती है। कभी २९ दिन कभी ३० दिन का महीना चन्द्र की तिथि की घटा बढ़ी के अनुसार होता है।

फसली सन् में महीना प्रत्येक कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा से आरम्भ होता है और रमजान महीना से नया सन् आरम्भ होता है। इसमें भी चन्द्र तिथि के अनुसार कभी २९ कभी ३० दिन हो जाते हैं।

सौर मास और संक्रांति

सूर्य जब १ राशि के अन्त में जाकर दूसरी राशि में संक्रमण करता है (जाने लगता है) तब उसे संक्रांति कहते है। अर्थात् जब २ राशियों की संधि पर सूर्य आता है तब आगे की राशि की संक्राति होती है। इस प्रकार प्रत्येक सौर मास में एक संक्रांति होती है। जिस राशि पर सूर्य जाता है उस राशि की संक्रांति कहलाती है।

जैसे धन का अन्त होने पर सूर्य मकरराशि में जाता है तो वह मकर-संक्रांति कहलावेगी। अर्थात् सूर्य ने मकर राशि में संक्रमण किया ऐसा कहेंगे।

मेष से तुला संक्रांति को विषुव संक्रांति कहते हैं।

कर्क से मकर संक्रांति को अयन संक्रांति कहते हैं।

अधिक मास

जिस चान्द्र मास में सूर्य की संक्रांति नहीं होती उसे अधिक मास कहते हैं। अर्थात् जब दो पक्ष में संक्रांति नहीं होती तो उसे अधिक मास कहते हैं। जैसे सम्वत् १९९९ में वैशाख कृष्ण १३ (ता० १३ अप्रैल) को मेष संक्रांति हुई। ज्येष्ठ कृष्ण १४ को (ता० १४ मई) वृष की संक्रांति हुई। इसके उपरान्त फिर (ता० १४ जून) शुद्ध ज्येष्ठ शुक्ल प्रतिपदा को मिथुन राशि पर सूर्य गया अर्थात् मिथुन की संक्रांति हुई। वृषार्क शुद्ध ज्येष्ठ कृष्ण पक्ष की १४ तिथि को था, उसके बाद अधिक ज्येष्ठ शुक्ल पक्ष और फिर अधिक ज्येष्ठ कृष्ण पक्ष बीत गया, परन्तु इन दोनों के बीच संक्रांति नहीं हुई। इस कारण ये दोनों पक्ष अधिक मास माने गये। इसके पहिले का ज्येष्ठ कृष्ण शुद्ध माना गया और फिर उसके बाद जो अधिक २ पक्ष बढ़े उनमें से १ का नाम अधिक ज्येष्ठ शुक्ल पक्ष पड़ा और उसके आगे फिर अधिक ज्येष्ठ कृष्ण पक्ष माना गया। ये दोनों अधिक पक्ष व्यतीत हो जाने पर शुद्ध ज्येष्ठ शुक्ल प्रतिपदा को मिथुन की संक्रांति हुई। इससे वह शुद्ध ज्येष्ठ मास माना गया।

३२ मास १६ दिन ४ घड़ी बीतने पर अधिक मास होता है। अर्थात् तीसरे वर्ष अधिक मास होता है और उस वर्ष में १३ मास हो जाते हैं।

अधिक मास को मल मास या पुरुषोत्तम मास कहते हैं। चन्द्र मास के गणित से वर्ष में ३५४ दिन ९ घंटे और सूर्य मास के वर्ष में ३६५ दिन ६ घंटे प्रायः होते हैं। इस कारण सूर्य और चन्द्र के दिनों का अन्तर अधिक मास होने से बराबर हो जाता है।

क्षय मास

जिस चान्द्र मास के २ पक्ष में २ संक्रांति होती है उसे क्षयमास कहते हैं। क्षय मास केवल कार्तिक आदि ३ महीनों में पड़ता है और महीनों में नहीं पड़ता। जिस वर्ष क्षय मास होता है उस वर्ष एक वर्ष के भीतर २ अधिक मास होते हैं।

यह कई वर्षों में पड़ता है। यदि भाद्रपद अधिकमास होगा तो सूर्य की गति अधिक होने से मार्ग शीर्ष में २ संक्रांति वाला क्षयमास होगा और सूर्य की गति अल्प हो जाने के कारण चैत्र मास भी अधिक होगा।

जिस सम्वत् में क्षयमास होता है उसके १४१ या १९ वर्ष उपरान्त पुनः क्षयमास होना सम्भव होता है अर्थात् कभी १४१ वर्ष में कभी १९ वर्ष में संभव होता है।

जैसे सम्वत् ९७४ में क्षयमास होकर पुनः आगे सम्वत् (९७४+१४१)=१११५ में और (१११५+१४१)=१२५६ सम्वत् में क्षय मास होगा, इसी प्रकार आगे और भी जानें। भविष्य में सम्वत् २०२० में क्षय मास होगा।

(७) पक्ष

चान्द्र मास में २ पक्ष=(पखवाड़ा या पंदरवाड़ा) होते हैं। जब सूर्यास्त के उपरान्त कुछ समय तक अन्धेरी रात आ जाती है या सम्पूर्ण रात भर या रात के कुछ भाग तक ही सूर्यास्त के बाद अंधेरा रहे उसे कृष्ण पक्ष कहते हैं। जब सूर्यास्त के उपरान्त कुछ समय या सम्पूर्ण रात भर चन्द्र का प्रकाश रात्रि को रहे तब उसे शुक्ल पक्ष कहते हैं।

कृष्णपक्ष=वदी। शुक्ल पक्ष=शुद्ध या सुदी।

अध्याय १६

पंचाङ्ग के अंग

तिथि—यह पंचाङ्ग का प्रथम अंग हैं। पंचाङ्ग में पहिले तिथि ही दी रहती है। चान्द्र मास की तिथियाँ ३० होती हैं।

१ प्रतिपदा (परिवा)	५ पंचमी (पाँचें)	१० दशमी (दसें)	१४ चतुर्दशी (चौदस)
परमा या पड़िवा	६ षष्ठ (छठें)	११ एकादशी	१५ पूर्णिमा (पूनों)
२ द्वितीया (दोज)	७ सप्तमी (सातें)	(ग्यारस)	३० अमावस्या
३ तृतीया (तीज)	८ अष्टमी (आठें)	१२ द्वादशी (वारस)	(अमावस)
४ चतुर्थी (चौथ)	९ नवमी (नमें)	१३ त्रयोदशी (तेरस)	या अमावास्या

तिथियाँ शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से गिनी जाती है और १५ तिथि पूर्णिमा को होती है, इस कारण पूर्णिमा के स्थान में १५ तिथि लिखते हैं। इसके उपरान्त कृष्ण पक्ष की तिथियाँ आरम्भ होती हैं। वे भी प्रतिपदा से आरम्भ होकर अमावस्या तक गिनी जाती हैं। परन्तु अमावस्या को ३० वीं तिथि कहते हैं। अमावस्या के स्थान ३० तिथि लिखी जाती है। जहाँ ३० तिथि लिखी हो वहाँ अमावस्या समझें।

जिस दिन सूर्य और चन्द्र एक स्थान में आ जाते हैं तव अमावस्या होती है अर्थात् सूर्य के पास चन्द्र आ जाता है (अस्त हो जाता है) तव अमावस्या होती है। गणित करने से जिस समय सूर्य और चन्द्र का पूर्व पश्चिम अन्तर शून्य हो जाता है उसी समय अमावस्या तिथि होती हैं।

सूर्य की गति से चन्द्र की गति अधिक है। जब दोनों का अन्तर बढ़ने लगता है तो १ तिथि का आरम्भ होने लगता है। अर्थात् प्रतिपदा तिथि का आरम्भ होने लगता है, जब वह बढ़ते-बढ़ते वारह अंश का अन्तर हो जाता है तो प्रतिपदा तिथि पूरी हो जाती है। ३६०° एक चक्र में होते हैं ÷ ३० तिथि=१२°=१ तिथि। अर्थात् सूर्य चन्द्र में जब १२° का अन्तर पड़ता है तो १ तिथि होती है।

यह अन्तर (अर्थात् १ तिथि) मध्यम मान से ५९ घण्टा ३ पल का होता है। चान्द्रमास २९½ दिन का होता है, जिसमें ३० तिथियाँ व्यतीत होती हैं। इस प्रकार १२ मास में ३५४ दिन हुए जिसमें ३६० तिथियाँ होती हैं अर्थात् तिथियों का क्षय वृद्धि आदि होकर ६ दिन कम हो जाते हैं।

चन्द्र गति कभी ६६ घटी से घटते घटते ५० घटी तक कम हो जाती है। जब तिथि का मान ६० घड़ी से अधिक होता है तो वृद्धि तिथि और ६० घड़ी से कम होता है तो क्षय तिथि होती है।

वृद्धि तिथि

जैसे सोमवार को ५८ घड़ी तक द्वितीया है। १२ अंश अन्तर होने में चन्द्र की गति के अनुसार तृतीया पूर्ण होने को ६५ घटी लगी। सोमवार को ५८ घटी के उपरान्त द्वितीया व्यतीत होकर शेष में तृतीया रहेगी। फिर मंगलवार को सब दिन अर्थात् ६० घटी तृतीया रही और बुध को सूर्योदय के अनन्तर ३ घटी और तृतीया रही। इस प्रकार सोमवार, मंगलवार और बुधवार को मिलाकर ६५ घटी तृतीया रही। इसके उपरान्त चतुर्थी आरम्भ हुई।

पंचाग में सोमवार को द्वितीया ५८ घटी लिखा होगा। मंगल को और बुध को भी तृतीया लिखा रहेगा।

सूर्योदय के उपरान्त वह तिथि चाहे १ घड़ी क्यों न हो, जो तिथि सूर्योदय पर होगी वही तिथि पंचांग में लिखी रहेगी। जैसे बुधवार को ३ घड़ी तक तृतीया है तो भी उस दिन तृतीया ३ घटी लिखी रहेगी। इससे समझ जाना चाहिए कि सूर्योदय के उपरान्त ३ घटी तक तृतीया तिथि थी उसके उपरान्त चतुर्थी तिथि आरम्भ हुई।

इस प्रकार जब दो दिन एक ही तिथि पंचांग में लिखी देखो तो उसे वृद्धि तिथि जानो।

क्षय तिथि

मान लो सोमवार को सूर्योदय के अनन्तर २ घड़ी दशमी है। पंचांग में उस दिन २ घड़ी लिखा होगा। इसके बाद एकादशी तिथि मान लो ५५ घटी रही फिर द्वादशी आरम्भ हुई, तो सोमवार को पूरे ६० घटी में २ घटी दशमी के गये, बचे ५८ घटी। इसमें ५५ घटी एकादशी के गये तो ३ घटी द्वादशी के बचे तो उस दिन ३ घटी ही द्वादशी रही। दूसरे दिन मंगलवार को भी शेष द्वादशी रहेगी ही। इस कारण मंगल वार को द्वादशी तिथि पंचांग में लिखी मिलेगी। परन्तु एकादशी तिथि पंचांग में लिखी हुई न मिलेगी। परन्तु ऊपर बताई रीति से जान सकते हो कि ग्यारस कब से कब तक रही। ऐसा नहीं समझना कि पंचांग में ग्यारस नहीं लिखा तो ग्यारस है ही नहीं। सूर्योदय पर जो तिथि किसी भी दिन पंचांग में नहीं बताई गई वह क्षय तिथि समझना।

पूर्णिमा और अमावस्या के नाम

तिथि	चतुर्दशी मिश्रित	प्रतिपदा मिश्रित
अमावस्या ३०	सिनी	कुहू
पूर्णिमा १५	अनुमति	राका

(२) वार (दिन) Day

यह पंचांग का दूसरा अंग है। पंचांग में तिथि के पास वार दिया रहता है। वार ७ हैं।

क्रम	वार नाम		फारसी नाम	अंग्रेजी नाम
१	रविवार=सूर्यवार	(इतवार) आदित्यवार	एक संबा	Sunday
२	चन्द्रवार	(सोमवार)	दुसंबा (पीर)	Monday
३	भौमवार	(मंगलवार)	शि संबा	Tuesday
४	बुधवार		चहार संबा	Wednesday
५	गुरुवार	(बृहस्पतिवार)	पंज संबा (जुमेरात)	Thursday
६	भृगुवार	(शुक्रवार)	जुमा	Friday
७	शनिवार	(शनीचर)	संबा	Saturday

ये दिन के नाम ग्रहों के ऊपर से पड़े हैं। जिस ग्रह का होरा प्रातः काल होता है उसी ग्रह के नाम से उस दिन का नाम पड़ता है। पृथ्वी भर में सर्वत्र इसी क्रम से ही दिन माने जाते हैं और ७ दिन होते हैं।

ग्रहों का होरा

आकाश में पृथ्वी से अधिक दूरी के क्रम से इस प्रकार ग्रहों की स्थिति है— (१) शनि, (२) गुरु, (३) मंगल, (४) रवि, (५) शुक्र, (६) बुध, (७) चन्द्र। अर्थात् पृथ्वी से सबसे पास चन्द्र हैं फिर उससे कुछ दूर बुध, फिर शुक्र, फिर रवि, मंगल, गुरु और शनि क्रम से एक दूसरा ग्रह अधिक दूरी पर है। होरा के विचार में उपर्युक्त ग्रहों का क्रम जिसमें आदि शनि है लिया है, क्योंकि पृथ्वी से शनि सबसे अधिक दूरी पर है चित्र सं० ४ देखें।

१होरा एक घंटे का होता है इस कारण होरा (Hour) को घंटा भी कहते हैं। दिन रात में २४ घंटा होते हैं। इस प्रकार दिन रात में २४ होरा हुए। ७ ग्रहों का प्रभाव क्रमशः एक २ होरा में होता है=२४ होरा÷७ ग्रह=३$\frac{3}{7}$। अर्थात् २४ घंटा में ७ ग्रह के पूरे ३ चक्कर होकर शेष ३ होरा (घंटे) बच रहते हैं, जिसमें प्रति ग्रह १ घंटा के हिसाब से ३ ग्रह और भोग सकते हैं। इस प्रकार ३ ग्रह और भोग चुकते हैं। इस प्रकार (२४ घण्टे पूरे होने पर) चौथे ग्रह के होरा में दूसरे दिन का आरम्भ होता है।

जैसे प्रातः शनि का होरा था शनि से दूसरा गुरु, तीसरा मंगल का होरा, शनिवार के २४ घंटा में व्यतीत हो गये। अब दूसरे दिन प्रातः काल चौथा ग्रह (शनि से

चौथा रवि है) रवि का होरा आया। उस दिन प्रातः काल रवि का होरा था, इस कारण उस दिन का नाम रविवार पड़ा।

इसके वाद रवि से चौथा चन्द्र है। इसमें रविवार के दिन भर के बाद दूसरे दिन प्रातः चन्द्र का होरा आयगा, इसलिए उस दिन का नाम चन्द्रवार (सोमवार)होगा। अब सोमवार के वाद चौथा ग्रह (१ चन्द्र, २ शनि, ३ गुरु) चौथा मंगल हुआ तो दूसरे दिन प्रातः काल मंगल का होरा होने से मंगलवार दिन का नाम पड़ा। मंगल से चौथा ग्रह (१ मंगल, २ रवि, ३ शुक्र और चौथा) बुध हैं तो दूसरे दिन बुधवार होगा। इसी प्रकार बुध से चौथा गुरु है, गुरु से चौथा शुक्र है, शुक्र से चौथा शनि है। इस क्रम से प्रातः काल जिस ग्रह का होरा होता है उसी ग्रह के नाम से वार का नाम पड़ता है।

इष्ट घड़ी के घंटा बना लो, उसमें ७ का भाग दो जो शेष वचे उतनी संख्या उस दिन के प्रातः समय के होरा से, उस दिन को १ गिनते हुए शेष संख्या तक गिनो, जिस ग्रह का होरा आवे उस समय वही होरा होगा ऐसा जानना।

जैसे २५ घड़ी दिन चढ़े पर कौन होरा होगा देखना है। २५ घड़ी=१० घंटा। उस दिन मानो मंगलवार था तो १० में ७ का भाग दिया शेष ३ वचा, मंगल का दिन था। इससे मंगल से गिनो तो (१) मंगल, (२) रवि, (३) तीसरा शुक्र आया। इस कारण उस समय शुक्र का होरा होगा ऐसा जानना।

नीचे दिए हुए चक्र से प्रगट होगा कि सूर्योदय के उपरान्त इष्ट घड़ी पर किस दिन कौन होरा होगा। घडी पल में समय दिया हो तो घड़ी पल में (घंटा वनाने को) $\frac{२}{५}$ का गुणा कर ७ का भाग दो शेष जो वचे वही होरा होगा

इष्ट घड़ी $\times \frac{२}{५} \div ७$=शेष ग्रह का होरा जैसे इष्ट घड़ी ४० है गुरुवार का दिन है $\frac{४० \times २}{५} \div ९ = १६ \div ७$=शेष २, दिन गुरुवार था तो गुरु से २ गिना। १ गुरु २ मंगल आया इस कारण उस समय मंगल का होरा हुआ। इसी के अनुसार नीचे चक्र से इष्ट घड़ी का होरा जान सकते हो। यदि समय घंटा में हो तो इसी चक्र से घंटा के अनुसार भी होरा जान सकते हो।

होरा चक्र

किस घड़ी तक				रवि वार	चन्द्र वार	मंगल वार	बुध वार	गुरु वार	शुक्र वार	शनि वार	घंटा तक			
२॥	२०	३७॥	५	सूर्य	चंद्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	१	८	१५	२२
५	२२॥	४०	५७॥	शुक्र	शनि	सूर्य	चंद्र	मंगल	बुध	गुरु	२	९	१६	२३
७॥	२५	४२॥	६०	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	सूर्य	चंद्र	मंगल	३	१०	१७	२४
१०	२७॥	४५	०	चंद्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	सूर्य	४	११	१८	०
१२॥	३०	४७॥	०	शनि	सूर्य	चंद्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	५	१२	१९	०
१५	३२॥	५०	०	गुरु	शुक्र	शनि	सूर्य	चंद्र	मंगल	बुध	६	१३	२०	०
१७॥	३५	५२॥	०	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	सूर्य	चंद्र	७	१४	२१	०

यहाँ दिया घंटा का समय सूर्योदय से लेना अर्थात् घड़ी के समय में सूर्योदय घटा कर लेना।

इस चक्र से प्रगट होगा कि शनि, गुरु, मंगल, रवि, शुक्र, बुध, चन्द्र इस क्रम से ग्रह का होरा होता है। रविवार को रवि, शुक्र, बुध, चन्द्र, शनि, गुरु, मंगल का दिन रात में ३ वार पूरा चक्र होकर शेष रात्रि में ३ और ग्रह का होरा बुध का होरा तक होता है। बुध के वाद चन्द्र है इस कारण दूसरे दिन प्रातः चन्द्र का होरा होने से दूसरे दिन का नाम चन्द्रवार पड़ा। इसी प्रकार और ग्रहों के सम्वन्ध में जानना।

(३) नक्षत्र

यह पंचांग का तीसरा अंग है।

नक्षत्र २७ है और अभिजित मिलाकर २८ नक्षत्र होते हैं, परन्तु पंचांग में २७ ही नक्षत्र दिए रहते हैं।

क्रांति प्रदेश के २७ समान भाग करने से प्रत्येक भाग १३°–२०′ का, १ नक्षत्र होता है। इस कारण चन्द्रमा को १३°–२०′ चलने में जो समय लगता है उसे नक्षत्र या दिन नक्षत्र कहते हैं। यहाँ नक्षत्र से चन्द्र नक्षत्र जानना।

मध्यम मान से चन्द्र नक्षत्र ६० घ ४३ पल का होता है। कभी कभी इससे कम या अधिक का मान हो जाता है। इसी २$\frac{१}{४}$ नक्षत्र मिल कर चन्द्र की १ राशि होती है। प्रत्येक पंचांग में नक्षत्र के अतिरिक्त चन्द्र किस राशि में है यह भी दिया रहता है।

जिस प्रकार चन्द्र इन २७ नक्षत्रों पर से चलता है उसी प्रकार सूर्यादि ग्रह भीइन्हीं नक्षत्रों पर से चलते हैं। जिस प्रकार चन्द्र एक नक्षत्र एक दिन में चल लेता है उसी प्रकार सूर्य १३ या १४ दिन में एक नक्षत्र को पार कर करता है, ये सूर्य नक्षत्र कहलाते हैं। जव आर्द्रा पर सूर्य आता है तो वर्षा ऋतु का आरम्भ समझा जाता है। खेती के सम्वन्ध से किसान इन नक्षत्रों पर विशेष ध्यान देते हैं। सूर्य नक्षत्र को महानक्षत्र भी कहते हैं।

जिस दिन जिस नक्षत्र पर सूर्य जाता है वह पंचाङ्ग में लिखा रहता है। जैसे आर्द्रार्क=आर्द्रा+अर्क (सूर्य)=अर्थात् आर्द्रा नक्षत्र पर उस दिन सूर्य गया। किस घड़ी पल पर उस नक्षत्र में प्रवेश किया वह भी दिया रहता है।

इसी प्रकार बुध, मंगल, गुरु आदि ग्रह भी किसी नक्षत्र पर पहुँचते है तो उस नक्षत्र पर पहुँचने का दिन समय आदि भी पंचाङ्ग में दिया रहता है। उस नक्षत्र के किस चरण में वह ग्रह आया है यह भी दिया रहता है।

ऊपर सूर्य का जो सौर नक्षत्र बताया है, उसके अतिरिक्त पंचाङ्ग में सायन सूर्य किस नक्षत्र पर आया है वह भी दिया रहया है। कौन ग्रह किस राशि में है पंचाङ्ग

में दिये रहते हैं। किसी पंचाङ्ग में दैनिक, किसी में साप्ताहिक दिये रहते हैं। २¼ नक्षत्र की एक राशि होती है, इससे नक्षत्रों के प्रमाण से ग्रहों की राशि भी निकल आती है। पंचाङ्ग में स्पष्ट ग्रह के अतिरिक्त कुण्डली चक्र भी दिए रहते हैं। इस प्रकार ग्रहों के सम्बन्ध की प्रत्येक सूचनाएं पंचाङ्ग में दी रहती है।

(४) योग

यह पंचाङ्ग का चौथा अंग है।

योग २७ हैं। चन्द्र और सूर्य की गति में जब १३°-२०'' का अन्तर पड़ता हैं तब एक योग होता है। ३६०° ÷ २७= १३°–२०'=१(योग)परन्तु नक्षत्र के प्रमाण से इन योगों का आकाश की स्थिति से कोई सम्बन्ध नही है। योग केवल सूर्य चन्द्र का अन्तर बतलाते हैं।

२७ योगों के नाम

१ विष्कम्भ	८ धृति	१५ वज्र	२२ साध्य
२ प्रीति	९ शूल	१६ सिद्धि	२३ शुभ
३ आयुष्मान	१० गंड	१७ व्यतीपात	२४ शुक्ल
४ सौभाग्य	११ वृद्धि	१८ वरीयान	२५ ब्रह्म
५ शोभन	१२ ध्रुव	१९ परिघ	२६ ऐन्द्र
६ अतिगंड़	१३ व्याघात	२० शिव	२७ वैधृति
७ सुकर्मा (सुकर्म)	१४ हर्षण	२१ सिद्ध	

(५) करण

यह पंचांङ्ग का पाँचवा अंग है।

करण यह तिथि का आधा भाग है (१) तिथि के पूर्वार्द्ध अर्थात् पहिले आधे भाग में एक करण और उत्तरार्द्ध (अन्त के आधे भाग में) दूसरा करण होता है। इस प्रकार १ तिथि में २ करण होते हैं।

१ चान्द्रमास में ३० तिथि और ६० करण होते हैं। सूर्य और चन्द्र के बीच ६° का अन्तर पड़ने पर १ करण होता है। करण कुल ११ है उनके नाम ये है।

चर करण–(१) बव, (२) बालव, (३) कौलव, (४) तैतिल, (५) गर, (६) वणिज, (७) विष्टि।

स्थिर करण–(८) शकुनि, (९) चतुष्पद, (१०) नाग, (११) किंस्तुघ्न।

पूर्वार्द्ध=पूर्व दल (पहिला आधा भाग) उत्तरार्द्ध=परदल (अन्त का आधा भाग)।

किस करण में कौन-कौन तिथि होती है नीचे चक्र में दिया है

पक्ष	करण	किंस्तुघ्न	बव	बालव	कौलव	तैतिल	गरल	वणिज	विष्टि	शकुनि	चतुष्पद	नाग	
शुक्ल पक्ष	पूर्वदल	१	५,१२	२,९	६,१३	३,१०	७,४	४,११	८,१५	०	०	०	तिथियाँ
की तिथि	उत्तर,,	०	१,८,१५	५,१२	२,९	६,१३	३,१०	७,१४	४,११	०	०	०	
कृष्ण पक्ष	पूर्व ,,	०	४,११	१,८	५,१२	२,९	६,१३	३,१०	७,१४	०	३०	०	
की तिथि	उत्तर,,	०	७	४,११	१,८	५,१२	२,९	६,१३	३,१०	१४	०	३०	

चक्र में जो अङ्क दिए हैं ये तिथियों के अङ्क हैं। १५ से पूर्णिमा, ३० से अमावस्या समझना। ऊपर के चक्र से प्रगट होगा कि शुक्ल प्रतिपदा को पहिले किंस्तुघ्न फिर बव करण होता है। शुक्ल द्वितीया को बालव फिर कौलव होता है। १५ पूर्णिमा को पहिले चतुष्पद फिर नाग होता है।

इसी को अच्छे प्रकार से समझाने के लिए किस तिथि में कौन करण होता है यह तिथि के अनुसार करण नीचे दिए हैं।

शुक्ल तिथि	१	२-९	३-१०	४-११	५-१२	६-१३	७-१४	८-१५	×	×
पूर्व दल	किंस्तुघ्न	बालव	तैतिल	वणिज	बव	कौलव	गरल	विष्टि	विष्टि	चतुष्पद
पर दल	बव	कौलव	गरल	विष्टि	बालव	तैतिल	वणिज	बव	शकुनि	नाग
कृष्ण तिथि	×	१-८	२-९	३-१०	४-११	५-१२	६-१३	७	१४	३०

भद्रा—विष्टि करण का दूसरा नाम है, जो शुभ कार्यों में अनिष्ट कारक होती है। यह केवल मूहूर्त आदि में विचारणीय है।

पंचाङ्ग में किसी तिथि के पूर्वार्द्ध में जो करण होता है प्रायः वही किस समय तक रहेगा दिया रहता है। इसके बाद जो दूसरा करण आना चाहिए वह नहीं दिया रहता। इस चक्र से समझ में आ जावेगा कि किस तिथि के उत्तरार्द्ध में कौन करण होगा।

दिनमान—सूर्योदय से सूर्यास्त तक दिन की अवधि को दिनमान कहते हैं। इससे प्रगट होता है कि दिन कितने घड़ी पल तक है। अर्थात् दिन कितने घड़ी पल लम्बा है।

दिन रात में ६० घड़ी होती है=(६० घटी–दिनमान)=रात्रिमान।

प्रतिदिन दिनमान घटता-बढ़ता रहता है। २१ मार्च से प्रतिदिन बढ़ते-बढ़ते ता० २१ जून को सबसे बड़ा दिन होता है। उसके उपरान्त घटना आरम्भ होता है। इसको पहिले समझा चुके हैं।

अक्षांश के अनुसार भी प्रत्येक स्थान में दिन छोटा बड़ा होता है। इसके विषय में भी यहाँ कुछ बतला देना है।

जब सूर्य उत्तर गोल में होता है तब पृथ्वी के ध्रुव प्रदेश में ६ मास तक बराबर सूर्य दिखलाई देता है। उस समय दक्षिण ध्रुव पर ६ मास बराबर अन्धकार रहता है। जब सूर्य दक्षिण गोल में होता है तो इसके विरुद्ध होता है अर्थात् दक्षिण ध्रुव में ६ महीने का दिन और उत्तर ध्रुव में ६ महीने की रात्रि रहती है।

उत्तर और दक्षिण ध्रुव के बीच में दोनों ध्रुवों से बराबर ९०° पर पृथ्वी की मध्य रेखा होती है। मध्य रेखा के स्थान को निरक्ष देश भी कहते हैं, क्योंकि वहाँ पर अक्षांश शून्य होता है। निरक्ष देश में १२ घंटे का दिन और १२ घंटे की रात्रि होती है। मध्यरेखा से अक्षांशों की दूरी के अनुसार परम दिन रात्रि में अन्तर पड़ता है। मध्य रेखा से ६६° उत्तर के देश में सबसे बड़ा दिन २४ घण्टे का और ७०° पर सबसे बड़ा दिन २ मास का, ७८॥° पर ४ मास का और ९०° पर (ध्रुव देश में) परम दिन (सबसे बड़ा दिन) ६ मास का होता है। दूसरी ओर दक्षिण गोल में ठीक इसके विरुद्ध होता है अर्थात् जब उत्तर गोल में सबसे बड़ा दिन, जिस मान का होगा तो दक्षिण गोल में उसी मान की सबसे बड़ी रात्रि होगी।

सायन सूर्य मेष पर जब आता है तब दिन रात्रि बराबर होती है। जब सूर्य सायन कर्क पर आता है तो सबसे बड़ा दिन और सबसे छोटी रात्रि होती है। जब सूर्य सायन तुला पर जाता है तब फिर दिन रात्रि बराबर होती है, जब सायन मकर पर आता है तो सबसे बड़ी रात्रि और सबसे छोटा दिन होता है। यह उत्तर गोल में होता है और दक्षिण गोल में इसके विपरीत होता है।

अंशों के अनुसार देशों का परम दिन का प्रमाण छोटा बड़ा होता है। ज्यों-ज्यों अक्षांश बढ़ता जायगा महा दिन (परम दिन) का प्रमाण बढ़ता जायगा। महादिन का प्रमाण अक्षांशों के अनुसार नीचे चक्र में दिया है।

अक्षांश के अनुसार महादिन चक्र

लघु	अक्षांश				परम दिन-		लघु	अक्षांश				परम दिन-	
भू	से		तक		मान		भू	से		तक		मान	
मेखला	अंश	कला	अंश	कला	घं०	मि०	मेखला	अंश	कला	अंश	कला	घं०	मि०
१	१	०	८	३४	१२	३०	१६	६२	२६	६३	२२	२०	०
२	८	३४	१६	४४	१३	०	१७	६३	२२	६४	१०	२०	३०
३	१६	४४	२४	१२	१३	२०	१८	६४	१०	६४	५०	२१	०
४	२४	१२	३०	४८	१४	०	१९	६४	५०	६५	२२	२१	३०
५	३०	४८	३६	३१	१४	३०	२०	६५	२२	६५	४८	२२	०
६	३६	३१	४१	२४	१५	०	२१	६५	४८	६६	५	२२	३०
७	४१	२४	४५	३२	१५	३०	२२	६६	५	६६	२१	२३	०
८	४५	३२	४९	२	१६	०	२३	६६	२१	६६	२९	२३	३०

९	४९	२	५१	५९	१६	३०	२४	६६	२९	६६	३२	२४ ०
१०	५१	५९	५४	३०	१७	०	२५	६६	३२	६७	१८	१ महीना
११	५४	३०	५६	३८	१७	३०	२६	६७	१८	६९	३३	२ „
१२	५६	३८	५८	२७	१८	०	२७	६९	३३	७३	५	३ „
१३	५८	२७	७९	५९	१८	३०	२८	७३	५	७७	४०	४ „
१४	५९	५९	६१	१८	१९	०	२९	७७	४०	८२	५९	५ „
१५	६१	१८	६२	२६	१९	३०	३०	८२	५९	९०	०	६ „

अध्याय १७

पंचाङ्ग में मुहूर्त आदि के सम्बन्ध से इतर विषय भी दिये रहते हैं उनके सम्बन्ध में संक्षिप्त ज्ञान यहाँ कराया जाता है।

पंचांङ्ग में सिद्ध योग क्रकच योग आदि दिये रहते हैं वे सब मुहूर्त से सम्बन्ध रखते हैं। मुहूर्त का स्वतंत्र विषय है यहाँ तो बहुत ही संक्षेप में आवश्यक बाते दी जाती हैं, जिनका उल्लेख कभी पंचांग में आता है तो नया विद्यार्थी विचार में पड़ जाता है कि ये क्या है, इस कारण यहाँ समझाया जाता है।

पंचक

जब चन्द्र कुंभ और मीन राशियों में होता है तो पंचक होता है। अर्थात् जब धनिष्ठा नक्षत्र का उत्तरार्द्ध (अन्त का आधा भाग) और शतभिषा, पूर्व भाद्रपद, उत्तर भाद्रपद और रेवती नक्षत्र पर चन्द्र होता है तो पंचक कहलाता है।

इस पंचक में काम करने का फल पचगुना होता है अर्थात् पचगुनी हानि होती है। घर छाना, प्रेत दाह, घास लकड़ी आदि इकत्र करना, खाट बुनना, चुल्हा बनाना आदि कार्य पंचक में करना मना है, क्योंकि कहा जाता है कि पंचक में कोई काम करने से पाँच वार वही काम करना पड़ेगा। आवश्यक कार्य प्रेत दाह आदि करना होता है तो उसका फल कम करने को पृथक विधान बताया गया है। दक्षिण यात्रा में भी यह वर्जित है।

द्विपुष्कर और त्रिपुष्कर योग

मृत्यु, विनाश, वृद्धि आदि का फल इसमें दुगुना या तिगुना होता है जैसे त्रिपुष्कर में कोई वस्तु घुमें तो ३ वस्तु घुमेंगी। द्विपुष्कर में कोई हानि हो तो २ बार हानि होगी। इसी प्रकार सबका विचार होता है। अर्थात द्विपुष्कर में हानि या लाभ दुगुना और त्रिपुष्कर में तिगुना होता है।

द्विपुष्कर योग			त्रिपुष्कर योग			
तिथि	वार	नक्षत्र	तिथि	वार	नक्षत्र	तिथि, वार
२	शनिवार	धनिष्ठा	२	शनिवार	विशाखा	और नक्षत्र जब
७	मंगलवार	चित्रा	७	मंगलवार	उ० फाल्गुनी	तीनों इस प्रकार
१२	रविवार	मृगशिर	१२	रविवार	पूर्व भाद्र०, पुनर्वसु	हों तब ये
						कृत्तिका, उत्तराषाढ़ा योग होते हैं।

मुहूर्त—दिनमान ÷ १५=१मुहूर्त

मुहूर्त लगभग २ घड़ी का होता। दिनमान के प्रमाण से उसका १५ वाँ भाग करना तब एक मुहूर्त होता है। दिनमान के प्रमाण से मुहूर्त २ घड़ी से कम या अधिक भी हो जाता है। दिन में १५, रात में १५, सब ३० मुहूर्त दिन रात में होते हैं।

मुहूर्त चक्र

वार	रविवार	चंद्रवार	भौमवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार
कुलिक (दुर्मुहूर्त)	१४ वाँ	१२	१०	८	६	४	२
कालवेला	८	६	४	२	१४	१२	१०
यमघंट	१०	८	६	४	२	१४	१२
कंटक	६	४	२	१४	१२	१०	८
यमार्द्ध	७	९	३	९	१५	५	१

जैसे रविवार को १४ वाँ मुहूर्त कुलिक है, ८ वाँ मुहूर्त कालवेला है, १० वाँ यमघंट है इत्यादि इस चक्र के अनुसार जानों। इस चक्र में यह बताया है, कौन वार को गिनती में कौन से मुहर्त का क्या नाम है।

मुहूर्त निकालना।

वर्तमान वार से शनि तक गिनो २२=कुलिक
" बुधवार " " × २=कालवेला
" गुरुवार " " × २=यमघंट
" मंगल " " × २=कंटक
} ये मुहूर्त शुभकार्य में वर्जित हैं।

जैसे रविवार हैं शनिवार तक गिना=७ × २=१४ वाँ मुहूर्त कुलिक हुआ।

कालवेला में यात्रा करने से मृत्यु, विवाह में स्त्री विधवा हो, व्रतबन्ध में यह योग हो तो ब्रह्महत्या होती है। इससे सब कार्यों में कालवेला वर्जित है।

यमार्द्ध—वारवेला

दिन में ४ प्रहर होते हैं। १ प्रहर=लगभग ८ घड़ी का होता है।

यमार्द्ध=$\frac{1}{2}$ प्रहर=४ घड़ी

दिनमान ÷ ८=यमार्द्ध घटी दिन की

रात्रिमान ÷ ८= " रात्रि की

दिन मान कभी-कभी २, १६ घटी का होता है। इस कारण उपरोक्त विचार में यमार्ध ४ घटी का बताया है परन्तु दिन मान के ठीक विभाग करने से दिनमान की

और रात्रिमान से रात्रि की यमार्द्ध की घटी निकल आती है। दिन रात में सब मिलाकर ८ यमार्द्ध होते हैं। यमार्द्ध को ही वारवेला कहते हैं। इसमें दिन और रात का पृथक २ चौघड़िया दिया रहता है और उस चौघड़िया का नाम भी दिया रहता है। उसका फल नाम सदृश होता है। नीचे चौघड़िया दिया है उसमें चौघड़िया का नाम संकेताक्षर में दिया है वे ये हैं।

च=चर अ=अमृत शु=शुभ उ=उद्वेग ला=लाभ का=काल रो=रोग।

ये ७ ही हैं नाम सदृश इनका फल होता है। दिन में ७ यमार्द्ध होते हैं फिर आठवें यमार्द्ध में वही पहिला मुहूर्त आता है। इस प्रकार आगे क्रमानुसार सब मुहूर्त होते हैं।

दिन का चौघड़िया

रवि वार	चन्द्र वार	मंगल वार	बुध वार	गुरु वार	शुक्र वार	शनि वार
उ	अ	रो	ला	शु	च	का
च	का	उ	अ	रो	ला	शु
ला	शु	च	का	उ	अ	रो
अ	रो	ला	शु	च	का	उ
का	उ	अ	रो	ला	शु	च
शु	च	का	उ	अ	रो	ला
रो	ला	शु	च	का	उ	अ
उ	अ	रो	ला	शु	च	का

रात का चौघड़िया

रवि वार	चन्द्र वार	मंगल वार	बुध वार	गुरु वार	शुक्र वार	शनि वार
च	का	उ	अ	रो	ला	शु
ला	शु	च	का	उ	अ	रो
अ	रो	ला	शु	च	का	उ
का	उ	अ	रो	ला	शु	च
शु	च	का	उ	अ	रो	ला
रो	ला	शु	च	का	उ	अ
उ	अ	रो	ला	शु	च	का
च	का	उ	अ	रो	ला	शु

इतवार के दिन को पहिले यमार्द्ध में उद्वेग, दूसरे में चर, तीसरे में लाभ इत्यादि क्रमानुसार मुहूर्त यमार्द्ध में भोगते हैं। जैसे मंगलवार को दिनमान २९ घ.-२० प. है ÷ ८=१ यमार्द्ध ३ घ. ४० प. का हुआ। मान लो इष्ट ८ घड़ी है तो ७-२० तक २ यमार्द्ध पूरे होकर तीसरा यमार्द्ध वर्तमान है। मंगलवार को तीसरा=च=चर मुहूर्त हुआ। इसी प्रकार मुहूर्त निकाल लेना।

राहु वारवेला और कालवेला

यमार्द्ध पर से और भी विचार

वार	रवि वार	सोम वार	मंगल वार	बुध वार	गुरु वार	शुक्र वार	शनि वार
यमार्द्ध-राहु का वारवेला	४ चौथा	७	२	५	८	३	६
दिन का कालवेला	५ वां	२	६	३	७	४	१-८
रात्रि ,, ,,	६ छठवां	४	२	७	५	३	१-८

यहाँ बताया है कि किस दिन के कौन से यमार्द्ध में राहु का वारवेला होता है और दिन के या रात्रि के कौन से यमार्द्ध को कालवेला कहते हैं।

नक्षत्र विषघटी

४-४ घटी की विषघटी होती है।

नीचे नक्षत्रों के आगे विषघटी दी है उससे ४ घटी आगे तक विषघटी रहती है।

नक्षत्र विषघटी चक्र

क्रम	नक्षत्र	घटी	क्रम	नक्षत्र	घटी	क्रम	नक्षत्र	घटी	क्रम	नक्षत्र	घटी
१	अश्विनी	५०	८	पुष्य	२०	१५	स्वाती	१४	२२	श्रवण	१०
२	भरणी	२४	९	आश्लेषा	३२	१६	विशाखा	१४	२३	धनिष्टा	१०
३	कृत्तिका	३०	१०	मघा	३०	१७	अनुराधा	१०	२४	शतभिषा	१८
४	रोहिणी	४०	११	पू. फा.	२०	१८	ज्येष्ठा	१४	२५	पू. भा.	१६
५	मृगशिर	१४	१२	उ. फा.	१८	१९	मूल	५६	२६	उ. भा.	२४
६	आर्द्रा	२१	१३	हस्त	२१	२०	पू. षा.	२४	२७	रेवती	३०
७	पुनर्वसु	३०	१४	चित्रा	२०	२१	उ. षा.	२०			

जैसे अश्विनी नक्षत्र में ५० घड़ी उपरांत ४५ घड़ी तक या रेवती में ३० घड़ी उपरान्त ३४ घड़ी तक उस नक्षत्र में विषघटी होती है। इसका विचार नक्षत्र की घटियों पर से करना। नक्षत्र जब से आरम्भ हो उसके बाद ये घटियाँ गिन कर विष घटी निकाल लेना।

वार विषघटी

वार	सूर्यवार	चन्द्रवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार
घटी	२०	२	१२	१०	७	५	२५

तिथि विषघटी

तिथि	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५
घटी	१५	५	८	७	७	११	४	८	७	११	३	१३	१४	७	८

विषघटी नक्षत्र वार या तिथि में पूरी ४ घड़ी तक रहती है। ये शुभ कार्यों में वर्जित है।

यदि नक्षत्र आदि में पूरा ६० घटी का मान न हो तो अनुपात से (त्रैराशिक से) घटी निकाल लेनी चाहिये और तिथि या वार नक्षत्र आरम्भ होने के बाद इतनी घटी (जो विषघटी में वताई है) गिनो, उसके आगे ४ घटी तक और विपघटी रहेगी।

विषघटी दोष नाश—यदि चंद्र केन्द्र या त्रिकोण में वली हो या लग्नेश शुभ ग्रह युक्त हो तो विषघटी का दोष नहीं लगता।

गंड

राशि चक्र में किसी राशि के साथ किसी नक्षत्र का भी अन्त होता हो तो उस स्थान को गंड कहते हैं अर्थात् जहाँ दोनों का अंत हो (केवल १ का नहीं)।

जैसे–(१) मेष राशि के आरम्भ और मीन राशि के अन्त का सन्धि स्थल=गंड है।

(२) कर्क राशि और आश्लेपा के अन्त पर व सिंह राशि और मघा के प्रारम्भ में।

(३) वृश्चिक राशि और ज्येष्ठा के अन्त पर व धन राशि और मूल के आरम्भ में। इन तीनों गंड का नाम १ संध्या गंड, २ रात्रि गंड, ३ दिवा गंड।

गंडांत [नक्षत्र]

नक्षत्र	मघा, आश्लेषा	मूल, ज्येष्ठा	अश्विनी और रेवती
घटी	२+२=४ घटी	२+२=४ घटी	२+२=४ घटी

इन नक्षत्रों के आदि की २ घटी और अन्त की २ घटी इस प्रकार ४ घटी का एक [प्रत्येक] गंडांत होता है।

मूल --जन्म समय में मूल लगे हैं या नहीं इसका विचार।

ऊपर जो ६ नक्षत्र गंडांत के वताये गये हैं उन्हीं में मूल लगते हैं। वे नक्षत्र ये हैं १ आश्लेषा, २ मघा, ३ ज्येष्ठा, ४ मूल, ५ रेवती, ६ अश्विनी।

इन नक्षत्रों मे वालक का जन्म होने से मूल लगता है। मूल भी कई प्रकार के हैं। गंडांत में बालक का जन्म हो तो पिता को कुछ समय तक वालक का मुख न

देखना चाहिये। जब मूल की शान्ति कराने का समय हो जावे तब शान्ति कराकर मुख देखने का विधान है। इसका विचार फलित और मुहूर्त खण्ड में विशेष प्रकार से मिलेगा।

भद्रा

विशिष्ट करण को भद्रा कहते हैं यह शुभ कार्य में वर्जित है। विष, घात, तान्त्रिक कार्य में भद्रा में कार्य करने का विचार होता हैं। युद्ध, राजदर्शन, वैद्य बुलाना, जल तरना, शत्रु उच्चाटन, स्त्री सेवन, यज्ञ कार्य में इसका विचार करना पड़ता है।

इन तिथियों में भद्रा होती है—

पक्ष	शुक्ल पक्ष		कृष्णपक्ष	
तिथि	८, १५	४, ८	३, १०	७, १४
	पूर्वार्द्ध	परार्द्ध	परार्द्ध	पूर्वार्द्ध

तिथि के आधे भाग में ही भद्रा होती है। इसका मोटा प्रमाण ३० घटी का होता है। भद्रा के आरम्भ और अन्त समय [घटी पल] पंचाङ्ग में दिया रहता है।

अंग में भद्रा का वास इस प्रकार समझा जाता है।

अंग	मुख	कंठ	छाती	नाभि	कटि	पुच्छ
घटी	५	१	११	४	६	३
फल	कार्यनाश	मरण	धननाश	बुद्धिनाश	कलह	विजय

वृश्चिकी भद्रा=शुल्क पक्ष की भद्रा=कोई रात्रि की भद्रा को ही वृश्चिकी कहते हैं।
सर्पिणी " =कृष्ण " =" दिन " " सर्पिणी "

आवश्यक कार्य में सर्प का मुख और वृश्चिक की पूंछ का एक भाग त्याग कर कार्य कर सकते हैं।

चन्द्र की राशि के अनुसार भद्रा का वास

चन्द्रराशि	लोक	फल	विशेष
१, २, ३, ८,	स्वर्ग	शुभ	धन धान्य मिले
६, ७, ९, १०	पाताल	शुभ	धन प्राप्ति
४, ५, ११, १२,	मृत्यु	अशुभ	कार्य सिद्ध नहीं हो।

तिथि और नक्षत्र आदि के योग—

योग	ति. १	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	३०
१ तिथि स्वामी	अग्नि	ब्रह्मा	गौरी	गणेश	शेषनाग	कार्तिकेय	रवि	शिव	दुर्गा	काल	विश्वेदेवा	विष्णु	काम	शिव	चन्द्र	पितर
२ तिथि संज्ञा	नंदा	भद्रा	जया	रिक्ता	पूर्णा	नं०	भ.	ज.	रिक्ता	पू.	नंदा	भ.	जया	रिक्ता	पूर्णा	
३ शून्य लग्न	तुला		सिंह		मि.		धन		कर्क		धन		वृष			
(विषम तिथि में)	मकर		मकर		कन्या		कर्क		सिंह		मीन		मीन			
४ निंदित नक्षत्र	उ.षा.	अनु	तीनों उत्तरा		मघा	रो.	हस्त मूल	पू.भा.	कृ		रोहणी	अ.	चि.	स्वा.		
५ पक्षरन्ध्र तिथि			तिथि	४		६		८	९			१२		१४		
दोनों पक्ष की वर्जित घटी···		घटी		(८)		(९)		(१४)	(२५)			(१०)		(५)		
६ दग्ध तिथि सूर्य राशिकी		धन मीन		वृष कुम्भ		मेष कर्क		मि. कन्या		सिंह वृ.		तुला मकर				
७ शुभ कार्य में वर्जित योग					हस्त रवि	मृग सोम	अ. मङ्गल	अनु. बुध	पुष्य गुरु	रेवती शुक्र	रोहणी शनि					
८ दग्ध योग			बुध		मङ्गल	गुरु		शुक्र	शनि		सोम	रवि				
९ विष योग		बुध		रवि		सोम	मं.	गुरु	शुक्र	श.						
१० हुताशन योग						सोम	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	रवि				
११ ज्वालामुखी				अनु.	उत्तरा	मघा		रोहिणी	कृ.							

ये योग शुभ कार्य में वर्जित हैं नाम सदृश फल होता है। पक्षरंध्र की तिथि की वर्जित घटी छोड़कर उसकी शेष घटी ले सकते हैं।

मास तिथि नक्षत्र योग—

योग	चैत्र	वैशाख	जेष्ठ	अषाढ़	श्रावण	भादों	कुंवार	कार्तिक	अगहन	पूस	माघ	फाल्गुन
१ शून्य तिथि दोनोंपक्षकी	८–९	१२			२–३	१–२	१०–११		७–८	४–५		
शून्यतिथि कृष्ण पक्ष			१४	६				५			५	
शून्यतिथि शुक्लपक्ष			१३	७				१४			६	३–४
२ शून्य नक्षत्र	अ. रो.	चि. स्वा.	उ. षा.	पू. षा.	उ. षा.	श.	पू. भा.	म.	वि.	आर्द्रा	श्र.	भ.
			पुष्य	ध.	श्र.	रे.		कृ.	चि.	अ. हृ.	मू.	ज्ये.
३ शून्य राशि	कुंभ	मीन	वृष	मि.	मे.	कन्या	वृ.	तुला	धन	कर्क	मकर	सिंह
४ मन्वादि तिथि	शुक्ल		शु.	शु.	कृ.	शु.		शु.	शु.	शु.		शु.
	३–१५		१४	१०-१५	३०-८	३	९	१५-१२	७	११		१५
५ युगादि तिथि		शुक्ल ३				कृ.१३		शु. ९			कृ. ३	
		त्रेता				द्वापर		सतयुग			कलियुग	

शून्य तिथियों को मास दग्ध तिथि भी कहते हैं। शून्य नक्षत्र राशि और मन्वादि तिथि और युगादि तिथि शुभ कार्य में वर्जित हैं, धन नाशक हैं।

तिथि वार नक्षत्र के योग=चर योग

	योग	रवि.	सोम.	मंगल.	बुध.	गुरु.	शुक्र.	शनि.	
१	सिद्धि योग		— तिथि	जया (३,८,१३)	भद्रा (२,७,१२)	पूर्णा (५,१०,१५)	नंदा (१,६,११)	रिक्ता (४,९,१४)	सब दोषों का नाश करता है
२	मृत्यु योग (अधमयोग)	नंदा	भद्रा	नंदा	जया	रिक्ता	भद्रा	पूर्णा	घातक है। शुभ कार्य में वर्जित है।
३	दग्ध नक्षत्र	भरणी	चित्रा	उ. षा.	धनि.	उ. फा	ज्ये.	रेवती	शुभकार्यमेंवर्जित।
४	क्रकच योग	ति. १२	११	१०	९	८	७	६	तिथि वार मिलकर १३ होने में यह योग होता है शुभ में वर्जित है
५	सम्वर्तक योग	सप्तमी	—	—	प्रति.	—	—	—	सदा वर्जित
६	दग्ध योग	ति. १२	११	५	३	६	८	९	
७	विष योग	,, ४	६	७	२	८	९	७	
८	हुताशन योग	,, १२	६	७	८	९	१०	११	
९	यमघंट योग	मघा	विशा.	आर्द्रा	मूल	कृत्ति.	रोहि.	हस्त.	शुभ कार्य, यात्रा में वर्जित
१०	उत्पात योग	विशा.	शत.	धनि.	रेवती	रोहि.	पुष्य.	उ. फा.	
११	मृत्यु नक्षत्र	ज्ये.	उ. भा	पू. भा.	भर.	आर्द्रा	मघा	चित्रा.	
१२	यमद्रंष्ट्र योग	मघा	मूल	कृ.	पू. षा.	रेव.	रोहि.	श्रवण	शुभ कार्य में वर्जित
		धनि.	विशा.	भ.	पुन०	अश्वि.	अनु.	शत.	
१३	चर योग	पू. पा.	आर्द्रा.	वि.	रो.	पुष्य	म.	मूल	
१४	मूसलवज्र योग	भरणी	चि.	उ. षा.	धनि.	उ. फा.	ज्ये.	रेव.	
१५	अमृतसिद्धि ,,	हस्त	मृग.	अश्वि	अनु.	पुष्य	रेवती	रोहि.	
१६	सर्वार्थसिद्धि ,,	हस्त	श्र.	अश्वि	रोहि.	रेवती	रे.	श्र.	
		मूल	रोहि.	उ. भा.	अनु.	अनु.	अनु	रोहि.	इन में सब कार्य
		तीनों उत्तरा	मृग.	कृ.	हस्त	अश्वि	अश्वि.	स्वा.	की सिद्धि होती है
		पुष्य	पुष्य.	श्ले	कृ.	पुष्य	पुन.		
		अश्वि.	अनु.		मृग.	पून०	श्रवण		

तिथि वार या नक्षत्र के योग से विशेष योग बनते हैं। सिद्धि योग को छोड़ कर और सब अशुभ योग हैं।

(१) सिद्धि योग, (१५) अमृत सिद्ध योग (१६) सर्वार्थ सिद्धि योग, सर्व दोष नाशक और कार्य सिद्ध करते हैं। (२) मृत्युयोग, घातक तिथियाँ हैं और सब अशुभयोग शुभ कार्यों में वर्जित हैं। (४) क्रकच योग में तिथि और दिन मिलकर १३ होने से शुभ कार्य में वर्जित है।

(५) सम्वर्तक योग सदा वर्जित है।

उपरोक्त मृत्युयोग में १२ घटी और यम घंट में ८ घटी वर्जित करना। उपर्युक्त अशुभ योगों में आवश्यक होने पर मध्याह्न के उपरान्त कार्य करने में अशुभता घट जाती है। यदि चन्द्र शुभ हो तो मृत्यु, क्रकच, दग्ध आदि योगों का अशुभ फल नहीं होता। विशेष कर यात्रा में इसका विचार होता है। दुष्ट योग और सिद्ध योग एक साथ पड़े तो अच्छा योग होकर दुष्ट फल को नष्ट करता है।

आनन्द आदि योगों का ज्ञान और फल

आनन्द आदि २८ योग हैं

क्रम	नाम	फल	क्रम	नाम	फल
१	आनन्द	सिद्धि	१५	लुम्ब	धन क्षय
२	कालदण्ड	मृत्यु	१६	उत्पात	प्राण नाश
३	धूम्र	असुख	१७	मृत्यु	मृत्यु
४	धाता	सौभाग्य	१८	काण	क्लेश
५	सौम्य	बहुत सुख	१९	सिद्ध	कार्यसिद्ध
६	ध्वांक्ष	धन नाश	२०	शुभ	कल्याण
७	केतु	सौभाग्य	२१	अमृत	राज सन्मान
८	श्रीवत्स	सौभाग्य सम्पत्ति	२२	मुसल	धन क्षय
९	वज्र	क्षय	२३	गद	अक्षय विद्या
१०	मुद्गर	लक्ष्मी क्षय	२४	मातंग	कुलवृद्धि
११	क्षत्र	राज्यमान	२५	रक्ष (राक्षस)	महाकष्ट
१२	मित्र	पुष्टि	२६	चर	कार्यसिद्धि
१३	मानस	सौभाग्य	२७	सुस्थिर	ग्रहारंभ
१४	पद्म	धनागम	२८	प्रवर्धमान	विवाह

इन योगों को जानने की रीति

रवि को अश्विनी से, सोमवार को मृगशिर से, मंगल वार को आश्लेषा से, बुधवार को हस्त से, गुरुवार को अनुराधा से, शुक्रवार=उ. षा., शनि=शतभिषा से गिने तो आनन्द आदि योग मिलता है। इसमें अभिजित भी गिना जाता है। नीचे चक्र में यही समझाया है।

आनन्द आदि योग चक्र

योग क्रम	क्रम	रविवार नक्षत्र	सोम० न०	मंगल न०	बुध न०	गुरु न०	शुक्र न०	शनि न०
१	१–	अश्विनी	५	९	१३	१७	२१	२५
२	२–	भरणी	६	१०	१४	१८	२२	२६
३	३–	कृत्तिका	७	११	१५	१९	२३	२७
४	४–	रोहिणी	८	१२	१६	२०	२४	२८
५	५–	मृगशिर	९	१३	१७	२१	२५	१
६	६–	आर्द्रा	१०	१४	१८	२२	२६	२
७	७–	पुनर्वसु	११	१५	१९	२३	२७	३
८	८–	पुष्य	१२	१६	२०	२४	२८	४
९	९–	आश्लेषा	१३	१७	२१	२५	१	५
१०	१०–	मघा	१४	१८	२२	२६	२	६
११	११–	पू० फा०	१५	१९	२३	२७	३	७
१२	१२–	उ० फा०	१६	२०	२४	२८	४	८
१३	१३–	हस्त	१७	२१	२५	१	५	९
१४	१४–	चित्रा	१८	२२	२६	२	६	१०
१५	१५–	स्वाती	१९	२३	२७	३	७	११
१६	१६–	विशाखा	२०	२४	२८	४	८	१२
१७	१७–	अनुराधा	२१	२५	१	५	९	१३
१८	१८–	ज्येष्ठा	२२	२६	२	६	१०	१४
१९	१९–	मूल	२३	२७	३	७	११	१५
२०	२०–	पू. षा.	२४	२८	४	८	१२	१६
२१	२१–	उ. षा.	२५	१	५	९	१३	१७
२२	२२–	अभिजित	२६	२	६	१०	१४	१८
२२	२३–	श्रवण	२७	३	७	११	१५	१९
२४	२४–	धनिष्ठा	२८	४	८	१२	१६	२०
२५	२५–	शतभिषा	१	५	९	१३	१७	२१
२६	२६–	पू. भा.	२	६	१०	१४	१८	२२
२७	२७–	उ. भा.	३	७	११	१५	१९	२३
२८	२८–	रेवती	४	८	१२	१६	२०	२४

विवरण—

योग का क्रम आरम्भ में जो दिया है वह योग का क्रमानुसार अंक है। उस क्रम में कौन योग आता है ऊपर दिया है। दिन के नीचे जो अंक हैं वे नक्षत्र के क्रम के अंक हैं। इष्ट दिन जो चन्द्र नक्षत्र हो उस नक्षत्र के क्रम का अंक उस दिन के नीचे जहाँ मिलेगा उसके बाईं ओर जो योग का अंक होगा वही क्रम के अनुसार उस दिन योग होगा।

जैसे मंगलवार को पुष्य नक्षत्र है तो उस दिन कौन सा योग होगा जानना है। पुष्य नक्षत्र के क्रम का अंक ८ है। मंगलवार के नीचें ८ अंक खोजने से प्रकट हुआ कि सब के अन्त में ८ दिया है। ८ के बाईं ओर योग देखा तो योग का क्रम २८ मिला। २८ वाँ योग प्रवर्द्धमान होता है, इससे प्रगट हुआ कि उस दिन यह योग था। उसका फल विवाह है अर्थात् अच्छा फल है, आनन्द का दिन है।

सूर्य नक्षत्र के विशेष नाम

अश्विनी से लेकर ४ नक्षत्र तक अंतरंग इसके उपरान्त ३ नक्षत्रों की बहिरंग संज्ञा है। इसके उपरान्त ४ नक्षत्र फिर अंतरंग कहलावेंगे। इसी क्रम से वर्तमान सूर्य नक्षत्र तक गिनकर देखना कि वर्तमान नक्षत्र अंतरंग है या बहिरंग।

अंतरंग में बाहर से घर में लाना, बहिरंग में घर से बाहर ले जाना। पशु आदि को अदर लाना या बाहर भेजना इसके अनुसार मुहूर्त में विचार होता है।

सूर्य नक्षत्र संख्या

संज्ञा	नक्षत्र				
अंतरंग नक्षत्र	अश्वि. भ.कृ.रो.	पुष्य श्ले.म.पूफा.	स्वा.वि.अनु.ज्ये.	अभि श्र.ध.शत.	
बहिरंग ,,	मृग,आर्द्रा पुन०	उफा.ह. चित्रा	मू. पूषा. उषा.	पूभा. उभा. रे	

समय विभाग संज्ञा

१ दिन में=१५ मुहूर्त। १ मुहूर्त=लगभग २ घड़ी का।

दिन विभाग	प्रातः काल	संगव	मध्याह्न	अपराह्न	सायंकाल
घड़ी तक	सूर्योदय से ३ घड़ी तक	उपरान्त ३ मुहूर्त तक	उपरान्त ३ मुहूर्त तक	उपरान्त ३ मुहूर्त तक	उपरान्त २ मुहूर्त तक

सूर्य अस्त से(सायं) समय	संध्या	प्रदोष	महानिशा	उषाकाल	अरुणोदय	प्रातः काल
	३ घड़ी तक	उपरान्त ३ मुहूर्त तक	अर्द्ध रात्रि की मध्य की २ घड़ी	५५ घड़ी में	५७ घड़ी में	५८ घड़ी में

५८ घड़ी के उपरान्त सूर्योदय, सूर्योदय से ३ घड़ी तक प्रातः संध्या और सूर्यास्त से ३ घड़ी तक सायं संध्या भी कहलाती है।

अध्याय १८

पंचाङ्ग कैसे देखना और उपयोग

जिस सम्वत् का वह पंचाङ्ग होता है आरम्भ में ऊपर की ओर वह सम्वत् और शाका दिया रहता है। प्रत्येक पृष्ठ पर चांद्र मास पक्ष ऋतु अयन और गोल भी दिया रहता है। इसके अतिरिक्त अंग्रेजी महीने का नाम और सन् ऊपर दाहिनी ओर दिया रहता है।

चैत्र शुक्ल से वर्ष आरम्भ होता है। उसमें नीचे कई प्रकार की खड़ी पंक्तियाँ दी रहती हैं। उनमें से प्रत्येक को समझाते हैं।

(१) तिथि–आरम्भ में तिथि रहती है। शुक्ल पक्ष में १से १५ तक और कृष्ण पक्ष मे १ से १४ और ३० (अमावस्या) दी रहती है। बीच में जो तिथि होनि होती है वह पंचाङ्ग में नहीं दी रहती। जो तिथि वृद्धि होगी वह २ बार लिखी मिलेगी। १५ तिथि को पूर्णिमा और ३० को अमावस्या सदैव समझना।

(२) वार–उसके आगे की पंक्ति में वार दिया रहता है। वार का नाम सकेताक्षर में लिखा रहता है। र=रविवार या सू=सूर्यवार (रविवार=इतवार), चं=चंद्रवार (सोमवार), मं=मंगलवार या भौ=भौमवार, बु=बुधवार, गु=गुरुवार या बृ=बृहस्पतिवार (गुरुवार), शु=शुक्रवार या भृ=भृगुवार (शुक्रवार) श=शनिवार; इस प्रकार दिन का नाम पढ़ लेना। उस तिथि को कौन वार है या वार के अनुसार उस दिन कौन तिथि है जान लेना।

(३) घड़ी पल–आगे की पंक्ति में तिथि की घड़ी पल दिया है। पहिली पंक्ति में जो तिथि दी है वह कितने घड़ी पल तक है इससे प्रगट होता है। सूर्योदय के उपरान्त उतने घड़ी पल तक वह तिथि रहेगी ऐसा समझना। जैसे ४।श०।४-१२ दिया है, इससे प्रगट होता है कि शनिवार को चौथ सूर्योदय के उपरान्त ४ घड़ी ०२ पल तक है। उसके उपरान्त उसी दिन पंचमी लग जायगी। वह पंचमी कब तक रहेगी उसके आगे दिन में लिखा होगा जैसे ५।र०८-४८ अर्थात् इतवार को सूर्योदय उपरान्त ८ घड़ी ४८ पल तक पंचमी रहेगी। इसके उपरान्त इतवार को ही छट लग जायगी।

पंचाङ्ग में जा घड़ी पल दिया रहता है उसके घंटा मिनट बना लो तो प्रगट हो जायगा कि सूर्योदय के उपरान्त उतने घण्टा मिनट तक वह तिथि रहेगी। उसमें सूर्योदय का समय जोड़ दो तो घड़ी के अनुसार उस तिथि के अन्त होने का समय जाना जा सकता है। पंचाङ्ग में ही सूर्योदय का समय दिया रहता है। जहाँ सूर्य उदय दिया है संकेताक्षर सू. उ. लिखा रहता है।

जैसे शनिवार को चौथ ४ घ० १२ प० है मान लो उस दिन ६ बजे सूर्योदय था तो ४ घ० १२ प० के १ घ० ४ मि० ४८ से० हुए। इसमें सूर्योदय के ६ घंटा जोड़े तो ७ घ० ४० मि ४८ से० हुए। इस समय तक उस दिन चौथ तिथि रहेगी।

४ घड़ी × २/५ = १ घ० ३६ मि०
१२ पल × २/५ = ४-४८
योग १-४०-४८
+ सूर्योदय ६-०-०
योग ७-४०-४८

घड़ी पल के घण्टा मिनट और घण्टा मिनट के घड़ी पल बनाने का अभ्यास कर लेना चाहिए, क्योंकि इनका अधिक काम पड़ता है। घड़ी पल के घण्टा मिनट या घण्टा मिनट के घड़ी पल बनाने का चक्र आगे दिया है। इस चक्र में घड़ी आदि के घण्टा आदि बनाने का एक चक्र है और घण्टा आदि के घड़ी पल बनाने का दूसरा चक्र है। पहिले चक्र में जो घड़ी दिया है उसका उत्तर घंटा मिनट में आयगा, यदि पल है तो उत्तर मिनट सेकण्ड में आयगा। विपल है तो सेकण्ड में उत्तर आयगा।

इसी प्रकार दूसरे चक्र में दिया हुआ घण्टा का उत्तर दिन घड़ी पल में, मिनट का घड़ी पल में और सेकण्ड का पल विपल में उत्तर आयगा।

जैसे ११ घंटा १० मिनट ८ से०
११ घंटा= दिन-घड़ी-पल वि०
०-२७-३०-०
१० मिनट= ०-२५-०
८ सेकण्ड= ०-२०-०
योग=०-२७-५५-२०-०
=० दिन २७ घड़ी २५ पल २० विपल

३१ घड़ी ४० पल ५ विपल
३१ घड़ी=घ० मि० से०
१२-२४-०
४० पल= १६-०
५ विपल= २-०
योग=१२-४०-२
=१२ घण्टा ४० मि० ० से०

यदि अपने पास यह तुलनात्मक चक्र बना कर रख लो तो अच्छा होगा।

घंटा और घड़ी का तुलनात्मक चक्र—

घड़ी के घंटा						घंटा की घड़ी							
घड़ी=घंटा		मिनट	घड़ी=घंटा		मिनट	घंटा=दिन		घड़ी	पल	घंटा=दिन		घड़ी	पल
पल=मिनट		सेकेण्ड	पल=मिनट		सेकेण्ड	मिनट=घटी		पल	विपल	मि.=घड़ी		पल	विपल
वि.=से.		×	वि.=से.		×	सेकेण्ड=पल		वि.	×	से.=पल		वि.	×
१	०	२४	३१	१२	२४	१	०	२	३०	३१	१	१७	३०
२	०	४८	३२	१२	४८	२	०	५	०	३२	१	२०	०
३	१	१२	३३	१३	१२	३	०	७	३०	३३	१	२२	३०
४	१	३६	३४	१३	३६	४	०	१०	०	३४	१	२५	०
५	२	०	३५	१४	०	५	०	१२	३०	३५	१	२७	३०
६	२	२४	३६	१४	२४	६	०	१५	०	३६	१	३०	०
७	२	४८	३७	१४	४८	७	०	१७	३०	३७	१	३२	३०
८	३	१२	३८	१५	१२	८	०	२०	०	३८	१	३५	०
९	३	३६	३९	१५	३६	९	०	२२	३०	३९	१	३७	३०
१०	४	०	४०	१६	०	१०	०	२५	०	४०	१	४०	०
११	४	२४	४१	१६	२४	११	०	२७	३०	४१	१	४२	३०
१२	४	४८	४२	१६	४८	१२	०	३०	०	४२	१	४५	०
१३	५	१२	४३	१७	१२	१३	०	३२	३०	४३	१	४७	३०
१४	५	३६	४४	१७	३६	१४	०	३५	०	४४	१	५०	०
१५	६	०	४५	१८	०	१५	०	३७	३०	४५	१	५२	३०
१६	६	२४	४६	१८	२४	१६	०	४०	०	४६	१	५५	०
१७	६	४८	४७	१८	४८	१७	०	४२	३०	४७	१	५७	३०
१८	७	१२	४८	१९	१२	१८	०	४५	०	४८	२	०	०
१९	७	३६	४९	१९	३६	१९	०	४७	३०	४९	२	२	३०
२०	८	०	५०	२०	०	२०	०	५०	०	५०	२	५	०
३१	८	२४	५१	२०	२४	२१	०	५२	३०	५१	२	७	३०
२२	८	४८	५२	२०	४८	२२	०	५५	०	५२	२	१०	०
२३	९	१२	५३	२१	१२	२३	०	५७	३०	५३	२	१२	३०
२४	९	३६	५४	२१	३६	२४	१	०	०	५४	२	१५	०
२५	१०	०	५५	२२	०	२५	१	२	३०	५५	२	१७	३०
२६	१०	२४	५६	२२	२४	२६	१	५	०	५६	२	२०	०
२७	१०	४८	५७	२२	४८	२७	१	७	३०	५७	२	२२	३०
२८	११	१२	५८	२३	१२	२८	१	१०	०	५८	२	२५	०
२९	११	३६	५९	२३	३६	२९	१	१२	३०	५९	२	२७	३०
३०	१२	०	६०	२४	०	३०	१	१५	०	६०	२	३०	०

(४) नक्षत्र-इसके उपरान्त नक्षत्र दिये रहते हैं। नक्षत्रों के नाम संकेताक्षरों में दिये रहते हैं। जैसे अ=अश्विनी, भ=भरणी, कृ=कृत्तिका इत्यादि। इन नक्षत्रों के नाम अच्छे प्रकार स्मरण रखना चाहिए। सब के नाम क्रम पूर्वक दिये रहते हैं। इसमें अभिजित नहीं रहता, २७ ही नक्षत्र दिये रहते हैं।

कभी-कभी एक ही सकेताक्षर के २ नक्षत्र होते हैं, परन्तु किसके बाद कौन नक्षत्र आता है स्मरण रखोगे तो भूल नहीं होगी। जैसे आ=आर्द्रा के बाद पु=पुनर्वसु, इसके बाद पु=पुष्य। इसी प्रकार पूर्वा और उत्तरा ३ बार आता है। कहीं-कहीं पूर्वा को पू० और उत्तरा को उ० ही दिया रहता है। यदि क्रम स्मरण रहे तो कभी भूल नहीं होगी। जैसे माघ के बाद फाल्गुन आता है उसी प्रकार म=मघा के उपरान्त पू=पूर्वा फाल्गुनी, उ=उत्तरा फल्गुनी आते हैं। जिस प्रकार जेठ के बाद असाढ़ आता है उसी प्रकार ज्येष्ठा और मूल के बाद पूर्वाषाढ़ा आता है। ज्ये=ज्येष्ठा, मू=मूल के बाद, पू=पूर्वाषाढ़ा, उ=उत्तराषाढ़ा होगा। श्रावण के बाद भाद्रपद मास आता है उसी प्रकार श्रवण धनिष्ठा शतभिषा के उपरान्त पूर्वा भाद्रपद आयगा। श्र=श्रवण, ध=धनिष्ठा श=शतभिषा, पू=पूर्वाभाद्रपद, उ=उत्तरा भाद्रपद है। अन्त में रे=रेवती आती है, अश्विनी और अनुराधा दोनों के लिए अ० लिखते हैं। रेवती के बाद अ=अश्विनी, विशाखा के बाद अ=अनुराधा होता है। कभी-कभी अनुराधा को अनु भी लिख देते हैं।

पंचाङ्ग में कभी-कभी एक नक्षत्र ६० घड़ी से अधिक रहने के कारण दूसरे दिन भी दिया रहता है। नक्षत्र के आगे घड़ी पल दिए हैं जिससे प्रगट होता है कि सूर्योदय उपरान्त वह नक्षत्र उस दिन उतने घड़ी पल तक रहेगा उसके बाद आगे के नक्षत्र का भोग समझना। जैसे सोमवार को मघा ६-५७ है तो सूर्योदय से ६ घ० ५७ प० बाद तक मघा नक्षत्र रहेगा, उसके बाद आगे का नक्षत्र पूर्वा फाल्गुनी उसी दिन लग जायगा। दिन रात के ६० घड़ी में से ६-५७ घटा दो तो शेष ५३ घ० ३ पल तक उस दिन पूर्वा फाल्गुनी रहेगा। अब देखना है कि पूर्वा फाल्गुनी कब तक और है। उसके आगे दिन मंगलवार को देखा तो पूर्वा फा० १३।२४ लिखा है अर्थात् मंगलवार को पू० फा० इतना और है। पू० फा० सोमवार को (५३-३) + मंगलवार को (१३-२४) = योग ६६ घ० २७ प० यह पूर्वा फाल्गुनी के पूरे भोग का मान हुआ। इसे भभोग अर्थात् पूर्ण नक्षत्र का भोग कहते हैं। पूर्ण नक्षत्र की जितने घड़ी पल भोग हो उसे भभोग या सर्वर्क्ष भी कहते हैं। जितना नक्षत्र व्यतीत हो चुका अर्थात् भुक्त हो चुका उसे भयात (भभुक्त) या भुक्तर्क्ष या गतर्क्ष कहते हैं। भोगने को जो घड़ी पल शेष रहे उसे भोग्य या भोग्यर्क्ष कहते हैं। ऋक्ष=नक्षत्र। भुक्त + भोग्य=भभोग=सर्वर्क्ष=पूरा नक्षत्र। भुक्त=भयात भुक्तर्क्ष=गतर्क्ष=जितनी घड़ी व्यतीत हो गई। भोग्य=भोग्यर्क्ष=जितनी घड़ी व्यतीत होने को शेष रही।

(५) योग—इसके आगे योगों के नाम दिये रहते हैं। योगों के नाम पहिले दे

चुके हैं। पंचांग में योग के नाम का संकेताक्षर दिया रहता है। उनका क्रम स्मरण रखने से जाना जा सकता है कि संकेताक्षर किस नाम का सूचक है। इसमें कई जगह भूल हो जाना संभव है—जैसे हर्षण के बाद व=वज्र, व्यतीपात के बाद व वरीयान। साध्य के बाद शु=शुभ, फिर शु=शुक्ल। वज्र के बाद सि=सिद्धि, शिव के बाद सि=सिद्ध। ऽगं अतिगंड। ऐसी अवस्था में आगे पीछे के संकेताक्षर देखकर बीच में कौन योग है जान सकते हो।

पंचाग में क्रम देखते समय इसका भी ध्यान रहे कि बीच के कोई योग तो नहीं छूट गये। क्योंकि जो योग सूर्योदय पर होगा वही पंचांग में बताया जाता है। उसके आगे का और कोई योग भुक्त हुआ हो तो नहीं दिया रहता। परन्तु कोई कोई पंचाग वाले उसकी घड़ी पल भी दे देते हैं। जैसे शनिवार को वै० २-३९। इतवार को वि० १-९ सोमवार को आ० ४८-५७। अर्थात् शनिवार को वैधृति योग २-३९ है। इतवार को विष्कंभ १-९ है। इसके बाद प्रीति योग लगा, परन्तु पंचांग में प्रीति योग नहीं दिया केवल ५३-१५ दिया है। इससे प्रगट होता है कि प्रीति योग ५३-१५ तक है, उपरान्त आयुष्मान् योग लगा और सोमवार को वही आयुष्मान् ४८-५७ तक है। इन घड़ियों के पिछली बताई रीति से घण्टा मिनट बनाकर घड़ी का समय बना लो।

(६) करण—किसी-किसी पंचाग में दोनों करण दिए रहते हैं। पूर्व में जो करण है उसका नाम फिर उसकी घड़ी पल उपरान्त दूसरा करण (जो उत्तरार्द्ध में आता है) वह भी दिया रहता है और उसके घड़ी पल दिये रहते हैं। परन्तु अधिकतर पञ्चागों में एक ही करण दिया रहता है। सूर्योदय पर जो तिथि होती है उसी तिथि का करण चाहे वह परार्द्ध या पूर्वार्द्ध का हो दिया रहता है। जैसे पञ्चांग में शुक्ल ७ (सप्तमी) ०—९ दिया है तो सप्तमी के अन्त का (उत्तरार्द्ध) करण वणिज होता है वह व. १०—९ दिया रहेगा। क्योंकि ०—९ पर तो तिथि का ही अन्त होने से करण का भी अन्त हो जायगा। मान लो कृष्ण ३ मगलवार ४४—३७ तिथि दी है तो तीज को पूर्वार्द्ध में वणिज है वह दिया है व० १२-३५= वणिज करण का भोग्यपूर्ण तिथि का आधा दिया है वह इस प्रकार है। द्वितीया ४०-३९ सोमवार को थी ६०—(४०-३९) =१९-२१ तीज सोमवार को + ४४-३७ तीज मंगल को=६३-५८ पूरी तीज=आधा ३१-५९ हुआ। मंगलवार को शेष तीज पञ्चांग में (४४-३७)—(३१—५९) आधा १ करण=शेष १२-३८। यह १२-३८ पहिले करण का और भोगने को रहा। इस कारण पञ्चांगमें व. १२-३८ दिया है —४४-३७

१२-३८ भुक्त करण

शेष ३१-५९= आगे का विष्टि करण परार्द्ध में होगा।

(७) दिनमान—इसके आगे पञ्चांग में दिनमान दिया रहता है। किसी-किसी पञ्चांग के अन्त में और किसी में पहिले इसे दे देते हैं। सूर्योदय से सूर्य अस्त तक

जितने घड़ी पल होते हैं यही दिनमान में दिया रहता है। ६० घटी से दिनमान घटाने से रात्रि मान होता है।

(८) चन्द्र—आगे चन्द्र की स्थिति दी रहती है। प्रत्येक राशि में चन्द्र कब आता है और कब तक रहता है यह दिया रहता है। पञ्चांग में चौथ शनिवार को वृ. २९-२५ (चन्द्र) दिया है। इसका अर्थ यह है कि वृषराशि पर चन्द्र २९ घ० २५ प० के उपरान्त आवेगा। यहाँ जो घड़ी पल राशि के आगे दिया रहता है इससे समझना कि उस राशि पर उतने घड़ी पल के उपरान्त चन्द्र आयगा। रविवार को वृष पर दिन और रात्रि भर चन्द्र रहा, इसलिए पञ्चांग में केवल वृष दिया है। या कोई राशि का नाम भी नहीं देते, इससे समझना अभी ऊपर वताई राशि पर ही चन्द्र है। सोमवार को मि० १९-२० लिखा है अर्थात् सोमवार को १९-२० तक वृष का ही चन्द्र रहेगा, उसके उपरान्त उसी समय से मिथुन राशि पर चन्द्र आवेगा। इसमें राशि के नाम संकेताक्षर से कभी-कभी दिये रहते हैं जिनसे ही राशि का नाम जान लेना। पहिले का और आगे का संकेताक्षर पढ़ लेने से बीच का संकेताक्षर समझ में आ जाता है।

(९) सूर्यस्पष्ट—इसके उपरान्त मिश्रकालीन या प्रातः कालीन स्पष्ट सूर्य दिया रहता है। उस दिन प्रातः काल या मिश्र काल पर सर्य की स्थिति दी रहती है, अर्थात् सूर्य उस समय ठीक किस स्थान पर (किस राशि, अंश, कला, विकला पर) है दिया रहता है। इसके आगे सूर्य की प्रतिदिन की गति दी रहती है। प्रतिदिन ६० घड़ी में कितने कला विकला चलता है यह गति दी रहती है। जैसे सूर्य ६-१२ -१८-२८ दिया है तो ६ राशि, १२ अंश, १८ कला, २८ विकला पर सूर्य उस समय है ऐसा समझना। गति ६०-७ दी है तो सूर्य की दिन रात्रि की गति ६० कला ७ विकला समझना। ग्रहों की गति प्रायः कला विकला में दी रहती है।

किसी पञ्चांग में मिश्र मान दिया रहता है और प्रातः काल का सूर्य न देकर मिश्र कालीन सूर्य दिया रहता है।

मिश्रकाल—यह पञ्चांग में दिए हुए ग्रहों का इष्ट काल है जो प्रायः अर्द्ध रात्रि समय का दिया रहता है।

अर्द्ध रात्रि का इष्ट जानना =(३०+दिनमान २) या (६०—रात्रिमान २) मान लो दिनमान ३४-४ है तो दिनार्द्ध = १७.८ हुआ + ३० = ४७ घड़ी २ पल या (६० —३४—४ दिनमान)=२५—५६ रात्रिमान=रात्रि अर्द्ध १२—५८. ६०—(१२—५८ रात्रि अर्द्ध)=४७ घड़ी २ पल।

इसीलिए रात्रि अर्द्ध का इष्ट=४७—२ हुआ, यही साधारण प्रकार से मिश्रमान हुआ। पञ्चाग में उस दिन का ठीक मिश्रमान गणित से निकाल कर दिया रहता है। किसी पञ्चांग में प्रतिदिन का मिश्रमान नहीं दिया रहता।

अर्द्ध रात्रि के लगभग (मिश्रकाल) में जो सूर्य की ठीक स्थिति होगी वह मिश्र कालीन सूर्य स्पष्ट किसी-किसी पञ्चांग में दिया रहता है। प्रातः काल या मिश्रकाल

के सूर्य को अपने इष्टकाल (समय) का गणित से बनाना पड़ता है तब इष्ट कालीन सूर्य स्पष्ट कहलाता है। सूर्य दिन रात में जितनी कला विकला चलता है और सूर्योदय से या मिश्र काल से इष्ट तक का अन्तर निकाल कर उस अन्तर की चाल गणित से निकाल कर पञ्चांग में दिए हुए सूर्य में जोड़ने से इष्टकालीन सूर्य स्पष्ट बनता है। इसका गणित उदाहरण सहित गणित खण्ड में मिलेगा।

(१०) इसके उपरान्त प्रतिदिन के सूर्योदय और सुर्यास्त का समय घण्टा मिनट में दिया रहता है।

दिनमान से सूर्योदय या अस्त सरलता से निकल सकते हैं। दिनमान को आधा कर घण्टा मिनट बना लो तो सूर्य अस्त का समय होगा। इसे १२ घण्टा में घटा दो तो उदय का समय घण्टा मिनट में निकल आवेगा। जैसे दिनमान २६ घ० १८ प०÷२=१३ घ० ९प०=५घं० १५मि० ३६ से० सूर्यास्त। १२ घण्टे में से सूर्यास्त घटाया तो ६ घं० ४४ मि० २३ से० सूर्योदय हुआ।

१२—०—०
५—१५—३६ सूर्यास्त
६—४४—२४ सूर्योदय

(११) अन्त में मुसलमानी तिथि, बंगला तिथि, अंग्रेजी तारीख दी रहती है। अं=अंग्रेजी तारीख। फा=फारसी। ब=बंगला।

(१२) किसी-किसी पंचांग में विशेष योग भी दिये रहते हैं। किसी विशेष तिथि को विशेष दिन या नक्षत्र आदि पड़ने से कोई योग बन जाता है वही आनन्द योग, मृत्यु योग, चर योग, छत्र योग आदि दिये रहते हैं। इन योगों के विषय में पहिले समझा चुके हैं कि ये कब और किस प्रकार बनते हैं।

(१३) किसी-किसी पञ्चांग में सूर्य की उत्तर या दक्षिण क्रान्ति भी दी रहती है। और किसी-किसी में मिश्रकालीन दैनिक चन्द्र स्पष्ट भी दिया रहता है।

(१४) अन्त में एक सूचनापत्र सदृश प्रत्येक दिन के सम्बन्ध में कोई विशेष बात आने पर लिख दी जाती है। जैसे परवा [परिवा] या दोज को जब चन्द्र दिखेगा तो उस दिन चन्द्रदर्शन लिखा रहता है। कोई पर्व त्यौहार आदि होता है या कोई जयंती होती है तो वह भी लिख दिया जाता है। अंग्रेजी महीना का अन्त होने पर दूसरा आरम्भ होने वाला महीना या सन् बदलता है तो नया सन् इत्यादि आवश्यक बातें लिखी रहती हैं।

पर्व दिन के अतिरिक्त ग्रहों के योग आदि भी दिये रहते हैं। सूर्यादि ग्रह जब १ राशि या एक नक्षत्र से दूसरी राशि या नक्षत्र पर जाते हैं तो उस दिन उसका समय भी दिया रहता है। इसके अतिरिक्त ग्रहों के उदय अस्त, ग्रहों का वक्री मार्गी होना, ग्रहण आदि और भी ग्रहों के सम्बन्ध की पूरी सूचना रहती है और आवश्यक मुहूर्त या विवाह लग्न आदि सम्बन्ध की सूचनाएँ भी रहती हैं।

कुछ संकेताक्षरों को भी समझ लेना चाहिए जिनका यहाँ उपयोग होता है। सायन मेषाऽर्क ८—२४ सायन सूर्य की मेष की संक्रान्ति ८ घ० २४ पल पर होगी। मेषे चार्कः ३०—४२=निरयन सूर्य की मेष राषि की संक्रान्ति ३० घ० ४२ प० पर होगी। मिथुने रविः ६—४८=निरयन सूर्य मिथुन पर ६—४८ पर गया। रोहिण्यां बुधः ५३-२९

बुध रोहिणी नक्षत्र पर ५३-२९ में गया। धनिष्ठायाः १ चरणे बुधः ४७-११=बुध धनिष्ठा के पहिले चरण में ४७—११ पर गया। शतभिषायाः २ चरणेऽर्कः=निरयन सूर्य शतभिषा नक्षत्र के दूसरे चरण में गया। धनिष्ठायास्तृतीयचरणे सं कुम्भेऽर्कः= धनिष्ठा के तीसरे चरण में कुंभराशि पर निरयन सूर्य की संक्रान्ति हुई। वक्री भौमः ६—५= ६—५ में मंगल वक्री हुआ। बुधास्त पश्चिम में=बुध पश्चिम में अस्त हुआ। संकेताक्षरों को एक बार समझ लेने पर फिर अड़चन न होगी और ध्यान से देखते-देखते सब समझ में आने लगेगा।

उ=उपरान्त, या=यावत् [इतने समय तक] भ० १५—४० या=भद्रा १४—४० तक रहेगी। भ० २४—३९ उ भद्रा २४-३९ के उपरान्त होगी।

(१५) पंचाङ्ग के नीचे की ओर गोचर ग्रह कुंडली और साप्ताहिक मिश्रकालीन या प्रातःकालीन ग्रह स्पस्ट और प्रत्येक ग्रहों की दैनिक गति भी दी रहती है। किसी-किसी पञ्चांग में दैनिक [प्रतिदिन के] ग्रह स्पष्ट भी दिये रहते हैं।

ग्रह स्पष्ट—जब किसी विशेष समय पर गणित द्वारा प्रत्येक ग्रहों की गति के विचार में गणित कर ग्रह की ठीक स्थिति निकाल कर रखते हैं तो उससे प्रगट होता है कि कौन-कौन ग्रह उस समय कहाँ कहाँ पर है। और इसे ही उस समय का ग्रह स्पष्ट कहते हैं।

इष्टकाल—कोई समय को, जिस समय के सम्बन्ध में अपने को विचारना है उसे इष्ट समय का काल [इष्टकाल] कहते हैं। जैसे सूर्योदय के बाद ४ घड़ी पर किसी ने कोई प्रश्न पूछा तो उस समय का इष्टकाल ४ घड़ी हुई।

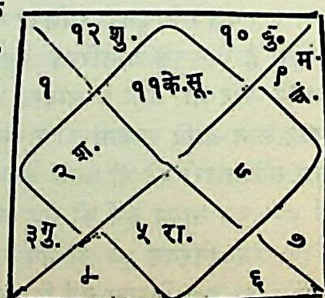
पञ्चाङ्ग में कोई ग्रह मिश्रकाल ४४-३६ के दिये हैं तो कहा जाएगा कि इष्टकाल ४४-३६ के ग्रह स्पष्ट हैं। यदि प्रातः काल के ग्रह स्पष्ट दिये हैं तो इष्ट ०-० का ग्रह स्पष्ट समझा जायगा।

किसी पञ्चाङ्ग में इस प्रकार ग्रह स्पष्ट दिये रहते हैं।

फाल्गुन कृष्ण ८ रवौ मिश्रमान ४४-३६—

सू	चं	मं	बु	गु	शु	श	रा	के
१०	८	८	९	२	११	१	४	१०
१६	१	२९	२२	२०	१४	१३	५	५
१९	२७	६	१०	४८	१०	८	४	४
५९	२४	२४	४९	२०	४३	३४	२५	२५
६०	८५१	४३	८९	३	७३	२	३	३
१६	११	५५	५६	१३	४४	२२	११	११
			व	मा				

गोचर ग्रहाः



पंचाङ्ग में यहाँ फाल्गुन कृष्ण अष्टमी रविवार के इष्ट ४४-३६ का ग्रह स्पष्ट दिया है। ग्रहों की स्थिति इस प्रकार समझना—

ग्रह	राशि	अंश	कला	वि०			कला	वि०		
सूर्य	१०	१६	१९	५९	पर है गति		६०	१६	है	
चंद्र	८	१	२७	२४	,,	,,	८५१	११	,,	
मंगल	८	२९	६	२४	,,	,,	४३	५५	,,	
बुध	९	२२	१०	४९	,,	,,	८९	५६	,,	
गुरु	२	२०	४८	२०	,,	,,	३	१३	,,	व=वक्री
शुक्र	११	१४	१०	४३	,,	,,	७३	४४	,,	मा=मार्गी
शनि	१	१३	८	३४	,,	,,	२	२२		

इसी प्रकार राहु केतु का भी समझना। जहाँ व. लिखा है वहाँ ग्रह की मार्गी गति का अन्त होकर वह ग्रह वक्री हुआ है। मा=वक्री गति का अन्त होकर वह ग्रह मार्गी हुआ है ऐसा समझना।

यहाँ जो ग्रहों की गति दी है वह दिन रात्रि अर्थात् ६० घड़ी की प्रतिदिन की है। यह गति सदा बदलती रहती है। ग्रह कभी वक्री कभी मार्गी हो जाते हैं। ग्रह के नीचे संकेताक्षर में यह ऊपर बताये अनुसार लिखा रहता है। जिसमें वक्री या मार्गी कुछ भी न लिखा हो उस ग्रह को मार्गी समझो, परन्तु राहु केतु सदा वक्री रहते हैं। किसी पंचांग में ग्रह उदय है या अस्त है यह भी ग्रह के नीचे दिया रहता है, उ=उदय, अ=अस्त, जिनके सकेताक्षर हैं।

ग्रह स्पष्ट के एक ओर गोचर ग्रह कुंडली दी रहती है। यह कुण्डली आकाश का नक्शा है जिसके विषय में आगे समझाया जायगा। पंचांग में मिश्रकालीन या प्रातः कालीन ग्रह स्पष्ट दिये रहते हैं उन्हीं के अनुसार उसके समीप ही कुंडली में स्थूल रूप से ग्रह दिये रहते हैं।

इस कुंडली में १२ राशि के १२ कोठे हैं और उनमें १-२-३ आदि क्रमानुसार राशियों के सूचक अंक लिखे रहते हैं। जैसे १ से मेष, ८ से वृश्चिक इत्यादि। ग्रह जिस राशि पर है उसी राशि के कोठे में वह ग्रह लिख दिया जाता है। जैसे ऊपर ग्रह स्पष्ट देखो सूर्य रा० १०°—१६°—१९—५९ पर है अर्थात् १० राशि व्यतीत होकर ग्यारहवीं राशि के १६° पर सूर्य है, अर्थात् सूर्य ग्यारहवीं राशि (कुंभ राशि) पर है। जहाँ ११ का अंक कुडली में होगा वहाँ सूर्य का संकेताक्षर सू० लिख देंगे। सूर्य प्रधान ग्रह है वह जिस राशि पर रहता है उसी राशि को ऊपर की ओर बीच में लग्न के स्थान पर पञ्चांग में लिखने की प्रथा है। चन्द्र धन का है ९ अंक जहाँ है उस कोठे में लिखा। मंगल भी नवीं राशि धन का है ९ में लिखा। बुध मकर का है १० में लिखा। गुरु मिथुन का है=३ में, शुक्र मीन का=१२ में, शनि वृष का=२ में राहु सिंह का=५ में, केतु कुम्भ का=११ में सूर्य के साथ लिखा है। इसी प्रकार कुंडली में ग्रह भरने की रीति अच्छीप्रकार से समझ लेनः चाहिए।

कई पंचाङ्गों में गोचर ग्रह स्पष्ट जहाँ दिया रहता है उसमें चन्द्र नहीं दिया रहता तो पंचाङ्ग में उस तिथि को चन्द्र किस राशि पर है यह देखकर गोचर कुंडली में भर देते हैं।

इसी प्रकार प्रति सप्ताह पृथक्-पृथक् गोचर कुंडली और ग्रह स्पष्ट दिये रहते हैं जो लगभग अष्टमी और अमावस्या या पूर्णिमा के होते हैं।

(१६) दैनिक लग्न होरा सारिणी (होरा=घण्टा)

किसी-किसी पंचाङ्ग में तिथि पत्र के नीचे दैनिक लग्न होरा सारिणी भी दी रहती है, जैसे काशी या जबलपुर आदि के पंचाङ्ग में दिया रहता है। सब के नीचे १ चक्र बना रहता है उसमें १५ तिथि और वार ऊपर लिखा रहता है। उसके बायीं ओर बाजू से लग्न की राशियों के नाम और उसके आगे दिन और रात का समय घण्टा मिनट में दिया रहता है। इससे प्रगट होता है कि वह लग्न कितने बजे तक रहेगी। जैसे तिथि १ गुरुवार मीन ६ घण्टा २६ मिनट=मीन लग्न ६ बजकर २६ मिनट तक गुरुवार को रहेगी, उसके बाद मेष लग्न आरम्भ होगी। इस सारिणी से देखकर जान सकते हो कि उस समय कौन लग्न है। रात्रि की लग्न के ऊपर रा= (रात्रि) लिख दिया जाता है।

पूर्व में क्षितिज पर जो राशि उदय हो रही है उसी को लग्न कहते हैं। २४ घण्टा में सब राशियां पृथ्वी के चारों ओर घूम लेती हैं इस कारण प्रत्येक लग्न स्थूल मान से लगभग २ घण्टे की हुई। परन्तु इससे किसी का कम किसी का अधिक प्रमाण होता है।

किसी-किसी पंचाङ्ग में लग्न प्रारम्भ होने का समय होरा लग्न सारिणी में दिया रहता है। वहाँ लग्न के नाम के आगे "प्र०" (प्रवेश) लिखा रहता है। वह लग्न प्रवेश करने का समय है। किसी में दिन रात्रि न लिख कर मध्याह्न के उपरान्त (१२ बजे के ऊपर) रेलवे के समय के अनुसार १३, १४, १५ आदि २४ बजे तक लिखा रहता है। जरा ध्यान देने से सब समझ में आने लगेगा। लग्न के विषय में आगे समझाया जायगा।

तिथिपत्र के आगे पीछे पंचाङ्ग में कई उपयोगी चक्र मुहूर्त आदि विषय के दिये रहते हैं उन सब विषय का वर्णन क्रमशः उपयुक्त स्थान में करेंगे।

विवाह के १० महादोष होते हैं जो विवाह का मुहूर्त विचारने में काम आते है। जहाँ विवाह का मुहूर्त दिया रहता है उन दोषों के क्रमानुसार वह मुहूर्त जो दोष से रहित है अर्थात् शुद्ध है उसके लिए । (खड़ी लकीर) और जो दोष युक्त हैं ऽ (वेड़ी लकीर) पंचाङ्ग में दी रहती है इसका वर्णन मुहूर्त खण्ड में मिलेगा।

(१७) पंचाङ्ग अब जगह-जगह से प्रकाशित होने लगे हैं। उन पंचाङ्गों में उस स्थान के अक्षांश और देशान्तर के अनुसार समय निकाल कर दिया रहता है। यही कारण है कि एक स्थान के पंचाङ्ग का समय दूसरे स्थान के पंचाङ्ग के समय से

मिलान करने पर कुछ अन्तर पड़ जाता है, क्योंकि एक स्थान में जो समय दिया रहता है वह प्रत्येक स्थान में नहीं रहता, अर्थात् दूसरी जगह में अक्षांश देशान्तर के अनुसार उस समय में अन्तर पड़ जाता है। इस कारण अपने स्थान के समीप का पंचाङ्ग खरीदना चाहिये।

पंचाङ्ग परिवर्तन

किसी स्थान के पंचाङ्ग में दिये हुए समय से अपने स्थान के समय का अन्तर जान लेना चाहिए। उसके जानने की स्थूल रीति यहाँ दी है।

अपने स्थान का देशान्तर मालूम करो। मुख्य-मुख्य स्थानों की देशान्तर सारिणी किसी-किसी पंचाङ्ग में दी रहती है, उससे या किसी स्कूल के नक्शे से मालूम कर लो। जहाँ का पंचाङ्ग बना है वहाँ का देशान्तर और अपने यहाँ के देशान्तर में अन्तर निकालो और देखो पञ्चांग के स्थान से अपना देशान्तर अधिक है या कम है।

नक्शों में देशान्तर ग्रीनविच (इंगलैंड) से दिया रहता है। परन्तु भारतवर्ष के पञ्चाङ्गों में उज्जैन से देशान्तर दिया रहता है। इस प्रकार किसी भी एक स्थान के देशान्तर का अन्तर नाप लो, फिर दोनों देशान्तरों का अन्तर निकालो। वह अन्तर अंशों में दिया हो तो उसके घड़ी पल बना लो। पंचाङ्ग के स्थान से अपना स्थान पूर्व में हो तो+ (धन=जोड़ना), पश्चिम में हो तो– (ऋण=घटाना)। इस प्रकार पंचाङ्ग के समय में जोड़ने या घटाने से जो समय प्राप्त होगा वह स्थानिक समय होगा।

देशान्तर अंश में दिया हो उसके घण्टा मिनट या घड़ी पल बनाना—

१५ अंश=१ घंटा=२॥ घड़ी	१ अंश=४ मिनट=१० पल
१५ कला=१ मिनट=२॥ पल	१ कला=४ सेकेण्ड=१० विपल
१५ विकला=१ सेकण्ड=२॥ विपल	१ विकला=$\frac{१}{१५}$ सेकेण्ड=१० अनुपल =$\frac{१}{६}$ विपल

जैसे पूना के पंचाङ्ग में एकादशी ४० घ० १० पल है। बम्बई में एकादशी का मान जानना है। बम्बई पूना से पश्चिम में है और दोनों के देशान्तर का अन्तर १ अंश है। १ अंश–४ मिनट १० पल। बम्वई पश्चिम में होने से यह अन्तर ऋण होगा। =–१० पल। पूना में ४० घ० १० पल है, इससे १० पल घटाया तो ४० घ० ० पल रहे। इस प्रकार बम्बई में एकादशी का मान ४० घ. ० प. होगा। अर्थात् पूना के मान में १० पल घटा देने से बम्बई का मान होगा। काशी में २०-४० एकादशी है तो जबलपुर में क्या होगा? जबलपुर ३° पश्चिम है। ३x१०=३० पल ऋण=२०-१० का मान जबलपुर में एकादशी का होगा। अर्थात् काशी के मान में ३० पल घटा देने से जबलपुर का मान प्राप्त हुआ। इसी प्रकार नक्षत्र योग आदि का मान स्थानिक सयय का निकाल लेना।

परन्तु स्मरण रहे पंचाङ्ग में तिथि आदि का मान घटी पल में मध्यम सूर्योदय से दिया रहता है। उससे स्पष्ट और स्थानिक ठीक समय बनाने के लिए देशान्तर संस्कार के अतिरिक्त विशेष संस्कार करना पड़ता है, क्योंकि समय भी कई प्रकार के होते हैं। मध्यम समय Mean Time, स्टैन्डर्ड समय Standard Time (रेलवे आदि का समय) स्थानिक समय Local Time (जो धूप घड़ी के अनुसार होता है और प्रत्येक स्थान का पृथक्-पृथक् समय होता है)। स्टैन्डर्ड समय (घड़ी के अनुसार घंटा मिनट) सारे भारतवर्ष के लिए एक ही समय है जो ग्रीन विच से ५॥ घंटा अधिक होता है। यह ८२$\frac{१}{२}$° देशान्तर का समय है। मध्यम समय सूर्य के अनुसार निकाला जाता है।

इस प्रकार स्थानिक समय निकालकर उसके अनुसार देशान्तर संस्कार के अतिरिक्त उस समय में और भी जोड़ना घटाना पड़ता है और संस्कार भी करना पड़ता है। यह विषय कुछ कठिन होने से यहाँ नहीं दिया गणित खण्ड में मिलेगा। यहाँ तो प्रारम्भिक ज्ञान के लिये स्थूल रीति दी है।



अध्याय १९

अंग्रेजी पंचाङ्ग Almanac या Ephemeris

पिछली बताई हुई बातें समझ लेने पर पंचाङ्ग देखना अच्छी तरह आ जायगा। परन्तु अंग्रेजी पंचांग देखने के लिए कई नवीन बातों की आवश्यकता पड़ेगी, उनको भी संक्षेप से बता देना आवश्यक है।

इंग्लैंड में ग्रीन विच की वेधशाला के आधार पर अंग्रेजी पंचांग (ऐफेमरीज) Raphel's Astronomical Ephemeris अंग्रेजी में प्रतिवर्ष प्रकाशित होती है जिसमें ग्रहों के सम्बन्ध में अनेक सूचनाएँ और दैनिक ग्रह स्पष्ट दिया रहता है। उसमें हर्शल और नेपच्यून की स्थिति भी दी रहती है। ग्रहों के स्थान पर केवल उनके चिह्नों का उपयोग होता है। यहाँ के पंचांग सरीखी कई उपयोगी बातें उस पंचांग में दी रहती हैं। अंग्रेजी पंचांग को 'अलमनक' कहते हैं।

उज्जैन की वेधशाला से भी एक ऐफेमरीज प्रतिवर्ष प्रकाशित होती है। उसमें भारतवर्ष के स्टैन्डर्ड टाइम के दैनिक ग्रह स्पष्ट और विविध ग्रह योग दिये रहते हैं। ग्रहों की ठीक स्थिति जानने के लिए अच्छे ज्योतिषी उनका उपयोग करते हैं।

सावन दिन apparent day

जब सूर्य मध्याह्न (दोपहर) आता है और घूमकर फिर दूसरे दिन उदय होकर

मध्याह्न पर आने में जो समय लगता है वह सावन कहलाता है। कोई सूर्योदय से सूर्योदय तक के समय को सावन दिन कहते हैं। सावन दिन का मान कम ज्यादा होता रहता है। इस पर से सावन दिन का मध्यम मान निकाला जाता है।

मध्यम काल Mean Time

अपने इस सावन दिन के मध्यम काल को २४ घंटा या ६० घड़ी का मानते हैं। सूर्य की मध्यम गति ५९′–८″ प्रतिदिन रात में जानकर एक मध्यम रवि विषुववृत्त में घूमता है ऐसा मान लेते हैं। यह मध्यम रवि मध्याह्न में आकर फिर अस्त होता है और दूसरे दिन उदय होकर फिर मध्याह्न में आता है। इस प्रकार एक बार मध्याह्न से दूसरे दिन के मध्याह्न में फिर आने तक मध्यम मान से २४ घंटा लगते हैं। इसी समय को मध्यम काल कहते हैं।

स्पष्ट काल Apparent Time

सूर्य को देखकर जो स्पष्ट समय पड़ता है वही स्पष्ट काल कहलाता है।

नाक्षत्र दिन=(नाक्षत्र काल) Side real day

तारों की दैनिक गति पृथ्वी की गति के कारण जान पड़ती है कि तारे उगते हैं और फिर सिर पर आते हैं फिर डूब कर उदय होते हैं। इसी प्रकार तारा या कोई नक्षत्र उदय होने या मध्याह्न पर आने से दूसरे दिन फिर उदय होने या मध्याह्न पर आने तक जो समय लगता है उसे नाक्षत्र दिन और नाक्षत्र दिन के समय को नाक्षत्र काल Side real time कहते हैं।

इस नाक्षत्र काल को साधारण प्रकार से २४ घंटा या ६० घड़ी का मान लो तो काम चल जायगा।

वेधशाला Observatory में नाक्षत्रकाल देखने की एक घड़ियाल रहती है। पहिले बता चुके हैं कि नक्षत्र का उदय होना या अस्त होना पृथ्वी की दैनिक गति के कारण है। यह काल सावन मान से २३घं. ५६ मि. ४.०९०६ से. का होता है। इस प्रकार नाक्षत्र दिन का मान वराबर एक समान रहता है। सावन दिन सरीखा कम ज्यादा नहीं होता। इस प्रकार नक्षत्र से सावन का भी ज्ञान सूक्ष्म प्रकार से हो सकता है।

मध्यम रवि Mean Sun

सूर्य की गति प्रतिदिन बदलती है परन्तु अपनी घड़ियों की गति प्रतिदिन एक समान रहती है गति कम ज्यादा नहीं होती। इस कारण घड़ी से जिस प्रकार मध्यम समय दीखता है उसी प्रकार मध्यम रवि या मध्यम काल समझना चाहिए।

जैसा मध्यम रवि मध्यम काल बतलाता है उसी प्रकार घड़ी भी मध्यम काल बतलाती है। मध्यम काल से इच्छित काल निकाला जा सकता है।

मध्यम रवि आकाश में नही दीखता, परन्तु गणित से उसकी गतियों का मध्यम मान के प्रमाण से मान निकालते हैं। मध्यम रवि का उदय ठीक ६ बजे प्रातः, १२

बजे मध्याह्न और संध्या ६ बजे सदैव मानते हैं। इस मान में कोई अन्तर नहीं पड़ता।

मध्यम रवि का होरात्मक काल या नाक्षत्र काल Side real Time

अंग्रेजी पचांङ्ग में यह काल महत्व का दिया रहता है। यह काल किसी विशेष तारिख को क्या होता है, आगे दिया है। इस काल को अंशों में परिवर्तन कर देने पर उसे मध्यम रवि का होरात्मक विषुवांश कहेंगे।

विषुववृत्त के पूरे वृत्त के ३६० अंशों को २४ घण्टों में बाँटो तो १ घण्टा=१५° या ४ मिनट=१ पड़ा। विषुवांश (विषुव रेखा के अंशों को) अंश कालादि में न बना कर उसे घण्टा मिनट में बना लेते हैं और पंचांग में यही प्रतिदिन का नाक्षत्र काल घण्टा मिनट में दिया रहता है। यह होरात्मक नाक्षत्र काल प्रतिदिन प्रायः ४ मिनट के हिसाब से बढ़ता है। इस प्रकार १५ दिन में १ घण्टा बढ़ जाता है। अंग्रेजी पंचांग में प्रतिदिन का नाक्षत्र काल दिया रहता है। यह भावसाधन आदि के काम आता है। यहाँ यह नाक्षत्र काल किस तारीख को लगभग कितने घण्टे का रहता है, आगे दिया है उस पर से किसी भी दिन का नाक्षत्र काल निकाल सकते हो। नाक्षत्र काल और तारों का विषुवांश जानने से और तारों को पहिचान लेने से रात को देख कर लगभग ठीक समय भी जान सकते हैं। २२ मार्च को नाक्षत्र काल शून्य होता है।

दोपहर (१२ बजे) का नाक्षत्र काल नीचे दिया है।

तारीख	महीना	घंटा	ता०	महीना	घंटा	ता०	महीना	घंटा	ता०	महीना	घंटा
५	जनवरी	१९	६	अप्रैल	१	७	जुलाई	७	६	अक्तूबर	१३
२०	,,	२०	२१	,,	२	२२	,,	८	२१	,,	१४
४	फरवरी	२१	७	मई	३	६	अगस्त	९	५	नवम्बर	१५
२०	,,	२२	२२	,,	४	२१	,,	१०	२०	,,	१६
७	मार्च	२३	६	जून	५	५	सितम्बर	११	६	दिसम्बर	१७
२२	,,	२४=०	२१	,,	६	२०	,,	१२	२१	,,	१८

यदि अंग्रेजी पंचांग न हो और नाक्षत्र काल निकालना हो तो इस चक्र से निकाल सकते हो।

मान लो ५ अप्रैल दोपहर का ना० का० जानना है।

ऊपर २१ अप्रैल का नाक्षत्र काल २ घंटा दिया है=२ घं०–० मि०

२१ तारीख से ५ अप्रैल तक अन्तर (२१.५)=१६ दिन

१ दिन में ४ मिनट तो १६ दिन में=(१६ × ४) } मि०=१–४ घटाया

६४ मिनट= =१ घंटा ४ } मि०शेष ०–५६

यह पिछले समय का है, इससे २१ अप्रैल के समय में अन्तर का समय घटाना पड़ेगा। इसलिए ५ अप्रैल के दोपर को ना० का०=० घंटा ५६ मिनट हुआ। यह समय घंटा मिनट सेकेण्ड में निकलता है।

यह स्थूल रीति है। सूक्ष्म रीति से नाक्षत्र काल अंग्रेजी पंचांग में दिया रहता है। किसी पुराने अंग्रेजी पंचांग में जिस तारीख महीने का नाक्षत्र काल चाहिए उसी तारीख और महीने में जो नाक्षत्र काल मिले उससे काम चल जायगा, क्योंकि नाक्षत्र काल में अधिक अन्तर नहीं पड़ता, प्रायः मिलता-जुलता समय रहता है।



अध्याय २०

कुण्डली विचार

आकाश में जो राशियां और ग्रहों की स्थिति है उसका ही नक्शा कुंडली है। अर्थात् कुंडली आकाश का नक्शा है और उससे प्राप्त होता है कि कौन ग्रह उस समय कहां थे।

केवल कुंडली चक्र देखने से ही समय, तिथि, पक्ष, मास, वर्ष आदि जन्म समय का या इष्ट समय का (जिस समय की वह कुंडली बनी हो,) जाना जा सकता है। इसी कारण जन्म की तिथि आदि एवम् स्थान भी निश्चित कर उसके अनुसार ठीक गणित करके शुद्ध कुण्डली चक्र बनाया जाता है। इस कुंडली चक्र पर से जीवन की घटनाएँ और जीवन सम्बन्ध से विविध ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। इस कारण कुंडली क्या है और कैसे बनती है, अच्छी तरह समझ लेना चाहिए।

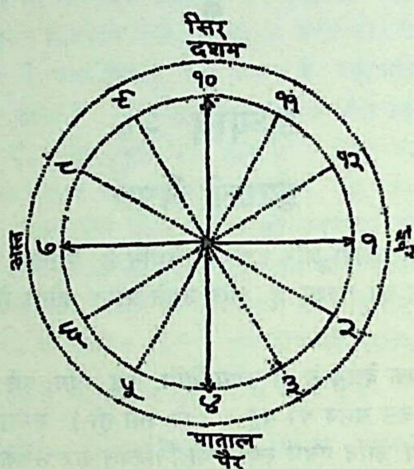
जैसे पृथ्वी का नकशा बनाने में उत्तर सदैव ऊपर की ओर रहता है वैसा कुंडली में नहीं होता। आकाश के नकशे (कुंडली) में पूर्व दिशा ऊपर को रखते हैं, क्योंकि पूर्व दिशा बहुत महत्व की है। यही लग्न का स्थान है जो कुंडली में मुख्य वस्तु है।

जब पूर्व दिशा ऊपर रहती है तो पश्चिम दिशा नीचे की ओर रहेगी। सूर्य जहाँ उदय होता है वह पूर्व और जहाँ अस्त होता है वह पश्चिम दिशा होती है।

आकाश के नकशे में ठीक १२ विभाग किये गये हैं। इस प्रकार पूरे ३६०° के चक्र के १२ विभाग करने से प्रत्येक विभाग ३० का होता है। इस प्रकार पूर्व दिशा (लग्न) से आरम्भ होकर जो स्थान सिर पर आता हैं वह दशम स्थान या दशम भाव कहलाता है, जैसे चित्र संख्या ६३ में बताया है। दशम स्थान को दक्षिण दिशा समझो। पाताल अर्थात पैर के नीचे का स्थान चतुर्थ स्थान कहलाता है उसे उत्तर दिशा समझो।

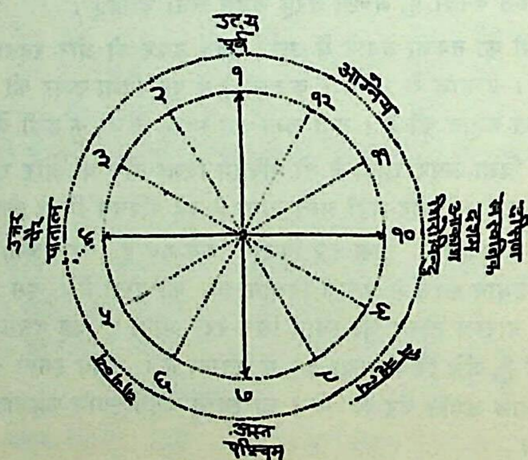
साधारण प्रकार से पूर्व दिशा ऊपर को रखो तो चित्र संख्या ६४ के अनुसार बनता है। इस चित्र में दिशाओं के विभाग करने से जिस प्रकार दिशाएँ होती हैं वह

भी बताया है । इस चक्र में घड़ी के अनुसार १२ राशियों के अंक लिख दिये गये हैं । इनमें १२ राशियों के नाम न लिखकर उसके क्रम की संख्या लिख दी गई है, जैसे मेष के लिए १, वृष २, मिथुन ३ इत्यादि । ये अंक पूर्व से लिखना आरम्भ कर बांई ओर से क्रमानुसार लिखे जाते हैं जैसा चित्र ६४ में बताया है । यही आकाश का नकशा है । इसमें केवल जो ग्रह जहां पर है लिखने को रह गये हैं, उनके लिखने की रीति आगे समझाई जायेगी ।



चित्र संख्या ६३

आकाश में भाव स्थान



चित्र संख्या ६४

आकाश की दिशाएं और कुण्डली चक्र

इस नकशा को देखने से प्रगट होगा कि इनमें जो १ (मेष राशि) बताई गई है वह सूर्य का उदय स्थान है। ठीक उसके सामने पश्चिम में अस्त स्थान पर ७ (तुला राशि)है। दक्षिण में 'ख' स्वस्तिक अर्थात सिर के ऊपर का आकाश का भाग या मध्यान्ह में १० (मकर राशि) है। उत्तर में पैर के नीचे (पाताल में) या अर्द्ध रात्रि स्थान में ४ (कर्क राशि) दी है। इस प्रकार ४ स्थान निश्चित हो जाने पर इनकी विदिशाओं के कोण स्थान में भी राशियाँ हैं। जैसे २ (वृष राशि) के सामने ८ (वृश्चिक राशि) ३ (मिथुन राशि) के सामने ९ (धन राशि), ५ (सिंह राशि) के सामने ११ (कुम्भ राशि) और ६ (कन्या राशि) के सामने १२ (मीन राशि) आती है। इस प्रकार ये राशियाँ एक दूसरे से ६-६ राशियों के अन्तर पर=(१८०°के अन्तर पर) हैं। एक दूसरे के सामने हैं अर्थात् सामने की राशि १८०° के अन्तर पर होती है। ये राशियाँ सदा चलायमान हैं। (पृथ्वी की गति के कारण चलायमान दिखती हैं) अर्थात् जो सिर पर के उपर राशि है उसके आगे की राशि पूर्व की ओर मिलेगी। पूर्व में जो राशि है उसके आगे की राशि क्षितिज के नीचे अर्थात् उत्तर की ओर मिलेगी। जैसे पूर्व में मेष राशि है तो उसके आगे उत्तर की ओर जाने से (क्षितिज के नीचे), २ (वृष राशि), ३ (मिथुन) आदि मिलेगी। और ठीक उत्तर में ४ (कर्क) रहेगी। इससे यह समझ लेना चाहिये कि जो राशि पश्चिम (अस्त) में है उसके आगे क्रमानुसार राशियाँ दक्षिण (सिर) पर से होते हुए, पूर्व (उदय स्थान) की ओर घूमते हुए उत्तर (पाताल) की ओर जाती है। अर्थात् राशियाँ पश्चिम से पूर्व की ओर क्रमानुसार स्थित हैं। परन्तु घूमते समय राशियाँ पूर्व से पश्चिम की ओर जाती हैं जैसा चित्र संख्या ५ में बताया है, जैसे मेष उदय होकर पश्चिम की ओर बढ़ेगा तब उस उदय स्थान पर वृष आयगा।

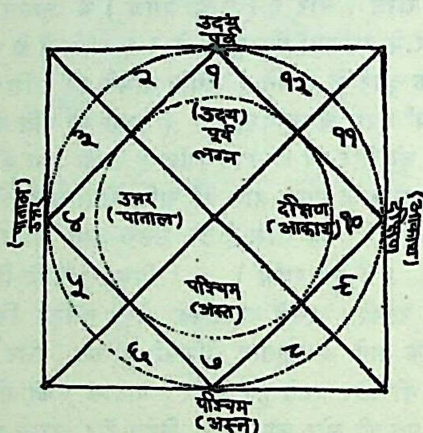
इसी को दूसरे प्रकार से आकाश का नकशा बनाकर समझाते हैं। पहिले जो गोल चक्र में आकाश का नकशा बनाया था उसमें एक दूसरे को काटने वाली दिशा सूचक जो लकीरों पर ४ स्थान बनाये गये हैं १-४-७-१० वहाँ ये राशियाँ बनाई गई हैं। इन्हीं स्थानों का नाम केन्द्र स्थान (बीच के स्थान) हैं।

जिस प्रकार गोल चक्र में १-४-७-१० राशियां केन्द्र में हैं (चित्र संख्या ६५ देखो) उसी प्रकार चौकोर नक्शे में भी चारों केन्द्र स्थान आ जाते हैं और यहाँ भी चारों स्थानों के नाम केन्द्र स्थान हैं। चारों केन्द्र स्थान के अतिरिक्त उन दिशाओं के कोण स्थान भी यहाँ कोण में आ गये हैं, जिससे समझ में अब आ जायगा कि चित्र ६४ में बनाया हुआ गोल नक्शा और इस चित्र ६५ के चौकोर नक्शा में कोई अन्तर नहीं है। यही कुण्डली आकाश का नक्शा है।

इसमें भी १ के सामने ७ (६ राशि=१८०° का अन्तर पर). ४ के सामने १०, २ के सामने ८, ३ के सामने ९, ५ के सामने ११, ६ के सामने १२ है। इस प्रकार १ राशि के सामने जो राशि होगी वह ६ राशि के अन्तर पर होती है। यहाँ भी मेष

राशि पूर्व में है वह उदय स्थान है, तुला पश्चिम में है वह अस्त का स्थान है। मकर राशि दक्षिण में है वह सिर के ऊपर का (आकाश) और कर्क राशि उत्तर में है वह पैर के नीचे का स्थान (पाताल) है।

पूर्व में जो उदय स्थान है इसी स्थान को लग्न कहते हैं। जो राशि उस समय पूर्व में हो उसे ही लग्न या उदय लग्न कहते हैं और उस स्थान को लग्न स्थान कहते हैं। कुण्डली-चक्र चित्र ६५ में जहाँ मेष राशि का सूचक अंक १ लिखा है वही लग्न स्थान है।



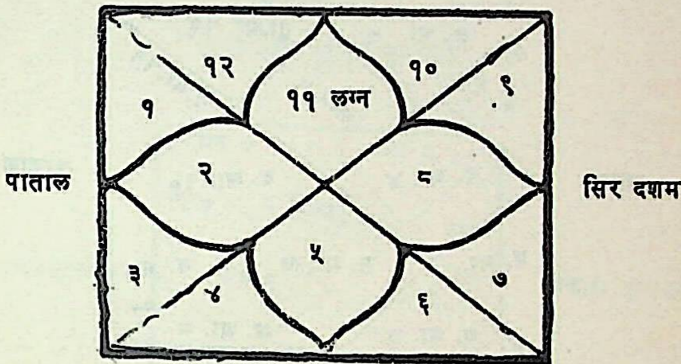
चित्र संख्या ६५
आकाश का चौकोर चित्र और कुण्डली

लग्न (राशियाँ) सदैव पृथ्वी की गति के अनुसार घूमती रहती हैं। कभी लग्न में वृष कभी मिथुन, कभी कोई राशि रहती है। इस कारण जो राशि जन्म समय उदय हो रही हो उसे ही लग्न कहते हैं और उस राशि को कुण्डली चक्र में पूर्व के स्थान में रख देते हैं।

मान लो किसी का जन्म कुंभ लग्न में हुआ है अर्थात् पूर्व में उस समय कुम्भ राशि उदय हो रही थी। कुंभ लग्न की ११ वीं राशि है तो लग्न स्थान (पूर्व) में इस ११ के अंक को रख देते हैं और उसके आगे के अंक क्रमशः बांई ओर से रखते जायेंगे जैसे ११ के आगे १२ फिर १ कोने में रखा, फिर पाताल में २, फिर कोण में ३ और ४, अस्त में ५ फिर कोण में ६-७ और दशम स्थान (सिर स्थान) में ८ फिर कोण में ९-१० लिख देंगे देखो चित्र संख्या ६६। इसे ही लग्न कुंडली कहेंगे। इसमें केवल ग्रहों का भरना रह गया है। यह ग्रह रहित लग्न कुंडली हुई।

अब ध्यान में आ गया होगा कि जो राशि उदय स्थान में हो अर्थात् उदय हो रही हो उसे लग्न स्थान में रखकर बांई ओर से लग्न के आगे की राशि क्रमशः एक

चित्र संख्या ६६
लग्न कुण्डली
पूर्व उदय



अस्त

एक कोठे में एक-एक राशि लिखते जाओ तो पूरी लग्न कुंडली बन जायगी। इससे यह भी प्रगट हुआ कि लग्न में राशियाँ सदैव बदलती रहती हैं।

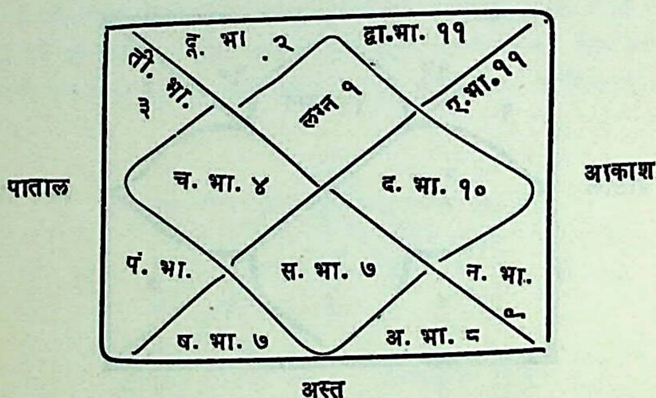
भाव स्थान

पहिले बता चुके हैं कि पूर्व में जो राशि हो उसे उदय लग्न या लग्न कहते हैं। इसी प्रकार लग्न के आगे के प्रत्येक स्थानों के भिन्न-भिन्न नाम हैं जिनके स्थान और नाम जानना आवश्यक है। (१) जहाँ सूर्य उदय होता है वह उदय लग्न या लग्न (२) जहाँ सूर्य अस्त होता है वह अस्त लग्न या सप्तम लग्न=सप्तम स्थान या सप्तम भाव है। (३) जहाँ पाताल है वह चतुर्थ लग्न=चतुर्थ भाव या चतुर्थ स्थान है। (४) आकाश (सिर के ऊपर) दशम लग्न=दशम भाव या दशम स्थान है। ये चारों केन्द्र स्थान कहलाते हैं।

(५) लग्न के आगे कोण में दूसरे स्थान को=द्वितीय स्थान या द्वितीय भाव (६) तीसरे घर को तृतीय या तृतीय भाव (७) पाताल के आगे कोण में पाँचवाँ घर=पंचम स्थान या पंचम भाव (८) छठें को षष्ठ स्थान या षष्ठ भाव (९) अस्त के आगे कोण में अष्टम स्थान या अष्टम भाव (१०) नवम को नवम स्थान या नवम भाव (११) दशम के आगे कोण में एकादश को एकादश स्थान या एकादश भाव (१२) बारहवें को द्वादश स्थान या द्वादश भाव कहते हैं। देखो चित्र संख्या ६७। ये भाव के स्थान स्थिर हैं अर्थात् इन स्थानों में कभी परिवर्तन नहीं होता। ये ही स्थान भाव स्थान कहलाते हैं। भाव स्थिर हैं परन्तु इन भावों में आने वाली राशियाँ सदा चलती रहती हैं।

चित्र संख्या ६७

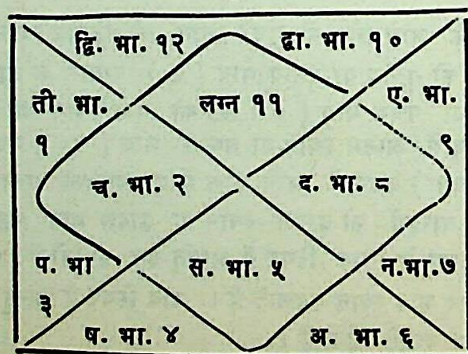
आकाश में द्वादश भाव



अब इन्हीं स्थानों को फिर से क्रम पूर्वक समझाते हैं। देखो चित्र संख्या ६८ (१) जहाँ सूर्य उदय होता है वह उदय स्थान है इसी को लग्न कहते हैं। यहाँ कुण्डली में कुंभ राशि लग्न में है। (२) आगे द्वितीय स्थान है, इसमें मीन राशि है, (३) तृतीय स्थान में मेष राशि है, (४) चतुर्थ में वृष राशि, (५) पंचम में मियुन राशि, (६) षष्ठ में कर्क राशि (७) सप्तम भाव में सिंह राशि, (८) अष्टम भाव में कन्या राशि, (९) नवम भाव में तुला राशि, (१०) दशम भाव में वृश्चिक राशि (११) एकादश भाव में धन राशि और (१२) द्वादश भाव में मकर राशि है।

चित्र संख्या ६८

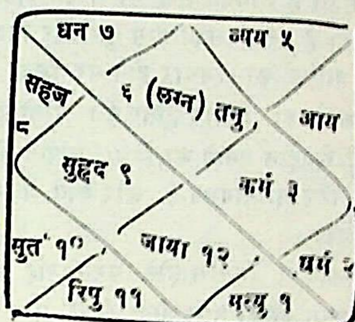
लग्न कुंडली



एक और उदाहरण देकर समझाते हैं देखो चित्र संख्या ६९ की भाव सूचक कुंडली। यहाँ इस समय कन्याराशि उदय स्थान में है अर्थात् कन्यालग्न उदय हो रही है। इससे लग्न में कन्या राशि का अंक ६ रखा, (२) दूसरे में तुला, (३) तीसरे

चित्र संख्या ६९

भाव नाम सूचक कुण्डली



में वृश्चिक, (४) चौथे भाव में धन, (५) पंचम स्थान में मकर, (६) षष्ठ में कुंभ, (७) सप्तम में मीन, (८) अष्टम में मेष, (९) नवम में वृष, (१०) दशम में मिथुन, (११) एकादश में कर्क, (१२) द्वादश भाव में सिंह राशि है।

इसी प्रकार राशियों में परिवर्तन तो होता रहता है परन्तु भाव (स्थान) में कोई परिवर्तन नहीं होता है।

भाव स्थान के स्थान (१) लग्न=तनु स्थान (शरीर) (२) द्वितीय धन स्थान, (३) तृतीय=सहज=भ्रातृ या पराक्रम, (४) चतुर्थ=सुहृद या सुख, (५) पंचम=सुत, (६) षष्ठ=रिपु, (७) सप्तम=जाया, (८) अष्टम=मृत्यु, (९) नवम=धर्म, (१०) दशम = कर्म, (११) एकादश = आय, (१२) द्वादश= =व्यय (खर्च)। इन्हीं द्वादश स्थानों को द्वादश भाव कहते हैं। ये भाव आगे समझाये जायेंगे।

द्वादश भावों के नाम पड़ने का कारण

(१) तनु —जिस लग्न का जन्म समय उदय होता है उसका शरीर के साथ उदय होने के कारण शरीर या तनुभाव नाम पड़ा।

(२) धनभाव—शरीर की रक्षा के लिए अन्न वस्त्र आदि द्रव्य आदि प्राप्त करने का विचार मन में उत्पन्न होता है इस कारण तनुभाव से दूसरे भाव का नाम धन पड़ा।

(३) सहज—धन प्राप्ति कर उसकी रक्षा के लिए पराक्रम करना पड़ता है और इस पराक्रम में सहायता देने व ले धन का बटवारा करने वाले सहोदर होते हैं। इससे इसका नाम पराक्रम और सहज पड़ा।

(४) सुख—पराक्रम होने पर घर और भाई आदि बंधुओं के सुख की भावना मन में उत्पन्न होती है। इससे इस नाम का गृह बंधु और सुख पड़ा।

(५) सुत—ग्रह बन्धु और सुख मिलने पर पुत्र विद्या आदि प्राप्त करने की भावना हृदय में उत्पन्न होती है। विषय सुख की अपेक्षा ब्रह्मज्ञान प्राप्त करना श्रेष्ठ है। ब्रह्मज्ञान विद्या से होता है इससे इसका नाम पुत्र और विद्या पड़ा।

(६) रिपु—सुत प्राप्ति का विचार होने पर इसका साधन विवाह है, इससे सन्तान के लिए विवाह करने का विचार होता है। रोगी होने से विवाह नहीं हो सकेगा। इससे शरीर को रोगहीन बनाने का विचार उत्पन्न होता है। इससे इस भाव का नाम रोगभाव पड़ा। रिपु भी रोगरूप है और कार्य में बाधक होता है। इससे इसका नाम रिपुभाद भी पड़ा।

(७) जाया भाव—रोग से निवृत्ति होने पर विवाह के लिए स्त्री प्राप्ति का विचार उत्पन्न होता है। इससे इसका नाम जाया (स्त्री) पड़ा।

(८) मृत्यु भाव—स्त्री मिलने के उपरान्त मृत्यु से रक्षा के लिए आयु बढ़ाने का विचार उत्पन्न होता हैं। इस कारण इसका नाम मृत्यु पड़ा।

(९) धर्म भाव—धर्म करने से ही आयु बढ़ती है और मृत्यु दूर होती है। इससे इसका नाम धर्म पड़ा।

(१०) कर्म भाव—धर्म की बढ़ती के लिए यज्ञ भजन पूजन आदि कर्म और कर्म की रक्षा के लिए पिता या राज्य का सहाय लेना पड़ता है। इससे यह कर्म-भाव हुआ।

(११) आय—कर्म करने के लिए धन आदि के लाभ की भावनाएँ उत्पन्न होती हैं। इस कारण इसे लाभ या आय भाव कहते हैं।

(१२) व्यय—लाभ होने पर उस धन को किस प्रकार व्यय करना ऐसा विचार उत्पन्न होता है। इससे इसका नाम व्यय भाव पड़ा।



अध्याय २१

कुण्डली बनाने के लिए लग्न निकालना

कुंडली बनाने के प्रयास में यह जानने की आवश्यकता है कि कौन लग्न है। और इस समय जो लग्न है वह किस प्रकार जान सकते हैं ? क्योंकि बिना जन्म-समय की लग्न जाने कुंडली नहीं बन सकती। इस कारण जन्म-तिथि, महीना, सन-ईस्वी (या

तिथि वार मास सम्वत) और जन्मसमय और जन्मस्थान अवश्य मालूम होना चाहिए। विना समय और तिथि आदि के जाने, लग्न नहीं मालूम हो सकती। कुण्डली में लग्न बहुत महत्व की है, क्योंकि यदि लग्न में अन्तर पड़ जायगा तो कुण्डली के फल कहने में बहुत अन्तर पड़ेगा। जितना ही अधिक सूक्ष्म समय होगा उतनी ही सूक्ष्म लग्न निकाली जा सकती है।

गणित द्वारा सूक्ष्म लग्न निकालने में नवीन विद्यार्थी को आरम्भ में कठिनाई जान पड़ेगी। इस कारण पहिले उसका सिद्धांत बता देते हैं। सूक्ष्म रूप से लग्न निकालने की विधि गणित खण्ड में मिलेगी। यहाँ प्रारम्भिक ज्ञान के लिए लग्न निकालने की स्थूल रीति बतायेंगे, क्योंकि स्थूल रीति से लग्न निकालना सरल है, इसी कारण पहिले उसे उदाहरण देकर समझायेंगे।

लग्न जानने के पहिले यह जान लेना आवश्यक है कि सूर्य कहाँ पर अर्थात् किस राशि पर है। यह पञ्चांग में दिया रहता है। किसी-किसी पञ्चांग में प्रातः काल का, किसी में मिश्र कालीन सूर्य स्पष्ट दिया रहता है। मिश्र काल की जो घड़ी पल दी है उस समय पर सूर्य किस राशि के कितने अंश कला विकला पर है यह देखो। जिस राशि पर सूर्य होगा, पञ्चांग देखने से प्रगट हो जायगा। यदि दैनिक सूर्य स्पष्ट पञ्चांग में नहीं दिया है तो सूर्य की संक्रांति कौन है और कब हुई पञ्चांग में देखो। जहाँ मेषेऽर्कः वृषेऽर्कः इत्यादि लिखा होगा वहाँ घड़ी पल भी लिखी होगी, उससे प्रगट होगा कि अमुक तिथि को अमुक समय पर अमुक संक्रान्ति हुई है। जिस राशि पर सूर्य आता है उसी राशि की संक्रांति भी कहलाती है, इसी कारण राशि के आगे अर्कः लिखा रहता है।

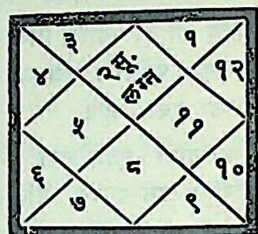
सूर्य एक राशि पर लगभग एक मास रहता है और प्रतिदिन लगभग एक अंश अनुमान से चलता है। ज्योतिषी को सदैव ध्यान में रखना चाहिए कि आजकल कौन राशि पर सूर्य है, और उस राशि पर कब सूर्य आया था (कब संक्रान्ति हुई थी)।

मान लो श्रावण कृष्ण २ को पञ्चांग में कर्के चार्कः ३४।२ लिखा है। इस समय से कर्क राशि में सूर्य आया। अपने को श्रावण की अमावस्या को सूर्य की स्थिति जाननी है। अमावस्या तक १५ तिथियां होती हैं। गत २ तिथि घटाई तो शेष १३ दिन में १३° सूर्य चला। इससे प्रगट हुआ कि सूर्य अभी कर्क का ही है, केवल १३° लगभग कर्क के अभी व्यतीत हुए हैं।

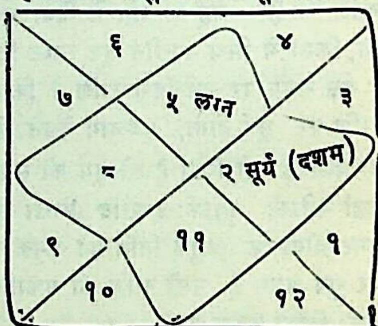
जिस राशि पर सूर्य होता है वही राशि सूर्योदय पर होती है। ज्यों-ज्यों सूर्य मध्याह्न की ओर बढ़ता है उसी के अनुसार उसके आगे की लग्नों का क्रमानुसार उदय होता रहता है। इस प्रकार लग्न में परिवर्तन होता रहता है।

मान लो वृष राशि पर सूर्य है और समय प्रातः काल का है तो सूर्य उदय के

साथ-साथ वृष लग्न भी प्रातःकाल उदय होगी तब उस समय कहेंगे कि वृष लग्न का उदय हुआ है। यदि ठीक उसी समय किसी का जन्म हुआ हो तो लग्न स्थान में हम वृष राशि का सूचक २ अंक लिख देगें और आगे की राशियाँ कमशः एक-एक कोठे में रखकर आगे की पूरी १२ राशियाँ क्रमानुसार भर देने पर जन्म समय की ग्रह रहित लग्न कुंडली बन जायगी। इस कुंडली में वृष लग्न है।

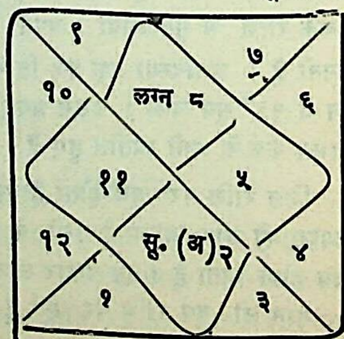


जब सूर्य ठीक सिर पर आता है तो हम कहेंगे कि सूर्य दशम स्थान पर आया है, क्योंकि सिर के ऊपर का ही नाम दशम स्थान है और मध्याह्न काल में सूर्य सिर पर आता है। मान लो किसी का जन्म ठीक दोपहर को हुआ है तो हम दशम स्थान में, सिर पर जो राशि हो उस राशि को रख देंगे, क्योंकि उस समय दशम स्थान में सूर्य होने से, सूर्य की वृष राशि भी दशम स्थान में रहेगी। यहाँ सूर्य वृष राशि का है तो दशम स्थान में वृष का अंक २ लिखकर वहाँ सूर्य भी लिख देगें और आगे की राशियाँ

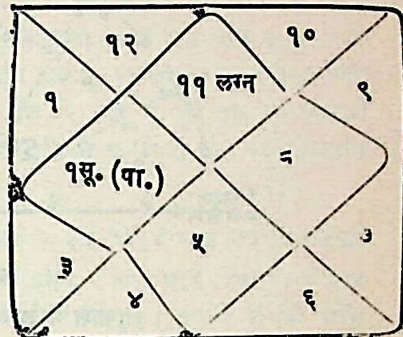


क्रम पूर्वक आगे के कोठों में भर देंगे जैसा यहाँ बताया है। इस कुण्डली में लग्न के स्थान में ५ अंक आया है यही पाचवीं सिंह लग्न यहाँ पर जन्म लग्न हुई, और यही उस समय के जन्म की ग्रह रहित कुण्डली बन गई।

जब सूर्य अस्त होने लगता है तो कहेंगे कि सूर्य अस्त स्थान अर्थात् सप्तम स्थान पर आया है। यदि उस समय किसी का जन्म हो तो सप्तम स्थान पर सूर्य जिस राशि पर हो वह राशि लिख दो और आगे सब राशियां क्रमशः भर दो तो ग्रह रहित लग्न कुण्डली बन जायगी। यहाँ पर वृष राशि का सूर्य है इस कारण सप्तम स्थान (अस्त) पर वृष का २ अंक लिखा और आगे की राशियाँ भर देने से लग्न स्थान में वृश्चिक राशि आई। इससे प्रगट हुआ कि उस समय वृश्चिक लग्न थी।



जब ठीक अर्द्ध रात्रि हो तो कहेंगे कि सूर्य पाताल (चतुर्थ स्थान) में हैं। यदि ठीक उस समय किसी का जन्म हो तो जिस राशि पर सूर्य हो उसे चतुर्थ स्थान में लिखकर आगे की शेष राशियाँ क्रमानुसार भर देंगे तो उस समय की ग्रह रहित कुण्डली बन जायगी। यहाँ वृष का सूर्य हैं तो २ को चतुर्थ स्थान (पाताल) में रखा और शेष राशियाँ क्रमानुसार भर देने पर



लग्न में ११ कुंभ राशि आई तो कहेंगे कि जन्म समय कुंभ लग्न थी और यही ग्रह रहित जन्मकुंडली होगी।

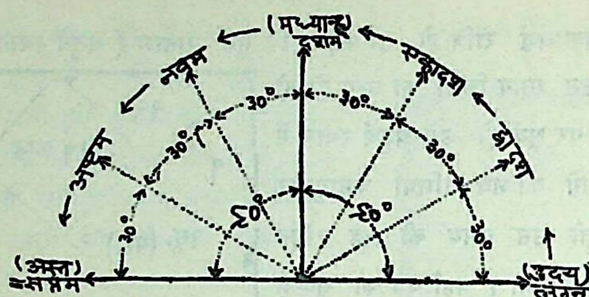
ऊपर के उदाहरण में सूर्य की स्थिति के अनुसार ठीक ठीक जन्म समय मिल जाने पर कुंडली बना लेना सरल हो गया था।

यदि इनके अतिरिक्त और कोई समय में किसी का जन्म हो तो कैसे लग्न जानना, यहां बतलाते हैं।

पहिले बता चुके हैं कि एक चक्र में ३६०° और ४ समकोण होते हैं। सूर्य उदय से अस्त तक १८०° (६ राशियाँ) पार करता है। ३०-३० अंश की १ राशि होती है। उदय से मध्याह्न तक ९०° का कोण बनता है और सूर्य ३ राशियाँ पार करता है। इस प्रकार उदय से अस्त तक १८०°=६ राशि पार करता है। देखो चित्र संख्या ७०।

जब सूर्य उदय होता है तो लग्न पर होता है। मध्याह्न में दशम पर, संध्या को सप्तम पर होता है। इसी के अनुसार बीच के भाव कोण जान लेना। जैसे उदय से ३० अंश ऊपर सूर्य जाने पर द्वादश भाव में सूर्य पहुँचेगा। ३० अंश और ऊपर चढ़ने पर एकादश भाव में आवेगा। इसी प्रकार अस्त स्थान से ३० अंश ऊपर सूर्य है तो अष्टम स्थान में सूर्य है ऐसा कहेंगे। यदि सूर्य और ऊपर अस्त से ६०° पर मध्याह्न की ओर है या मध्याह्न से ३०° आगे बढ़ा है तो कहेंगे सूर्य नवम स्थान या नवम भाव में है।

आकाश के अर्द्ध गोलाकार को जो क्षितिज के ऊपर है ६ भागों में अनुमान से विभक्त कर लो और वे ६ भाव (स्थान) आकाश में कहाँ कहाँ हैं बताए हुए चित्र संख्या ७० के अनुसार अनुमान करो।



चित्र संख्या ७०

आकाश में लग्न से अस्त तक भाव

यदि दिन है तो सूर्य को देखो और अनुमान करो कि किस भाव में है, जैसे सूर्य को देखकर कितना बजा होगा इसका अनुमान हो जाता है इसी प्रकार इसके भी अनुमान करने का अभ्यास कर लो। जिस भाव में सूर्य हो उस भाव में सूर्य लिख कर सूर्य की राशि भी लिख दो और आगे की राशियाँ सब क्रमानुसार भर दो तो उस समय की लग्न कुण्डली बन जायगी और लग्न के स्थान में जो राशि आवे उसे लग्न समझो।

अब यह बात विचारने की है कि ६ राशियों में सूर्य उदय से अस्त तक प्रायः १२ घंटे में घूमता है, इससे एक राशि में लगभग २ घण्टे का औसत पड़ा। जैसे सूर्य ६ बजे उदय हुआ तो १२ वें भाव में ८ बजे, ११ वें में १० बजे, दशम में १२ बजे, (दोपहर) नवम भाव में २ बजे, अष्टम में ४ बजे और सप्तम में ६ बजे संध्या को सूर्य पहुँचेगा।

उदय काल के अनुसार समय बदलता रहता है। इस कारण सूर्य को देखकर भाव का अनुमान करना और जिस भाव में सूर्य दिखे उसी भाव में सूर्य रखकर सूर्य की राशि भी उसी भाव में लिख दो और क्रमशः आगे की राशियाँ भर दो तो ग्रह रहित लग्न कुण्डली बन जायगी।

ऊपर लग्न प्रकार २-२ घंटे का दिया है, परन्तु वास्तव में किसी लग्न का अधिक किसी का कम प्रमाण है परन्तु (१) मेष-मीन (२) वृष-कुम्भ (३) मिथुन-मकर (४) कर्क-धन, (५) सिंह-वृश्चिक (६) और कन्या-तुला इनका सदैव एक समान लग्न प्रमाण रहता है अर्थात् मेष और मीन का एक ही लग्न प्रमाण है। इसी प्रकार शेष २-२ राशियों की जोड़ी दी है उन दोनों का एक ही लग्न प्रमाण होता है।

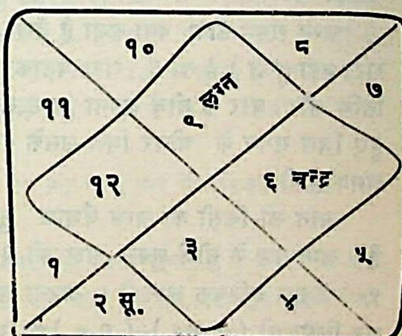
परन्तु यहाँ पर अधिक खट-पट में न पड़कर स्थूल रूप से २-२ घण्टे का प्रत्येक राशि का उदय प्रमाण सिद्धान्त समझाने के लिए ही मान लिया है। सूक्ष्म रूप से इसका विचार गणित खण्ड में मिलेगा।

मान लो किसी का जन्म २ बजे रात का है। यदि ६ बजे सूर्योदय हुआ है तो सूर्योदय से (१२–६)=६ घण्टा दोपहर तक+१२ घण्टा आधी रात तक + २ घण्टा और=२० घण्टा हुआ या=२४ घण्टा अर्द्ध रात्रि तक +२घंटा= २६ घंटा–६ घंटा सूर्योदय के=२० घंटा÷२=१० राशि। १ राशि २ घंटा में हुई तो २० घंटा में १० राशि हुई। सूर्य वृष राशि का है तो वृष राशि से १ गिना तो १० वीं राशि कुंभ हुई। यही कुंभ लग्न उस समय होगी।

यदि जन्म २-२५ वजे मध्याह्न का है=१२+(२-२५)=१४ घंटा २५ मि० इसमें से ६ बजे सूर्योदय का घटाया तो ८-२५ रहे। इसमें २ का भाग दिया तो ४ बार पूरा भाग लग गया और शेष वचा उसकी पाँचवीं राशि हुई। वृष से पाँचवीं राशि कन्या हुई। इस कारण उस समय कन्या लग्न होगी।

इसी प्रकार सूर्योदय से जन्म समय तक घंटा मिनट गिन कर २ का भाग देने से और सूर्योदय की राशि से उतनी संख्या गिनने पर इसका अनुमान हो जाता है कि उस समय लग्न में कौन राशि होगी।

मान लो रात्रि का समय है और चन्द्र दिखता है तो पंचांग से देखलो कि चन्द्र किस राशि पर है। पञ्चांग विषय में दैनिक चन्द्र देखना वतला दिया गया है। सूर्य देख कर जिस प्रकार कुण्डली वनाई थी यहाँ उसी प्रकार चन्द्र देखकर कुण्डली वना लेना। जिस स्थान पर चन्द्र आकाश में दिखेगा उसी स्थान पर चन्द्र लिखकर चन्द्र की राशि भी लिख देंगे और क्रमानुसार आगे की राशियाँ भर देंगे तो लग्न कुण्डली वन जायगी।



जैसे कन्या राशि का चन्द्र जन्म समय सिर पर है अर्थात् दशम स्थान में है तो दशम भाव में चन्द्र और चन्द्र की राशि का अंक ६ लिख कर आगे की राशियाँ क्रम पूर्वक भर देने से धन लग्न आ जाती है। यह लग्न कुण्डली वन गई। यहाँ सूर्य भी लिख दो। अपने को पहले से मालूम है कि इस समय वृष राशि का सूर्य है। जहाँ वृष राशि हो सूर्य लिख दो। यहाँ षष्ठ भाव में वृष राश है इस कारण षष्ठ भाव में सूर्य लिख दिया।

चन्द्र यदि और कोई स्थान में हो तो आकाश में चन्द्र जिस भाव में दिख रहा हो उस भाव में चन्द्र और उसकी राशि लिख कर उपर्युक्त रीति से कुण्डली बना लो तो लग्न निकल आवेगी।

यदि चन्द्र भी नहीं है और अंधेरी रात है तो तारागणों को देखो कौन नक्षत्र

कहाँ पर है और वह नक्षत्र किस राशि का है। किसी एक नक्षत्र पर से राशि जान कर देखो वह किस भाव में है, जिस भाव में वह राशि हो लिख कर क्रम पूर्वक शेष राशियाँ भर दो तो लग्न स्थान में जो राशि आवे वही लग्न होगी। यदि सब नक्षत्रों की अच्छी तरह पहचान हो गई हो तो कौन नक्षत्र उदय हो रहा है, कौन उदय हो चुका है उन नक्षत्रों की राशि पर से उनके ठीक-ठीक स्थान का अनुमान कर उपर्युक्त रीति से कुंडली बना कर जान लो।

परन्तु स्मरण रहे कि यह सब स्थूल मान से है। जैसे कोई पूछे कि इस समय क्या बजा होगा तो सूर्य की ओर देखकर अनुमान किया जा सकता है कि इस समय ३ बजा होगा। यदि उस समय घड़ी देखते हैं तो विदित होता है कि ३ बज कर ३० मिनट ४० सेकेण्ड हुआ है या ३ बजने को १४ मिनट बाकी हैं। इसी प्रकार उपर्युक्त रीति भी स्थूल है। इससे कुछ सूक्ष्म और शुद्ध लग्न पञ्चाङ्ग में दिये हुए दैनिक लग्न पत्र से जानी जा सकती है।

दैनिक लग्न होरा सारिणी

यह प्रत्येक पञ्चाङ्ग में नहीं दिया रहता, परन्तु काशी,जबलपुर आदि कई स्थानों के पञ्चाङ्ग में अवश्य दिया रहता है। यद्यपि इसके विषय में पहिले बता चुके हैं परन्तु यहाँ और भी उदाहरण देकर समझाते हैं। उदाहरण के लिए जबलपुर का लोक विजय पञ्चाङ्ग सम्वत् २००० का लेते हैं।

पञ्चाङ्ग के तिथिपत्र के नीचे उस पक्ष भर की तिथियाँ और वार ऊपर लिखा है। बांई ओर खड़ी पंक्ति में लग्न के नाम दिये हैं और आगे वह लग्न कब तक रहेगी उसका घंटा मिनट दिया है।

जन्म समय ठीक क्या बजा है देखो, यदि लड़ाई के समय का नया समय* (१ घंटा बढ़ा हुआ) है तो १ घंटा घटाकर पुराना समय बनालो और लग्नपत्र में उस तिथि और वार के नीचे अपना इष्ट समय खोजो। इष्ट समय सारिणी में दिये हुए जिस समय के भीतर मिले उसके बांई ओर जो लग्न लिखी हो वही लग्न उस समय होगी।

मान लो किसी का जन्म वैशाख शुक्ल ३ शुक्रवार के रात्रि के ९–४० बजे का है। लग्न पत्र के नीचे शुक्ल पक्ष की ३ तिथि शुक्रवार के नीचे ७–७ तक तुला और ९–२४ तक वृश्चिक लग्न है। अपना समय बढ़ा हुआ समय होने से एक घंटा घटा कर लिया तो (९-४०)–(१-०)=८-४० यह पुराना समय हुआ। ९-२४ के भीतर यह ८-४० है। इस कारण उस समय वृश्चिक लग्न हुई। यही जन्म लग्न हुई। वृश्चिक लग्न को लग्न स्थान में रखकर कुण्डली बना लो।

---

*लड़ाई के समय तारीख १-९-१९४२ ई० से ता० १५-१०-१९४५ तक गवर्नमेंट की आज्ञा से भारतवर्ष में घड़ियाँ १ घंटा आगे बढ़ा दी गई थीं। जिसके कारण उस समय १ घंटा बढ़ा हुआ समय प्रचलित था।

ध्यान रहे लग्नपत्र में घंटा मिनट में ही समय दिया रहता है, इससे अपना समय घंटा मिनट में रात या दिन का है जान कर लग्न निकाल लो। इससे लग्न जानना बहुत ही सरल है।

किसी दो में लग्न प्रारम्भ होने का समय दिया रहता है और समय रेलवे के अनुसार २४ बजे तक दिया रहता है। जिस प्रकार लग्नपत्र हो बुद्धि से विचार कर उपयोग करो। नये विद्यार्थी को कोई ऐसा पंचाङ्ग खरीदना चाहिए जिसमें लग्नपत्र आदि आवश्यक बातें दी हों।



अध्याय २२

इष्ट काल निकाल कर लग्न सारिणी से लग्न निकाल कर जन्म कुण्डली बनाना।

इष्टकाल—

कोई भी विचारणीय इष्ट विषय के सम्वन्ध में यह जानना कि उस समय क्या वजा है, वही समय इष्टकाल कहलाता है। जैसे किसी का जन्म १० बजे दिन को हुआ तो १० बजे का समय इष्टकाल घंटा में हुआ। यदि किसी ने कोई प्रश्न पूछा तो उसका उत्तर देने'.; लिए उस समय की लग्न जानने के लिए समय की आवश्यकता होगी वही समय इष्ट काल है। जैसे किसी ने २ बजे रात को पूछा कि अमुक द्रव्य चोरी गया है मिलेगा कि नहीं तो २ बजे रात का समय अपना इष्ट काल हुआ।

इष्ट काल का समय घड़ी पल में होना आवश्यक है। यदि यह समय घंटा मिनट में दिया हो तो इसके घड़ी पल्ल बना लो। यह स्मरण रहे कि घंटा मिनट का समय अर्द्ध रात्रि से आरम्भ होता है अर्थात १२ बजे रात के उपरान्त १–२ आदि बजता है और अपना इष्ट धडी पल का समय सूर्योदग्र के उपरान्त आरम्भ होता है अर्थात इष्ट घड़ी पल से प्रगट होता है कि सूर्योदय से इतने घड़ी पल उपरान्त किसी का जन्म आदि हुआ है।

जन्म समय घंटा मिनट में दिया रहता है उसे घड़ी पल में परिवर्तन करने की युक्ति यह है :—

उस दिन सूर्योदय का समय (जो घंटा मिनट में दिया रहता है) पंचांग से देख लो और उस समय को इष्ट काल के घंटा में से घटा दो, जो शेष घंटे बचें उनके घड़ी पल बना लो तो इष्ट निकल आयगा। इसी को कुछ उदाहरण देकर समझाते हैं :—

(१) यदि १२ बजे (दोपहर) के प्रथम जन्म है तो उसमें से सूर्योदय के घंटा मिनट घटा कर जो बचे उसके घड़ी पल बना लो। मान लो सूर्योदय ५ घं० ३१ मि० पर है और जन्म ११ बजकर ५० मिनट पर हुआ है तो जन्म घंटा में सूर्योदय घटाने से ६—१९ घंटा बचा। इसके घड़ी पल बना दें तो १५ घंटा ४७॥ पल हुए तो अपना इष्ट काल १५ घं० ४७॥ पल हुआ।

	घंटा मिनट	घड़ी पल
जन्म—	११–५०	६ घण्टा=१५–०
सूर्योदय	५–३१	१९ मि०=०–४७॥
शेष	६–१९	योग=१५–४७॥

(२) यदि दोपहर (१२ बजे) के उपरान्त रात्रि के १२ बजे तक जन्म है तो जन्मसमय रेलवे टाइम के अनुसार बना लो अर्थात १२ घंटा और जोड़ देना। जैसे रात के ११ बजे हैं तो ११+१२=२३ बजे जन्म समझो। अब इसमें से सूर्योदय घटा कर घड़ी पल बना लो जैसे जन्म १२ बजे रात का है तो १२+१२ = २४ बजे जन्म समझो। यदि उस दिन सूर्योदय ५ घंटा ४५ मिनट पर हुआ तो २४ घंटा से सूर्योदय का समय घटाने से शेष १८ घण्टा १५ मिनट बचा, इसके ४५ घड़ी ३७॥ पल हुए। इस कारण ४५ घड़ी ३७॥ पल इष्ट काल हुआ।

	घण्टा मिनट	घड़ी पल
जन्म—	२४—०	१८ घंटा = ४५—०
सूर्योदय	५—४५	१५ मि० = ०—३७॥
शेष	१८—१५	योग = ४५—३७॥

यदि जन्म अर्द्धरात्रि के उपरान्त है तो उसमें (१२ दोपहर+१२ घंटे अर्द्धरात्रि के=२४) २४ घंटा जोड़ दो और उसमें सूर्योदय घटा कर घंटा मिनट के घड़ी पल बना लो तो इष्ट निकल आवेगा जैसे रात के २ घं० ४५ मि० पर जन्म है तो इसमें २४ घंटा जोड़े तों २६ घंटा ४५ मिनट हुए। इसमें सूर्योदय घटाया। मान लो सूर्योदय ५ घं० ३१ मि० पर था यह घटाने से २१-१४ बचे इसके ५३–५ घड़ी पल हुए। इस कारण अपना इष्ट ५३ घ० ५ पल हुआ।

	घं० मि०	घ० प०
जन्म —	२–४५	२१ घन्टा=५२–३०
	+२४– ०	१४ मि०= ०–३५
जन्म =	२६–४५	योग ५३– ५
सूर्योदय	५–३१	इष्ट
शेष	२१–१४	

लग्नसारिणी से लग्न देखना

किसी-किसी पञ्चांग में दैनिक लग्नपत्र नहीं रहता। लग्न पत्र से केवल लग्न ही विदित होती है, परन्तु यह पता नहीं चलता वह लग्न कितने अंश युक्त हो चुकी है। इस कारण लग्न जानने की तीसरी सरल रीति यहाँ देते हैं। इससे लग्न की राशि और अंश भी जान सकते हैं। यह लग्न सारिणी द्वारा जानी जा सकती है।

लग्नसारिणी प्रत्येक पंचांग में दी रहती है। बहुधा ज्योतिषी जो गणित द्वारा लग्न निकालने की खट-पट से बचना चाहते हैं, इसी सारिणी द्वारा लग्न निकाल लेते

हैं। गणित द्वारा इससे भी सूक्ष्म रूप से शुद्ध लग्न कला विकला तक निकाली जा सकती है। प्रत्येक स्थान के अनुसार लग्न प्रमाण में कुछ अन्तर पड़ जाता है, परन्तु काम चलाने की यह सारिणी वहुत उपयोगी है, इससे लग्न तो अवश्य ठीक निकल आती है। आरम्भ में इसका उपयोग जान लेने से नया विद्यार्थी काम चला सकता है। अपने स्थान की लग्नसारिणी बनाना और लग्न निकालने का पूरा गणित, गणित खण्ड में मिलेगा।

जिस दिन की लग्न निकालनी हो उस दिन के सूर्य की राशि और अंश पञ्चांग से देख लो। जैसे वैशाख शुक्ल ३ सम्वत् २००० शुक्रवार को पंचांग में प्रातः रवि स्पष्ट ० २२-१५-१ दिया है। अर्थात मीनराशि गत होकर मेषराशि के २२°-१५'-१" पर प्रातः काल सूर्य था।

अव लग्नसारिणी देखो। वांई ओर खड़ी पंक्ति में राशि दी है और ऊपर आड़ी पंक्ति में अंश दिये हैं। अपनी सूर्य की राशि ० रा २२° है (मेष के २२ अंश) यहाँ कला विकला छोड़ दिया। अव खड़ी पंक्ति में देखो जहाँ मेष वृष आदि राशियाँ लिखी हैं वहां ० मेष, वृष १, मिथुन २ इत्यादि दिया है अर्थात दिये हुए अंक की राशि गत हो गई और अक्षरों में बताई राशि वर्तमान है। जैसे मेष ० दिया है इसका अर्थ यह है कि ० (मीन) राशि तो गत राशि है और मेषराशि वर्तमान राशि है। सूर्य मेष ० का है इससे मेष ० के सीध में दाहिनी ओर, और सूर्य मेष के २२° पर है, इससे २२° के नीखे देखा (ऊपर की पंक्ति में २२° खोजो)। २२° के नीचे मेष की सीध मे ५-५६-० लिखा हुआ मिला। इसमें अपना इष्ट काल जोड़ो। मान लो अपना इष्ट काल ८-४० वजे रात का है। उस, दिन सूर्योदय ५-३१ पर था तो ८-४० में १२ घंटा जोड़ के सूर्योदय घटाया और उसके घड़ी पल बनाये तो इष्ट ३७-५२-३० हुआ। इसमें ऊपर का प्राप्त सारिणी अंक ५-५६-० जोड़ा तो ४३-४८-३० घड़ी हुई। अव

घं० मि०		घ० प०
८–४०	१५ घण्टा =	३७–३०
+१२– ०	९ मिनट =	०–२२–३०
जन्म=२०–४०	= इष्ट =	३७–५२–३०
सूर्योदय ५–३१	+ सारिणी अंक	५–५६– ०
शेष=१५—९		=४३–४८–३०

सारिणी के भीतर खोजो इस अंक के समीप का अंक कहां है, सारिणी में इसके समीप का ४३-५९-० मिला। अपना इष्ट युक्त सारिणी अंक ४३-४८-३० है। इनके समीप का यही ४३-५९-० मिलता है। इसके आगे / ४४-१०-२० अंक है वह वहुत अधिक है, इस कारण ४३-५९-० को ही लिया। अब इस अंक के वांई ओर देखा वृश्चिक राशि है और ऊपर अंश देखा तो २२° मिला। इससे प्रगट हुआ कि वृश्चिक लग्न २२° भुक्त हुए हैं। या लग्न ७ रा० २२° है।

अब लग्न कुण्डली में लग्न के स्थान पर वृश्चिक के ८ अंक रख कर पूर्व बताई रीति से पूरी कुण्डली बना लो।

लग्न सारिणी से लग्न देखने की रीति यह है कि उस दिन का सूर्य जिस राशि अंश पर है पंचांग से देख लो। समझो किस राशि के कितने अंश भुक्त हुए है। जैसे सूर्य रा० १०-२५° दिया है तो मकर राशि भुक्त होकर कुम्भ के २५° भुक्त हुए है, यहाँ सूर्य की राशि कुम्भ लेंगे। खड़ी बांई ओर की पंक्ति में सूर्य की राशि मिलेगी और ऊपर आड़ी पंक्ति में अंश मिलेंगे। खड़ी पंक्ति में वर्तमान राशियों के नाम और भुक्त राशियों के अंक दिये हैं जैसे ६ तुला, यहां ६ कन्या राशि भुक्त हो गई है और तुला राशि वर्तमान है ऐसा समझना। सूर्य की जो राशि वर्तमान हो उसको खड़ी पंक्ति में खोज कर उसके आगे दाहिनी ओर सीध में और सूर्य के इष्ट अंकों के नीचे जो अंक में मिले उसमें इष्ट काल जोड़ दो। यदि इष्ट काल जोड़ने से ६० घड़ी से अधिक इष्ट काल हो जाता है तो उसमें से ६० घड़ी निकाल दो (घटा दो) और शेष (बचे हुए) अंक लो। फिर इष्ट भुक्त प्राप्त सारिणी अक को सारिणी में खोजो। इससे मिलता जुलता और इससे कम अंक जहां मिले उसके बांई ओर, लग्न की राशि और सबसे उपर सीध में अंश लिखा मिलेगा, वही लग्न होगी। जैसे ३ कर्क लिखा हो और ऊपर १४ अंश लिखा हो तो लग्न राशि ३-१४° समझना अर्थात कर्क के १४° भुक्त हो गये हैं। कुण्डली में यही कर्क लग्न लिखना जैसा ऊपर उदाहरण देकर समझा दिया गया है।

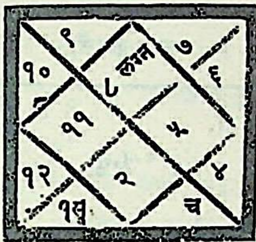
जन्मसमय बहुधा घंटा मिनट में दिया रहता है, यह बहुत साधारण समय है। वास्तव में समय कई प्रकार के हैं। जरमन की दूसरी लड़ाई के समय यहाँ का प्रचलित स्टेण्डर्ड टाइम १ घण्टा बढ़ा दिया गया था अर्थात् वरमा का स्टेण्डर्ड टाइम भारतवर्ष भर में प्रचलित कर दिया गया था। इस टाइम से स्टेण्डर्ड टाइम पृथक् है। धूप घड़ी के अनुसार (लोकल टाइम) स्थानिक समय पृथक् है। यहाँ तो केवल प्रारंभिक बातें बताई जा रही हैं जिसके समझने में नवीन विद्यार्थी को सरलता हो। समय का सूक्ष्म ज्ञान गणित खंड में मिलेगा।

संग्रह कुंडली बनाना

अभी तक लग्न निकाल कर कुंडली चक्र में राशियाँ स्थापित करना ही बताया है, उसमें ग्रहों की स्थिति विचार कर ग्रह स्थापित करने को रह गया है। कुंडली में ग्रह कैसे रखना यहाँ बतलाते हैं।

मान लो वैशाख शुक्ल ३ सम्वत २०००, जन्मसमय ८ घं० ४० बजे रात्रि की कुंडली बनाना है। लग्न सारिणी देखने से ८-४० बजे वृश्चिक लग्न आई थी वृश्चिक लग्न होने से लग्न कुंडली में, लग्न स्थान में ८ रखकर शेष राशियाँ शेष स्थानों में भर दीं। अब ग्रह भरने के लिये पंचांग देखो। उस दिन प्रातः काल रवि स्पष्ट में

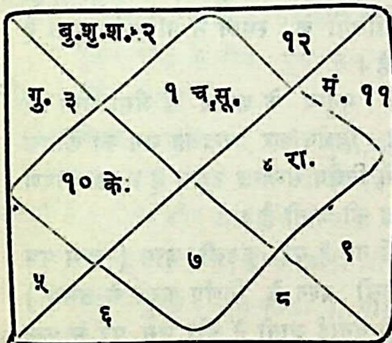
लग्न कुंडली



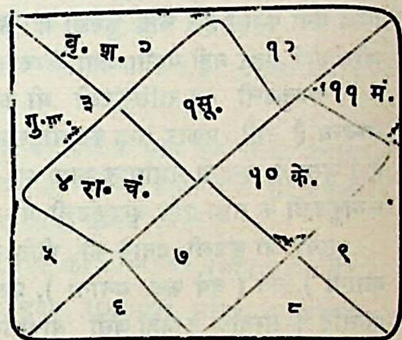
सूर्य रा०-२२°-३५'-१" दिया है अर्थात् मीन गत होकर मेष राशि पर सूर्य है। इससे जहाँ मेष का अंक १ लिखा है वहाँ सूर्य लिख दिया। अब चंद्र को देखा तो उस दिन ३१ घं० ४५ प० उपरांत मिथुन राशि में आया है। अपना इष्ट काल ३७ घ० ५२ प० ३० वि० है यह ३१-४५ से अधिक है। इस कारण चंद्र मिथुन राशि पर आ गया है, इससे मिथुन के अंक ३ के कोठे में चन्द्र रखा।

शेष ग्रह साप्ताहिक ग्रह चक्र देखकर भरना पड़ता है। पंचांग में वैशाख शुक्ल ८ बुधवार का ग्रह स्पष्ट का चक्र दिया है और इसके पहिले चैत्र कृष्ण ३० (अमावस) मंगलवार का ग्रह स्पष्ट का चक्र दिया है। अपना जन्मसमय इन दोनों के बीच का है। दोनों चक्रों को देखो उनमें क्या अंतर है। चन्द्र और सूर्य ग्रह तो पहिले लिख चुके हैं, शेष ५ ग्रह और लिखना है।

वैशाख कृष्ण ३०



वैशाख शुक्ल ८

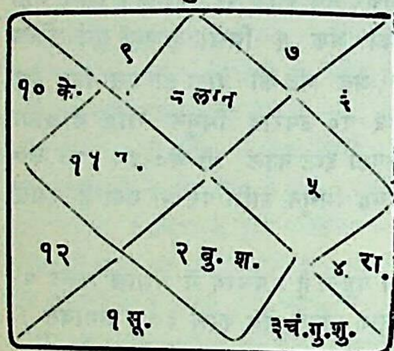


इन दोनों चक्रों में वे ग्रह जिनमें कोई अंतर नहीं है ये हैं—२ बु० ११ मं० ३ गु० २ श० ४ रा० १० के०। इस कारण ये ग्रह अपनी कुंडली में भी इन्हीं स्थानों में लिख देंगे। अब केवल शुक्रग्रह लिखने को रह गया है, क्योंकि पहिली कुंडली में शुक्र वृषराशि में है और दूसरी कुंडली में शुक्र मिथुनराशि में आ गया है। यह कब बदला है पंचांग देखो। अब देखना है कि यह अपने इष्ट काल के पहिले बदला है या उसके उपरांत। पंचांग के तिथिपत्र के अंत में ये सब सूचनाएँ मिलती हैं।

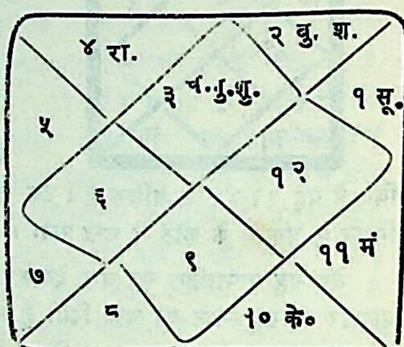
पंचांग में वैशाख शुक्ल प्रतिपदा को मिथुने शुक्रः २७-१७ लिखा है अर्थात् वैशाख शुक्ल प्रतिपदा के २७-१७ इष्ट पर मिथुनराशि पर शुक्र आया है। इससे प्रगट हुआ कि इष्ट काल के प्रथम ही मिथुनराशि पर शुक्र आ गया है। इससे शुक्र को मिथुन

राशि पर ही लिखना पड़ेगा। इस प्रकार सब ग्रह लिख देने पर अपनी लग्नकुंडली तैयार हो गई।

लग्न कुंडली



चन्द्र कुंडली



अब चन्द्रकुडली तैयार करना है। चन्द्र मिथुनराशि का है। इस कारण चन्द्र की राशि मिथुन, लग्न स्थान में लिखो और शेष राशियाँ क्रमानुसार भर कर, लग्नकुंडली के अनुसार ही ग्रह भर दो तो चन्द्रकुंडली वन जायगी। अर्थात् लग्न ८ की जगह चन्द्र की राशि ३ लिख कर शेष सब राशियाँ ग्रह सहित लग्नकुंडली के अनुसार ही लिख देना पड़ता है। चन्द्र कुंडली में केवल राशियों के स्थान में परिवर्तन हुआ है और कोई अंतर नहीं पड़ता जैसा ऊपर वताया है।

चन्द्रकुडली को राशिकुंडली भी कहते हैं। मनुष्य के शरीर से जैसा लग्न का सम्बन्ध है उसी प्रकार चन्द्र का भी सम्वन्ध है। विशेष कर चन्द्रग्रह मन का द्योतक है। जन्म के चन्द्र से गर्भाधान काल का लग्न से विशेष सम्वन्ध रहता है। इस कारण लग्नकुंडली के साथ-साथ चन्द्रकुंडली भी स्थापित की जाती है।

ऊपर जो कुंडली वनाने की रीति समझाई गई हैं यह कुंडली, जन्म (जन्म पत्र वनाना), वर्ष (वर्ष फल वनाना), प्रश्न (किसी प्रश्न के निर्णय करने के समय) इत्यादि के सम्वन्ध से जहाँ जैसी आवश्यकता हो वनाई जाती है और उस पर से फल कथन किया जाता है। इस कारण यह कुंडली वहुत महत्व की होती है, यह जितनी शुद्धता पूर्वक वनाई जा सके उतना ही शुद्ध फल होगा।

●

अध्याय २३

राशियाँ और कालाङ्ग

कालाङ्ग (काल पुरुष का अंग)

प्रत्येक राशियों का प्रभाव अंग के विशेष भाग में पड़ता है। काल पुरुष के किस अंग के विभाग में कौन राशि विशेष प्रभाव डालती है यह जानना जाहिये। कालपुरुष

के अंग और राशियों से सम्बन्ध है, इस कारण कालांग यहाँ वतलाते हैं। लग्न के विभाग के अनुसार लग्न से या मेष से क्रमानुसार गिनने पर शरीर में इन राशियों का स्थान कहाँ पड़ता है, नीचे वताया है।

लग्न या राशि	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धन	मकर	कुंभ	मीन
मुख्य अंग	सिर	मुख गला	कंधा वाहु	हृदय छाती	पेट कलेजा	कमर	वस्ति मूत्रपिंड	गुह्येन्द्रिय	जांघ	घुटना	टांग	पैर
	Head	Face neck	Aims	Breast	Stomock Heart	Loins	Pelvis Reins	Private parts anus ect	Thigh	Knees	Legs	Feet

ऊपर चक्र में इन राशियों या भाव का प्रभाव अंग विशेष में बताया है,परन्तु इसके अतिरिक्त ये और भी अंगों पर प्रभाव डालते हैं इस कारण इनको और भी समझाते हैं।

१ मेष—इसका प्रभाव विशेष कर मस्तक पर पड़ता है। भोंह के ऊपर के भाग पर इसका प्रभाव जानना। सिर और भेजा, मेधाशक्ति आदि इसके अंतर्गत हैं।

२ वृष—भौंह के नीचे मुख, नेत्र, चेहरा, गला इसमें शामिल हैं। इसका प्रभाव ग्रीवा (गर्दन) तक है।

३ मिथुन—दोनों हाथ, कंधे, भुजा,और छाती की ओर के भाग तक इसका प्रभाव है। इसका प्रभाव फेफड़े गला वाणी पर भी पड़ता है। दोनों छातियों में भी प्रभाव करता है। ग्रीवा और छाती के बीच के भाग पर इसका प्रभाव पड़ता है।

४ कर्क—हृदय, चित्त, दोनों छाती और जठर (पेट की अग्नि) पर प्रभाव पड़ता है।

५ सिंह—कुक्षि (कूख-कोखा), पीठ, पेट, हृदय, रक्त स्थान, कलेजा पर प्रभाव करता है।

६ कन्या—कमर, पेट की अँतड़ियाँ और जठर पर भी प्रभाव करता है।

७ तुला—मूत्राशय, गुर्दा, वस्ति, पेट; नाभि, कटि आदि पर इसका प्रभाव पड़ता है। नाभि के नीचे लिंग स्थान के ऊपर के भाग में इसका प्रभाव है। यह हाथ के पंजे पर भी प्रभाव डालता है। त्वचा पर भी प्रभाव करता है।

८ वृश्चिक—गुह्येन्द्रिय, मल मूत्राशय (गुदा लिंग) आदि पर इसका प्रभाव है।

९ धन—दोनों जंघाओं पर इसका प्रभाव है। शरीर का नाड़ी चक्र (Artrial system) धमनी चक्र आदि पर भी प्रभाव डालता है।

१० मकर—दोनों घुटने, हड्डी, हड्डियों की संधि, पर प्रभाव डालता है।

११ कुम्भ—टाँग, घुटने के नीचे का भाग पिंड़ली आदि पर और रक्त के बहाव पर प्रभाव डालता है। मज्जा तंतु और नेत्र पर भी प्रभाव डालता है।

१२ मीन—दोनों पैर के पंजे, पैर की अँगुली आदि पर प्रभाव करता है। यह आँत और पेट मे भी प्रभांव करता है।

यह प्रभाव लग्न से या गत राशियों के अनुसार पड़ता है।

इनका उपयोग

मान लो किसी के जन्मसमय मेष का सूर्य हो, मेष का सूर्य उच्च का होता है (जैसा आगे बताया है) तो वह मनुष्य बड़े मस्तक वाला होगा। अपने मस्तक-बल से धनोपार्जन करेगा। यह मन्त्री आदि बड़े ओहदे पर भी हो सकता है।

किसी राशि में कोई पापग्रह (यह आगे समझाया है) हो तो उन राशियों से जिस अंग का बोध होता है, उस अंग में व्रण (फोड़े) आदि होंगे या उस अंग में कोई ग्रह जनित बाधा उपस्थित होगी, जैसे मेष का मंगल पड़ा है तो, मेष से सिर पीड़ित होगा। यदि जन्मकाल में, लग्न में मेष राशि हो और उसमें मंगल हो तो उसके सिर में चोट आदि का भय हो। जन्म समय जिस राशि में पाप ग्रह हों उस राशि का बतलाने वाले अंग में मसादि चिह्न होंगे। उसी प्रमाण से जिस राशि में पाप ग्रह हो या रवि-चन्द्र* पीड़ित हो उस राशि के अंग विभाग में रोग होगा।

भाव के अनुसार कालांग

ऊपर राशि के सम्वन्ध से कालपुरुष के अंग वताये हैं वे अंग लग्नादि भाव से भी सम्बन्ध रखते हैं और समस्त भाव के सम्वन्ध से भी शरीर के अंगों पर प्रभाव पड़ने का विचार किया जाता है।

जैसे मिथुन लग्न है यह जातक (जिसकी जन्मकुण्डली है) का सिर हुआ। उस स्थान पर कोई ग्रह नहीं हो तो सिर में कोई चिह्न न होगा। मान लो लग्न में गुरु है, गुरु शुभ ग्रह होने से उसका कपाल या सिर सुन्दर होगा। दूसरे स्थान में कर्क राशि है और कोई ग्रह नहीं है वह मुख का स्थान है, इस कारण मुख स्वच्छ होगा। तीसरा स्थान कंधा या बाहु पर प्रभाव करता है, तीसरे में सिंह है और कोई ग्रह नहीं है तो बाहु स्वस्थ होंगे। छठा स्थान का प्रभाव कमर पर होता है। मान लो छठे भाव में वृश्चिक राशि है और इसमें चन्द्र है तो उसे खाज गजकर्ण आदि रोग कमर में होंगे, परन्तु चन्द्र शुभ ग्रह होने से अपनी दशा में उस रोग को अच्छा करेगा, इत्यदि, प्रकार से भाव के सम्बन्ध में भी विचार होता है।

---

* टिप्पणी—सूर्य चन्द्र पाप ग्रह से युक्त हों या ग्रहण से युक्त हों या कोई ग्रह युद्ध में पराजित, केतु से धूमित ग्रह और उल्कापात वाला ग्रह पीड़ित कहलाते हैं। इसका स्पष्टीकरण पृथक् खण्ड में होगा।

राशि के सम्बन्ध से विचार करने में उस राशि पर कोई पाप या शुभ ग्रह प्रभाव करता है तो उस राशि के सम्बन्ध से वैसा अच्छा या बुरा फल होता है, जैसे वृष राशि पर कोई पाप ग्रह हो, पाप ग्रह होने से कंठ-विकार उत्पन्न करेगा क्योंकि वृषराशि कंठ आदि पर प्रभाव डालती है। पाप ग्रह उन राशियो के सम्बन्धी अंग में अपनी दशा में अपने पदार्थ द्रव्य आदि से रोग उत्पन्न करते हैं। ग्रहों के पदार्थ द्रव्य आदि आगे दिये हैं।

मान लो मिथुन राशि पर जन्मसमय चन्द्र या सूर्य है, उस पर शनि या मंगल की दृष्टि हो या वहाँ पर ये ग्रह हों तो छाती फेफड़ा सम्बन्धी रोग दमा आदि उत्पन्न करेंगे। कर्क का प्रभाव दोनों छाती पेट पाचन-इन्द्रिय पर भी होता है और स्त्रियों के शरीर में दुग्ध उत्पन्न करने के स्थान पर भी प्रभाव करता है। कर्क स्त्री राशि है, तो यह स्त्रियों के उस अंग सम्बन्ध से सब प्रकार को नैसर्गिक दुर्बलता उत्पन्न करता है। वहाँ कोई पाप ग्रह होने से रोग उत्पन्न कर देता है। सिंह का प्रभाव पेट में आहार-विहार पर भी होता है, पाप ग्रह के प्रभाव से पेट में रोग उत्पन्न करेगा। इस राशि वाले को गरम पदार्थ चाय शराव आदि त्यागना चाहिए और आहार-बिहार नियमित रखना चाहिए। इसी प्रकार कन्या राशि के सम्बन्ध से संग्रहणी आंव, बद्धकोष्ठ और पेट शूल उत्पन्न होता है। तुला मूत्राशय का विकार मधु मेह सब प्रकार के प्रमेह आदि उत्पन्न करती है। इस राशि से त्वचा सम्बन्धी रोग भी उत्पन्न होते हैं। वृश्चिक के सम्बन्ध से साथी का रोग इसे जल्दी लगता है। बुरे ग्रह का प्रभाव इस पर होने से गुह्येन्द्रिय सम्बन्धी रोग होते हैं। धन में पाप ग्रह का प्रभाव होने से जांघों में खून के विकार होते हैं। मकर राशि पर बुरा प्रभाव होने से सर्दी का विकार रक्ताभिषरण सम्बन्धी दोष संधि वात, बद्धकोष्ठ का त्वचा रोग उत्पन्न होते हैं। कुम्भ में पाप ग्रह हो तो घुटना पैर मज्जा तंतु आदि पर प्रभाव डालता है। यह नेत्र विकार और रक्त दोष भी उत्पन्न करता है। मीन राशि पर पाप ग्रह का प्रभाव हो तो आंत के रोग, संधिवात ठंड के विकार, पेट या दर्द भी उत्पन्न होते हैं।

ऊपर जो एक राशि के या भाव के अंग बतलाये हैं उसमें १ से १५° तक दाहिना भाग अंग का समझना और उपरान्त ३०° तक वांया भाग समझना। जब इन अंगों में दाहिने या बायें से किसी भाग पर ग्रह प्रभाव डालेगा. यह जानना है तो उस राशि के अंशों के २ भाग कर दो, आधा भाग पूर्वार्द्ध को दाहिना और उत्तरार्द्ध को वाम भाग समझना।

अध्याय २४

राशि गुण-धर्म

प्रत्येक राशियों के पृथक्-पृथक् गुण और धर्म हैं। ये राशियाँ सम हैं या विषम, स्त्री हैं या पुरुष हैं, इनमें कौन तत्व की प्रधानता है, अल्प सन्तान या अधिक सन्तान देती है या वन्ध्या राशि हैं। स्वभाव क्रूर है या सौम्य है। इसका प्रभाव किस दिशा में होता है और वात पित्त कफ सम्बन्ध से इसकी प्रकृति कैसी है, ब्राह्मण आदि कौन जाति की यह सूचक है। इसका रंग क्या है, जाति कैसी है, किस समय वह राशि बलवान रहती है और जल थल वन आदि में कहाँ विचरने वालों पर प्रभाव रखती है या उनमें से किस प्रकार के लोगों से इसका सम्बन्ध है यह सब राशियों के गुण धर्म जानने से प्रगट होता है।

इसका उपयोग आगे बहुत पड़ेगा, जैसे अग्नि और वायु वाली राशियों की आपस में मित्रता होती है। भूमि और जल वाली राशियों की मित्रता होती है, परन्तु औरों की आपस में मित्रता नहीं रहेगी। पुरुष राशियों की पुरुष से, स्त्री राशियों की स्त्री राशि वालों से मित्रता होगी। पंचम स्थान सन्तान सूचक है, उसमें मीन राशि हो तो यह मीन राशि बहुप्रसव होने से अधिक सन्तान होगी। यदि उस पर शुभ ग्रह की या इसके भाव स्वामी की इस पर दृष्टि हो (दृष्टि सम्बन्धी विचार आगे मिलेगा) तो अवश्य बहुत सन्तान होगी। इसी प्रकार प्रत्येक राशियों के सम्बन्ध से जब विचार करने की आवश्यकता होती है तो उन राशियों के गुण-धर्म पर अवश्य विचार करना चाहिये, इसी कारण इनका जानना आवश्यक है।

कोई प्रश्न, वर्ष या जन्म के समय विचारने में इनकी आवश्यकता होती है जैसे क्रूर राशि है तो क्रूर स्वभाव होगा, सौम्यराशि से सौम्य स्वभाव होगा। प्रश्नसमय चरराशि हो तो जिस सम्बन्ध से विचार कर रहे हो वह चलता-फिरता होगा, स्थिर राशि होने से वह स्थिर होगा। यदि उस समय राशि द्विस्वभाव राशि का लग्न हो तो दोनों मिला हुआ फल अर्थात् कभी चलता कभी स्थिर होगा। कौन चोर है, चोर की जाति आदि निर्णय में, राशि की जाति स्त्री है या पुरुष, ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि व धन कहाँ होगा, कर्क राशि है तो जल समीप होगा इत्यादि बातों के विचारने में यह सहायक होता है। इस कारण राशियों का गुण-धर्म चक्र आगे दिया है।

राशि गुण धर्म चक्र—

	राशि गुण धर्म	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धन	मकर	कुम्भ	मीन
१	सम विषम	विषम	सम	विषम	सम	विषम	सम	विषम	सम	विषम	सम	विषम	सम
२	पुरुष स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री
३	चर स्थिर द्विस्वभाव	चर	स्थिर	द्विस्वभाव	चर	स्थिर	द्विस्व०	चर	स्थिर	द्विस्व०	चर	स्थिर	द्विस्व०
४	तत्व	अग्नि	पृथ्वी	वायु	जल	अग्नि	पृथ्वी	वायु	जल	अ०	पृ०	वा०	जल
५	अल्प बहु प्रसव (स्त्री संग)	अल्प या वन्ध्या	मध्यम	मध्यम	बहु	अल्प या वन्ध्या	अल्प	अल्प	बहु	अल्प	अल्प	मध्यम	बहु
६	क्रूर सौम्य स्वभाव	क्रूर	सौम्य	क्रूर	सौम्य	क्रूर	सौम्य	क्रूर	सौम्य	क्रूर	सौम्य	क्रूर	सौम्य
७	दिशा	पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर	पूर्व	द०	प०	उ०	पू०	द०	प०	उ०
८	प्रकृति	पित्त	वात	त्रिधातु	कफ	पित्त	वात	त्रिधातु	कफ	पित्त	वात	त्रि०	कफ
९	जाति	क्षत्रिय	वैश्य	शूद्र	ब्राह्मण	क्ष०	वै०	शूद्र	ब्रा०	क्ष०	वै०	शू०	ब्रा०
१०	रङ्ग	पाटल रक्तपीत	श्वेत	हरा तोतेसरीखा	श्वेत पाटल	पूर्वार्द्धपीला उत्तरार्द्ध धूम्र	पांडु	चित्र	श्वेत	सुवर्णसम कांति	पिंगल	विचित्र	पिंगल भूरा
११	कांति (शरीर)	रूक्ष	रूक्ष	स्निग्ध	स्नि०	रू०	रू०	स्नि०	स्नि०	रू०	रू०	स्नि०	स्नि०
१२	कौन समय बली	दिन बली	रात्रि बली	दिन	रात्रि	दिन	रात्रि	दिन	रात्रि	दिन	रात्रि	दिन	रात्रि
१३	विचरण स्थान	पर्वत वन	सरल भूमि	वन	जलचारी	पर्वत	सरल भूमि	वन	जल	पर्वत	भूमि	वन	जल
१४	शब्द	अति	अति	दीर्घ	हीन	दीर्घ	अर्द्ध	हीन	हीन	अति	अति	खण्ड	हीन
१५	पाद	चतुष्पद	चतुष्पद	द्विपद	अपद	चतुष्पद	द्विपद	द्विपद	बहु.	द्विपद	चतुष्पद	अपद	अपद
१६	देह कृश पुष्ट	दृढ़	दृढ़	मृदु	मृदु	मृदु	कृश	दृढ़	कृश	दृढ़	दृढ़	दृढ़	दृढ़
१७	उदय	पृष्ठोदय	पृष्ठो०	शीर्षोदय	पृष्ठोदय	शीर्षोदय	शी.	शी.	शी.	पृ.	पृ.	शी.	उभयोदय
१८	चतुष्पद आदि	चौपाया	चौ.	द्विपद (पु.)	कीटक	चौ.	पुरुष	पुरुष	कीटक	पूर्व पु. उ. चौ.	पूर्व की. उ. जलचर	जलचर	जलचर

राशियों के भिन्न-भिन्न नाम

कभी-कभी राशियों के चालू नाम के अतिरिक्त और भी नाम ज्योतिष ग्रन्थों में उपयोग में आते हैं, उन्हें भी जान लेना चाहिए।

१ मेष—अज, वस्त, प्रथम, क्रिय।
२ वृष—उक्षा, गौ, ताबुरि, शुक्रभ।
३ मिथुन—बौध, नृयुग्म, जितुम, तृतीय।
४ कर्क—चांद्र, कुलीर, चतुर्थ।
५ सिंह—कंठीरव, लेप।
६ कन्या—पाथोन, षष्ठी, अबला, तन्वी।
७ तुला—जूक, वणिक, सप्तम, तौलि।
८ वृश्चिक—कौर्प्य, अष्टम, कौज, अलि।
९ धन—जैव, धनु, तौक्षिक, चाप।
१० मकर—आकेकर, दशम, चक्र।
११ कुंभ—हृद्रोग, घट।
१२ मीन—रिष्फ, झष, अन्तिम।

अध्याय २५

ग्रह विचार

भाव फल विचार करने के लिए आवश्यक बातें।

किसी भाव का फल जानने के लिए इन बातों के विचार करने की पहिले बड़ी आवश्यकता होती है।

१—ग्रह शुभ है या पाप ग्रह।
२—उस भाव का स्वामी कौन है।
३—भाव-स्वामी पाप ग्रह है या शुभ ग्रह है।
४—उस भाव पर कौन-कौन शुभ या पाप ग्रह की दृष्टि है।
५—उस भाव का स्वामी और उस भाव में स्थित ग्रह इन दोनों की मैत्री।
६—उस भाव में स्थित ग्रह उच्चबल (ऊँचाबल) या नीचबल (नीचाबल) का है।
७—वह अपने घर में है (स्वगृही) या मूल त्रिकोण में है।

८—उस ग्रह के गुण धर्म क्या हैं ।

इत्यादि बातें विचार कर ग्रह फल कहना पड़ता है, इस कारण इन सबको आगे समझायेंगे ।

ग्रहों का शुभत्व पापत्व, स्वगृह (अपना घर) या भाव स्वामी विचार ग्रहों की उच्च नीच मूल त्रिकोण राशियाँ, ग्रहों की मैत्री, ग्रहों की दृष्टि, ग्रहों के गुण-धर्म आदि आवश्यक बातें प्रत्येक ज्योतिषी को स्मरण रखनी चाहिए, विना इसके जाने काम नहीं चलता ।

(१) ग्रह का शुभाशुभत्व विचार

ग्रह ३ प्रकार के हैं (१ शुभग्रह (२) पाप ग्रह या क्रूर ग्रह (अशुभ ग्रह) और (३) मिश्रग्रह ।

१ शुभ ग्रह benefic–गुरु और शुक्र सदैव शुभ ग्रह समझे जाते हैं ।

२ पाप ग्रह melefic–रवि, मंगल, शनि, राहु, केतु, हर्शल और नेपच्यून । ये अशुभ ग्रह हैं इस कारण इनको पाप या क्रूर (दुष्ट) ग्रह कहते हैं । ये सदैव पाप ग्रह ही समझे जाते हैं ।

३ मिश्र ग्रह mixed—बुध और चन्द्र ये संयोगवश कभी पाप ग्रह कभी शुभ ग्रह समझे जाते हैं, इस कारण इनको मिश्र ग्रह कहते हैं । वास्तव में ये दोनों शुभ ग्रह ही हैं, परन्तु जब ये पाप ग्रह के साथ होते हैं तो पाप ग्रह और अकेले या शुभ ग्रह के साथ रहते हैं तो शुभ ग्रह कहलाते हैं । इनके सम्बन्ध में विशेष विचार नीचे दिया है ।

(१) बुध–यह शुभ ग्रह से युक्त (साथ) या दृष्ट (शुभ ग्रह की दृष्टि उस पर हो) या शुभग्रह से किसी प्रकार सम्बन्ध हो तो शुभ फल देता है । पाप ग्रह से युक्त या दृष्ट हो तो अशुभ फल देता है । बुध अकेला हो और अस्तंगत (सूर्य के साथ) न हो तो शुभ फल देता है ।

(२) चन्द्र–शुक्ल पक्ष की अष्टमी से कृष्ण पक्ष की अष्टमी तक शुभ है, इसके उपरान्त पाप ग्रह समझा जाता है । किसी के मत से चन्द्र शुक्ल प्रतिपदा से दशमी तक मध्यम बलवान होता है, परन्तु उस पर शुभ ग्रह की दृष्टि होने से बलिष्ठ होता है । शुक्ल दशमी से कृष्ण पक्ष की पंचमी तक पूर्ण बलवान होता है । कृष्ण पक्ष की पञ्चमी के आगे १० दिन तक बलहीन होता है ।

(२) ग्रहों का स्थान या स्वगृह Planetary ownership or Lord of houses स्वगृह=अपना घर । स्वक्षेत्र अपना स्थान । गृह=घर ।

यद्यपि ग्रह सूर्य के आस पास घूमते हैं, परन्तु सुविधा के लिए पृथ्वी के आसपास आकाश में चन्द्र, सूर्य, बुध, शुक्र, मंगल, गुरु, शनि क्रमानुसार घूमते हुए मान लिए गए हैं । देखो चित्र संख्या ५ ।

इन ग्रहों में सूर्य और चन्द्रमा का एक-एक अपना (निजी) घर है, और ग्रहों के

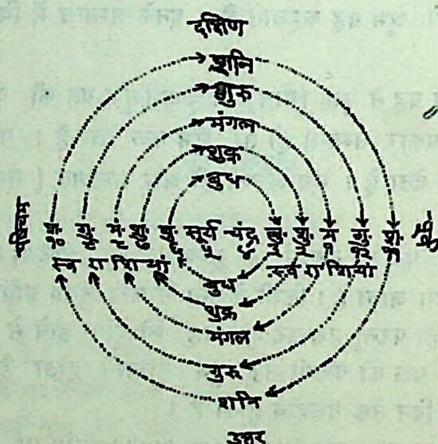
२-२ घर राशि चक्र में हैं। इन घरों को स्वगृह कहते हैं। कौन कौन राशि किस प्रकार किस ग्रह के वांटे में आई आगे समझाते हैं।

पृथ्वी के सबसे निकट ग्रह चन्द्र है; इसका प्रभाव सीधे मन पर अर्थात् हृदय पर पड़ता है। राशि चक्र में कालांग विषय में बता चुके हैं कि हृदय का द्योतक राशि कर्क है, इस कारण चन्द्र का स्वस्थान कर्क राशि मानी गयी है।

चन्द्र के आगे सबसे शक्तिशाली ग्रह सूर्य है। सूर्य का प्रभाव आत्मा पर पड़ता है और सिंह राशि आत्मा का सूचक है, इस कारण सिंह राशि सूर्य का स्वस्थान माना गया है। कर्क के उपरान्त सूर्य की सिंह राशि आती है। सूर्य के पास बुध है इस कारण उनके दोनों बाजुओं की राशि मिथुन और कन्या इन दोनों का स्वामी बुध हुआ अर्थात् बुध को ये २ घर मिले। यह सूर्य के पास होने से बुध को युवराज कहते हैं।

बुध के उपरान्त शुक्र ग्रह है, इसे दोनों ओर की २ राशियाँ वृष और तुला मिलीं, इस कारण शुक्र इन २ राशियों का स्वामी हुआ। शुक्र के आगे मंगल है, इसे आगे की २ राशियाँ मेष और वृश्चिक मिलीं इस प्रकार इन २ राशियों का स्वामी मंगल हुआ।

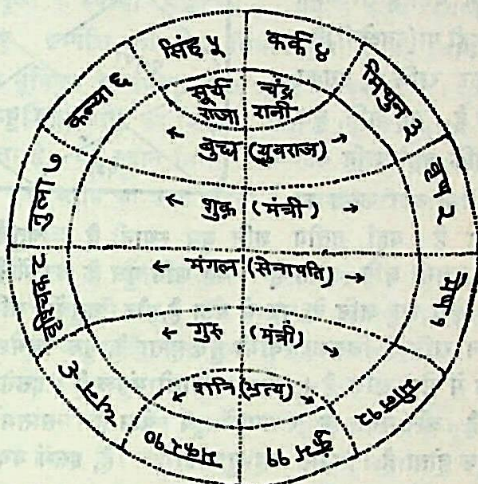
इसके आगे गुरु है उसे आगे की २ राशियां मीन और धन मिलीं, इस प्रकार गुरु इन २ राशियों का स्वामी हुआ।



चित्र–७१ ग्रहों के घूमने का क्रम और स्वराशि

गुरु के आगे आकाश में छोर पर शनि है, इसे आजू-बाजू की शेष २ राशियाँ कुंभ और मकर मिलीं। चित्र संख्या ७१ और ७२ देखने से ये सब समझ में आ जायगा कि किस क्रम से कौन २ राशियों का स्वामी कौन ग्रह हुआ। चित्र संख्या ७१ में बताया है कि ग्रह किस प्रकार घूम रहे हैं और इनको २-२ राशियाँ किस

प्रकार से मिली हैं। चित्र ७२ में स्पष्ट रूप से समझ में आ जायगा कि ग्रहों को किस प्रकार राशियाँ मिली हैं।



चित्र–७२ ग्रहों की स्व राशि

इस प्रकार ये राशियाँ, इन ग्रहों के स्वस्थान हुए और इन्हीं स्थानों के स्वामी ये ग्रह हुए। स्वगृह को स्वक्षेत्र भी कहते हैं। जो ग्रह अपने स्थान में होता है वह स्वगृही या स्वक्षेत्री कहलाता है।

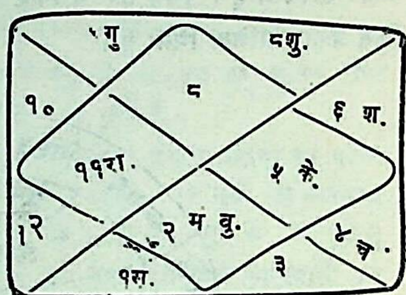
ग्रहों के स्वस्थान या स्वक्षेत्र

गृह स्वामी	सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु	हर्शल	नेपच्यून
स्वस्थान			१	३	९	२	१०	६	१२	११	१२
की राशियाँ	५	४	८	६	१२	७	११				

भावस्वामी या गृहस्वामी Sign ruled by the planet

जिस भाव अर्थात् जिस स्थान में ये राशियाँ रहती हैं उस भाव या स्थान के जो ग्रह स्वामी होते हैं वे ऊपर चक्र में बताये हैं। ये ग्रह स्वामी कहलाते है, इनको गृह स्वामी भी कहते हैं। गृहस्वामी का उदाहरण देकर समझाते हैं।

यहाँ लग्न वृश्चिक है तो वृश्चिक राशि का स्वामी मंगल होता है, मंगल वृषराशि में बैठा है, वृष राशि शुक्र का स्व-गृह (घर) है, इसलिए कहेंगे कि लग्नेश मंगल शुक्र के



घर में बैठा है दूसरे भाव में धन राशि है धन का स्वामी गुरु होता है। यह गुरु अपने ही घर में बैठा है तो कहेंगे द्वितीयेश गुरु स्व-गृही या(स्वक्षेत्री)है। तीसरे भाव में मकर राशि है, इसका स्वामी शनि होता है। यह शनि, बुध के घर में है, क्योंकि जहाँ शनि बैठा है वहाँ कन्या राशि है और कन्या का स्वामी बुध होता है। यहाँ तृतीय शनि बुध स्थानी है। चतुर्थ भाव में कुम्भ राशि है जिसका स्वामी शनि होता है। यह शनि बुध के घर में है। चतुर्थ भाव में राहु बैठा है तो कहेंगे राहु शनि के घर में बैठा है,और चतुर्थेश शनि बुध के घर में है। पंचम में मीन राशि है जिसका स्वामी गुरु होता है, गुरु पंचमेश होकर धन-भाव में बैठा है। षष्ठ में मेष राशि है। इसका स्वामी मंगल है। इससे कहेंगे कि षष्ठेश मंगल सप्तम में है और मंगल के स्थान में सूर्य बैठा है। सप्तम में वृष राशि है जिसका स्वामी शुक्र होता है। इससे यह शुक्र का घर है, इसमें मगल और बुध बैठे हैं। यहाँ बुध, पाप ग्रह मंगल के साथ होने से पाप ग्रह माना जायगा। सप्तमेश शुक्र द्वादश भाव में स्वस्थानी (अपने घर का) है। अष्टम में मिथुन राशि है यह बुध का घर है, क्योंकि मिथुन का स्वामी बुध होता है। इस घर का स्वामी बुध मंगल के साथ, शुक्र के घर में बैठा है। नवम भाव में चन्द्र स्वगृही है, क्योंकि कर्क राशि यहाँ है जिसका स्वामी चन्द्र होता है। दशम भाव में सिंहराशि है जिसका स्वामी सूर्य षष्ठ भाव में मंगल के घर में बैठा है। दशम भाव में केतु है, यह सूर्य के घर में बैठा है। एकादश स्थान में बुध स्थानी (के स्थान में) शनि है, क्योंकि यहाँ कन्या राशि है जिसका स्वामी बुध होता है। द्वादश भाव में स्वस्थानी शुक्र है यहाँ तुला राशि है जो शुक्र का ही घर है।

स्वामित्व का और भी विचार

कुंडली में मुख्यतः चन्द्र सूर्य और लग्न से फल के विचार में ध्यान दिया जाता है। द्वितीय स्थान से नेत्र ज्योति, कुटुम्ब और विद्या का भी विचार होता है। तीसरे स्थान से कंठ, वस्त्र, कर्ण, आभूषण, चतुर्थ से वाहन भू सम्पत्ति आदि, पंचम से ईश्वर प्रेम विद्या मंत्र आदि, षष्ठ से भृत्य, व्यसन, रोग आदि का विचार होता है। इन सब स्थानों से किस-किस बात का विचार होता है आगे बताया जायगा, यहां तो इससे ग्रहों का प्रभत्व विचारना है, इस कारण संक्षेप में थोड़ा विचार किया गया है।

सब ग्रहों से सूर्य अधिक प्रभावशाली है, इस कारण उसे राजा कहा है। राजा सूर्य के स्थान सिंह से दूसरी राशि कन्या है। दूसरे स्थान से कुटुम्ब विद्या आदि का

विचार होता है। इस कारण सूर्य के युवराज बुध को यह स्थान (कन्या राशि) मिला। सूर्य से तीसरा तुला है, तीसरे से कण्ठ स्वर और वस्त्रादि का विचार होता है। यह सांसारिक सुखों का स्थान होने से दैत्यगुरु शुक्र को यह स्थान मिला, क्योंकि शुक्र सांसारिक सुखों के स्वामी माने गये हैं। सूर्य से चतुर्थ स्थान में वृश्चिक है। चतुर्थ से वाहन भू सम्पत्ति आदि का विचार होता है, वह स्थान सेनापति मंगल को मिला। मंगल भूमिपुत्र है, जमीन वाहन आदि का स्वामी है। सूर्य से पंचम धन है जिससे ईश्वर प्रेम विद्या आदि का विचार होता है, इससे गुरु को जो विद्या ईश्वर प्रेम आदि का दाता है, यह स्थान मिला। अन्त में सूर्य से षष्ठ स्थान में मकर है। षष्ठ स्थान रोग दुःख आदि का प्रगट करता हैं, इसीसे रोग दुःख आदि के स्वामी शनि को यह स्थान मिला।

इस प्रकार सूर्य राजा है जिसके समीप रानी चन्द्र है। सूर्य की रानी चन्द्र को इसलिए कहा है कि चन्द्र स्त्री ग्रह है और पृथ्वी के समीप होने से इसका सबसे बड़ा प्रभाव पड़ता है। सूर्य आत्मा है, चन्द्र मन है इस कारण सम्बन्ध होने से चन्द्र को रानी कहा है। इनके समीप युवराज बुध है। युवराज के बाजू से मंत्री शुक्र, फिर इसके बाद सेनापति मंगल को स्थान मिला है। इसके बाद मंत्री गुरु है और अन्त में शनि दास को स्थान मिला है। यही चित्र संख्या ७२ में बताया है।

●

अध्याय २६

ग्रह की उच्च नीच राशियाँ Exaltation and Debilitation or fall

जिस प्रकार प्रत्येक ग्रह का स्वस्थान होता है उसी प्रकार प्रत्येक ग्रहों का एक और विशेष महत्व का स्थान माना हुआ है। यह अधिकार ग्रह की उच्चता सूचित करता है। कोई भारी अधिकार प्राप्त मनुष्य अपने अधिकार का पूर्ण उपयोग कर किसी को विशेष लाभ पहुँचा सकता है, परन्तु वह अधिकार चले जाने पर किसी को भी कोई लाभ नहीं पहुँचा सकता।

इसी प्रकार ग्रह के अधिकार सम्बन्ध का विचार अर्थात् उच्चता का विचार इससे होता है। इस उच्चता की पूर्ण अवधि को अर्थात् पूर्ण अधिकार होने को—deep exaltation कहते हैं। अधिकार हीन हो जाने पर—नीच कहलाता है। उस नीचता की पूर्ण अवधि को परम नीच deep debilitation or deep fall कहते हैं। परम नीच ग्रह होने पर लाभ तो कुछ नहीं कर सकता, परन्तु नीचतापूर्ण कार्य करने की ओर उसका झुकाव हो जाता है।

परम नीच की अवधि पूर्ण होने पर ग्रह क्रमश: उच्चता की ओर बढ़ने लग जाता है और अन्त में परम उच्च पद को प्राप्त होता है। ऐसे ग्रह की स्थिति को आरोही Ascending कहते हैं।

ग्रह उच्चता की पूर्ण अवधि प्राप्त कर फिर क्रमश: नीचता की ओर जाने लगता है ऐसे ग्रह को अवरोही Descending कहते हैं। क्रमश: घटते-घटते अन्त में ग्रह पुन: नीचता की पूर्ण अवधि को प्राप्त होता है।

परम उच्च से परम नीच का अन्तर सदा ६ राशि (१८०°) रहता है। उच्च का अधिकार स्वगृह की अपेक्षा बड़ा होता है। जैसे मेष यह अग्नि तत्व की राशि है, मंगल भी अग्नि तत्व का ग्रह है, मंगल का स्वगृह भी अग्नि तत्व का है रवि मेष राशि में रहता है तो अग्नि तत्व में आने से अधिक प्रबल हो जाता है, इस कारण मेष राशि रवि की उच्चता की राशि मानी गई है। रवि मेष राशि का होगा तो कहेंगे कि रवि उच्च का है। उच्चता की अन्तिम अवधि (सूर्य की) मेष राशि के १०° तक है। मेष के १०° के भीतर जब रवि होता है तो कहेंगे कि रवि परम उच्च का है। इसके उपरान्त रवि नीचे की ओर जाने लगता है।

मेष से ६ राशि उपरान्त तुला है, इस पर सूर्य आयगा तो कहेंगे कि नीच का सूर्य है। तुला के १०° के भीतर सूर्य आने से कहेंगे सूर्य परम नीच का है। तुला के १०° उपरान्त रवि उच्च की ओर जाने लगता है।

इसी प्रकार प्रत्येक ग्रहों के सम्बन्ध में समझना। प्रत्येक ग्रहों की उच्च-नीच राशियां पृथक्-पृथक् हैं। उच्च और नीच के बीच सदा ६ राशि का अन्तर रहता है।

ग्रह की उच्च नीच राशियां

ग्रह	सूर्य	चंद्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु
उच्च राशि	मेष	वृष	मकर	कन्या	कर्क	मीन	तुला	वृष	वृश्चिक
परम उच्च अंश	१० रा	३ रा	२८	१५	५	२७	२०	२०	२०
परमोच्च राशि अंश	०-१०°	१-३°	९-२८°	५-१५°	३-५°	११-२७°	६-२०°	१-२०°	७-२०°
नीच राशि	तुला	वृश्चिक	कर्क	मीन	मकर	कन्या	मेष	वृश्चिक	वृष
परम नीच अंश	१० रा	३	२८	१५	५	२७	२०	२०	२०
परम नीच राशि अंश	६-१०°	७-३°	३-२८°	११-१५°	९-५°	५-२७°	०-२०°	७-२०°	१-२०°

हर्शल—यह ग्रह वायु राशि का है। मिथुन तुला में अच्छा माना जाता है। कुंभ राशि में विशेष कर बलवान होता है।

नेपच्यून–यह ग्रह जल राशि का है। कर्क वृश्चिक और मीन में बलवान होता है। जल राशि मीन में अत्यन्त बलवान होता है।

राहु केतु–कोई राहु का उच्च धन और केतु का उच्च वृष भी मानते हैं।

उच्च नीच–उच्च नीच राशियाँ ग्रहों के मन्दोच्च से सम्बन्ध रखती हैं जिनका उपयोग सिद्धांत ग्रंथ में दिया है।

इसके अतिरिक्त ग्रहों का उच्च-नीच विचार दूसरे प्रकार से भी होता है। सूर्य चन्द्र आदि ग्रहों का पृथ्वी से अन्तर सदैव समान नहीं रहता। कभी-कभी ग्रह पृथ्वी के समीप आ जाते हैं कभी दूर चले जाते हैं, क्योंकि सब ग्रह अण्डाकार मार्ग से सूर्य के आस-पास परिक्रमा कर रहे हैं।

सूर्य चंद्र का विम्ब साधारण प्रकार से देखने में एक समान दिखता है, परन्तु ध्यान से देखोगे तो जहां पृथ्वी की दूरी समीप या अधिक हो जाती है तो विम्व के आकार में कुछ अन्तर प्रगट होने लगता है, कभी कुछ बड़ा कभी छोटा प्रगट होता हैं। पृथ्वी की कक्षा से जो विन्दु समीपवर्ती ज्योति से वहुत दूर है उसे उच्च कहते हैं और जो पास है उसे नीच कहते हैं। सूर्य दिसम्बर के अन्त में अपनी कक्षा में नीच में होता है और जून के अन्त में उच्च का होता है। सूर्य चंद्र उच्च होते हैं तो पृथ्वी से सबसे लम्बी दूरी पर होते हैं और उस समय उसका बिम्व छोटा दिखता है। जब सूर्य चंद्र पृथ्वी के पास होते हैं तब नीच होता है उस समय विम्व बड़ा दिखता है, ऐसे समय में ग्रहण हुआ तो खग्रास ग्रहण होता है। परन्तु यहाँ ऊपर जो ग्रहों की परम उच्च राशि अंश और परम नीच राशि अंश बताये गए हैं वे स्थिर कर लिए गए हैं और उनमें कभी परिवर्तन नहीं होता। इस कारण ऊपर बताये चक्र के अनुसार ही सदा उच्च नीच ग्रहण करना।

(३) ग्रहों का मूल त्रिकोग

जिस प्रकार ग्रहों का विशेप अधिकार उच्च के सम्बन्ध में पहिले बता चुके हैं उसी प्रकार एक और ग्रह का अधिकार है उसे मूल त्रिकोण कहते हैं। यह अधिकार उच्च से कुछ कम होता है। नीचे चक्र में बताया है कि किस राशि के कितने अंश पर होने से ग्रह मूल त्रिकोण में होता है। कुछ ग्रह की राशिग्राँ स्वक्षेत्र भी हैं, मूल त्रिकोण भी हैं और उच्च भी हैं, इसका स्पष्टीकरण करने के लिए यह भी चक्र मे बतलाया है कि कितने अंश तक मूल त्रिकोण और कितने अंश तक उच्च या स्वक्षेत्र है। स्वक्षेत्र अधिकार से मूल त्रिकोण अधिकार बड़ा होता है।

साधारग प्रकार से ग्रहों के मूल त्रिकोण की राशि—

ग्रह	सूर्य	चंद्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु
राशि	सिंह	वृप	मेष	कन्या	धन	तुला	कुंभ	कुंभ	सिंह

मूल त्रिकोण चक्र

ग्रह	सूर्य	चंद्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
मूल त्रिकोण राशि	सिंह	वृष	मेष	कन्या	धन	तुला	कुंभ
उच्च के अंश	×	३	×	१५	×	×	×
मूल त्रिकोण के अंश	२०	२७	१२	१०	१०	१५	२०
स्वक्षेत्र अंश	१०	×	१८	५	२०	१५	१०

मूल त्रिकोण के अंशों में किसी-किसी का मतभेद है, परन्तु राशियों के बारे में कोई मतभेद नहीं है। यहाँ वृहत्पाराशरी मत से मूल त्रिकोण के अंश दिए हैं।

चक्र का स्पष्टीकरण

सूर्य सिंह राशि में २०° तक मूल त्रि० होता है, शेष १०° उसके स्वक्षेत्र का है। चंद्र वृष के ३° तक उच्च उपरान्त २७° तक मूल त्रि० होगा। मंगल मेष के १२° तक मूल त्रिकोण, शेष स्वक्षेत्र होगा। बुध कन्या के १५° तक उच्च, उपरान्त १०° तक मूल त्रिकोण, शेष ५° स्वक्षेत्र। गुरु धन के १०° तक मूल त्रिकोण, उपरान्त स्वक्षेत्र होगा। शुक्र तुला के १५° तक मूल त्रिकोण, उपरान्त स्वक्षेत्र होगा। शनि कुंभ के २०° तक मूल त्रिकोण, उपरान्त स्वक्षेत्र होगा।

मूल त्रिकोण के विचार से ही ग्रह की नैसर्गिक मैत्री स्थिर हुई है, यह आगे बताया जायेगा।

अध्याय २७

ग्रहमैत्री Friendship

कुण्डली में ग्रहों की मैत्री का विचार होता है। यदि ग्रह अपने घर या मित्र के घर में होता है तो बलवान होता है। शत्रु के घर में बलहीन हो जाता है। यह सब विचारने के लिए देखना पड़ता है कि ग्रह जिस स्थान (घर) में बैठा है वह उसका

मित्र, शत्रु या सम है, इस कारण ग्रहों की मैत्री जानना आवश्यक है। सम का अर्थ है कि वह न तो मित्र है और न शत्रु है, उदासीन ग्रह है।

मैत्री दो प्रकार की है—(१) नैसर्गिक मैत्री (२) तात्कालिक मैत्री। नीचे नैसर्गिक मैत्री चक्र दिया है, उससे जान सकते हैं कि कौन ग्रह का कौन मित्र या शत्रु है।

नैसर्गिक मैत्री चक्र Natural friendship—

ग्रह	मित्र friend	शत्रु enemy	सम neutral
१ रवि के	चंद्र, मंगल, गुरु	शनि, शुक्र, राहु	बुध
२ चंद्र ,,	रवि, बुध	राहु	मंगल, गुरु, शुक्र, शनि
३ मंगल ,,	रवि, चंद्र, गुरु	बुध, राहु	शुक्र, शनि
४ बुध ,,	रवि शुक्र, राहु	चंद्र	मंगल, गुरु, शनि
५ गुरु ,,	रवि चंद्र, मंगल	बुध, शुक्र	शनि, राहु
६ शुक्र ,,	बुध, शनि, राहु	रवि, चंद्र	मंगल, गुरु
७ शनि ,,	शुक्र, बुध, राहु	रवि, चंद्र, मंगल	गुरु
८ राहु ,,	बुध, शुक्र, शनि	रवि, चंद्र, मंगल	गुरु

स्पष्टीकरण—

रवि का मित्र चंद्र, मंगल, गुरु है, जब रवि, चंद्र की राशि (कर्क) या मंगल की राशि (मेष, वृश्चिक) या गुरु की राशि (धन, मीन) में से किसी राशि में हो तो कहेंगे रवि मित्रगृही है। सूर्य का शत्रु शनि, शुक्र है, जब रवि इनके घर में अर्थात् मकर, कुम्भ (शनि की राशि) या तुला, वृष (शुक्र गृह) में होगा तो कहेंगे सूर्य शत्रु क्षेत्री है या शत्रुगृही है। जब बुध के गृह मिथुन या कन्या राशि में से किसी में सूर्य होगा तो कहेंगे सूर्य समक्षेत्री है। इसी प्रकार दूसरे ग्रहों की भी मैत्री का विचार चक्र के अनुसार होता है। इस मैत्री में कोई परिवर्तन नहीं होता। इस कारण इसे नैसर्गिक मैत्री कहते हैं। यह मैत्री स्वाभाविक है।

नैसर्गिक मैत्री में विशेष ध्यान देने योग्य बात यह है कि कई ग्रहों की परस्पर मैत्री तो ठीक है (जैसे रवि का मित्र गुरु है तो गुरु का भी मित्र रवि है), परन्तु सब ग्रहों का ऐसा सम्बन्ध नहीं है। कोई ग्रह किसी से मैत्री तो मानता है, परन्तु दूसरा ग्रह उससे शत्रुता रखता है। जैसे चंद्र, बुध से मैत्री रखता है, परन्तु बुध, चंद्र से शत्रुता रखता है। इसी प्रकार परस्पर मैत्री में कहीं-कहीं विरोध पड़ता है, वह नीचे के चक्र में समझाया है जिसका ध्यान रखना चाहिए।

मैत्री सम्बन्ध सूचक चक्र

जहाँ परस्पर मैत्री में कोई अन्तर नहीं है

ग्रह का	मित्र	शत्रु	सम
१ रवि का	चं. मं. गु.	श. शु. रा.	–
२ चंद्र का	रवि	राहु	–
३ मंगल का	र. गु.	राहु	शुक्र
४ वुध का	शु. रा.	—	—
५ गुरु का	र. मं.	—	श. रा.
६ शुक्र का	बु. श. रा.	रवि	मं.
७ शनि का	शु. रा.	रवि	गुरु
८ राहु का	बु. शु. श.	चं. मं. र.	गुरु

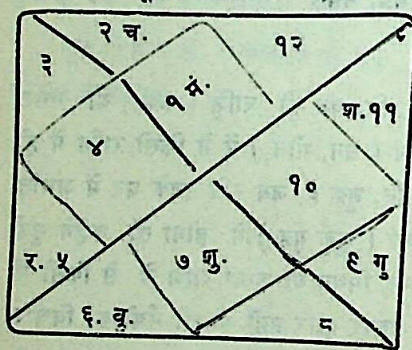
जहाँ मैत्री में भिन्नता है ।

ग्रह का	मित्र	शत्रु	सम
१ रवि का	—	—	वुध
२ चंद्र का	वुध	—	मं.गु.शु.श.
३ मंगल का	चंद्र	वुध	शनि
४ वुध का	र. चं.	चन्द्र	मं. गु. श.
५ गुरु का	चन्द्र	वु. शु.	—
६ शुक्र का	—	चन्द्र	गुरु
७ शनि का	वुध	चं. मं.	—
८ राहु का	—	—	—

नैसर्गिक मैत्री की उत्पत्ति

ग्रहों की नैसर्गिक मैत्री मूल त्रिकोण के सम्वन्ध से स्थापित हुई है । मूल त्रिकोण

मूल त्रिकोण चक्र



के स्थान से २-१२,५-९,४-८ स्थान पर और उच्च के स्थान पर उस ग्रह का अच्छा प्रभाव पड़ता है, इस कारण उस स्थान के स्वामी से मित्रता होती है और शेष स्थान पर विरुद्ध प्रभाव पड़ता है । इस कारण शेष स्थान के स्वामी से शत्रुता होती है । यदि एक प्रकार से मित्र भाव और दूसरे प्रकार से शत्रुभाव आवे तो उसे सम समझना । जहाँ दोनों प्रकार से मित्र-भाव आवे वहाँ मित्र समझना नीचे चक्र में यही समझाया गया है ।

रवि, चन्द्र=मित्र १ वार=मित्र, शेष ग्रह { मित्र + मित्र=मित्र; मित्र + शत्रु=सम }

चिह्न + = २ वार मित्र = मित्र

× = १ वार ,, = ,,

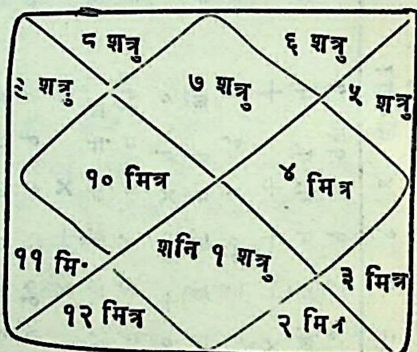
० = मित्र + शत्रु=सम

क्रम	ग्रह	मूल त्रिकोण	स्थान	मित्र स्थान २	१२	५	९	४	८	उच्च स्थान	शत्रु स्थान ३	६	७	१०	११	मित्र + ×	सम ०	शत्रु (शेष)
१	सूर्य	सिंह	राशि	६	४	९	१	८	१२	१	७	१०	११	२	३	गु. मं.	बु.	शु.
			स्वामी	बु.	चं.	गु.	मं.	मं.	गु.	मं.	शु.	श.	श.	शु	बु.	चं.		श.
				०	×	+	+	+	+	+						०		
२	चन्द्र	वृष	राशि	३	१	६	१०	५	९	२	४	७	८	११	१२		मं. गु.	
			स्वामी	बु.	मं.	बु.	श.	सू.	गु.	शु.	चं.	शु.	मं.	श.	गु.	बु. र.	शु. श.	
				×	०	+	०	×	१	०		०	०	०	०			
३	मंगल	मेष	राशि	२	१२	५	९	४	८	११	३	६	७	१०	११	गु.र.	शु. श-	बु.
			स्वामो	शु.	गु.	र.	गु.	चं.	मं.	श	बु.	बु.	शु.	श.	श.	चं.		
				०	+	×	+	×		०			०	०	०			
४	बुध	कन्या	राशि	७	५	१०	२	९	१	६	८	११	१२	३	४	श.र.	मं. गु,	चं.
			स्वामी	शु.	र	श.	शु.	गु.	मं.	बु.	मं.	श.	गु.	बु.	चं.		श.	
				+	×	०	+	०	०		०	०	०					
५	गुरु	धन	राशि	१०	८	१	५	१२	४	४	११	२	३	६	७	मं.र.	श.	बु.
			स्वामी	श.	मं.	मं.	सू.	गु.	चं.	चं.	श.	शु.	बु.	बु.	शु,	चं.		शु.
				०	÷	+	×	०	+	+	०							
६	शुक्र	कुम्भ	राशि	८	६	११	३	१०	२	१२	९	१२	१	४	५	बुध	मं.	सू.
			स्वामी	मं.	बु.	श.	बु.	श.	शु.	गु.	गु.	गु.	मं.	चं.	सू.	शनि	गु.	चं.
				०	+	+	+	÷		+	०	०	०					
७	शनि	कुम्भ	राशि	१२	१०	३	७	२	६	७	१	२	५	८	९	बुध	गु.	र. चं.
			स्वामीं	गु.	श.	बु.	शु.	शु.	बु.	मु.	मं.	च.	सू.	मं.	गु.	शु.		सं.
				०		+	+	+	+	+					०			
८	राहु	कुम्भ	शनि के समान ।															

इस चक्र में मित्र और उच्च स्थान के सम्बन्ध में ध्यान देने योग्य बात यह है कि इन दोनों स्थानों में से किसी स्थान में रवि या चंद्र 1 ही बार आ जावे तो मित्र होते हैं, परन्तु दूसरे ग्रह इन स्थानों में २ बार आवे तब मित्र होते हैं, १ बार आने से सम होते हैं, शेष शत्रु होते हैं। जैसे मंगल का विचारना है, गुरु २ स्थान (१२–६) में आया है तो मित्र हुआ, परन्तु रवि, चंद्र १ ही बार, ५ रवि, ४ चंद्र आने से मित्र हुआ। शुक्र १ बार आया है, इसी प्रकार शनि उच्च में १ ही बार आया है तो शु० श० सम हुए। शेष बुध बचा वह शत्रु हुआ। इसी प्रकार सबकी मैत्री विचारना।

तात्कालिक मैत्री Temporal friendship

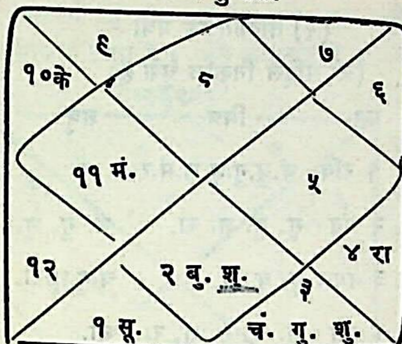
जिस प्रकार कोई किसी का मित्र होने पर भी तात्कालिक परिस्थिति के कारण विरोध या समता का भाव दिखाता है या शत्रु रहने पर भी तात्कालिक अवस्था के अनुसार कभी मित्रता कभी समता दर्शाता है, इसी प्रकार ग्रहों की नैसर्गिक मैत्री रहने पर भी परिस्थिति के अनुसार मैत्री में परिवर्तन हो जाता है इसको तात्कालिक मैत्री कहते हैं, अर्थात् तात्कालिक अवस्था के अनुसार जो मैत्री होती है उसे तात्कालिक मैत्री कहते हैं। मित्र=२, ३, ४ और १२, ११, १० वें स्थान के ग्रह शत्रु=१, ५, ६, ७, ८, और ९ वें स्थान के ग्रह जन्म कुंडली या किसी कुंडली में कोई ग्रह जहाँ पर भी हो उस स्थान को छोड़ कर आगे के ३ स्थान और पीछे के ३ स्थानों में रहने वाले ग्रह उस ग्रह के तात्कालिक मित्र हो जाते हैं। शेष स्थान में रहने वाले ग्रह उसके शत्रु हो जाते हैं।



अर्थात् किसी विशेष स्थान से दूसरे, तीसरे और चौथे स्थान में और दशवें, ग्यारहवें और बारहवें स्थान में रहने वाले ग्रह मित्र हो जाते हैं, शेष स्थान के ग्रह शत्रु होते हैं। जैसे यहाँ पर शनि सप्तम स्थान में है, उससे कौन-कौन स्थान के ग्रह मित्र शत्रु होंगे ऊपर कुण्डली में बताया है।

यहाँ इसको और भी उदाहरण देकर तात्कालिक मैत्री समझाते हैं।

लग्न कुण्डली



(१)सूर्य—सूर्य से दूसरे घर में शनि वुध, तीसरे में गुरु चंद्र शुक्र, चोथे में राहु है, बारहवें में कोई ग्रह नही है, ग्यारहवें स्थान में मंगल और दशवें में केतु है ये सब सूर्य के मित्र हुए। शेष कोई नहीं बचे तो शत्रु कोई नहीं है।

(२) चन्द्र के=रा० बु० श० सू० मित्र हैं, क्योकि राहु दूसरे घर में है, तीसरे चौथे में कोई ग्रह नहीं है। बारहवें श० बु०, ग्यारहवें सूर्य, दशवें कोई ग्रह नहीं है। ये सव मित्र हुए, शेष शत्रु हुए। चंद्र के पहिले घर में जहाँ गुरु शुक्र हैं, आठवें में केतु नवम मंगल है। इस कारण गु० शु० के. और मंगल शत्रु हुए। इसी प्रकार सब का निकालना।

(३) मंगल के=सू० श० बु० के० मित्र हैं, क्योंकि केतु बारहवें, तीसरे सूर्य, चौथे में शनि वुध हैं, दूसरे दशवें और ग्यारहवें स्थान में कोई ग्रह नहीं हैं। शेष ग्रह गुरु चन्द्र शुक्र राहु शत्रु हुए।

(४) बुध के=गु० चं० शु० रा० सू० और मं० मित्र, शेष श० और के० शत्रु हैं।
(५) गुरु के=रा० श० बु० सू० मित्र, शेष चं० शु० मं० और के० शत्रु हैं।
(६) शुक्र के=रा० श० बु० सू० मित्र, शेष गु० चं० मं० और के० शत्रु हैं।
(७) शनि के=गु० चं० शु० रा० सू० मं० मित्र, शेष बुध और केतु शत्रु हैं।
(८) राहु के=गु० चं० शु० श० बु० सू० मित्र, शेष मं० और के० शत्रु हैं।

पंचधा मैत्री Average friendship
पंचधा मैत्री=नैसर्गिक मैत्री+तात्कालिक मैत्री।

मित्र+मित्र=अधि मित्र	शत्रु+शत्रु=अधिशत्रु
मित्र+सम=शत्रु	शत्रु+सम=शत्रु
मित्र+शत्रु सम	शत्रु+मित्र=सम

नैसर्गिक और तात्कालिक मैत्री मिलाकर पंचधा मैत्री होती है। यदि दोनों में मित्र हो तो अधिमित्र, दोनों में शत्रु हो तो अधिशत्रु होते हैं। एक में मित्र दूसरे में शत्रु हो तो सम हो जाता है। एक में मित्र और दूसरे में सम हो तो मित्र और एक में शत्रु और दूसरे में सम हो तो शत्रु होता है।

इसी प्रकार विचार कर पंचधा मैत्री निकालने का उदाहरण नीचे दिया है। पहिले जो तात्कालिक मैत्री निकाले हैं उसी पर से पंचधा मैत्री निकालते हैं।

(१) नैसर्गिक मैत्री
(स्थायी मैत्री)

ग्रह	मित्र	शत्रु	सम
१ रवि	चं. मं. गु'	शु. श.	रा. बु.
२ चन्द्र	र. बु.	रा.	मं.गु.शु.श.
३ मंगल	र. चं. गु.	बु. रा	शु. श.
४ बुध	र. शु. रा.	चं.	मं. गु श.
५ गुरु	र. चं. मं.	बु. शु.	श. रा.
६ शुक्र	बु. श. रा.	र. चं.	मं. गु.
७ शनि	बु. श. रा.	र. चं. मं. गु.	
८ राहु	बु. शु. श.	र. चं. मं गु.	

(२) तात्कालिक मैत्री
(जो पहिले निकाल चुके हैं)

ग्रह	मित्र	शत्रु
१ रवि	चं.बु.गु.शु.श.मं.रा.	×
२ चंद्र	सू. बु. श. रा.	मं. गु. शु.
३ मंगल	सू. बु. श.	चं.गु.शु.रा.
४ बुध	सू. चं. गु. शु. रा.	शा.
५ गुरु	. सू. बु. श. रा.	चं. मं. शु.
६ शुक्र	सू. बु. श. रा.	चं. मं. गु.
७ शनि	सू.च.मं.गु.शु.रा.	बु.
८ राहु	सू.चं.बु.गु.शु.श.	मं.

(३) पंचधा मैत्री (उपर्युक्त दोनों को मिलाकर यहाँ रखा है)

ग्रह	अधिमित्र	मित्र	सम	शत्रु	अधिशत्रु
१ रवि	च० मं० गु०	वु०	श० शु रा०	०	०
२ चंद्र	र० वु०	श०	रा०	मं० गु० शु०	०
३ मंगल	र०	श०	चं० गु० वु०	शु०	०
४ वुध	र० शु० रा०	मं० गु०	चं०	श०	०
५ गुरु	र०	श० रा०	चं० मं० वु०	०	शु०
६ शुक्र	वु० श० रा०	०	र०	मं० रा०	चं०
७ शनि	शु० रा०	गु०	र० चं० मं० वु०	०	रा०
८ राहु	वु० शु० श०	गु०	र० चं० .	०	मं०

यहाँ तात्कालिक में सूर्य का शनि मित्र है, परन्तु नैसर्गिक में शत्रु है तो मित्र शत्रु मिलकर पंचधा मैत्री में सम हो गया। बुध तात्कालिक में मित्र और नैसिगक में सम है तो मित्र+सम=मित्र हुआ। रवि का चंद्र और मंगल दोनों प्रकार से मित्र है तो दोनों अधिमित्र हुए। इसी प्रकार प्रत्येक ग्रहों की मित्रता मिलान करके पंचधा मैत्री चक्र में स्थापित किया है।

सम्पूर्ण ग्रहों का फल विचारते समय इसी पंचधा मैत्री चक्र के अनुसार ग्रहमैत्री का विचार होता है। जैसे लग्नकुंडली में लग्न में वृश्चिक राशि है। इसका स्वामी मंगल हुआ, यह मंगल चतुर्थ भाव में शनि के घर (कुंभ) में बैठा है। पंचधा मैत्री में मंगल का शनि मित्र है। इस कारण मंगल मित्रस्थानी हुआ। वृष का शनि सप्तम में है वृषेश्वर (वृष का स्वामी) शुक्र है, शनि का यह शुक्र पंचधा मैत्री से अधिमित्र है तो कहेंगे कि शनि अधिमित्र क्षेत्री है। इसी प्रकार सब ग्रहों की मैत्री का विचार करना पड़ता है। मित्र क्षेत्र में ग्रह होने से उसका बल बढ़ेगा और शत्रु क्षेत्र में बल घटेगा। यह सब विचार के लिए मैत्री का उपयोग होता है।



जो ग्रह मित्रक्षेत्री, स्वक्षेत्री, अधिमित्रक्षेत्री या उच्च का हो वह शुभ फल देगा। शत्रुक्षेत्री, अधिशत्रुक्षेत्री या नीच में ग्रह हो तो अनिष्ट (बुरा) फल देगा। इस कारण ग्रह का क्षेत्र जानने के लिए इस जन्मकुंडली से ग्रह क्षेत्र विचार कर नीचे देते हैं।

उपर्युक्त लग्नकुण्डली के ग्रहों का क्षेत्रा विचार

ग्रह	सूर्य	चंद्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु
क्षेत्र	अधि-मित्रगृही	अधि-मि-त्रस्थानी	मित्र क्षेत्री	अधि-मित्रक्षेत्री	सम गृही	अधि-मित्रगृही	अधि-मित्रक्षेत्री	सम क्षेत्री

अध्याय १८

ग्रहों की दृष्टि Aspects of the planets

प्रत्येक भाव राशि या ग्रह पर किस-किस ग्रह की किस प्रकार की दृष्टि है, इसका विचार भी, ग्रहों के फल निर्णय करने के लिए करना पड़ता है, इस कारण ग्रहों की दृष्टि का जानना आवश्यक है।

दृष्टि का स्पष्टीकरण—

जब सूर्य उदय होता है तो उसकी किरण तिरछी होने के कारण गरमी कम जान पड़ती है। ज्यों-ज्यों सूर्य का अंश बढ़ता है त्यों-त्यों सूर्य का तेज बढ़ता है। जब सूर्य ९०° पर अर्थात् सिर पर आजाता है तो उसकी किरणें सामने पड़ने से सूर्य का प्रभाव

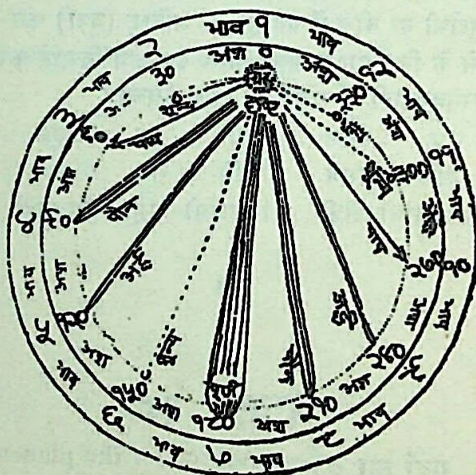
अधिक बढ़ जाता है अर्थात् उस समय गर्मी बहुत बढ़ जाती है। जब दिन ढलने लगता है तो उसकी किरणें तिरछी पड़ती हैं और प्रभाव कम होते-होते अन्त में लुप्त हो जाता है। उसी प्रकार सब ही ग्रहों का प्रभाव होता है। जिस ग्रह के सामने दूसरा ग्रह होगा उस पर, उस गृह पर पूरा प्रभाव पड़ेगा, जब बाजू से होगा तो कम प्रभाव पड़ेगा।

जिस राशि पर कोई गृह हो उसके ठीक सामने सातवीं राशि होती है और उस समय दोनों ग्रहों का अन्तर १८०° का रहता है। इस कारण सातवें स्थान पर गृह का पूरा प्रभाव पड़ता है, इसी का नाम पूर्ण दृष्टि है। इसी प्रकार शेष दृष्टि में किरणें तिरछी पड़ती हैं। इस कारण उनका प्रभाव कम हो जाता है।

जो गृह देखता है उसे द्रष्टा ग्रह कहते हैं। जिस ग्रह या भाव पर किसी दूसरे ग्रह की दृष्टि पड़ती है उसे दृश्य कहते हैं।

दृष्टि ४ प्रकार की होती है—(१) एक पाद दृष्टि या चौथाई दृष्टि, (२) द्विपाद दृष्टि या अर्द्ध दृष्टि, (३) त्रिपाद दृष्टि या पौन दृष्टि और (४) पूर्ण दृष्टि।

चित्र संख्या ७३ ग्रह की दृष्टि



चित्र संख्या ७३ में बताया है कि किसी ग्रह की अपने स्थान से किसी भाव पर या कितने अन्तर पर किस प्रकार की दृष्टि पड़ रही है। जहां दृष्टि नहीं है वहां बताया है। इस चित्र में गृहों की दृष्टि के प्रकार बतला कर उनकी किरणों का प्रभाव बताया गया है। इस चक्र में भीतर किनारे पर ३०-३०° की एक-एक राशियां दी हैं और गृह स्थान से अन्तर अंशों में बताया है। चक्र के ऊपर भी १२ भाव या स्थान दिये हैं। इससे प्रगट होगा कि गृह स्थान से कौन से स्थान पर या कितने राशि अन्तर पर किस प्रकार की दृष्टि होती है।

ग्रहों के पहिले, दूसरे, छठवें, ग्यारहवें और बारहवें स्थान पर कोई दृष्टि नहीं होती।

मंगल गुरु और शनि क्रमशः पृथ्वी की परिक्रमा मार्ग की परिधि के बाहर एवं सूर्य से दूर होने के कारण इनकी विशेष दृष्टि का विचार किया गया है।

ग्रह की चार प्रकार की दृष्टि होती हैं—

(१) पूर्ण दृष्टि=१° पूरी=६० कला दृष्टि
(२) त्रिपाद,--पौन दष्टि=0°-४५' ,,
(३) द्विपाद,, =अर्द्ध,,=०-३० ,,
(४) एकपाद,,=पाव,, =0-१५ ।

(१) पूर्ण दृष्टि—सम्पूर्ण ग्रह अपने स्थान से (उस समय जिस राशि में वे हों उस राशि से) सातवीं राशि या सातवें स्थान पर पूर्ण दृष्टि से देखते हैं। परन्तु मंगल गुरु और शनि की विशेष दृष्टि होने के कारण इनकी अतिरिक्त पूर्ण दृष्टि इस प्रकार भी है। ये अपने स्थान से इन स्थान या राशियों पर भी पूर्ण दृष्टि से देखते हैं—

(१) मंगल ४ और ८ स्थान या राशि पर
(२) गुरु ५ और ९ ,, ,, ,,
(३) शनि ३ और १० ,, ,, ,,

(२) त्रिपाद दृष्टि=मंगल को छोड़कर सब ग्रह अपने स्थान से ४ और ८ स्थान या राशि पर त्रिपाद दृष्टि से देखते हैं। मंगल की त्रिपाद दृष्टि नहीं होती, क्योंकि यही दृष्टि मंगल की पूर्ण दृष्टि हो जाती है।

(३) द्विपाद दृष्टि=गुरु को छोड़ कर शेष सब ग्रह अपने स्थान से ५ और ९ स्थान या राशि पर द्विपाद दृष्टि से देखते हैं। गुरु की द्विपाद दृष्टि नहीं होती, क्योंकि यही गुरु की पूर्ण दृष्टि है।

(४) एकपाद दृष्टि=शनि के सिवाय सब ग्रह अपने स्थान या राशि से ३ और १० स्थान या राशि को एकपाद दृष्टि से देखते हैं। शनि की एकपाद दृष्टि नहीं होती, क्योंकि यह शनि की पूर्ण दृष्टि है।

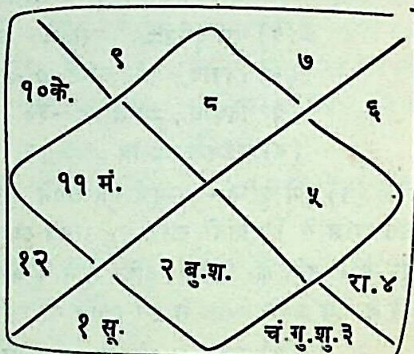
दृष्टिचक्र

दृष्टि	सू. च. बु. श. रा.	मंगल	गुरु	शनि	मतांतर राहु	शून्य दृष्टि
पूर्ण दृष्टि	७ वां स्थान	७,४,८	७,५,९	७,३,१०	५,७,९,१२	१,२,६,११,१२
त्रिपाद ,,	४,८	०	४,८	४,८	०	
द्विपाद ,,	५,९	५,९	०	५,९	३,६	
एकपाद ,,	३,१०	३,१०	३,१०	०	२,१० कन्या का= अन्धा होता है।	

चारों प्रकार की दृष्टि में पूर्ण दृष्टि का ही विशेष प्रभाव पड़ता है, केतु की दृष्टि नहीं होती।

२ ग्रह जिस स्थान में पूर्ण दृष्टि से देखता है वह स्थान पूर्ण फल देता हैं। उदाहरण देकर ग्रहों की दृष्टि विचारना आगे समझाते हैं।

इस कुण्डली में मंगल चतुर्थ भाव में है ७, ४, ८, वें स्थान पर इसकी पूर्ण दृष्टि होती है। मंगल में सातवें स्थान पर सिंह राशि दशम भाव पर है, चौथे स्थान में वृष राशि सप्तम भाव में है जहाँ बुध शनि बैठे हैं। मंगल से अष्टम में कन्या राशि एकादश भाव में है। इस कारण सप्तम दशम और एकादश भाव पर और बुध शनि ग्रहों पर मंगल की पूर्ण दृष्टि पड़ रही है। इसी प्रकार सब ग्रहों की दृष्टि का विचार करना। दृष्टि का स्थान गिनते



समय जिस स्थान पर ग्रह हो उस स्थान को एक गिनना चाहिये। जैसे सूर्य की एकपाद दृष्टि तीसरे स्थान पर विचारना है तो सूर्य के स्थान मेष को १ गिना तो तीसरे स्थान में अष्टम भाव आया जहाँ चं. गु. श. हैं, जिन पर सूर्य की एकपाद दृष्टि पड़ रही है।

आगे इसी कुण्डली का दृष्टिचक्र अभ्यास के लिए दिया है। इस चक्र में पूर्ण दृष्टि १° की अर्थात् ६० कला की बताई गई है। इसी प्रकार पौन दृष्टि ४५', अर्द्ध दृष्टि ३०' और पाव दृष्टि १५' की दी गई है, इस पर से दृष्टि समझ लेना।

इस चक्र के देखने से समझ में आ जायेगा कि सूर्य की पूर्ण दृष्टि बारहवें भाव और तुला राशि पर है, पौन दृष्टि लग्न व वृश्चिक राशि और नवम स्थान की कर्क राशि पर है, अर्द्ध दृष्टि द्वितीय स्थान की धन राशि और दशम भाव की सिंह राशि पर है, पाव दृष्टि तृतीय स्थान की मकर राशि और अष्टम स्थान की मिथुन राशि पर है शेष राशियों पर कोई दृष्टि नहीं है। सूर्य की एकपाद दृष्टि श. चं, गु. पर भी पड़ती है जो सप्तम स्थान में वृष राशि पर बैठे हैं और अष्टम भाव में हैं। राहु पर पौन दृष्टि है जो नवम भाव में कर्क राशि पर है। केतु पर सूर्य की पाव दृष्टि है जो तृतीय भाव में मकर राशि पर बैठा है और किसी ग्रह पर सूर्य की दृष्टि नहीं पड़ती। इसी प्रकार चक्र के अनुसार शेष ग्रहों की दृष्टि का विचार करना। यहाँ पर देखने वाला सूर्य ग्रह द्रष्टा है और शु. चं. गु. जिनपर सूर्य की दृष्टि पड़ती है वे दृश्य हैं। कोई ग्रह किसी भाव या दूसरे भाव को देखता है तो कहते हैं कि उस ग्रह की दृष्टि अमुक ग्रह या भाव पर है।

कुण्डली का दृष्टि चक्र—

ग्रह व भाव जिन पर ग्रहों की दृष्टि पड़ती हैं।

		लग्न	द्वितीय	तृतीय	चतुर्थ	पंचम	षष्ठ	सप्तम	अष्टम	नवम	दशम	एकादश	द्वादश
कुण्डली	भाव	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
	राशि	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७
	ग्रह	—	—	केतु	म.	—	सू.	बु.श.	चं.गु.शु.	रा.	—	—	—
द्रष्टा ग्रह													
१—सूर्य	कला	४५'	३०'	१५'	०	०	०	०	१५'	४५'	३०'	०	६०'
२—चन्द्र	"	०	६०'	४५'	३०'	१५'	०	०	०	०	१५'	४५'	३०'
३—मंगल	"	१५'	०	०	३०'	०	१५'	६०'	३०'	०	६०'	६०'	३०'
४—बुध	"	६०'	४५'	३०'	१५'	०	०	०	०	१५'	४५'	३०'	०
५—गुरु	"	०	६०'	४५'	६०'	१५'	०	०	०	०	१५'	४५'	६०'
६—शुक्र	"	०	६०'	४५'	३०'	१५'	०	०	०	०	१५'	४५'	३०'
७—शनि	"	६०'	४५'	३०'	६०'	०	०	०	०	६०'	४५'	३०'	०
८—राहु	"	३०'	०	३०'	४५'	६०'	१५'	०	०	०	०	१५'	४५'

कलात्मक दृष्टि=६०′=१° पूर्ण, ४५′=¾, ३०′=½, १५′=¼ दृष्टि।

इन चारों प्रकार की दृष्टि में केवल पूर्ण दृष्टि का ही विचार होता है, क्योंकि उसका फल पूर्ण रूप से अनुभव में आता है। शेष दृष्टि उपयोगी नहीं हैं, क्योंकि उनका फल निश्चित नहीं होता। ग्रहों का दृष्टिबल निकालने में चारों प्रकार की दृष्टि का काम पड़ता है।

दीप्तांश Orbs of the planets

जब द्रष्टा ग्रह (देखने वाला) और दृश्यग्रह (जिसपर दृष्टि पड़ रही हो) इन दोनों में थोड़ा ही अंश का अन्तर हो या अंश साम्य हो तो उनकी दृष्टि होना समझी जायगी। जैसे वृष के २ अंश पर कोई ग्रह हो और दूसरा ग्रह उससे सातवें घर में वृश्चिक राशि के २° पर हो, अर्थात् दोनों में पूरे १८०° का अन्तर हो तो कहेंगे कि वह ग्रह पूर्ण दृष्टि से देखता है। परन्तु दूसरा ग्रह वृश्चिक के २८° पर हो तो पूर्ण दृष्टि है ऐसा कहना ठीक नहीं, क्योंकि दोनों में २०६° का अन्तर पड़ जाता है। वृष राशि के किसी भी अंश पर द्रष्टा ग्रह हो और दृश्य ग्रह सप्तम स्थान में जहाँ वृश्चिक राशि है उसके कितने ही अंश पर हो तो भी पूर्ण दृष्टि से देखता है ऐसा कहना ठीक नहीं है। किसी भाव या ग्रह पर दृष्टि करने वाला ग्रह उसी अंश साम्य पर देखना चाहिए तब पूर्ण दृष्टि समझी जायेगी चाहे वह द्रष्टा ग्रह भाव के बीच में क्यों न हो। आगे पीछे दृष्टि हुई तो निष्फल होती है।

इस कारण दोनों द्रष्टा और दृश्य ग्रह की दृष्टि किसी विशेष अंश के भीतर होना चाहिए जिससे वह दृष्टि प्रभावशाली होती है। प्रत्येक ग्रह की दृष्टि का कुछ विशेष अन्तर नियुक्त है जिसके भीतर दृष्टि रहने से वह दृष्टि प्रभावशाली समझी जाती है और इस अन्तर का विचार अंशों में होता है। इन अंशों के अन्तर को दीप्तांश कहते हैं। अर्थात् दो या अधिक ग्रह जो एक दूसरे पर दृष्टि योग करते हैं तब वे ग्रह, दृष्टि योग करने के पूर्व किसी विशेष अंशों के भीतर एक दूसरे पर प्रभाव डालने में समर्थ होते हैं उस अन्तर को दीप्तांश कहते हैं। दीप्तांश चक्र—

ग्रह	सूर्य	चंद्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
दीप्तांश	१५	१२	८	७	९	७	९

द्रष्टा ग्रह की दृष्टि इन दीप्तांशों के भीतर ही दृश्य ग्रह पर उसके आगे पीछे हो तो कहेंगे कि दृष्टि दीप्तांश के भीतर है। ऐसी दृष्टि का विशेष फल होता है। यदि इन दीप्तांशों के अधिक आगे या पीछे दृश्य ग्रह हो तो फल मध्यम होगा। इसका उदाहरण देकर समझाते हैं।

मान लो सूर्य वृष के १५° पर है और चन्द्र तुला के २८° पर है। वृष से तुला ६ राशि अन्तर पर अर्थात् सातवें स्थान पर होने से सूर्य की पूर्ण दृष्टि हो जाती है। अब देखना है कि इनकी दृष्टि दीप्तांश के भीतर है या नहीं। इसके लिए दोनों के अंश देखा। दोनों के अंशों में (२८-१५)=१३° का अन्तर है। सूर्य का दीप्तांश १५ है तो यह अन्तर १३ दीप्तांश के भीतर है, तो कहेंगे कि सूर्य की दृष्टि चन्द्र पर दीप्तांश के भीतर है। इसका कारण पूर्ण दृष्टि का पूरा फल होगा। ऊपर जो दृष्टि कोण के दीप्तांश बताये गये हैं वे इसी प्रकार विचारे जाते हैं।

युति Conjunction=जब-जब ग्रह एक ही राशि पर और एक ही अश पर हो तो वह युति दृष्टि योग कहलाता है। यदि दीप्तांश के अनुसार उसमें ८-१०अंश से अधिक अन्तर पड़ जायगा तो वह युति योग प्रभाव पूर्ण नहीं होगा।

पाश्चात्य पद्धति से दृष्टि विचार

जिस ग्रह या भाव की दृष्टि निकालना है तो दोनों का अंशों में अन्तर निकालो और उस अन्तर के अनुसार दृष्टि का फल विचार करो। द्रष्टा और दृश्य इन दोनों के बीच में अंशों का न्यूनाधिक अन्त होने पर उस अन्तर के अनुसार दृष्टि का विशेष नाम होता है और दृष्टि योग से फल का अनुभव उसी के अनुसार होता है। ग्रह दृष्टि का शुभाशुभ फल उसी दृष्टि के अनुसार होगा।

यह विचार नहीं रखना चाहिए कि देखने वाला ग्रह शुभ होगा तो सदा शुभ फल देगा या पाप ग्रह होगा तो सदा अशुभ फल देगा। कभी-कभी अशुभ दृष्टि योग से शुभ ग्रह भी अशुभ फल देते हैं और अशुभ ग्रह शुभ फल देते हैं।

पाश्चात्य लोग कोई ग्रह बिलकुल शुभ या अशुभ है ऐसा नहीं मानते, परन्तु दृष्टि योग से शुभाशुभ फल देना मानते हैं। जैसा गुरु यह शुभ ग्रह है उसका सम्बन्ध चंद्र के साथ होने से अति शुभ फल देगा, इसके विरुद्ध शनि ये पाप ग्रह है सूर्य या चंद्र के साथ शुभ दृष्टि योग करने से शुभ फल देता है। इस कारण योरोपीय जातक ग्रंथों के आधार पर यहाँ दृष्टि योग समझाते हैं, जिसमें यह भी बताया है कि कौन दृष्टि योग शुभ या अशुभ है। दृष्टि योग सूचक संकेत के चिह्न भी दिये हैं, क्योंकि अंग्रेजी पंचाङ्गों में केवल दृष्टि योग के चिह्न ही दिये रहते हैं।

दृष्टियोग

दृष्टियोग नाम	ग्रहों का अन्तर राशि या अंश	फल	चिह्न	दीप्तांश
१–सार्द्ध केन्द्रयोग Semi Square or Semi Quartile	१$\frac{१}{२}$=४५	अशुभ	∠ या S □	२-३ अंश
२–त्रिरेकादश (द्विराश्यंतर) Sextile	२=६०	शुभ	* या ⚹	२-३
३–केन्द्र (वर्तुलपाद) Square	३=९०	अति शुभ	□	४-५
४–त्रिकोण (नवम-पंचम) Trine	४=१२०	अति शुभ	△	४-५
५–सार्द्ध चतुष्टय राश्यंतर Sesqui quadrate	४$\frac{१}{२}$=१३५	अशुभ	⚼ या ⊠	२-३ २-३
६–षड़ष्टक Quincunx	५=१५०	अशुभ	▽ या ⚻ या ⊼	
७–पूर्ण दृष्टियोग (प्रतियोग) प्रतियुति (सप्तम दृष्टि) Opposition	=६=१८०	अशुभ	☍	८-१०
८–युति दृष्टियोग (युति योग) Conjunction	० राशि अंश समान	युति करने वाले ग्रह के शुभाशुभ धर्म पर अवल- म्बित है	☌	८-१०
९–एक राश्यंतर युति Semi Sextile Semi Quintile	१=३०	सदा अच्छा	⚺ या JL या S ⚹	२-३
१०–चक्र दशमांश Quintile	१$\frac{१}{५}$=३३		⊥	२-३
११–चक्र पंचमांश Biquintile	२$\frac{२}{५}$=७२	कुछ अच्छा	Q	२-३
१२–चक्र सार्द्ध द्वितीयांश	४$\frac{४}{५}$=१४४	,,	±	२-३
१३–समक्रांति दृष्टियोग Parallel or Declination	जब नाड़ीवृत्त युति से बराबर क्रांति समान अन्तर पर हो		P	२

इन ग्रहों का योग अच्छा है—

(१) गुरु का—नेप. हर्शल. श. सू. बु. या चं. के साथ अच्छा है।

(२) शुक्र का—बुध या चंद्र से योग अच्छा है।

(३) बुध—चंद्र का भी योग अच्छा है।

(४) शेष ग्रहों का योग कम या अधिक, स्थिति के अनुसार हानि कारक है।

युति योग—रवि-गुरु, गुरु-चंद्र, चंद्र-बुध, चंद्र-शुक्र, रवि-शुक्र इनकी युति अच्छी मानी जाती है।

जब २ या अधिक ग्रह एक राशि में जितने पास-पास हों उतना ही अधिक युति का प्रभाव होता है। जैसे वृष के ४° पर गुरु है और मेष के २६° पर सूर्य है। यहाँ सूर्य गुरु के पास जा रहा है उस समय वह संयोगी applying or approaching कहलायगा। जब सूर्य गुरु के पास मिलकर उसके आगे बढ़ेगा अर्थात् गुरु के अंश से सूर्य के अश अधिक बढ़ने लगे तब सूर्यवियोगी Separating ग्रह कहलायेगा। जब ग्रह वियोगी होता है तो वह संयोगी अवस्था से अधिक शक्तिशाली होता है। मान लो गुरु वृष के ४ अंश पर है और सूर्य वृष से १२° पर है तो गुरु और सूर्य का युत योग का अधिक प्रभाव पड़ेगा, क्योंकि वह वियोगी (उससे दूर हटने की) अवस्था है।

क्रांतिसाम्य दृष्टियोग

जब दोनों ग्रहों की स्पष्ट क्रांति (चाहे दोनों की क्रांति एक दिशा में या भिन्न दिशा में हो) अंशादि में समान आ जावे, उस समय क्रान्ति साम्य दृष्टियोग होता है। इसका परिणाम युति के परिणाम से भी अधिक महत्व का समझा जाता है।

प्रति योग—अशुभ ग्रह की अशुभ दृष्टि हो तो विशेष अशुभ दायक होती है। ग्रहों का योग इस प्रकार विचार किया जाता है :—

(१) चंद्र का—सब ग्रहों के साथ, क्योंकि यह शक्तिशाली है।

(२) बुध का—शु. सू. मं. गु. श. हर्शल और नेपच्यून के साथ।

(३) शुक्र का—सू. मं. गु. श. ह. और ने. के साथ

(४) सूर्य का—मं. गु. श. ह. और ने. „

(५) मंगल का—गु. श. ह. और ने. „

(६) गुरु का—श. ह. और ने. „

(७) शनि का—ह. और ने. „

(८) हर्शल का—ने. „

(९) नेपच्यून का किसी भी ग्रह के साथ योग नहीं होता क्योंकि वह सबसे कम चलने वाला है।

अपवाद— वक्री ग्रह का दूसरे ग्रहों के साथ योग हो सकता है। हर्शल जब वक्री होता है तब उसका योग किसी भी ग्रह के साथ या चन्द्र के साथ भी हो सकता है।

पाश्चात्य मत से ग्रहों के दीप्तांश

(१) बु. गु. शु. श. ह.—जब संयोगी हों=६°, वियोगी में ८° दीप्तांश। मान लो शुक्र शनि का युति योग है। यह योग संयोगी है, जब शुक्र शनि से ६° अन्तर पर होगा तो उस दृष्टि का प्रभाव होगा और दोनों का योग होकर शुक्र ८° चला जायगा तब तक इसका प्रभाव रहेगा। इसी प्रकार सब ग्रहों का विचारना।

(२) सूर्य का दीप्तांश अधिक है, संयोगी में १२° और वियोगी में १७° है। ये दीप्तांश केवल युतियोग, द्विराशि अन्तर योग, त्रिकोण योग और प्रतियोग में विचारना।

(३) छोटे-छोटे दृष्टि योगों के दीप्तांश।

(१) एक राशि अन्तरयोग, ७२° अन्तरयोग, १४४° अन्तरयोग में संयोगी में २° और वियोगी में ३°

(२) सार्द्ध केन्द्रयोग, सार्द्ध चतुष्टयराश्यंतरयोग में, संयोगी ३°, वियोगी ४°

(३) सूर्य और चन्द्र के दृष्टि योग में इन दीप्तांशों से १° और अधिक लेना।

(४) सम क्रान्तियोग में २° से अधिक नहीं लेना। मान लो मंगल की क्रान्ति १३° उत्तर और शनि की ११° दक्षिण है तो इन दोनों का सम क्रान्तियोग हुआ। इसी प्रकार भाव के भी दीप्तांश होते हैं।

अध्याय २६

ग्रहों का परिचय

क्रम ग्रह	सूर्य से अन्तर मील लाख में	सूर्य की परिक्रमा का समय	अपनी धुरी पर घूमने का समय	पृथ्वी से कितने गुना बड़ा है	पृथ्वी से कितने लाख मील दूर है बड़ा अन्तर	छोटा अन्तर	मध्यम व्यास मील में
१ सूर्य	०	०	२५ १/३ दिन	३०००	९३-	९.८	८६००००
२ बुध	३५७	८७.९७ दिन	२४ घं. ६ मि.	१/२८॥	१३६९	४७०	२९९२
३ शुक्र	६६८	२२४.७० दि.	२३ १/३ घं.	०.९	१६१०	२३६	७६६०
४ पृथ्वी	९२३	३६५.९८ दि.	२४ घं.	१	०	०	७९१८
			घं. मि. से.				
५ मंगल	१४७	६८६.९८ दि.	२४-३७-२२	०.१५	२४७६	३३८	४२११
६ गुरु	४८२२	११८६ वर्ष	१० घं.	१२८१	५९७२	३६३२	८६०००
७ शनि	८८५०	२९.४६ वर्ष	१० १/२ घं.	७०६	१०२३६	७३७३	७०५००
८ हर्शल	१७७१०	८४.२ वर्ष	१० घं. ३८ मि.	६४	१९४६६	१५९५४	३१७००
९ नेप.	२७७५०	१६४.७८ वर्ष	१० घं ४९ मि.	८३	२८९२८	२६५७२	३४५००
१० चंद्र	०	पृथ्वी की परिक्रमा २९-५३ दि.	२७ १/३ दिन	१/४९	२४० हजार	२२१	२०००मील

ग्रहों का आकार और परिक्रमा मार्ग एक दूसरे से मिलान करने के लिए सूर्य का व्यास २ फुट मान कर उसी अनुपात से प्रत्येक ग्रहों का आकार और परिक्रमा मार्ग का व्यास नीचे चक्र में समझाया है। चित्र संख्या ३ भी देखो।

ग्रह	बुध	शुक्र	पृथ्वी	मंगल	गुरु	शनि	हर्शल	नेपच्यून
वृत्त (मार्ग) का व्यास	१६४ फुट	२८४ फुट	४३० फुट	६५४ फुट	१/२ मील	४/५ मील	१॥ मील	२॥ मील
आकार	राई का दाना	मटर	बड़ा बटांना	बड़े अल्पीन का सिर	मामूली सन्तरा	छोटी नारंगी	मामूली बेर	बड़ा बेर

पृथ्वी की सूर्य से दूरी वास्तव में ९ करोड़ से कुछ अधिक है। यह लम्बाई ऊपर बताये क्रम से अनुमान करने पर ४३० फुट का आधा २१५ फुट हुआ। सूर्य की दूरी

इस प्रकार अनुमान कर सकते हैं कि १ रेलगाड़ी प्रति घण्टे ३० मील के हिसाब से पृथ्वी से चले तो ३३८ वर्ष में वह सूर्य के पास पहुँचेगी।

मंगल और गुरु के बीच सूर्य की परिक्रमा करते हुए और भी कई छोटे-छोटे ग्रह हैं। यदि उन को भी उपर्युक्त अनुपात से लघु आकार में समझने के लिए विचार करो तो व्यास १००० से १२०० फुट के भीतर लगभग ४० दाने रेत के बराबर हैं। छोटे-छोटे तो और भी अधिक हैं।

सूर्य से इतर ग्रहों की दूरी आदि का अनुमान करने से प्रगट हो जायगा कि जिस ग्रह का छोटा घेरा है वह शीघ्र परिक्रमा पूरी कर लेता है और जिसका परिक्रमा-मार्ग बड़ा है उसे परिक्रमा पूरी करने में अधिक समय लगता है।

किसी ग्रह का परिक्रमा-मार्ग कितना ही छोटा या बड़ा हो परन्तु ३६०° में हं' मार्ग बटा रहता है जिसमें १२ राशियां होती हैं।

ग्रहों के भिन्न-भिन्न नाम—

यहाँ ग्रहों के मुख्य-मुख्य नाम संक्षेप में दिये हैं।

१ सूर्य=रवि, भानु, भास्कर, हेलि, भानुकर, भानुमान्, दीप्तरश्मि, चंडांशु, अहस्कर

२ चद्र =सोम, शीतरश्मि, अब्ज, शीतांशु, मृगांक, ग्लौ, कलेश, चन्द्रमा।

३ मंगल=कुज, भौम, क्रूर, वक्र, लोहितांग, पापी, आर, आवनेय।

४ बुध=चन्द्रपुत्र, ज्ञ, वित्, सौम्य, चान्द्रि, बोधन, शान्त, श्यामगात्र, अतिदीर्घ।

५ गुरु=बृहस्पति, जीव, अंगिरा, देवगुरु, वाचस्पति, ईज्य, प्रशान्त, त्रिदेवेशवंद्य।

६ शुक्र=भृगु, सित, दैत्यगुरु, उशना, भार्गवसूनु, काण, कवि, अच्छ।

७ शनि=अर्कपुत्र, छायात्मज, यम, सौरि, असित, नील, पंगु, कोण।

८ राहु=क्रूर, कृष्णांग, तम, असुर, सैंहिकेय, कपिलाक्ष, दीर्घ, अगु, स्वर्भानु, विधुंतुद।

९ केतु=शिखि, ध्वज, शनिसुत, यमात्मज, प्राणहर, अतिपापी, गुलिक, मांदि।

१० हर्शल=यूरेनश, वारुणी, प्रजापति।

११ नेपच्यून=वरुण।

●

अध्याय ३०

ग्रह-गुणधर्म

जिस प्रकार राशियों के गुणधर्म बता चुके हैं उसी प्रकार प्रत्येक ग्रह के गुणधर्म हैं। इनके अध्ययन करने से प्रगट होगा कि इन ग्रहों से क्या-क्या गुण प्रगट होते हैं, और ये ग्रह किस प्रकार प्रभाव उत्पन्न करते हैं और उनसे क्या-क्या विचारा जा

सकता है। ये ग्रह किस धातु से सम्बन्ध रखते हैं, उनका तत्व क्या है, गुण कैसा है किस प्रकार की पीड़ा करते हैं, कहाँ पीड़ा करते हैं, कौन ग्रह किस कुटुम्बी का सूचक है, किस दशा में विशेष प्रभाव करते हैं, इत्यादि बातें आगे दिए हुए चक्र से प्रगट होंगी।

इन सब बातों का विचार कर फल अनुमान करना होता है। जैसे चोरी के प्रश्न में विचार करना है, तो चोर की कौन जाति होगी, क्या अवस्था होगी, माल किस प्रकार के स्थान में रखा होगा इत्यादि बातें राशि और ग्रह गुणधर्म के अनुसार विचार करना पड़ता है। ग्रह शरीर के किस स्थान पर, किस तत्व का प्रभाव, किस धातु द्वारा करता है या आजीविका किसके द्वारा मिलेगी। वह ग्रह कैसे दोष उत्पन्न करेगा, किस अंग में पीड़ा करेगा इत्यादि बातें ग्रह की स्थिति के अनुसार बुद्धि से विचारना पड़ता है।

ग्रह के गुणधर्म का उपयोग फल विचारने में काम आता है। फलित विषय में समय-समय पर इसका उपयोग होगा। इस कारण ग्रहों के गुणधर्म ध्यान में रखना चाहिए।

इनकी मैत्री आदि के सम्बन्ध में इस प्रकार भी विचार होता है—तत्व का योग=वायु (शनि), अग्नि (मंगल) और पृथ्वी तत्व (बुध) ये एक ही राशि के होने से आंधी (तूफान) आदि उत्पन्न करते हैं। अग्नि (मंगल) और आकाश (गुरु) से भूकम्प अग्नि (सूर्य या मंगल) और जल तत्व (चन्द्र या शुक्र) से वर्षा।

ग्रह गुण धर्मचक्र–

गुणधर्म	सूर्य	चंद्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु
१ शरीर	आत्मा	मन (चित्त)	शारीरिक शक्ति (पराक्रम)	वाणी (विद्या)	ज्ञान बुद्धि	कामदेव (सांसारिक सुख)	दुख (विपत्ति)	दुःख	दुःख
२ पदवी	राजा	रानी	सेनापति	युवराज	मन्त्री	मन्त्री	प्यादा (सेवक)		
३ धातु	हड्डी	रक्त	चर्बी	त्वचा	मस्तिष्क	वीर्य	नसें		
४ तत्व	अग्नि	जल	अग्नि	पृथ्वी	आकाश	जल	वायु		
५ त्रिदोष (प्रकृति)	पित्त	कफ	पित्त	सम	सम	कफ	वात	वात	वात
६ वर्ण(रंग)	रक्त	शुक्ल	रक्त	हरा	पीत	श्वेत	कृष्ण	कृष्ण	धूम्र
७ जाति	क्षत्रिय	वैश्य	क्षत्रिय	शूद्र	विप्र	विप्र	शूद्र	म्लेच्छ	म्लेच्छ
८ अवस्था	वृद्ध	युवा	युवा	बाल	वृद्ध	युवा	वृद्ध	वृद्ध	वृद्ध
९ लिंग	पुरुष	स्त्री	पुरुष	नपुंसक	पुरुष	स्त्री	नपुंसक	स्त्री	पुरुष
१० दिशा	पूर्व	वायव्य	दक्षिण	उत्तर	ईशान	आग्नेय	पश्चिम	नैर्ऋत्य	नैर्ऋत्य

गुणधर्म	सूर्य	चंद्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु
११ गुण	सत्त्वगुण	सत्त्व०	तमो०	रजो०	सत्त्व०	रजो०	तमो०	तमो०	
१२ धातु	सुवर्ण	कांसा	गेरु	सुवर्ण	रत्न	रूपा	लोह	लोह	लोह
१३ रस	तिक्त	लवण	कटु	कटु (सबरस)	मधुर	अम्ल	तिक्त (कषाय)	तिक्त	तिक्त
१४ काल (बली)	मध्याह्न बली	अपराह्न	मध्याह्न	पूर्वाह्न (प्रातः)	पूर्वाह्न (प्रातः)	अपराह्न	संध्या	संध्या	संध्या
१५ स्वभाव	स्थिर	चर	उग्र	मिश्र	मृदु	लघु	तीक्ष्ण	तीक्ष्ण	
१६ भूमि	पशुभूमि	आर्द्रभू.	दग्ध०	श्मशान	ग्राम०	जल०	ऊषर	ऊषर	ऊषर
१७ पाद	चतुष्पद	सर्प (अपद)	चौपाया	पक्षी	द्विपद (मनुष्य)	द्विपद	पक्षी	सर्प	पक्षी
१८ आकार	चौकोन	स्थूल	चौकोन	गोल	गोल	खंड(अर्द्ध- चन्द्राकार)	दीर्घ	दीर्घ	पुच्छ
१९ मणि	माणिक	मोती	प्रवाल	पन्ना	पुष्पराग	हीरा	नीलम	पिरोजा	लसण
२० स्वभाव	उग्र	सौम्य	उग्र	शुभ	शुभ	शुभ	पाप	पाप	पाप
२१ चर आदि	स्थिर	चर	चर	द्विस्वभाव	स्थिर	चर	पक्षी (स्थिर)	चर	पक्षी (स्थिर)
२२ स्थान	वन	जल	वन	ग्राम	ग्राम	ग्राम	संधि	विवर	विवर
२३ ,,	देव- स्थान	जल०	अग्नि	क्रीड़ा	भण्डार	शय्या	गंज ढेर)	विल	विल
२४ ग्रहभेद	मूलग्रह	धातुग्रह	धातु	जीव०	जीव०	मूल	धातु	धातु	धातु
२५ ऋतु	ग्रीष्म	वर्षा	ग्रीष्म	शरद	हेमन्त	वसंत	शिशिर	शिशिर	शिशिर
२६ जल	शुष्क	सजल	शुष्क	जलराशि में सजल	जलराशि में सजल	सजल	शुष्क	शुष्क	शुष्क
२७ पीड़ा- स्थान	सिर या मुख	छाती या गला	पीठ पेट	हाथ पैर	कमर	गुप्त स्थान	घुटना जांघ		
२८ फल समय	अयन में	मुहूर्त	दिन	ऋतु	महीना	पक्ष	वर्ष		
२९ कारक	पिता	माता	भाई	मामा	संतति	स्त्री	खर्च	मृत्यु	
३० दृष्टि	ऊर्ध्व	सम	ऊर्ध्व	तिरछी	सम	तिरछी	अधो	अधो	अधो

ग्रहों के कल्पित स्वरूप के चित्र



चित्र संख्या ७४



चित्र संख्या ७५



चित्र संख्या ७६



चित्र सख्या ९७



चित्र संख्या ७८



चित्र संख्या ७९



चित्र संख्या ८०



चित्र संख्या ८१



चित्र संख्या ८२

किस ग्रह से क्या विचारना (संक्षेप में)

१ सूर्य से—आत्मा, पिता, स्वभाव, नीरोगता, सामर्थ्य और लक्ष्मी का विचार।
२ चन्द्र से—चित्त, माता, प्रसन्नता, वृद्धि, राजा, सम्पत्ति का विचार।
३ मंगल से—पराक्रम, भाई पुत्र, भाई बिरादर, रोग गुण, पृथ्वी।
४ बुध से—विद्या, विवेक, वाणी, मामा, मित्र बांधव।
५ गुरु से—बुद्धि, ज्ञान, पुत्र, धन, शरीर की पुष्टि।

६ शुक्र से—कामदेव, स्त्री, वाहन, भूषण, सुख
७ शनि से—आयु, जीवन, मृत्यु का कारण विपत्ति।
८ राहु से—पितामह (दादा) का विचार।
९ केतु से— मातामह (नाना)।

●

अध्याय ३१

ग्रहों का प्रभाव

१ सूर्य—यह सब ग्रहों से बलवान ग्रह है,क्योंकि यह सब ग्रहों का चालक है और इसी में सब ग्रहों को तेज मिलता है। यह महत पद दर्शक, दैवी शक्ति, आत्मा, अग्नि देवता, सरकार राज दरबार आदि कार्य का कारक ग्रह है! सब राशियों में बलवान सिंह राशि का स्वामी है। यह कुण्डली में बलवान होता है तो ऐश्वर्य शौर्य, मान, कीर्ति, दैवी व नैतिक सदगुण आरोग्य, अधिकार ये सब प्राप्त होते हैं। रवि के प्रभाव से मनुष्य उदार, सत्य काम की अभिलाषा करने वाला, प्रतिभा सम्पन्न, गरीबों पर दया करने वाला होता है।

रवि निर्बल होता है तो अभिमानी, अपनी बड़ाई करने वाला अधिकार का दुरुपयोग करने वाला होता है। मनुष्य शरीर में हृदय, रक्त का अभिसरण, जीवन शक्ति, हृदय का विकार, पित्त विकार, नेत्र रोग,पेट के नीचे विकार प्रगट करता है।

२ चन्द्र—यह पृथ्वी का उपग्रह है। इसका प्रभाव कुण्डली में बहुत महत्व का है। जिस प्रमाण से यह बलवान होता है उसी अनुसार दैहिक और मानसिक बल देता है। कर्क राशि का स्वामी है। राशिचक्र में भ्रमण करते समय जन्म समय या प्रश्न काल में यह जिस राशि पर हो उसके अनुसार फल उत्पन्न करता है। जन्म समय जिस राशि पर चन्द्र हो उस राशि के अनुसार स्वभाव मानसिक प्रगलभता आदि उत्पन्न करता है जिसका जन्म कर्क लग्न में हो, लग्न में चन्द्र हो तो उस पर अधिक प्रभाव करता है। वह मनोविकार के आधीन रहता है और नवीनता उसे प्रिय होती है, अर्थात् उसकी आयुष्य भर में मनोविकार की प्रधानता रहती है और उसके सम्बन्ध से अच्छे बुरे कार्य का सम्बन्ध जन्म समय के चन्द्र की स्थिति पर अवलम्बित है। चन्द्र का प्रभाव शरीर के पेट स्तन, मेदा, लाला, लालोत्पादक पिंड आदि पर होता है और उस सम्बन्धी विकार उत्पन्न करता है। पूर्ण चन्द्र शुभ होने से अच्छा है शुभ फल देता है, परन्तु क्षीण चन्द्र अशुभ ग्रह समझा जाता है।

३ मंगल—यह आकार आदि में पृथ्वी सरीखा है, इसी से इसे भूमिपुत्र कहते हैं। वह रुधिर का प्रभाव बताते हुए तामड़े रंग का चमकते हुए दिखता है। यह मंगल स्वभाव से क्रोधी, चुगुलखोर और झूठा होता है। यह निर्बल हो तो उस समय स्वभाव में झुठाई, चुगलखोरी; क्रोधीपना, दुष्टता और क्रोध के कार्य प्रगट करता है। यह अनिष्ट हो तो उष्णता का विकार, भयंकर व त्रिदोषिक ज्वर, प्लेग, कालरा, माता आदि स्पर्शजन्य रोगों से दुःख उत्पन्न करता है।

४ बुध—यह चन्द्र सरीखा महत्व का है, यह अपने बल के अनुसार मानसिक एवं बौद्धिक उन्नति दर्शाता है। जब यह चन्द्र के साथ त्रिरेकादश दृष्टि योग करता है तो उसकी बुद्धि सामर्थ्य अच्छी होती है। यह ग्रह चातुर्य, धार्मिक दशा, शोधक बुद्धि, शास्त्रीय विषय में प्रवेश, वाणी में मिठास आदि का कारक है। बुध अनिष्ट होता है तो सिर दुखना, लड़खड़ाते या तुतलाते बोलना, और कई प्रकार के मानसिक त्रास रोग प्रगट करता है।

यह ग्रह दूसरे ग्रह के साथ युक्त या दृष्ट हो तो जैसा वह ग्रह शुभ हो उसी प्रमाण से फल उत्पन्न करता है। इसका फल विचारते समय यह कौन राशि पर है और इस पर कौन ग्रह की कैसी दृष्टि है आदि बातों का पूर्ण विचार करना होता है।

५ गुरु—सब ग्रहों में बड़ा है और इसके ४ चन्द्र (उपग्रह) हैं। उनमें से एक तो लगभग अपनी पृथ्वी के बराबर हैं। यह अति शुभ दायक ग्रह है। न्याय प्रियता सब अच्छे गुण या अच्छी बातें और सुख का द्योतक है। यह शुभ ग्रह है। जिसकी कुंडली में लग्न चन्द्र या बुध इनसे गुरु का शुभ योग होता है तो वह जातक उदार मन, न्यायी, प्रामाणिक, स्वच्छ हृदय का होता है, परन्तु अशुभ दृष्टि योग से साम्पत्तिक अड़चन बड़े लोगों की अप्रसन्नता आदि प्रगट करता है। यह ग्रह रक्तदोष, यकृत् का विकार आदि उत्पन्न करता है। गुरु जहां हो उस स्थान की हानि करता है, परन्तु जिस भाव पर उसकी दृष्टि हो यह दृष्टि शुभ समझी जाती है, भाव की बृद्धि करती है।

६ शुक्र—यह दूसरे ग्रहों की अपेक्षा अधिक प्रकाशवान दिखता है। यह बुध के साथ हो तो काव्य, ललित कला, चित्र कला, वाचन कला आदि में प्रवीण होता है। शुक्र लग्न में हो तो मुंह मनमोहन होता है। उत्तम भाषण शैली, मिलनसार स्वभाव सबसे मिलने वाला, कपड़े आदि स्वच्छ रखता है। शुक्र जन्मकुण्डली में निर्बल हो तो, हलकापन, निर्लज्ज, भयानक शब्द प्रिय आदि अवगुण करता है। शुक्र में वृष राशि की अपेक्षा तुला राशि में अधिक बलवान होता है और शुभ फल देता है ये पाप ग्रह से युक्त या दृष्ट हो तो अशुभ फल उत्पन्न करता है।

यह मूत्राशय का विकार, उपदंश आदि विकार, अपने दुर्व्यसन के कारण या अनीतिपथ पर चलने के कारण होने वाले रोग वीर्यपात या उससे होने वाली दुर्बलता आदि विकार उत्पन्न करता है।

७ शनि—इसके चहुँ ओर ३ बलय और ८ चन्द्र (उपग्रह) हैं। मानो छोटी सूर्य माला ही हो, इसी कारण इसे सूर्यपुत्र कहते हैं। जन्मसमय शनि बलवान हो तो कुशाग्रमति, मार्मिक, कठोर और कृष्ण, डरपोक, दृढ़, थोड़ा बोलने वाला, हिसाब किताब से खर्च करने वाला, उद्योगी और सभ्य स्वभाव का होता है। शनि निर्बल हो तो संशय युक्त, दुष्ट, अधम, क्रोधी स्वभाव का होता है। सब ग्रहों में शनि अधिक पाप फल देने वाला है। शनि रवि, चन्द्र या लग्न के साथ अशुभ दृष्टियोग करता हो तो दन्त विकार, नाना प्रकार के रोग जो अधिक समय तक रहने वाले हों, संधिवात, पक्षाघात, कुछ बहरापन आदि रोग दर्शाता है।

संक्षेप में शनि ये डर, उदासीनता और मृत्यु का द्योतक ग्रह माना जाता है। शनि जहाँ पर हो उस स्थान को वृद्धि करता है, परन्तु जिस भाव को देखता है उसकी हानि करता है।

८ हर्शल—(प्रजापति) यह अनेक आकस्मिक विचित्र प्रकार की घटना घटित करने वाला ग्रह है। साधारण प्रकार से ये पाप ग्रह हैं। इसी प्रकार वह कई प्रकार के चामत्कारिक और कल्पना जिसकी न हो सके ऐसा फल उत्पन्न करता है। जिस कुण्डली में यह बलवान हो तो अच्छे प्रकार के शुभ फल दर्शाता है। निर्बल होने पर संसार के नाना प्रकार के कष्ट और स्त्री-सुख या भ्रातृ-सुख में न्यूनता लाता है। झगड़ा और विचित्र प्रकार के भ्रमण सम्बन्धी कार्य प्रगट करता है।

जिसकी कुण्डली में लग्न चंद्र या बुध इस ग्रह से शुभ दृष्टि योग करता हो तो उसकी बुद्धि और मानसिक उन्नति अच्छी प्रकार की प्रगट होती है। उसे विशेष कर आध्यात्मिक, गूढ़, फलित ज्योतिष, सामुद्रिक आदि शास्त्रीय विषय में प्रवेश या इतर विषय में योग्यता बढ़ती है।

९ नेपच्यून—वरुण—इस ग्रह का धर्म पानी सरीखा अस्थिर है और सर्व साधारण पन से यह ग्रह अधिक अशुभ फल उत्पन्न करता है। बार-बार विचार बदलना, विश्वास करने अयोग्य, अस्थिरता आदि गुण प्रकट करता है। यह ग्रह कुण्डली में जब बलवान हो या इसपर शुभग्रह की दृष्टि हो या बुध, चंद्र, से शुभ दृष्टि योग करता हो, उस समय बुद्धि की तीव्रता बढ़ेगी। अन्तर्दृष्टि में या दैवी दृष्टि में विचार करने की प्रेरणा मन में बढ़ती है, मन आध्यात्मिक मार्ग की ओर झुकता है। यदि वह कुंडली में बुरे स्थान में या पीड़ित हो तो बुरी वासना, मत्सर, लोभ, आदि की ओर ले जाने वाले विचार उत्पन्न करता है।

इस ग्रह के प्रभाव से दूसरे की नकल शीघ्र करने में निपुण होता है। इससे जल तत्व से लाभ, गायन, तंतु वाद्य, काव्य, गूढ़ शास्त्र में प्रवेश, स्वप्न सृष्टि के विचित्र अनुभव दर्शाता है। यह जल राशि (कर्क या मीन) में बलवान होता है। यह बुध के साथ अशुभ दृष्टि योग करता हो तो मज्जा तंतु में क्षोभ उत्पन्न करता है। चन्द्र के साथ पीड़ित हो तो शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य नहीं रहता।

राहु-केतु

इन दोनों ग्रहों में राहु का ही महत्व है, क्योंकि राहु से सदा ६ राशि अंतर पर केतु रहता है। राहु को छोड़कर केतु कहीं नहीं जा सकता। दोनों ग्रह सदा वक्री रहते हैं और उनकी गति सदा एक-सी रहती है। जब राहु या केतु के बीच चन्द्र क्रांति वृत्त पर आ जाता है उस समय उसका शर शून्य या बहुत थोड़ा रहता है, तभी ग्रहण सम्भव होता है। पृथ्वी और सूर्य के बीच चंद्र आ जाने से जब सूर्य नहीं दिखता तो सूर्य ग्रहण होता है और सूर्य व चंद्र के बीच पृथ्वी आने से चंद्रग्रहण होता है। ये दोनों अप्रकाश ग्रह राहु-केतु बड़े महत्व के हैं, इस कारण इनकी गणना ग्रहों में की जाती है।

राहु का मुख्य धर्म मारना है। यह क्रूर ग्रह तीसरे स्थान में हो तो भाइयों का, चतुर्थ में माता का, पंचम में संतति का, सप्तम में स्त्री का, दशम में पिता का मारक होता है। यह पापग्रह है। दांत ओंठों के बाहर या बड़े धनुषाकार दिखे तो राहु का प्रभाव समझना। यह लग्न व ६, ७, १२ स्थान में नाशकर्त्ता होता है। राहु बलवान हो तो, उन्नत दशा में लाता है।

इनका फल विचार—

राहु केतु जिस भाव में हों और जिस-जिस भावस्वामियों के साथ हों उसीके अनुसार शुभ या अशुभ फल देते हैं। इनका कोई बिम्ब न होने के कारण दूसरों का प्रभाव ग्रहण कर शुभाशुभ फल देते हैं। ये तमोगुणी हैं। केन्द्र में हों और त्रिकोण से सम्बन्धित हो या त्रिकोण में हो और केन्द्रेश से सम्बन्धित हों तो शुभकारक होते हैं राहु केतु जिस स्थान में हों या जिस भावेश के साथ हों उस भाव की वृद्धि करते हैं। परन्तु कोई ग्रह अच्छा भी हो तो भी राहु के साथ रहने से बुरा फल होता है। राहु केतु २ या ११ भाव के स्वामी हों तो जिस ग्रह के साथ रहते हैं वैसा इनका स्वभाव हो जाता है अर्थात शुभ ग्रह के साथ शुभ और पाप ग्रह के साथ अशुभ हो जाता है।



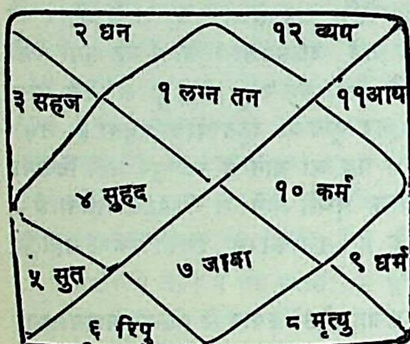
अध्याय ३२

भाव-परिचय

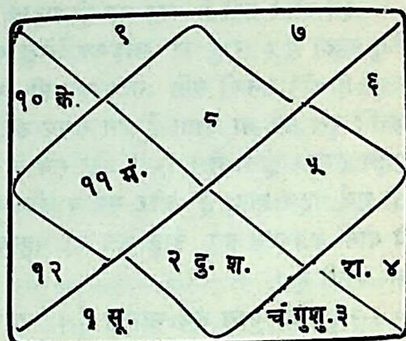
पहले बतला चुके हैं कि द्वादश भाव के स्थान स्थिर हैं और वे स्थान लग्न स्थान से गिने जाते हैं। उन भावों के विशेष नाम नीचे कुण्डली में बताये गये हैं।

कुंडली में ग्रहों की स्थिति बदलती रहती है, परन्तु भाव वे ही रहते हैं। भाव में कोई परिवर्तन नहीं होता, परन्तु इन भावों में जो राशियां रहती हैं,वे लग्न की स्थिति के अनुसार सदा बदलती रहती हैं।

भाव के नाम



लग्न कुण्डली



जैसे यहाँ लग्नकुण्डली में वृश्चिक लग्न है तो तब स्थान (लग्न) में वृश्चिक का अक ८ रहेगा और इसी क्रम से शेष भावों में राशियों के अंक लिखे रहेंगे जैसा यहाँ लग्नकुंडली में दिया है।

इसको इस प्रकार पढेंगे कि (तीसरा) सहज स्थान में केतु मकर का है (चौथे) सुहृद स्थान में कुम्भ का मंगल है, (षष्ठ) रिपु स्थान में मेष का सूर्य है, (सप्तम) जाया स्थान में वृष का बुध और शनि हैं, (अष्टम) मृत्यु स्थान में मिथुन का चंद्र गुरु और शुक्र है, (नवम) धर्म स्थान में कर्क का राहु है। शेष स्थानों में कोई ग्रह नहीं है।

तन स्थान में वृश्चिक राशि, धन स्थान में धनु राशि, सुत स्थान में मीन राशि दशम भाव या कर्म स्थान में सिंह राशि, आय भाव में कन्या राशि, और व्यय भाव में तुला राशि है। इस प्रकार इन भावों के वर्णन में विशेष नाम का ही उपयोग होता है।

इन १२ भावों के जो प्रचलित नाम हैं इन्हें कंठस्थ कर लेना चाहिये, परन्तु इनके अतिरिक्त और भी नाम हैं जो कभी-कभी उपयोग में आते हैं उनके नाम नीचे दिए हैं।

१ तनु भाव—लग्न, होरा, मूर्ति, उदय, सिर, अंग, वपु, कल्प।

२ धन भाव—कुटुम्ब, वाक्, पित्त, वित्त, स्व, अर्थ, कोष; अक्षि (नेत्र)।

३ सहज भाव—सहोत्थ, गल, दुश्चिक्य, भ्राता, पराक्रम।

४ सुहृद भाव—सुख, वेश्म, पाताल, हृत्, (हृदय), वाहन, मातृ, (माता) रसातल, बंधु, अम्बु, कर्ण, हिबुक, सौर्य, तुर्य, मान, नोर, सद्म, गृह।

५ सुत भाव—आत्मज, मंत्र, विवेक, शक्ति, उदर प्रवेश, प्रभाव, प्रतिभा, धी, बुद्धि, तनुज, तनय, विद्या, वाक् स्थान।

६ रिपु भाव—रोग, क्षत, अरि, व्यसन, चोर, विघ्न।

७ जाया भाव—चित्तोत्थ, काम, मदन, भर्ता, कलत्र, दधि, सूप, द्यून, अस्त,स्मर, जामित्र या मित्र।

८ मृत्यु भाव—मरण, रंध्र, आयु, अंतक,, गुण, मूत्रकृच्छ्र, गुह्य, क्षीर, छिद्र, याम्य, निधन, लय; स्थान ।

९ धर्म भाव—पैतृक, भाग्य, गुरु, तप, लाभ, शुभ, दया, मार्ग, अर्जित ।

१० कर्म भाव—आज्ञा, मान, खं, आस्पद, दशम, व्योम, तात, मेषूरण ।

११ आय भाव—लाभ, प्राप्ति, आगम, भव, सर्वतो भद्र ।

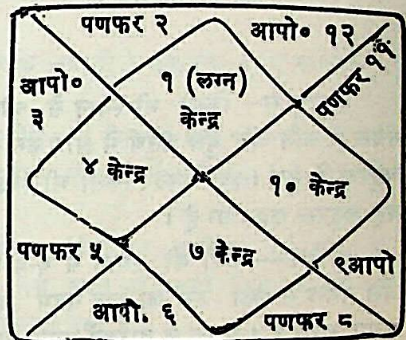
१२ व्यय भाव—रिष्फ, अंत्य, विनाश, लग्न का अन्त्य खण्ड, प्रांत्य, अंतिम, रिःफ ।

भाव संज्ञा—

उपर्युक्त भावों के नाम क्रमशः बताये हैं परन्तु विशेष परिस्थिति के अनुसार इनके विशेष नाम भी हैं जिनको जानना आवश्यक है । नीचे बताया है कि किस-किस भाव की क्या विशेष संज्ञा है । यहां भाव के नाम न लिखकर उनके क्रम सूचक अंक दिए हैं ।

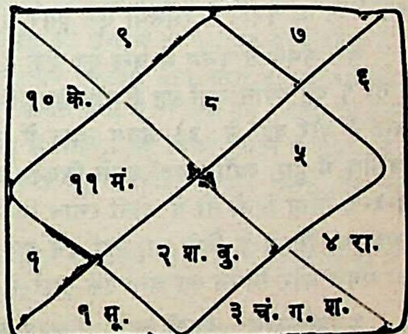
	भाव
(१) केन्द्र, कंटक या चतुष्टय	१,४,७,१०
(२) पणफर	२,५,८,११
(३) आपोक्लिम	३,६,९,१२,
(४) उपचय	३,६,१०,११,
(५) अपचय (जो उपचय नहीं)	१,२,४ ५,७,८,९,१२
(६) चतुरस्र	४,८ ।
(७) त्रिक	६,८,१२
(८) त्रिकोण	५,९
(९) त्रित्रिकोण	९

लग्नकुण्डली



इन सबको उदाहरण देकर समझाते हैं ।

लग्नकुण्डली



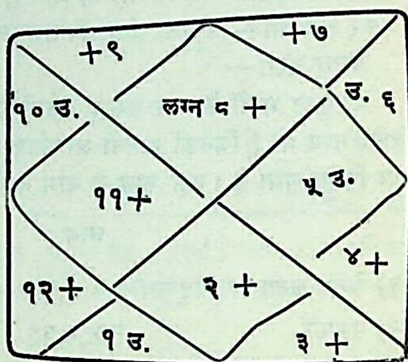
१ केन्द्र (१) लग्न में वृश्चिक (४) चतुर्थ भाव में कुंभ राशि का मं० (७) सप्तम भाव में वृष का बु० श० (१०) दशम में सिंह राशि है, ये सब राशियां और ग्रह (८,११,२,५, राशियाँ और मं० बु० श० ग्रह) केन्द्र में हैं ।

२ पणफर—(२) में धन राशि, (५) में मीन, (८) में मिथुन, (११) भाव में कन्या राशि है । इन स्थानों की राशियाँ पणफर में हैं । अष्टम में चन्द्र गुरु शुक्र हैं । ये ग्रह भी पणफर में हैं ।

३ आपोक्लिम—(३) में मकर का केतु, (६) में मेष का सूर्य, (९) में कर्क का राहु और (१२) में तुला राशि ये सब आपोक्लिम में हैं।

केन्द्र अर्थात् बीच के स्थान से दूसरा पणफर और तीसरा आपोक्लिम का घर होता है, जैसा यहाँ समझा चुके हैं।

४ उपचय, ५ अपचय—यहां कुंडली में जहां उ० लिखा है वह उपचय स्थान है शेष जहां + है वे अपचय स्थान हैं। यहां लग्न कुण्डली में उपचय में (३) में मकर का केतु, (६) में मेष का सूर्य, (१०) में सिंह और (११) में कन्या राशि है। शेष बचे हुए स्थान अपचय कहलाये।



६ चतुरस्र— किसी भी स्थान से चौथा और आठवां चतुरस्र कहलाता है, जैसे मंगल से शनि और बुध चतुर्थ में और कन्या राशि (११ भाव) अष्टम में हैं ये मंगल से चतुरस्र में हुए। इसी प्रकार किसी भी स्थान से चौथा आठवां स्थान गिनने से जो आवे वह चतुरस्र कहलाता है।

७ त्रिक—किसी भी स्थान से ६-८ और १२ वें स्थान त्रिक स्थान कहलाते हैं, जैसे मंगल से छठा कर्क का राहु नवम भाव में है। मंगल से आठवां लाभ भाव में कन्या राशि है। मंगल से बारहवें मकर का केतु तृतीय भाव में है। ये सब मंगल के त्रिक स्थान में हुए।

८ त्रिकोण—किसी भी स्थान से नवम स्थान और वहां से पंचम स्थान त्रिकोण कहलाता है। एक दूसरे से नवम पंचम राशियाँ इस प्रकार होंगी। १, ५, ९। ३, ७, ११। ४, ८, १२। ये राशियां एक दूसरे से त्रिकोण में हैं।

जैसे मंगल से पंचम में चन्द्र गुरु शुक्र है और चंद्र से नवम स्थान में कुंभ का मंगल है तो १ वह स्थान जहाँ ग्रह हैं वहां से १ गिना, वहां से (५) पांचवें स्थान में मिथुन का चन्द्र है और वहाँ से (९) नवम स्थान में मंगल है, इस प्रकार ये स्थान एक दूसरे से त्रिकोण में हुए, क्योंकि यहाँ इनसे त्रिकोण बनता है। इसी प्रकार किसी भी स्थान से १-५-९ स्थान गिनो तो वे दोनों स्थान त्रिकोण में पड़ते हैं। १ स्थान तो केवल उस स्थान को गिनने के लिये था, यहां बचे हुए २ ही स्थान त्रिकोण के होते हैं जैसा कुंभ का मंगल और मिथुन का चन्द्र एक दूसरे से त्रिकोण में हैं।

९ त्रित्रिकोण—किसी स्थान से नवम स्थान त्रित्रिकोण कहलाता है, जैसे चन्द्र से मंगल नवम स्थान में है तो कहेंगे कि चन्द्र से त्रित्रिकोण में मंगल है।

इसी प्रकार लग्न से या किसी भाव विशेष से दूसरे भाव या ग्रह कितने स्थानान्तर पर है विचार कर भाव संज्ञा ऊपर बताए अनुसार निश्चित करना।

भाव स्वामी Lord of the house

जिस भाव में जो राशि है उस राशि का जो स्वामी होगा वही ग्रह भावस्वामी कहलाता है। भाव स्वामी को भावेश्वर, भुवन पति, भावेश या भाव अधिपति भी कहते हैं।

भाव स्वामी का भाव सम्बन्ध से भी पृथक्-पृथक् नाम होता है, जसेः—लग्न का स्वामी–लग्नेश, द्वितीय भाव का स्वामी–द्वितीयेश या धनेश, ११वाँ लाभ स्थान है उसका स्वामी लाभेश इत्यादि।

भाव स्वामी के विशेष योग Special aspects of the Lords of the houses

(अध्याय २८ का दृष्टि योग भी देखो)

१ भावेश योग—जब दो या अधिक भावेश (भाव स्वामी) का योग होता है तो भावेश योग कहते हैं।

जब कोई त्रिकेश (त्रिक ६-८-१२ भाव के स्वामी) जब-जब दूसरे भावेशों से योग करते हैं तो अनिष्ट फल देते हैं।

केन्द्रेश (केन्द्र भाव का स्वामी) व त्रिकोणेश (त्रिकोण भाव का स्वामी) का योग शुभ फल देता है। ये स्थान के अनुसार फल देते हैं। (त्रिक) ६, ८, १२ भाव में भावेश निर्वल होता है।

२ भावेश दृष्टि योग—जब दो या अधिक भावेश एक दूसरे पर पूर्ण दृष्टि से देखते हैं तो भावेश पर दृष्टि योग करते हैं। त्रिक भाव का स्वामी, जिस भावेश पर दृष्टि करता है उस भावेश के फल को निर्वल कर देता है।

३ त्रिकोण योग—जब दो भावेश एक दूसरे के त्रिकोण (नवम पंचम स्थान) में हों तो उसे त्रिकोण योग कहते हैं। ये योग लक्ष्मी, राज वैभव, विभूति, कीर्ति देने वाला होता है। केन्द्रेश और त्रिकोणेश का त्रिकोण योग श्रेष्ठ होता है।

४ केन्द्र योग–दो भावेश परस्पर केन्द्र में हों तो केन्द्र योग होता है। यह योग महत्व सूचक है। एक ग्रह के केन्द्र स्थान से दूसरा ग्रह भी केन्द्र में हो तब यह योग होता है।

५ लाभ योग–दो भावेश एक दूसरे पर तृतीय एकादश योग करते हों तो उसे लाभ योग कहते हैं। यह बहुत सम्पत्ति देने वाला होता है। एक ग्रह जहाँ हो उससे दूसरा ग्रह ग्यारहवें स्थान में हो तो दूसरे ग्रह से पहिला ग्रह तीसरे स्थान में पड़ता है। इस प्रकार जब एक ग्रह से गिनने पर दूसरा ग्रह ग्यारहवें स्थान में हो तब यह योग होता है।

६ द्विर्द्वादश योग—जब दो भावेश एक दूसरे से दूसरे या बारहवें स्थान में हों तो यह योग होता है। यह योग दरिद्रता सूचक है।

७ षडष्टक योग—दो भावेश एक दूसरे से छठें या आठवें स्थान में हो तो यह योग होता है। यह दुःख और कष्ट देता है।

८ अन्योन्य आश्रय योग—दो भाव के स्वामी जब एक दूसरे के भाव में हों तब यह योग होता है, जैसे लग्नेश लाभ स्थान में हो और लाभेश लग्न में हो तो यहाँ लग्नेश और लाभेश का अन्योन्य आश्रय योग हुआ। इसे परिवर्तन योग भी कहते हैं।

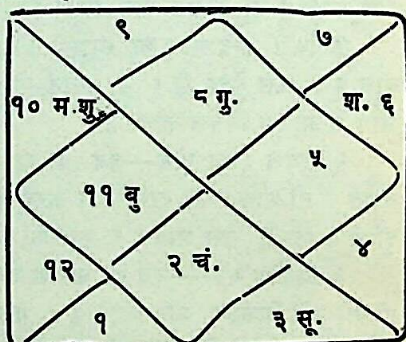
९ युति—जब दो भावेश एक ही राशि के एकही अंश पर हों तो उसे युति कहते हैं।

१० षड्भांतर या प्रति योग—जब एक भावेश एक दूसरे से ६ राशि के अंतर पर हो अर्थात् एक दूसरे के सन्मुख हो तब यह योग होता है।

इन योगों का वर्णन दृष्टि विचार में भी हो चुका है, परन्तु भाव से सम्बन्ध होने के कारण यहाँ दिया है। यहाँ केवल मुख्य-मुख्य योग ही दिये हैं, क्योंकि योग अनेक हैं।

योग—ग्रहों का ऐसी परिस्थिति में आ जाना जिससे वह दूसरे ग्रह, भाव या राशि से किसी प्रकार सम्बन्धित होकर ऐसी परिस्थिति उत्पन्न कर देवे जिससे कोई विशेष फल उत्पन्न होने की सम्भावना हो। ऐसे अनेक योगों का वर्णन फलित ज्योतिष में दिया है।

यहां इन्ही योगों को उदाहरण देकर समझाते हैं :—



इस कुण्डली में षष्ठ भाव का स्वामी मंगल और अष्टमेश बुध हैं, ये त्रिक भाव के स्वामी हैं। मंगल सहज भाव में है और मंगल से दूसरा स्थान चतुर्थ भाव है जिसमें बुध है। यहां मंगल और बुध का (६) द्विर्द्वादश योग हुआ। क्योंकि मंगल से बुध दूसरा और बुध से मंगल बारहवां है। यह योग दरिद्रता सूचक है। इस पर भी त्रिक भाव के स्वामियों का इस प्रकार योग होना अनिष्ट कारक है।

यहाँ चन्द्र सप्तम भाव में है, मंगल से यह गिनने पर पंचम स्थान होता है, इस कारण मंगल से नवम पंचम ((३) त्रिकोण) योग हुआ। यह योग अच्छा है, परन्तु यह त्रिकोण के स्वामियों का योग नहीं हुआ।

शनि लाभ स्थान में है वह चतुर्थेश (केन्द्र का स्वामी) है, इससे पंचम स्थान में शुक्र तृतीय भाव में है तो शनि और शुक्र का नवम पंचम होने से (३) त्रिकोण योग हुआ। यहाँ शुक्र सप्तमेश (केन्द्र स्वामी) है, इस कारण यहाँ केन्द्र के अधिपतियों का (शनि और शुक्र का) त्रिकोण योग हुआ। यह योग अच्छा है।

लाभ भाव का स्वामी बुध (चतुर्थ) केन्द्र में है। धर्म का भाव स्वामी चंद्र भी केन्द्र (सप्तम) में है। यहाँ दोनों भावेश केन्द्र में हैं और एक दूसरे के केन्द्र में भी हैं तो यह (४) केन्द्र योग हुआ। यह अच्छा योग है।

जब कोई ग्रह एक दूसरे से चतुर्थ या सप्तम में हो तो एक दूसरे से केन्द्र में होते हैं, क्योंकि जो एक के चतुर्थ है वह दूसरे से दशम में पड़ता है और जो एक दूसरे से सप्तम में है वह दूसरे से भी सप्तम होता है। लग्नकुण्डली में १, ४, ७, १० स्थान में रहने वाले ग्रह केन्द्र में कहलाते हैं, परन्तु एक ग्रह से दूसरे ग्रह के स्थान का अन्तर भी ४, ७, १० स्थान की दूरी पर होने से पहिले ग्रह के केन्द्र में दूसरा ग्रह है ऐसा कहेंगे।

यहाँ शनि जो तृतीयेश और चतुर्थेश होकर लाभ स्थान में है, इससे तीसरे स्थान में लग्नी (लग्न का) गुरु बैठा है जो धनेश और पंचमेश है। इन दोनों ग्रहों का (५) तृतीय एकादश योग है, क्योंकि शनि से गुरु तीसरा और गुरुसे शनि ग्यारहवाँ है। यह सम्पत्तिदाता योग हुआ।

षष्ठेश मंगल तृतीय भाव में है। मंगल से षष्ठ स्थान में सूर्य अष्टम भाव में बैठा है यह सूर्य दशमेश है। यहाँ षष्ठ और दशम भाव स्वामी और मंगल और सूर्य का (७) षड़ष्टक योग हुआ जो कष्टदायक है।

गुरु लग्न में वृश्चिक के १०° पर है और चन्द्र सप्तम भाव में वृष के १०° पर है तो गुरु और चन्द्र का (१०) षड्भान्तर योग या प्रतियोग हुआ।

मंगल मकर के २२° पर है और शुक्र भी मकर के २५° पर है तो मंगल और शुक्र की (९) युति हुई। यदि शुक्र भी मकर के २२° पर होता तो पूर्ण युति होती। परन्तु दोनों के अंशों में केवल ३° का अन्तर है अर्थात् दीप्तांश के भीतर है तो यह भी युति कहलायगी।

इस कुण्डली में लाभ भाव में बुध के स्थान में शनि बैठा है और चतुर्थ में शनि के स्थान में (कुंभ राशि में) बुध बैठा है यह (८) अन्योन्य आश्रय योग हुआ। इसे परिवर्तन योग भी कहते हैं। इसी प्रकार और भी ग्रहों का योग विचारना।



अध्याय ३३

भाव विचार

जब कोई ग्रह किसी भाव में आता है तो उस भाव के सम्बन्ध से ग्रह के फल का विचार होता है, इस कारण इन भावों से क्या-क्या विचार किया जाता है यहाँ बतलाते हैं।

१ प्रथम भाव—इसे लग्न, मूर्ति, उदय या पूर्व भी कहते हैं। इस स्थान का नाम तनु है। इस स्थान से स्वभाव, प्रकृति, मन, स्वरूप, आयुष्य और इतर शारीरिक

दुःख सुख का विचार होता है। शरीर की दुर्बलता, पुष्टता, शरीर का रंग, शील, आकृति, शरीर के लहसन, मसा, तिल आदि चिह्न, आरोग्य, शरीर लक्षण आदि का विचार होता है। इसका मुख्य प्रभाव मस्तक पर है।

२ द्वितीय भाव—इसे धन स्थान कहते हैं। इससे जातक (जिसका जन्म हुआ है और जिसके सम्बन्ध में विचारना है) की सम्पत्तिक स्थिति का बोध होता है। इस भाव से कोष (खजाना), सोना, रत्न आदि की प्राप्ति, मित्र, वस्त्र, कुटुम्ब व स्त्री पुरुष का सुख और पूर्व अर्जित धन, अश्व कार्य, विद्वत्ता, लेखन, पटुत्व, वाणी, नेत्र और खाद्य पदार्थ आदि का विचार होता है। इसका प्रभाव कण्ठ, नेत्र और मुख पर होता है।

३ तृतीय स्थान—इसे सहज (साथ में उत्पन्न हुए) स्थान या भ्रातृ-स्थान व पराक्रम-स्थान भी कहते हैं। इससे भाई बहिन, भाइयों का सुख, पास के सम्बन्धियों का सुख या थोड़ी यात्रा रेल, बैल गाड़ी आदि की, पराक्रम (साहस), सेवक, चाचा, मामा, दासी, हाथ कान सम्बन्धी रोग, कान के गहने आदि का विचार होता है। इसका मुख्य प्रभाव हाथ, बाहु, कन्धा और कान पर होता है।

४ चतुर्थ स्थान—इसे सुहृद, पाताल और सुख स्थान भी कहते हैं। इस भाव से सुख-दुःख का, माता का, स्थावर सम्पत्ति का, आयुष्य के दिन का, क्षेत्र, गृह (घर) भूमि, बगीचा, तालाब, चौपाया, मित्र, सुख, बन्धु, उद्यम, ससुर, नानी और छाती का विचार होता है। इसका प्रभाव छाती और पेट पर होता है।

५ पंचम स्थान—इसे सुत भाव कहते हैं। इससे संतति, गर्भ, विद्या, शील-स्वभाव, मन्त्र, उपासना, सट्टा, लाटरी या इसी प्रकार के व्यवहार में यश, अपयश, आनन्द और बुद्धि का विचार होता है। इसका प्रभाव हृदय और पीठ व कुक्षि पर होता है।

६ षष्ठ भाव—इसको रिपु स्थान भी कहते हैं। इससे शत्रु, मामा, मौसी, होने वाला रोग, सेवक, अपने अधीन कार्य करने वाले, ऊँट, घोड़े, भैंस आदि पशु चोर भय, संग्राम, क्रूर कर्म, बन्धन भय, सौतेली माँ, अपयश, हानि, रोग, चिन्ता और शङ्का आदि का विचार होता है। इसका प्रभाव कमर, आँत, नाभि और पेट पर होता है।

७ सप्तम भाव—इसे अस्त या कलत्र या जाया-स्थान कहते हैं। इससे स्त्री, स्त्री-सुख, विवाह, व्यापार, गमन, अदालती झगड़े, साझीदार, प्रगट शत्रु या प्रतिद्वन्द्वी, संग्राम, विवाद, वाणिज्य, प्रवास या स्थानान्तर, जारकर्म, कलह आदि का विचार होता है। स्त्री का पति या पतिसुख का भी विचार इसी से होता है। इसका प्रभाव वस्ति, मूत्रपिंड और कमर पर भी होता है।

८ अष्टम भाव—इसे मृत्यु या आयु स्थान भी कहते हैं। इससे मृत्यु का निदान, आयु, संकट, शस्त्र, अकल्पित लाभ, स्त्री की ओर से धन प्राप्ति, नदी तैरना, अत्यन्त विषम मार्ग, गुदा रोग, गुह्य रोग, रिपु, दुर्गस्थान, ऋण, रण, लावारसी धन, व्याधि का उत्पन्न होना, छिद्र मार्ग, टेढ़ी बात, युद्ध समय, शत्रु का भय, वस्तु का नाश आदि का विचार होता है। इसका प्रभाव गुह्येन्द्रिय किंवा प्रजोत्पादक इन्द्रिय पर होता है।

९ नवम स्थान—इसे धर्मस्थान कहते हैं। इससे धर्म, श्रद्धा, तप, तीर्थयात्रा, लौकिक, भाग्योदय, दूर की यात्रा, जल प्रवास, स्वप्न, तत्वज्ञान, बुद्धिमत्ता, ग्रन्थ, कर्तव्य, दीक्षा, मठ, देवग्रह, कुआं-तालाव आदि का विचार, भाग्य की वृद्धि, निर्मल स्वभाव नम्रता आदि का विचार होता है। इसका प्रभाव जाँघ पर पड़ता है।

१० दशम भाव—इसे कर्मस्थान या राज्यस्थान भी कहते हैं। इससे पितृ सुख, ओहदा, कीर्ति, कर्म, कार्य से होने वाला अच्छा या बुरा काम, यज्ञ, उद्योग-धन्धा, व्यापार, मुद्रा, राजा से आदर, बड़ी पदवी की प्राप्ति का विचार, नौकरी, पेशा, अधिकार, राज्य, वृष्टि आदिक आकाशीय वृत्तांत आदि का, प्रवास (परदेशगमन) और ऋण आदि का विचार होता है। इसका प्रभाव घुटने पर होता है।

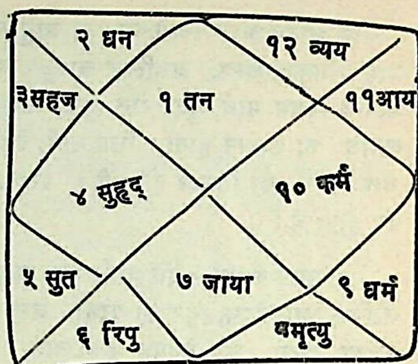
११ एकादश भाव—इसे आय या लाभस्थान भी कहते हैं। अनेक प्रकार का लाभ, आशा, इच्छा, द्रव्य लाभ, आभूषण, हाथी, घोड़े, पालकी आदि ऐश्वर्य, मित्र सुख, धान्य, विद्या लाभ, परिवार, दामाद, मित्र कैसे मिलेंगे आदि का विचार होता हैं। इसका प्रभाव पैर व पिंडली पर होता है।

१२ द्वादश भाव—इसे व्यय स्थान कहते हैं। इससे मोक्ष, गुप्त विद्या, आध्यात्मिक विद्या, कैद, दण्ड, शत्रु, खर्च का विचार, हानि, दान, व्यय, पाखण्ड, आत्महत्या, राजकीय संकट, कर्ज, ठगबाजी और घेरना या पकड़ना आदि का विचार इससे होता है। इसका प्रभाव पांव का पंजा, उंगली और तलुवा पर होता है।

इस भावकुंडली से अपने सम्बन्धियों का भी विचार होता है। उसे नीचे के पैरों में चक्र में दिये अंक के अनुसार मिलावें जैसे—

१—तन, आजी, नाना। २—धन-समधिन। ३—सहज, भाई, बहन, नौकर-चाकर। ४—सुहृद, मित्र, माता, ससुर। ५—सुत, सन्तान। ६—रिपु, काकी, मौसी, मामा, फूफा। ७—जाया, स्त्री, आजी, भाई-बहन की सन्तान, नानी। ८—मृत्यु, समधी। ९—धर्म, भावज, बहनोई, नाती, साले, साली। १०—कर्म, स्वामी, पिता, सास, राजा। ११—आय, लड़के की बहू, दामाद। १२—व्यय, काका मामी, फूफी।

इस लग्नकुंडली पर से उसके सम्पूर्ण सम्बन्धियों का इस प्रकार विचार हो सकता है कि जिसका विचार करना है उस भाव को लग्न मानकर उसी से तन धन, सहज आदि भाव क्रमानुसार गिन कर उसी से उसके सम्बन्ध का सम्पूर्ण फल निकाला जा सकता है।



जैसे स्त्री के सम्बन्ध में विचार करना है तो स्त्रीभाव (सप्तम भाव) को लग्न मान कर उससे तन-धन सहज आदि भाव गिन कर विचारना पड़ेगा। जैसे सप्तम को लग्न माना तो उससे स्त्री के शरीर आदि का विचार होगा, उससे दूसरा घर (अष्टम भाव) से स्त्री का धन, तीसरे घर (नवम भाव) से, उसके भाई-बहन, चतुर्थ घर (दशम भाव) से, उसका सुख, माता आदि का विचार होगा। इसी प्रकार सप्तम को लग्न मान कर उससे पूरे १२ भाव का विचार कर, स्त्री के सम्बन्ध का फल विचार हो सकता है।

अब साले साली का विचार करना है तो स्त्री भाव सप्तम को लग्न मान कर उसके भाई बहिन जानने को सप्तम से तीसरा गिनने पर नवम भाव आया। इससे स्त्री के भाई-बहन (साले-साली) का फल जान सकते हैं। इसी प्रकार सास (स्त्री की माँ) का विचारना है तो चौथा घर माता का होने से, सप्तम से चौथा गिना तो दशम भाव आया, यह स्त्री की माँ (सास) का घर हुआ। उससे सप्तम घर सास के पति अर्थात् ससुर का होता है तो दशम से चौथा घर, चौथा भाव यह ससुर का घर हुआ।

पुत्र-पुत्री का घर पाँचवां है। उससे सातवाँ स्त्री का और पति का घर होता है तो पंचम भाव से सातवाँ, एकादश भाव, पुत्र की स्त्री (बहू) या लड़की का पति (दामाद) का हुआ। बहू की माँ (समधिन) जानने को एकादश भाव से चौथा घर (धन भाव) बहू की माँ (समधिन) का घर हुआ। उससे सातवाँ (अष्टम भाव) उसके पति अर्थात् समधी का घर हुआ।

तीसरा भाव भाई बहिन का है, उससे सातवाँ नवम भाव हुआ। यह भाई की स्त्री या बहिन का पति (बहनोई) का घर हुआ। भाई बहिन की सन्तान जानना है तो पंचम भाव सन्तान का होने से तीसरे से पाँचवाँ घर गिना तो सप्तम भाव आया। यह भाई बहिन की सन्तान (भतीजे) (भतीजी) का घर हुआ।

पिता के भाई बहिन के बारे में जानने को पिता के दशम घर से सहज तीसरा गिना तो व्यय भाव आया। यह काका या फुआ का घर हुआ। इससे सप्तम में छठा

भाव है, वह काकी या फूफा का घर हुआ। पिता की माँ (आजी) का स्थान जानने को पिता के दशम स्थान से, चौथा स्थान लग्न हुआ, यह आजी का घर हुआ। इससे सप्तम घर सप्तम स्थान हुआ, इससे आजा का विचार होगा।

माता के स्थान चतुर्थ से चौथा घर सप्तम स्थान हुआ। यह माता की माँ अर्थात् नानी का घर हुआ, इससे सप्तम घर लग्न है, यह नाना का घर हुआ।

इसी प्रकार एक ही कुंडली पर से सम्पूर्ण सम्बन्धियों के फल का विचार हो सकता है।

अध्याय ३४

धूप घड़ी

जहाँ घड़ी नहीं है या घड़ी विगड़ जाने के कारण समय नहीं मालूम हो सकता, वहाँ धूप घड़ी अवश्य बना लेनी चाहिए। धूप घड़ी का समय सच्चा स्थानिक समय Local Time है। धूप रहते रहते दिन भर का समय ठीक-ठीक जाना जा सकता है। यह ज्योतिषियों के बड़े काम की चीज है, क्योंकि धूप घड़ी के समय के अनुसार जो लग्न निकाली जायगी वह शुद्ध लग्न निकलेगी। इस कारण धूप घड़ी का बनाना जानना चाहिए। इसके बनाने की युक्ति नीचे दी है। एक सीधा बांस लो उसे सीधा करके (जहाँ समभूमि और खुला हुआ स्थान हो) गाड़ दो। कई दिन तक लगातार इसकी छाया ८ बजे दिन को देखो तो प्रतीत होगा कि इसकी छाया सदा एक ही स्थान पर नहीं रहती और थोड़ी बहुत उसकी दिशा में अन्तर पड़ जाता है। यदि उत्तर ध्रुव पर सीधा बांस गाड़ा जावे तो उसकी छाया सदा एक ही समय में एक ही स्थान पर रहेगी। कारण यह है कि उत्तरी ध्रुव पर जो बाँस गाड़ा गया वह पृथ्वी की अक्षरेखा के समानान्तर होता है और धरातल जिस पर छाया पड़ती है वह अक्षरेखा से समकोण होता है। यदि किसी दूसरे स्थान पर इस प्रकार बांस गाड़ा जावे तो वह अक्षरेखा के समानान्तर नहीं होता। वह धरातल जिस पर बाँस की छाया पड़ती है बाँस से समकोण बनाती है, इस कारण सीधे गाड़े हुए बाँस की छाया एक ही समय पर एक ही स्थान पर नहीं पड़ती।

यदि बांस समकोण पर न गाड़ कर भूमि में ध्रुव की सीध में गाड़ा जाय तो छाया में परिवर्तन नहीं होगा। ध्रुव का कोण जिसकी सीध में बांस गाड़ा गया है उस स्थान का अक्षांश सूचक है अर्थात् उस स्थान के अक्षांश के कोण के अनुसार

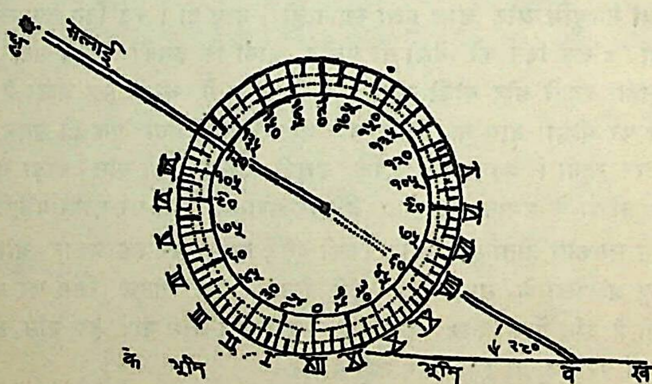
यदि उस बांस का झुकाव ध्रुव की ओर हो तो वह बांस ध्रुव की सीध में हो जायगा और आस पास जहाँ बांस की छाया पड़ती है, समय सूचक चिन्ह बना देने से पधू घडी का काम देगा। इसी सिद्धान्त पर धूप घड़ी बनी है।

धूप घड़ी बनाने के लिए गोल पुट्ठे का टुकड़ा लो उसमें समान २४ भाग बना कर घंटे का निशान लगा दो जिससे २४ निशान २४ घंटा बन जायेंगे। फिर एक सलाई उस पुट्ठे के ठीक बीचों बीच इस प्रकार छेद कर लगा दो कि वह पुट्ठे के समकोण में रहे। फिर उस सलाई की एक नोक ध्रुव की ओर करके उसे जमीन में इस प्रकार गाड़ दो या जमा दो कि सलाई भूमि में उस स्थान के अक्षांश के बराबर कोण बनावे। उस सलाई की छाया समय सूचक अंकों पर पड़ने से वहाँ का ठीक समय ज्ञात होगा। जैसे चित्रसंख्या ८३ में बताया है, समय सूचक अंकों पर सलाई की जहाँ छाया पड़ेगी उसी के अनुसार स्थानिक समय होगा।

चित्रसंख्या ८३ देखो यहाँ गोल पुट्ठे में बाहर की ओर समय सूचक घंटों के चिन्ह बने हैं। आगे आवश्यक न होने से और भी घंटों के अंक नहीं लिखे गये हैं। मध्यान्ह के १२ बजे का चिन्ह सबसे नीचे रहता है। यह धूपघड़ी २८° के अक्षांश के स्थान पर समय बतायेगी।

भीतर की ओर १५-१५ अंश के अन्तर पर अंश के चिन्ह लगाकर अंश लिखे हैं। एक घंटे के भीतर १५-१५ मिनट के ४ कोठे बने हैं। यहाँ स्थानाभाव के कारण और विभाग नहीं किये गये। इन प्रत्येक कोठों के ३-३ और विभाग करने से प्रत्येक विभाग ५-५ मिनट का बन जायेगा।

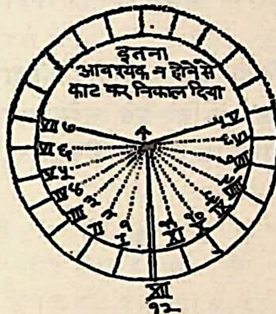
अब धूपघड़ी को कहीं स्थापित करने के लिए स्थाई बनाना है तो इस प्रकार बनायेंगे—



चित्र संख्या ८३ धूपघड़ी

एक त्रिकोण इस प्रकार बनाओ जिसका एक कोण अपने स्थान के अक्षांश के बराबर हो और उसे किसी सम चबूतरे पर इस प्रकार पक्की तौर पर जमा दो कि

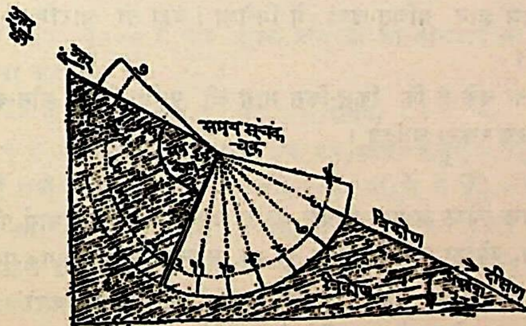
उस त्रिकोण का ऊपरी किनारा ध्रुव की सीध में रहे। फिर इस गोल समय सूचक चक्र को (जो किसी धातु के पत्र पर बनाया गया हो) नीचे की ओर जहाँ १२ बजे का चिन्ह है इस प्रकार समकोण बनाते हुए केन्द्र बिन्दु तक काटो, जिससे वह पहिले बताये हुए त्रिकोण में फंसाया जा सके। फिर उसे उस त्रिकोण में इस प्रकार फंसा दो कि त्रिकोण पर वह समकोण बनावे। अब इस त्रिकोण की ऊपरी छाया गोल चक्र पर पड़ेगी, वह समय सूचक होगी। इस गोल चक्र का ऊपरी अनावश्यक भाग काटकर फेंक दो। बड़े से बड़ा जितने घंटे का दिलमान उस स्थान पर होता



चित्रसंख्या ८४ धूपघड़ी बनाने का चक्र बनाना

है उतने ही घंटों के चिन्ह की आवश्यकता पड़ेगी। शेप भाग अनावश्यक होंगे, इस कारण अनावश्यक भाग को निकाल देना चाहिए, जैसा चित्रसंख्या ८४ में बताया है।

यहाँ २८° के अक्षांश पर धूपघड़ी बनी है, इस कारण १४ घंटे के चिन्ह यहाँ रहने दिये हैं। पहिले बता चुके हैं कि २४°-१२′ से ३०°-३८′ अक्षांश तक १४ घंटे का परम दिन होता है। इस कारण केवल १४ घंटे के चिन्ह यहाँ बनाये हैं। इस प्रकार के कटे हुए चक्र को त्रिकोण समकोण बनाते हुए जमाया है जैसा चित्र



चित्रसंख्या ८५ चक्र को त्रिकोण में फसाना

संख्या ८५ में बनाया है। चक्र में जो १२ वजे के स्थान में केन्द्र तक फंसाने के लिए पहिले काट लिया गया था, उसी कटे हुए स्थान को त्रिकोण में फंसा कर जमाना चाहिए जिससे त्रिकोण के दोनों ओर उस चक्र का भाग निकला रहे। इसी चक्र में जिस स्थान पर त्रिकोण की छाया पड़ेगी, वहाँ बनाये हुए चिन्ह के अनुसार समय घंटा मिनट में जाना जा सकेगा।

चक्र को त्रिकोण में फंसाने के लिए यदि आधा त्रिकोण का भाग और आधा चक्र का भाग काट कर फंसाया जाय तो अच्छा जम जाता है और इसे त्रिकोण में जमाते समय इस वात का ध्यान रहे कि त्रिकोण और चक्र के बीच दोनों ओर समकोण रहे।

फिर इस त्रिकोण को किसी लकड़ी के छोटे पटिया पर जमा दो। बस यही धूप घड़ी बन गई। समय देखने के लिए इसे सदैव इस प्रकार रखना चाहिए कि त्रिकोण का ऊपरी किनारा और नोक ध्रुव की सीध में रहे।

●

अध्याय ३५

१ बिना पंचाङ्ग के तिथिज्ञान

यदि पंचाङ्ग पास न हो तो स्थूल रूप से तिथि वार नक्षत्र आदि का ज्ञान किस प्रकार प्राप्त किया जा सकता है यह नवीन विद्यार्थी को जानना आवश्यक है। इस कारण इन सबके जानने की रीति यहाँ वतलाते हैं।

इन विधियों से स्थूल ज्ञान ही होता है। सूक्ष्म ज्ञान तो गणित द्वारा ही होता है, इसका सूक्ष्म ज्ञान गणित-खण्ड में मिलेगा। यहाँ तो प्रारम्भिक ज्ञान की वातें बताई जायेगी।

पहिले बता चुके हैं कि किस-किस मास की पूर्णमासी को कौन-कौन नक्षत्र पड़ते हैं, उनको स्मरण रखना चाहियं।

	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
मास	चैत्र	वैशाख	ज्येष्ठ	आषाढ़	श्रावण	भा. प.	आश्विन	कार्तिक	मार्ग	पौष	माघ	फाल्गुन
नक्षत्र	चित्रा	वि.	ज्येष्ठा	पू. षा.	श्रवण.	पू. भा.	अश्वि०	कृत्ति०	मृग०	पुष्य.	मघा.	उ.फा.

जिस दिन की तिथि जानना है उस दिन का नक्षत्र मालूम करो। फिर पूर्णमासी के आगे जो नक्षत्र हो उससे इष्ट दिन के नक्षत्र तक गिनो। जो संख्या हो, कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा से उतना गिन कर तिथि कह दो। कभी-कभी तिथि में क्षय वृद्धि होने

से एक तिथि का अन्तर पड़ जाता है। १५ दिन से अधिक हो तो अमावस्या की १५ तिथि घटा कर शेष तिथि शुक्ल पक्ष की जानना।

पूर्णमासी को जो नक्षत्र बताये हैं उनमें भी कभी-कभी एक नक्षत्र का अन्तर पड़ जाता है, क्योंकि कोई नक्षत्र दिन के पहिले भाग में ही अन्त हो जाता है, कोई पूरे दिन भर रहता है, इस कारण तिथि में भी कभी-कभी अन्तर पड़ जाता है और कभी-कभी तिथि ठीक निकलती है।

(१) जैसे सम्वत् २००० में धनिष्ठा नक्षत्र को कौन तिथि वैशाख में होगी जानना है। चैत्र पूर्णिमा को नक्षत्र चित्रा था, उसके आगे का नक्षत्र स्वाती से धनिष्ठा तक गिना तो ९ हुए। कृष्ण प्रतिपदा से गिना तो ९. तिथि हुई। पचाङ्ग देखो तो उस दिन दशमी तिथि है। सप्तमी की हानि होने से तिथि का अन्तर पड़ गया।

(२) श्रावण में मूल नक्षत्र को कौन तिथि पड़ेगी यह जानना है। आषाढ़ की पूर्णिमा को पू. षा. नक्षत्र के आगे का नक्षत्र उ. षा. से मूल तक गिना तो—२५ आये, ये १५ से अधिक होने से, १५ तिथि अमावस्या तक के घटाये तो, शेष १० रहे। ये शुक्ल पक्ष की दशमी तिथि हुई। पंचाङ्ग में उस दिन ग्यारस थी। इस उदाहरण में श्रावण की पूर्णिमा को श्रवण नक्षत्र होता है, अपना मूल नक्षत्र उसके पहिले आता है, इससे इसके पहिले का मास आषाढ़ की पूर्णमासी ली गई।

सूर्य और चन्द्र से तिथि जानना और तारीख से तिथि जानना आगे बताया गया है।

२–बिना पंचाङ्ग के वार (दिन) जानना

चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को जो दिन हो वह उस वर्ष का राजा कहलाता है। चैत्र शुक्ल परिवा से गत मास की अमावस्या तक गिनो, जो संख्या हो उसे १½ से गुणा करो और उसमें वर्तमान महीना के पक्ष के बीते हुए दिन जोड़ दो और योग में ७ का भाग दो, शेष बचे उसे वार के राजा से उस संख्या तक गिनो तो वार ज्ञात होगा।

(१) जैसे सम्वत् २००० में चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को सोमवार था। यही सोमवार वर्ष का राजा कहलाया।

सम्वत् २००० में आषाढ़ शुक्ल ११ का वार जानना है।

चैत्र शुक्ल १ से आषाढ़ की अमावस्या तक गत मास=३ हुए × १½=४½ आषाढ़ की अमावस्या से आषाढ़ शुक्ल ११ तक गत दिन=१० पहिले के ४½+१०=१४½÷७=शेष ½। वर्ष का राजा सोमवार से ½ गिना, तो सोमवार गत हुआ, वर्तमान मंगल वार आया। पहिले गत दिन लिया था, इस कारण सोमवार गत दिन आया। यदि वर्तमान दिन लिया होता तो उत्तर में वर्तमान दिन आता। पंचाङ्ग में आषाढ़ शुक्ल ११ को मंगलवार है।

(२) सम्वत् २००० कुआँर बदी १४ को कौन वार था?

चैत्र से भादों की अमावस तक=५ मास × १½=७½ भादों की अमावस से भादों की पूर्णिमा तक १५ दिन, आगे कार्तिक बदी १४ तक=१४ दिन। ७½+१५+१४ दिन=३६½ दिन÷७=शेष १½ दिन। वर्ष के राजा सोमवार से १½ गिना तो दूसरा मंगलवार आया। इस कारण उस दिन मंगलवार था।

(३) सम्वत् २००१ राजा शनि। माघ कृष्ण १० का दिन जानना है।

चैत्र शुक्ल १ से पूस की अमावस तक=९ मास × १½=१३½ पूस की अमावस से पूस की पूनों तक=१५ दिन। पूस की पूर्णिमा से माघ कृष्ण १० तक=१० दिन। १३½+१५+१० ३८½÷७=शेष ३½ दिन। वर्ष का राजा शनि से गिना चौथा दिन मंगल वार का दोपहर आया। आधा दिन बचा था इससे प्रगट हुआ उस दिन दशमी आधे दिन तक थी।

(४) सम्वत् २००१ राजा शनि। आषाढ़ शुक्ल १३ का दिन जानना है।

चैत्र शुक्ल १ से आषाढ़ कृष्ण ३० तक=३ मास × १½=४½ आषाढ़ ३० से आषाढ़ शुक्ल १३ तक=१३ दिन। ४½+१३=१७½÷७ शेष ३॥ दिन ३ राजा शनि से चौथा वार मंगलवार हुआ। आधा दिन आया है अर्थात् १३ तिथि उस दिन आधे दिन तक ही थी।

बहुधा दिन के किसी भी समय पर तिथि का अन्त हो जाता है। तिथि की हानि या वृद्धि भी हो जाती है, जिसके कारण वार में भी कभी-कभी एक दिन का अन्तर पड़ जाता है।

आगे वर्ष के राजा का चक्र कई वर्षों का दिया है जिससे कहीं खोजना न पडे।

कई वर्षो के वर्ष के राजा का चक्र

सम्वत्	राजा वार	सम्वत्	राजा	सम्वत्	राजा	सम्वत्	राजा	सम्वत्	राजा
१८४८	सोम.	१८६९	शनि.	१८८४	बुध.	१८९७	शुक्र.	१९१०	शनि.
१८४९	शुक्र.	१८७०	शुक्र.	१८८५	रवि.	१८९८	बुध.	१९११	बुध.
१८५०	शुक्र.	१८७१	मगल	१८८६	शनि.	१८९९	सोम.	१९१२	सोम
१८५१	मंगल	१८७२	सोम.	१८८७	गुरु.	१९००	शुक्र.	१९१३	रवि.
१८५३	शुक्र.	१८७३	शुक्र.	१८८८	मंगल	१९०१	मंगल	१९१४	गुरु.
१८५४	बुध.	१८७४	मंगल	१८८९	सोम.	१९०२	शनि.	१९१५	मंगल
१८५७	बुध.	१८७६	शुक्र.	१८९०	शुक्र.	१९०३	शनि.	१९१६	सोम.
१८५८	रवि.	१८७७	बुध.	१८९१	गुरु.	१९०४	बुध.	१९१७	शुक्र.
१८५९	शनि	१८७८	मंगल	१८९२	सोम.	१३०५	मंगल	१९१८	गुरु.
१८६०	गुरु.	१८८०	शनि.	१८९३	शुक्र	१९०६	रवि.	१९१९	सोम.
१८६१	बुध.	१८८१	बुध.	१८९४	गुरु.	१९०७	गुरु.	१९२०	शुक्र.
१८६५	सोम.	९१८२	रवि.	१८९५	सोम.	१९०८	बुध.	१९२१	गुरु.
१८६७	गुरु.	१८८३	शनि.	१८९६	शनि.	१९०९	रवि.	१९२२	मंगल

सम्वत्	राजा	सम्वत्	राजा	सम्वत्	राजा	सम्वत्	राजा	सम्वत्	राजा
१९२३	शनि.	१९४३	सोम.	१९६३	रवि.	१९८३	रवि.	२००३	बुध.
१९२४	शुक्र.	१९४४	शुक्र.	१९६४	शुक्र.	१९८४	रवि.	२००४	रवि.
१९२५	बुध.	१९४५	गुरु.	१९६५	गुरु.	१९८५	गुरु.	२००५	शनि.
१९२६	रवि	१९४६	सोम.	१९६६	सोम.	१९८६	बुध.	२००६	बुध.
१९२७	शनि.	१९४७	शुक्र.	१९६७	रवि.	१९८७	सोम.	२००७	रवि.
१९२८	बुध.	१९४८	गुरु.	१९६८	शुक्र.	१९८८	शुक्र.	२००८	शनि.
१९२९	सोम.	१९४९	मंगल	१९६९	मंगल.	१९८९	बुध.	२००९	बुध.
१९३०	शनि.	१९५०	रवि.	१९७०	सोम.	१९९०	सोम.	२०१०	सोम.
१९३१	गुरु.	१९५१	शनि.	१९७१	शुक्र.	१९९१	शुक्र	२०११	रवि.
१९३२	बुध.	१९५२	बुध.	१९७२	मंगल	१९९२	गुरु.		
१९३३	रवि.	१९५३	रवि.	१९७३	सोम.	१९९३	मङ्गल		
१९३४	शुक्र.	१९५४	शनि.	१९७४	शुक्र.	१९९४	सोम.		
१९३५	बुध.	१९५५	बुध.	१९७५	शुक्र.	१९९५	शुक्र		
१९३६	रवि.	१९५६	मंगल	१९७६	मंगल	१९९६	बुध.		
१९३७	शनि.	१९५७	शनि.	१९७७	रवि.	१९९७	सोम.		
११३८	बुध.	१९५८	गुरु.	१९७८	शनि.	१९९८	शुक्र.		
१९३९	सोम.	१९५९	बुध	१९७९	बुध.	१९९९	मंगल.		
१९४०	रवि.	१९६०	रवि	१९८०	रवि.	२०००	सोम.		
१९४१	शुक्र	१९६१	शुक्र.	१९८१	शनि.	२००१	शनि.		
१९४२	मंगल	१९६२	बुध.	१९८२	बुध.	२००२	गुरु.		

३—बिना पंचांग के नक्षत्र जानना

किसी चान्द्र मास की पूर्णिमा को जो नक्षत्र होता है पहिले बता चुके हैं। पूर्णिमा से आगे की तिथि तक गिनो, उस संख्या को गत पूर्णिमा की नक्षत्र संख्या में जोड़ दो अर्थात् पूर्णिमा को जो नक्षत्र हो उसके आगे इष्ट तिथि की संख्या तक गिनो तो इष्ट नक्षत्र निकल आयगा।

(१) जैसे सम्वत् २००० में कार्तिक शुक्ल चतुर्थी को नक्षत्र जानना है। इसके पहिले कुँआर पूर्णिमा को अश्विनी नक्षत्र होता है। कुँआर पूर्णिमा से कार्तिक अमावस्या तक १५ दिन और कार्तिक शुक्ल चौथ तक गत दिन १५+३=१८ दिन हुए। अब पूर्णिमा का नक्षत्र अश्विनी से गिना तो १८ वां नक्षत्र ज्येष्ठा आया। पंचांग में भी उस दिन ज्येष्ठा दिया है।

(२) दूसरी रीति=कार्तिक कृष्ण १ से इष्ट मास तक गिन कर दूना करो और बीते पक्ष के दिन जोड़ कर १ और मिला दो और २७ का भाग दो। शेष जो बचे

उसे अश्विनी से गिन कर इष्ट नक्षत्र कहना। पक्ष के दिन जोड़ने के लिए कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा को गिनो और आगे गिनना आरम्भ कर इष्ट तिथि तक गिनना चाहिए।

जैसे ऊपर के उदाहरण में गत मास कुँआर है। इसे कार्तिक से गिना तो यह कुआँर १२ वां महीना हुआ। १२×२=२४+गततिथि (कुँआर पूर्णिमा से कार्तिक अमावस्या तक १५+चौथके ४ दिन)+१=२४+१५+४+१ ४४÷२७=शेष १७=१७ वां नक्षत्र अनुराधा होता है। इस कारण इष्ट तिथि को अनुराधा नक्षत्र आया। पंचांग में उस दिन ज्येष्ठा नक्षत्र है। इसमें भी कभी २ एक नक्षत्र का अन्तर पड़ जाता है।

दूसरा उदाहरण—माघकृष्ण १० को सम्वत् २००० में नक्षत्र जानना है। गत मास पूस हुआ। कार्तिक से पूस तक=३मास×२=६+गत दिन माघ कृष्ण के १५+ माघ शुक्ल के १० दिन+१=६+१५+१०+१=३२÷२७=शेष ५=मृगशिर। पंचांग में कुछ देर उपरान्त रोहिणी था, १ का अन्तर पड़ गया। तिथि के घट बढ़ जाने से प्रायः १ दिन का कभी २ अन्तर पड़ जाता है।

(३) तीसरी रीति अमावस्या को सूर्य और चन्द्र एक साथ रहते हैं। यदि सूर्य नक्षत्र ज्ञात हो तो अमावस्या से आगे जितने दिन (इष्ट दिन तक) हों गिनो, उतने दिन सूर्य नक्षत्र से गिनने पर अपना दिन नक्षत्र (चंद्र नक्षत्र) आयगा।

आकाश में भी यदि चंद्र दिखता है तो चंद्र के समीप जो नक्षत्र होगा आकाश में देखकर बता दो। उस दिन वही नक्षत्र होगा।

(४) बिना पंचाङ्ग के योग जानना

सूर्य का जो नक्षत्र हो मालूम करो। सूर्य नक्षत्र से पुष्य नक्षत्र तक दोनों नक्षत्रों को मिलाते हुए गिनो, फिर जिस दिन का योग जानना है उस दिन के चन्द्र नक्षत्र तक श्रवण से गिनो। दोनों संख्या जोड़ कर २७ का भाग दो, जो शेष बचे वह संख्या योग की होगी।

जैसे सं० २००० में श्रावण शुक्ल १० को जानना है। उस दिन सूर्य आश्लेषा नक्षत्र पर है और इष्ट दिन (दशमी) को ज्येष्ठा नक्षत्र है। अब पुष्य नक्षत्र से सूर्य के आश्लेषा नक्षत्र तक गिना=यह दूसरा नक्षत्र है=२ संख्या हुई। फिर श्रवण से इष्ट नक्षत्र ज्येष्टा तक गिना २३ आये। =२३+२=२५÷२७= शेष २५ रहे, २५ वां योग ब्रह्म योग आया, पंचांग में २६ वां योग ऐन्द्र है। नक्षत्रों के घट बढ़ जाने से इसमें भी कभी-कभी एक दिन का अन्तर पड़ जाता है।

(५) बिना पंचाङ्ग के करण जानना

शुक्ल प्रतिपदा से इष्ट तिथि को गिन कर दूना करो और १ घटा कर ७ का भाग दो तो ये चर करण निकलेंगे। वह करण तिथि के उत्तरार्द्ध में मिलेगा। पूर्वार्द्ध में उसके पहिले का करण जानना।

ये ७ चर करण है : (१) वव (२) वालव, (३) कौलव, (४) तैतिल (५) गर, (६) वणिज, (७) विष्टि।

स्थिर करण ४ है :—(१) शकुनि, (२) चतुष्पद, (३) नाग (४) किंस्तुघ्न।

स्थिर करण—शुक्ल परिवा को पूर्वाद्ध में किंस्तुघ्न; उत्तरार्द्ध में बव (चर) अमावस्या, कृष्ण ३० को पूर्वार्द्ध में चतुष्पद उत्तरार्द्ध में नाग, कृष्ण १४ को पूर्वार्द्ध में विष्टि (चर) उत्तरार्द्ध में शकुनि।

उदाहरण—सम्वत् २००० में श्रावण पूर्णिमा को करण जानना है। पूर्णिमा तक १५ तिथि=१५ × २=३०−१=२९÷७=शेष १=वव करण उत्तरार्द्ध में,इसके पूर्वार्द्ध में (इसके पहिले का) विष्टि करण होगा। १ तिथि में २ करण होते हैं।

पहिले करण जानने का चक्र दे चुके हैं, उसके द्वारा किसी भी तिथि का करण सरलता से जान सकते हैं।

(६) विना पंचाङ्ग के चन्द्र जानना

(इष्ट तिथि × २) × (कृष्ण पक्ष में ३५, शुक्ल पक्ष में ५)÷==लब्धि वर्तमान संक्रांति जिस राशि की हो उस राशि से लब्धि संख्या तक गिनो तो चन्द्र की राशि निकलेगी। गिनने में १२ से अधिक संख्या हो तो १२ घटा कर शेष अंक लेना।

(१) जैसे सं० २००० वैशाख शुक्ल १२ को चन्द्र जानना है।
तिथि १२ × २=२४+५ शुक्ल पक्ष के=२९ ÷ ५=लब्धि ५ दशमीं को वृष संक्रांति थी। वृष से लेकर लब्धि का अंक ५ तक गिना तो कन्या आई। तो उस दिन कन्या का चन्द्र था।

५)२९(५ लब्धि
२५
४

(२) कार्तिक अमावस को चन्द्र जानना है। तिथि १५ × २=३० + ३५ (कृष्ण पक्ष होने से)=६५ ÷ ५=१३ लब्धि। लब्धि १३ यह १२ से अधिक है तो १३ ÷ १२=शेष १ तुला की संक्रांति कृष्ण चौथ को थी उससे १ गिना तो तुला का चन्द्र आया।

(३) ज्येष्ठ पूर्णिमा स० २००० को चन्द्र जानना है। तिथि १५ × २=३० + ५ (शुक्ल के) =३५ ÷ ५=लब्धि ७। मिथुन संक्रान्ति १२ तिथि को थी, मिथुन से ७ गिना =सातवां धनु आया, इस कारण इष्ट दिन को धनु का चन्द्र हुआ।

दूसरी रीति—अमावस्या को सूर्य चन्द्र एक राशि पर रहते हैं तो जो सूर्य की राशि हो वहाँ से सवा दो दिन चन्द्र एक राशि पर रहता है। तिथि में २¼ दिन=९/४ का भाग दो। अर्थात् तिथि × ४ ÷ ९= जो लब्धि होगी. सूर्य की राशि से उतना गिनो तो चन्द्र की राशि ज्ञान होगी। जैसे वैशाख शुक्ल १२=१२ × ४ ÷ ९= १८ ÷ ९-२ लब्धि। सूर्य वृष का है तो वृष से लब्धि ५ तक गिना तो कन्या राशि आई। इस कारण चन्द्र की राशि कन्या हुई।

सूर्य की संक्रांति जानना आगे बताया है।

●

अध्याय ३६

सायन सूर्य जानने की स्थूल रीति

मास	तारीख	अंग्रेजी महीना	सूर्य की संक्रांति	अंश	गति कला
१ माघ	२०	जनवरी	कुंभ	१°	६१'
२ फालगुन	१९	फरवरी	मीन	१	६०
३ चैत्र	२१	मार्च	मेष	१	५९
४ वैशाख	२०	अप्रैल	वृष	१	५९
५ ज्येष्ठ	२१	मई	मिथुन	१	५८
६ आषाढ़	२१	जून	कर्क	१	५७
७ सावन	२३	जुलाई	सिंह	१	५७
८ भादों	२२	अगस्त	कन्या	१	५८
९ कुआँर	२३	सितम्बर	तुला	१	५८
१० कार्तिक	२३	अक्टूबर	वृश्चिक	१	६०
११ अगहन	२३	नवम्बर	धनु	१	५९
१२ पूस	२२	दिसम्बर	मकर	१	५९

यहाँ अंग्रेजी तारीख के अनुसार सायन सूर्य दिया है। इष्ट दिन का सायन सूर्य जानने की रीति—

चक्र में सायन सूर्य की संक्रान्ति और उसकी तारीख इष्ट दिन के समीप की खोजो और उससे इष्ट दिन का अन्तर निकालो। उसी के आगे सूर्य की गति दी है। अन्तर समय की गति स्थूल रूप से निकाल कर उसे चक्र में दिए हुए सायन सूर्य में जोड़ या घटा कर इष्ट दिन का सायन सूर्य जान सकते हो। चक्र में दिए हुए तारीख के पहले का समय हो तो घटाना पड़ेगा, आगे का हो तो जोड़ना पड़ेगा, तब इष्ट दिन का सायन सूर्य निकलेगा।

जैसे १८ मार्च का सायन सूर्य निकालना है। चक्र में देखा अपने इष्ट समय के समीप २१ मार्च दिया है। अब इष्ट दिन और चक्र की तारीख का अन्तर निकालना (चक्र की तारीख २१ मार्च—इष्ट तारीख १८ मार्च)=२१-१८=३ दिन का अन्तर आया। २१ मार्च के आगे गति ५९' दी है। १ दिन में सूर्य ५९' चलता है तो ३ दिन के अन्तर में =५९'×३=१७७ कला=२°—५७' गति हुई। यह सूर्य की इष्ट काल तक की गति हुई। अर्थात् २१ मार्च के आगे सूर्य का अन्तर २ —५७' हो गया। इस गति को चालन कहते हैं। अर्थात् सूर्य को इतना चलना पड़ेगा।

चक्र की तारीख से अपना इष्ट समय पहिले का है, इसलिए यह चालन घटाना पड़ेगा। जहाँ घटाना पड़ता है उसे चालन ऋण कहते हैं। जहाँ जोड़ना पड़ता है उसे चालन धन कहते हैं। इष्ट काल २१ मार्च के आगे का हो तो चालन धन होता

परन्तु अपनी तारीख २१ मार्च के पहिले की है। इस कारण यहाँ चालन ऋण हुआ। चक्र में जो दिया है उसे पंक्तिस्थ (जो पंक्ति में है) या चक्रस्थ कहते हैं। अब पंक्तिस्थ २१ मार्च के सायन सूर्य को लिया। वह मेष १° पर है = रा ०–१अंइसमें

रा.अं. क.
०--१--०
–०--२--५७
=११--२८--२
स्पष्ट सायन सूर्य

से चालन २°–५७' (चालन ऋण होने से) घटाया तो शेष रहा ११ रा २८°--३' यह स्पष्ट सायन सूर्य इष्ट काल का हुआ। यहाँ राशि ० है। इसमें से १ राशि नहीं घटती थी तो ऊपर १२ राशि मानकर घटाया तो ११ रही। इस प्रकार स्पष्ट सायन रवि हुआ।

गणित करने से इष्ट समय का ग्रह आदि निकलता है उसे स्पष्ट ग्रह आदि कहते हैं।

इष्ट कालीन सायन रवि स्पष्ट ११ रा २८° ३' में यदि २° ५७' जोड़ दिया जाय तो वही ० रा १° सायन रवि २१ मार्च का आ जाता है।

यदि घंटा भी दिया है तो उतने घंटे की गति निकाल कर उस चालन का भी ± (धन ऋण जैसा आवश्यक हो) करो। घंटे की गति त्रैराशिक से इस प्रकार निकालेंगे —६० घड़ी (एक दिन रात) में सूर्य की गति उस दिन ५९' (या जा गति हो) थी इनमें घड़ी में (इष्ट घड़ी में) कितनी होगी ? घंटा की घड़ी बना लो।

जैसे ५ घड़ी की गति निकालनी है ६० घड़ी में ५९' तो ५ घड़ी में

$\frac{५९ \times ५}{६०} = \frac{५९}{१२} =$ ४'—५५" गति हुई। मान लो १८ मार्च को

१२)५९(४'
४८
११×६०
१२)६६०(५५"
६०
६०
६०
×

सूर्योदय के आगे ५ घड़ी की और गति जाननी है तो इष्ट दिन के वाद की गति होने से जोड़ना पड़ेगा। पहिले का समय होता तो चालन घटाना पड़ता। १८ मार्च के सूर्य में घडी की गति और जोड़ा तो योग ११ रा २८° ३४' ५५' हुआ। अर्थात् उस समय मीन के २८° ३४' ५५" पर सूर्य होगा। सूक्ष्म गणित करने पर १०-१५ कला का अन्तर आ जाता है।

	रा	°	'	"
१८ मार्च को सूर्य	११	२८	३०	०
+ ५ घड़ी और	०	०	४	५५
योग=	११	२८	३४	५५

यह इष्ट काल का सायन सूर्य

सायन सूर्य में से अयनांश घटा देने से निरयन सूर्य होता है अयनांश निकालना पहिले बता चुके हैं।

सौर मास की संक्रान्ति की तारीख

सौर मास	संक्रान्ति (आरंभ)	संक्रांति की तारीख
१ वैशाख	मेष	१३ अप्रैल
२ ज्येष्ठ	वृष	१४ जुलाई
३ आषाढ़	मिथुन	१४ जून
४ श्रावण	कर्क	१६ जुलाई
५ भाद्रपद	सिंह	१६ अगस्त
६ आश्विन	कन्या	१६ सितम्बर
७ कार्तिक	तुला	१७ अक्टूबर
८ मार्गशीर्ष	वृश्चिक	१६ नवम्बर
९ पौष	धन	१५ दिसम्बर
१० माघ	मकर	१३ जनवरी
११ फाल्गुन	कुंभ	१२ फरवरी
१२ चैत्र	मीन	१५ मार्च

इसके आगे दिन का हिसाब लगाने से सौर मास की तारीख (तिथि) जानी जा सकती है। अर्थात् इस प्रकार बताई हुई तारीखों के आगे गिनने पर सौर मास की तिथि किसी भी इष्ट दिन की निकाल सकते हो। इसमें भी कभी-कभी एक दिन का अन्तर पड़ जाता है। यहाँ अंग्रेजी तारीख के हिसाब से कौन संक्रांति उस समय होगी यह साधारण प्रकार से जानी जा सकती है।

स्थूल रीति से बिना पञ्चांग के चन्द्र साधन (चन्द्र स्पष्ट करना)

जन्म समय पर किसी ग्रह की ठीक स्थिति इष्टकाल तक गणित द्वारा निकालने से जो जानी जाती है उसी को ग्रह स्पष्ट करना कहते हैं और उस ग्रह के स्पष्ट करने के गणित को साधन (साधन करने की विधि) कहते हैं।

ऊपर सायन सूर्य का साधन करना (बिना पंचाङ्ग के) बताया है, उसी प्रकार यहाँ चन्द्र का साधन करना भी बताते हैं।

सूर्य और चन्द्र में जब १२ अंश का अन्तर पड़ जाता है तब एक तिथि होती है। इस कारण चन्द्र स्पष्ट करने के लिए उस समय का सूर्य स्पष्ट कर लेना आवश्यक है।

जैसे वैशाख कृष्ण पंचमी ता० २५ अप्रैल सन् १९४३ ई० के ४ बजे संध्या समय समय चन्द्र स्पष्ट करना है।

पहले इस दिन का सूर्य स्पष्ट करेंगे। वैशाख में २० अप्रैल को वृष के १ अंश पर चक्र में सायन सूर्य दिया है और गति ५९ कला है। (२५ अप्रैल-२० अप्रैल)= ५×५९' गति=चालन धन (इष्टकाल पंक्ति के आगे होने से)+हुआ ५×५९'=२९५' =४ अंश-४५' चालन+इष्ट ४ बजे संध्या का है=(१२+४)=१६ बजे इष्ट। यह समय सूर्योदय के बाद का है। मान लो सूर्योदय ६ बजे हुआ। (१६ घण्टा-६ बजे सूर्योदय) १० घण्टा इष्ट। २४ घण्टा में ५९' गति तो १० घण्टा में =५९×१०/२४ ५= २९५/१२ २५ कला के लगभग।

इन सब को जोड़ा तो इष्ट काल में सायन स्पष्ट रवि=रा १ —६अंश—२०'—०' हुआ=(वृष के ६ अंश—२०')

सूर्य (वृष १°)=रा ० १
१ १ ०
५ दिन का चालन+= ० ४ ५५

योग = १ ५ ५५
१० घंटे का+= ० ० २५

= १ ६ २०
इष्ट कालीन सायन रवि

तिथि शुक्ल प्रतिपदा से गिनी जाती है। पूर्णिमा को १५ और अमावस्या को ३० तिथि होती है। अपनी इष्ट तिथि=वैशाख कृष्ण ५ है=१५ शुक्ल पक्ष के+५ गत तिथि कृण पक्ष के=(१५+५)=२०+१=२१ गत तिथि।

१ तिथि=१२° तो २१ तिथि=२१×१२अंश=२५२अंश=८ रा. १२ अंश

	रा	०	'
सूर्य स्पष्ट	१	६	२०
गत तिथि=	८	१२	०
प्रातः चन्द्र स्पष्ट=	९	१८	२०

=मकर का १८°—२०'

यह पञ्चमी को सूर्योदय पर चन्द्र की स्थिति हुई और प्रातः काल का सायन चन्द्र हुआ।

चन्द्र की दैनिक गति १२ अंश से १५$\frac{1}{3}$° तक है अर्थात् साधारण प्रकार से मध्यम गति १४ अंश है। २४ घण्टा में १४ अंश गति है तो आधे दिन की संख्या तक ७ अंश हुई है। १ घण्टा में लगभग ३५' गति हुई। यहाँ ४ वजे संध्या की गति निकालनी है। मान लो सूर्योदय ६ बजे हुआ तो सूर्योदय से इष्ट काल तक १० घण्टा हुआ। १ घण्टा में ३५' तो १० घण्टा में=३५'×१०=३५०'=५अंश'—५०' गति हुई। यहाँ चालन+है।

रा ० '
प्रात. चंद्र स्पष्ट ९—१८—२०
१० घण्टे का चालन+ ० -५—५०

इष्ट कालीन सायन चंद्र स्पष्ट } =९—२४—१०
=मकर का २४ अंश-१०'

इस प्रकार ४ बजे तक चंद्र मकर के २४ अंश—१०' पर हुआ। यह स्थूल मान से चन्द्र स्पष्ट हुआ। सूक्ष्म रीति से गणित करने में लगभग ११ कला का अन्तर पड़ जाता है।

(सायन चन्द्र—अयनांश)=निरयन चंद्र।

चंद्र साधन करने का दूसरा उदाहरण

तारीख २५ मई के ६ बजे संध्या का चन्द्र स्पष्ट करना है; ज्येष्ठ कृष्ण पञ्चमी का।

२१ मई की सूर्य=मिथुन १ अंश गति ५८'=इष्ट २५ मई को ६ बजे संध्या=चालन+(२५ मई—२१ मई)=४×५८' गति=२३२'=३अंश—५२ चालन+। ६ बजे संध्या इष्ट है। मान लो सूर्योदय ६ बजे है, ६ बजे से १२ घण्टा हुआ। २४ घण्टा में ५८' तो १२ घण्टा में २९' गति हुई। इन सबको जोड़ा तो इष्ट कालीन सायन सूर्य स्पष्ट २ रा-५अंश-२१' हुआ।

सूर्य मिथुन १ अंश=रा-१अंश-०'
चार दिन का चालन+०-३-५२
१२ घण्टे का ,, +०-०-२९
इष्ट कालीन सूर्य स्पष्ट } =२-५-२१

तिथि ज्येष्ठ ५ है=शुक्ल पूर्णिमा=१५+कृष्ण पञ्चमी तक गत तिथि ४=१५+४=१९ दिन।

१ तिथि में १२' तो १९ तिथि में=१९×१२ अंश=२२८ अंश=७ रा. १८ अंश रा ० ,,

सायन सूर्य-२-५-२१ — १ दिन की चन्द्र की मध्यम गति (औसत गति) १४°
तिथि के अंश+७-१८-० — है तो १२ घण्टा (½ दिन की ७°
=चन्द्र स्पष्ट=९-२३-२१=चतुर्थी के अन्त तक का।
आधे दिन का+=०-७-०
इष्ट कालीन सायन चंद्र स्पष्ट } =१०-०-२१=कुंभ के ०°-२१' पर चन्द्र हैं। =इष्ट कालीन सायन चन्द्र कुंभ के ०°-२१' पर है।

चंद्र साधन करने की दूसरी रीति—

चंद्र की मध्यम गति १२ अंश है कोई १४ अंश लेते हैं। रवि और चंद्र मे १२° अंश का अन्तर पड़ने पर १ तिथि होती है, शेष २ अंश मध्यम गति के हैं। उसके मिला देने से चंद्र के अंश ज्ञात हो जाते हैं।

अधिक मध्यम गति का अन्तर इस प्रकार से होता है।

तिथि	प्रतिपदा	द्वितीया	तृतीया	चतुर्थी	पंचमी	पंचमी से द्वादशी तक	शेष तिथि में
अन्तर	२°	४	६	५	३	३	२°

तिथि	पूर्णिमा से कृष्ण पंचमी तक	एकादशी से अमावस्या तक
अन्तर	३ अंश	३ अंश

चंद्र स्पष्ट करने के लिए सूर्य स्पष्ट में तिथि के अनुसार ये अंश मिला देने चाहिए। चंद्र की गति प्रति दिन १२ अंश के १५ तक ½° बढ़ जाती है। इसी के

कारण साधारण रीति से अधिक बढ़े हुए अंश ऊपर जोड़ना बताया है। इस रीति से चन्द्र स्पष्ट करने में १° के लगभग अन्तर पड़ जाता है, परन्तु ३° से अधिक अन्तर नहीं आता। तिथियाँ १ मास में पूरी ३० नहीं होती। इससे ये अंश बढ़जाते हैं।

जैसे सन् १९४३ में २५ मई को तदनुसार ज्येष्ठ वदी ६ को १२ बजे दिन का चंद्र साधन करना है। १२ बजे दिन अर्थात् सूर्योदय से लगभग ६ घंटा हुआ।

२१ मई को सायन रवि=मिथुन १° गति ५८' इष्ट २५ मई का हैं। आगे का होने से चालन धन हुआ।

(२५ मई–२१ मई) =४ दिन × ५८' गति=२३२'=३° –५२'=३° –५२'–०अंश

२४ घटा में ५८' गति तो ६ घंटा में=५८/४=१४½'   +०-१४-३०

४—६॥ चालन +

रा – ०

२१ मई को सूर्य २—१°—०

\+ चालन ०—४—६½

=सायन सूर्य=२—५—६½

रा ०

६ तिथि है=गत तिथि ५=५ × १२°=६०°=२—०°

\+ पंचमी के अन्त =२—०—०

तक चन्द्र योग ४—५—६½

+०—३—० पंचमी की बढ़ती के अंश

+०—३—० छठ ,, ,, ,,

योग=४—११—६½ (क्योंकि छठ उदय है)

६ घण्टा का + =३-३० २४ घण्टा में चन्द्र १४ अंश चला तो ६ घण्टा में

(७ १४ × ६)/(२४ ४२) = ७°/२ = ३°–३०'

चन्द्र स्पष्ट=४—१५—३६½

∴ इष्ट कालीन सायन चन्द्र स्पष्ट ४-रा १४°-३६½°

यह कुछ मोटा हिसाब है। गणित से १-२ अंश का अन्तर पड़ जाता है। सायन चन्द्र से अयनांश घटा दो तो निरयन चन्द्र होगा।

चंद्र से नक्षत्र और उसका चरण साधन करना

चंद्र स्पष्ट की राशि आदि की कला बना कर १३ अंश-२०'=८००' का भाग दो तो लब्धिगत नक्षत्र होगा। शेष में ४ गुणाकर ८००' का भाग दो तो वर्तमान नक्षत्र का चरण निकलेगा। १ नक्षत्र में ४ चरण होते हैं। सायन नक्षत्र १३°-२० का

होता है और अश्विनी से आरम्भ होता है। जैसे चंद्र मकर का २९°-५२' है। = ९रा-२९°-५२'=१७९९२"÷८००'=२२ गत नक्षत्र (श्रवण) वर्तमान २३ वां नक्षत्र धनिष्ठा का २ चरण।

रा. अं. क.	
९-२९-५२	८००') १७९९२'' (२२ गत नक्षत्र
×३०	१६००
२७०	१९९२
+२९	१६००
२९९	३९२
×६०	×४
१७९४०	८००) १५६८ (१ गत चरण
+५२	८००
१७९९२ विकला	७६८ शेष
	=वर्तमान दूसरा चरण हुआ

किसी राशि के नाम पर से जन्म नक्षत्र और चरण जानना—

आगे होड़ा चक्र दिया है जिस पर से हिन्दुओं के नाम विचार कर रखे जाते हैं। प्रत्येक नक्षत्र के ४ चरण होते हैं और प्रत्येक चरण के लिए एक अक्षर नियुक्त है। जन्म समय जो नक्षत्र होता है उस नक्षत्र का जो चरण वर्तमान हो उसी चरण के अक्षर के अनुसार नाम रखा जाता है। जैसे किसी का जन्म शतभिषक नक्षत्र के तीसरे चरण में हुआ तो चक्र में देखने से प्रगट हुआ कि शतभिषक के तीसरे चरण का अक्षर 'सी'' है। इसी अक्षर पर से सीताराम, शिशुपाल आदि नाम उस बालक का रखा जावेगा। स अक्षर में श अक्षर भी लिया जा सकता है। वह ह्रस्व हो या दीर्घ हो उसका कुछ विचार नहीं होता। यहाँ सी अक्षर है इसमें "छोटी इ" की भी मात्रा हो तो कोई अन्तर नहीं पड़ेगा। इसमें केवल अक्षर और मात्रा का विचार होता है। मात्रा ह्रस्व हो तो उसे दीर्घ भी ले सकते हैं जैसे कू और कु एक है। इसी प्रकार म और मा एक है। मघा के पहले चरण का जन्म होता है म अक्षर है तो मक्खन सिंह या मारुती प्रसाद भी नाम रख सकते हैं।

कई अक्षर ऐसे भी हैं जिन पर से नाम नहीं रखा जा सकता है जैसे ङ. ञ. ण. जब ये अक्षर आते हैं तो नाम "न" अक्षर या किसी दूसरे अक्षर से रख देते हैं।

इसी प्रकार किसी राशि के नाम पर से नाम के आदि अक्षर का विचार कर जन्म नक्षत्र या राशि भी जान सकते हैं। जैसे किसी का नाम रामलाल है। नाम का आदि अक्षर रा है। चक्र देखा तो तुला राशि के आगे चित्रा के तीसरे चरण का जन्म है और तुला राशि है।

इस चक्र से किसी ग्रह की राशि अंश कला आदि मालूम हो तो उसका नक्षत्र और चरण भी जाना जा सकता है।

जैसे जन्म समय चन्द्र स्पष्ट ९रा-२९°-५२' है तो यह जानने के लिए कि जन्म नक्षत्र और चरण क्या होगा, होड़ा चक्र का अन्तिम भाग देखो। ९रा २६°. ४०' तक धनिष्ठा का पहला चरण गत हो चुका, धनिष्ठा का दूसरा चरण १०रा-०°-०° तक है। अपना चन्द्र इन दोनों के भीतर है इससे यह प्रगट हुआ कि धनिष्ठा के दूसरे चरण का जन्म है।

नक्षत्र का चरण (जैसे नाम से प्रगट हो जाता है) जान लेने पर इसी चक्र द्वारा चन्द्र की राशि अंश आदि भी विदित हो सकता है।

जैसे किसी का जन्म धनिष्ठा के तीसरे चरण का है तो तीसरे चरण धनिष्ठा का १३ रा-३°-२०' तक है। दूसरा चरण १० रा ०° ०' तक है। इस कारण चंद्र इन दोनों के बीच है ऐसा समझना। चंद्र की ठीक स्थिति तो गणित करने से ही प्रगट होती है। यहाँ केवल मोटा हिसाब बतलाया है। गणित खण्ड में इसका गणित दिया है।

होड़ा चक्र को अवकहड़ा चक्र या शतपद चक्र भी कहते हैं।

१ चरण (नक्षत्र का) ३°-२०' का होता है। आगे ३°-२० जोड़ते जाने से राशि के अंशादि का चक्र बन जाता है।

इसमें एक अक्षर को लेकर प्रत्येक चरण के लिए पृथक् मात्रा लगा कर चरण के अक्षर बनाये गये हैं। जैसे ल से ला, ली, लू, ले, लो इत्यादि जैसा नीचे के चक्र से प्रगट होगा।

होड़ा कक्रश्अबकड़हा चक्र=शतपद चक्र।

क्रम	राशि	नक्षत्र	(चरण आदि अक्षर) चरण १	चरण २	चरण ३	चरण ४	राशि के अंशादि पहिला चरण रा–०–।	दूसरा चरण रा–०–।	तीसरा चरण रा–०–।	चौथा चरण रा–०–।
१	मेष	अश्विनी	चू	चे	चो	ला	०–३–२०	०–६–४०	०–१०–०	०–१३–२०
		भरणी	ली	लू	ले	लो	०–१६–४०	०–२०–०	०–२३–२०	०–२६ ४०
		कृत्तिका	आ	०	०	०	१–०–०	०	०	०
२	वृष	कृत्तिका	०	ई	उ	ए	०	१–३–२०	१–६–४०	१–१०–०
		रोहिणी	ओ	वा	वी	वू	१–१३–२०	१–१६–४०	१–२०–०	१–२३–२०
		मृगशिर	वे	वो	०	०	१–२६–४०	२–०–०	०	०
३	मिथुन	मृग०	०	०	का	की	०	०	२–३–२०	२–६–४०
		आर्द्रा	कू	घ	ङ	छ	२–१०–०	२–१३–२०	२–१६–४०	२–२०–०
		पुनर्वसु	के	को	हा	०	२–२३–२०	२–२६–४०	३–०–०	०
४	कर्क	पुन०	०	०	०	ही	०	०	०	३--३--२०
		पुष्य	हू	हें	हो	डा	३--६--४०	३--१०--०	०--१३--२०	३-,१६--४०
		आश्लेषा	डी	डू	डे	डो	३--२०--०	३--२३--२०	३--२६--४०	४--०--०
५	सिंह	मघा	मा	मी	मू	मे	४--३--२०	४--६--४०	४--१०--०	४--१३--२०
		पूर्वा फा०	मो	टा	टी	टू	४--१६--४०	४--२०--०	४--२३--२०	४--२६--४०
		उ० फा०	टे	०	०	०	५--०--०	०	०	०

६	कन्या	उ० फा०	०	टो	पा	पी	०	५--३--२०	५--६--४०	५--१०--०
		हस्त	पू	ष	ण	ठा	५--१३--२०	५--१६--४०	५--२०--०	५--२३--२०
		चित्रा	पे	पो	०	०	५--२६--४०	६--०--०	०	०
७	तुला	चित्रा	०	०	रा	री	०	०	६--३--२०	६--६--४०
		स्वाती	रु	रे	रो	ता	६--१०--०	६--१३--२०	६--१६--४०	६--२०--०
		विशाखा	ती	तू	तो	०	६--२३--२०	६--२६--४०	७--०--०	०
८	वृश्चिक	विशाखा	०	०	०	तो	०	०	०	७--३--२०
		अनुराधा	ना	नी	नू	ने	७--६--४०	७--१०--०	७--१३--२०	७--१६--४०
		ज्येष्ठा	नो	या	यी	यू	७--२०--०	७--२३--४०	७--२३--४०	८--०--०
९	धन	मूल	ये	यो	भा	भी	८--३--२०	८--६--४०	८--१०--०	८--१३--२०
		पू० षा०	भू	ध	फा	ढ	८--१६--४०	८--२०--०	८--२३--२०	८--२६--४०
		उ० षा०	भे	०	०	०	९--०--०	०	०	०
१०	मकर	उ० षा०	०	भो	जा	जी	०	९--३--२०	९--६--४०	९--१०--०
		श्रवण	खी	खू	खे	खो	९--१३--२०	९--१६--४०	९--२०--०	९--२३--२०
		धनिष्ठा	गा	गी	०	०	९--२६--४०	१०--०--०	०	०
११	कुम्भ	धनिष्ठा	०	०	गू	गे	०	०	१०--३--२०	१०--६--४०
		शतभि०	गो	सा	सी	सू	१०--१०--०	१०--१३--२०	१०--१६--४०	१०--२०--०
		पू० भाद्र०	से	सो	दा	०	१०--२३--२०	१०--२६--४०	११--०--०	०
१२	मीन	पू० भाद्र०	०	०	०	दो	०	०	०	११--३--२०
		उ० भा०	दु	थ	झ	ञ	११--६--४०	११--१०--०	११--१३--२०	११--१६--४०
		रेवती	दे	दो	चा	ची	११--२०--०	११--२३--२०	११--२६--४०	१२--०--०

होड़ा चक्र के अक्षर और उनका नक्षत्र चरण सूचक चक्र

नक्षत्र क्रम नाम	अक्षर	नक्षत्र चरण	अक्षर	नक्षत्र चरण	अक्षर	नक्षत्र चरण	अक्षर	नक्षत्र चरण	अक्षर	नक्षत्र चरण
१ अश्वि.	आ	३/१	इ	३/२	उ	३/३	ए	३/४	ओ	४/१
२ भरणी	का	५/३	की	५/४	कू	६/१	के	७/१	को	७/२
३ कृत्तिका			खी	२२/१	खू	२२/२	खे	२२/३	खो	२२/४ ख
४ रोहिणी	गा	२३/१	गी	२३/२	गू	२३/३	गे	२३/४	गो	२४/१
५ मृग.	घा	६/२								
६ आर्द्रा	छ	६/३								
७ पुन.	चा	२७/३	ची	२७/४	चू	१/१	चे	१/२	चो	१/३
८ पुष्य	ङ	६/४								
९ आश्ले.	जा	२१/३	जी	२१/४						
१० मघा	झ	२६/३								
११ पू. फा	ञ	२६/४								
१२ उ. फा.	टा	११/२	टी	११/३	टू	११/४	टे	१२/१	टो	१२/२
१३ हस्त	ठ	१३/४								
१४ चित्रा	डा	६/४	डी	९/१	डू	९/२	डे	९/३	डो	९/४

जो नहीं हैं अक्षर

घी घू घे घो

छो छू छे छो

जू जे जो

झो झू झे झो

ठी ठू ठे ठो

इस चक्र में अक्षर के आगे ऊपर नक्षत्र का क्रम और नीचे चरण के अंक दिये हैं। नक्षत्र क्रम से यहाँ दिये हुए नक्षत्र का नाम प्रकट हो जायगा।

इनमें ये अक्षर बराबर हैं—

अ=आ

इ=ई

उ=ऊ

ए=ऐ

ओ=औ

अ=अं

स=श

व=ब

१५ स्वाता.	ड	२०/४								
१६ विशा.	ण	१३/४								
१७ अनु.	ता	१५/४	ती	१६/१	तू	१६/२	ते	१६/३	तो	१६/४
१८ ज्ये.	य	२६/३								
१९ मूल	दा	२५/३	दी	२५/४	दू	२६/१	दे	२७/१	दो	२७/२
२० पू. षा.	ध	२०/२								
२१ उ. षा.	ना	१७/१	नी	१७/२	नू	१७/३	ने	१७/४	नो	१८/१
२२ श्रवण	पा	१२/१	पी	१२/४	पु	के३/१	पे	१४/१	पो	१४/२
२३ धनि.	फा	२०/३								
२४ शत.	भ	१९/३	भी	१९/४	भू	२०/१	भे	२१/१	भो	२२/२
२५ पू. भा.	मा	१०/१	मी	१०/२	मू	१०/३	मे	१०/४	मो	११/१
२६ उ. भा.	था	१८/२	थी	१८/३	थू	१८/४	थे	१९/१	थो	१९/३
२७ रेवती	रा	१४/३	री	१४/४	रू	१५/१	रे	१५/२	रो	१५/३
	ला	१/४	ली	२/१	लू	२/२	ले	२/३	लो	२/४
	वा	४/२	वी	४/३	वू	४/४	वे	५/१	वो	५/२
	ष	१३/२								
	सा	२४/२	सी	२४/४	सू	२५/२	से	२५/१	सो	२५/२

ङ. ञ. ण ञ इन अक्षरों से नाम नहीं बनता तो इनके बदले "न" या और कोई भी अक्षर नाम रख देते हैं।

डी ढ ढे ढो

थी थू थे थो

धो धू धे धी

फी फू फे फो

प=ख

जब हस्त के दूसरे चरण का जन्म होता है तो ष अक्षर होने से उसे ख मानकर नाम रख देते हैं

जैसे—

षरगराम= खरगराम

षड़ानन= खड़ानन

अध्याय ३७

तारीख से तिथि निकालना

सुवर्णांक	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९
विशेषांक	०	११	२२	३	१४	२५	६	१७	२८	९	२०	१	१२	२३	४	१५	२६	७	१८

आरम्भ महीना=मार्च को पहिला गिनो ।

आरम्भ में विशेषांक शून्य है जिसका क्षेपक ११ है अर्थात् प्रतिदिन ११ बढ़ता है । जैसे ११+११=२२+११=३३ इसका ३ ही लिया ३+११=१४, =१४+११=२५ । इसी प्रकार ये विशेंषांक ऊपर दिये हैं । ३० से अधिक तिथि होने पर ३० घटाने से जो बचता हैं वही ऊपर चक्र में ... । जैसे २२+११=३३ का ३० घटा कर ३ ही विशेषांक रखा है ।

सुवर्णांक Golden number=सन ईस्वी+१=शेष सुवर्णांक का क्रम ।

(शाका+७८)=सन ईस्वी ।

जैसे शाका १८६५+७८=१९४३ सन् । (१९४३+१)/१९=१९४४/१९=शेष ६ । शेष ६ बचा तो १९४३ सन का सुवर्णांक=६ हुआ । इस सुवर्णांक ६ के नीचे विशेषांक २५ दिया है । इस वर्ष भर के लिए इसी विशेषांक से तिथि निकलेगी ।

```
१९ ) १९४४ ( १०२
     १९
     ----
       ४४
       ३८
       ----
        ६ शेष
```

रीति—सन् ईस्वी में १ जोड़ कर १९ का भाग दो जो शेष वचे वह सुवर्णांक होगा । उस सुवर्णांक के नीचे जो विशेषांक मिले उसे लो । फिर जिस अंग्रेजी महीने की तारीख की तिथि जाननी हो, मार्च से उस अग्रेजी महीने तक गिनो, गिनते समय मार्च को १ गिनो । गिनती में महीने की जो संख्या आवे उसे मास संख्या कहते हैं ।

महीने की तारीख,+विशेषांक=मास संख्या=तिथि ।

महीने की तारीख, विशेषांक और मास सख्या जोड़ने से तिथि निकलती है । तिथि ३० से अधिक आवे तो ३० घटाने से जो बचे उसे लेना । पूर्णिमा को १५ और अमावस्या को ३० तिथि जानो ।

सब योग १ से १५ तक आवे तो=शुक्ल पक्ष की तिथियाँ होगी ।

" १६ से ३० " " "=कृष्ण " " "

जैसे सन् १९४३ ई० की ७ अप्रैल की तिथि जाननी है । सन् १९४३ का सुवर्णांक ६ निकला था, इसका विशेषांक २५ है, इष्ट मास अप्रैल है । मार्च से गिना, मार्च १, अप्रैल २, इस प्रकार मास संख्या २ हुई ।

=विशेषांक+तारीख+मास संख्या=२४—३०=४ शुक्ल पक्ष की तिथि ।
२५ ७ २

यह योग ३० से अधिक है, इस कारण ३० घटाया, शेष ४ रहे । १ से १५ तक शुक्ल पक्ष की तिथि होती है । इस प्रकार ४ शुक्ल पक्ष की तिथि तारीख ७ अप्रैल को होगी ।

दूसरा उदाहरण—तारीख १८ मार्च सन १८९० की तिथि जाननी है ।

सन् $\frac{१८९०+१}{१९}=\frac{१८९१}{१९}$ शेष १० सुवर्णांक, विशेषांक ९ } मार्च से इष्ट मास मार्च १

विशेषांक ९ + तारीख १८ + मास १ = २८ कृष्ण पक्ष की तिथि हुई (२८–१५) = १३ तिथि

ऊपर बताये नियम से तारीख की तिथि निकलाने में कभी-कभी एक तिथि का अन्तर पड़ जाता है । क्योंकि कभी-कभी एक तारीख में २तिथियाँ हो जाती हैं । कभी-कभी तिथियों की हानि वृद्धि भी होती है । इस कारण कभी १ तिथि का अन्तर पड़ जाता है । इस रीति से तिथि का अनुमान हो जाता है । (२) इसी रीति को अब दूसरी प्रकार से करते हैं ।

आगे तारीख से चन्द्र की तिथि निकालने की जंत्री दी है, उसको देखने की रीति यह है ।

सन+$\frac{१}{१९}$=शेषांक (सन में जोड़ कर १९ का भाग दो जो बचे वह शेषांक कहलाया)

इष्ट महीने के नीचे और शेषांक के आगे चक्र में जो अंक मिले वह मासांक होगा । मासांक+तारीख=तिथि (तिथि ३० से अधिक होने से ३० घटा देना)

जैसे सन् १९४२ में १५ दिसम्बर की तिथि जाननी है ।

$\frac{१९४२+१}{१९}=\frac{१९४३}{१९}=$ शेषांक ५

१९) १९४३ (१०२
१९
―――
४३
३८
―――
५ शेषांक

इष्ट मास दिसम्बर के नीचे और शेषांक ५ के आगे देखा तो २४ मिला । यही मासांक हुआ । मासांक २४ + तारीख १५ =३९–३०=९ तिथि शुक्ल पक्ष की ।

दूसरा उदाहरण—

इसी सन् में दिसम्बर की तिथि जाननी है ।

उपर्युक्त मासांक + तारीख=२६ कृष्ण पक्ष की तिथि

२४ २ (२६-१५)=११ तिथि

पंचांग में उस दिन दशमी थी। एक तिथि वृद्धि होने से अन्तर आ गया।

तारीख से चन्द्र को तिथि जानने की जंत्री

शेषांक	जनवरी १	फरवरी २	मार्च ३	अप्रैल ४	मई ५	जून ६	जुलाई ७	अगस्त ८	सितम्बर ९	अक्टूबर १०	नवम्बर ११	दिसम्बर १२
१	०	२	१	२	३	४	५	६	८	८	१०	१०
२	११	१३	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१९	१९	९१	२१
३	२२	२४	२३	२४	२५	२६	२७	२८	०	०	२	२
४	४	५	४	५	६	७	८	९	१	१	१३	१३
५	२४	१६	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२२	२२	२४	२४
६	२५	२७	२६	२७	१८	२९	०	१	३	३	५	५
७	६	८	७	८	९	१०	११	१२	१४	१४	१६	१६
८	१७	१९	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२५	२५	२७	२७
९	२८	०	२९	०	१	२	३	४	६	६	८	८
१०	९	११	१०	११	१२	१३	१४	१५	१७	१७	१९	१९
११	२०	२२	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२८	२८	०	०
१२	१	३	२	२	४	५	६	७	९	९	११	११
१३	१२	१४	१३	१४	१५	२६	१७	१८	२०	२०	२२	२२
१४	२३	२५	२४	२५	२६	२७	२८	२९	१	१	३	२
१५	४	६	५	६	७	८	९	१०	१२	१२	२४	१४
१६	१५	१७	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२३	२५	२७	२७
१७	२६	२८	२७	२८	२९	०	१	२	३	४	६	६
१८	७	९	८	९	१०	११	१२	१३	१५	१५	१७	१८
१९	१८	२०	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२६	१६	१८	१८

ऊपर के अंक में ११ जोड़ने से ३० से अधिक होने पर ३० घटा देने से यह सारिणी बनी है।

शुक्ल प्रतिपदा की तारीख जानना

सन् ईस्वी के मासांक को ३० से घटा दो तो शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा की तारीख निकल आवेगी।

जैसे सन् १९४३ के मई का मासांक २८ है। $\frac{१९४३+१}{१९}=\frac{१९४४}{१९}$=६ शेषांक

सारिणी में ६ शेषांक के आगे और मई के नीचे २८ मासांक मिला।

३०-२८ मासांक=२ तारीख हुई। मई को शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा (पड़िवा) होगी।

पूर्णमासी की तारीख जानना

इष्ट सन के बाद मासांक को ३० में से घटा दो, शेष १५ रहे तो ३० तारीख को पूर्णिमा होगी। शेष १५ से अधिक हों तो १५ से जितने अधिक हों वही अधिक तारीख होगी। १५ से कम हों तो उसमें १५ और जोड़ना तो योग फल पूर्णिमा की तारीख होगी।

जैसे सन् १९४३ का शेषांक ६ है। जून के नीचे और ६ शेषांक के आगे जून का मासांक २९ दिया है। ३०-२९ मासांक=शेष १ यह १५ से कम है। इस कारण १+१५=१६ तारीख १६ को पूर्णिमा होगी।

इस रीति में भी १ का कभी कभी का अन्तर आ जाता है।

$$\frac{\text{सन् १९४६+१}}{\text{१९}} = \frac{\text{१९४७}}{\text{१९}} = \text{९}$$ शेषांक इसके आगे और मई के नीचे १ मासांक है।

३०—१=२९ यह १५ स अधिक है। २९—१५ शेष=१४ तारीख को मई में पूनम होगी।

तिथि से तारीख निकालना

$$\text{तारीख} = \left(\begin{matrix}\text{शुक्ल पक्ष तिथि+३०} \\ \text{कृष्ण पक्ष तिथि+१५}\end{matrix}\right) - \left(\begin{matrix}\text{चैत्र से १ गिनकर} \\ \text{इष्टमास तक संख्या}\end{matrix} + \text{सन् विशेषांक}\right)$$

सायन मेष संक्रान्ति को चैत्र जानो और इससे १ गिनो।

रीति—शुक्ल पक्ष की तिथि होतो ३० और कृष्ण पक्ष की तिथि हो तो १५ जोड़ना। योग फल को तिथि संख्या जानो।

मास संख्या—जिस मास में सायन मेष संक्रान्ति हो उसे चैत्र जानो और चैत्र को १ गिन कर इष्ट मास तक संख्या गिनो गिनने से जो संख्या आवे वह मासांक हुआ।

यहाँ नक्षत्र मान से जहाँ महीना पूरा हो उसे मास मानना आवश्यक नहीं है। केवल एक सायन मेष संक्रमण वाले मास को चैत्र मान कर इसी चैत्र से गिनना।

सन ईस्वी का सुवर्णांक और विशेषांक निकालना पहले बता चुके हैं। विशेषांक को माससंख्या में जोड़ो और इस योग को तिथि संख्या में घटाओ, जो शेष बचे वही तारीख होगी।

हिन्दी मास में जो अंग्रेजी महीना पड़ता है उस अंग्रेजी महीने की तारीख इस प्रकार निकालना। यदि ३० से अधिक तारीख आवे तो ३० दिन घटा देना। घटाने से जो बचे वह अगले महीने की तारीख होगी।

हिन्दी महीने में लगभग ये अंग्रेजी महीने पड़ते हैं।

चैत्र	वैशाख	जेठ	आसाढ़	सावन	भादों	कुआर	कार्तिक	अगहन	पूस	माघ	फागुन
मार्च	अप्रैल	मई	जून	जुलाई	अगस्त	सितम्बर	अक्टू०	नव०	दिस०	जन०	फर०

कभी इन महीनों में कुछ अन्तर पड़ जाता है।

उदाहरण (१)

सन् १९४३ ज्येष्ट शुक्ल १४ की तारीख जाननी है—

(१९४३+१) $=\frac{१९४४}{१९}$=शेष सुवर्णांक, इसका विशेषांक २५ इसी के नीचे दिया है।

तारीख=(शुक्ल १४+३०)—(चैत्र से ज्येष्ठ मास+३ विशेषांक २५)= ४४-२८=१६ तारीख हुई। इस तारीख में भी कभी-कभी १ का अन्तर पड़ जाता है। क्योंकि तिथि की हानि-वृद्धि होती हैं और कभी कभी एक तारीख में २ तिथि हो जाती हैं।

दूसरा उदाहरण—चैत्र कृष्ण १३ सन १८१० को तारीख जानना है—

$\frac{१८१०}{१९}+१=\frac{१८११}{१९}$=शेष १०, १० सुवर्णांक के नीचे ९ विशेषांक दिया है।

तारीख=(कृष्ण १३+१५)—(चैत्र से चैत्र मास ४+विशेषांक ९)=२८-१०=१८ तारीख आई। मार्च की १८ तारीख हुई।

अमावस्या की तारीख जानना

तारीख=३०—(सन का विशेषांक+चैत्र से इष्ट मास तक मास संख्या)

जैसे सन १९४२ के दिसम्बर में अमावस्या कौन तारीख पड़ेगी जानना है।

$\frac{१९४२}{१९}+१=\frac{१९४३}{१९}$=शेष ५ सुवर्णांक के नीचे १४ विशेषांक दिया है।

तारीख=३०-(विशेषांक+मार्च से दिसम्बर तक)=३०-२४-=६तारीख।

१४ महीना १०

इसमें भी कभी कभी १ दिन का अन्तर पड़ जाता है। पंचांगों में ७ तारीख को अमावस्या दी है।

विशेष विचार—संक्रान्ति मान में वृद्धि

संक्रान्ति मान ७२ वर्ष में १ दिन आगे बढ़ता है। जनवरी और फरवरी की तिथि निकालने को इष्ट वर्ष के पिछले वर्ष का विशेषांक निकालो और इन दोनों महीनों की अमावस्या निकालने के लिए गत वर्ष का विशेषांक लो।

अमावस्या निकालने का विशेषांक और महीने का योग ३० से अधिक हो तो ३० से घटा देना; जहाँ ० शेष रहे उसे ३० तारीख समझना। तिथि की क्षय वृद्धि से कभी-कभी तारीख में १ दिन का अन्तर पड़ जाता है। इस कारण इष्ट वार पर से शुद्ध तारीख निकाल कर मिलान कर लेना चाहिए। वार से तारीख निकालने की रीति आगे दी है।

तारीख से दिन निकालना

यदि तिथि से तारीख निकालनी है और दिन भी मालूम करना है तो यह निश्चय कर लेना चाहिए कि उस दिन वह तारीख पड़ती है या नहीं। जानने की रीति आगे दी है।

मासांक और वारांक

अंक	१	२	३	४	५	६	७
मास	जनवरी अक्टूबर	मई	लीप- फरवरी अगस्त	फरवरी मार्च नवम्बर	जून	सितम्बर दिसम्बर	लीप--जनवरी अप्रैल जुलाई
दिन	रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार

इस चक्र में महीने के ऊपर जो अंक दिए हैं वे मासांक हैं और दिन के ऊपर के अंक वारांक है।

रीति सन् ईस्वी का उत्तरार्द्ध अर्थात् इकाई और दहाई को लेकर उस उत्तरार्द्ध का चतुर्थांश भी उसी में जोड़ दो। चतुर्थांश निकालते समय आधा या पौन अंक मिले उसे जोड़ते समय छोड़ देना चाहिए। उस योग फल में तारीख और अंग्रेजी महीने का अंक (मासांक) भी जोड़ दो और ७ का भाग दो जो शेष बचे वही वार उपर्युक्त क्रम से होगा।

जैसे सन् १९४३ में २३ मई का दिन जानना है, सन् १९४३ का उत्तरार्द्ध ४३ हुआ=४३+४ ३/४=४३+१० ३/४=५३ (यहां जोड़ते समय ३/४ छोड़ दिया)=५३+तारीख २३+मई का मासांक २=७८। ७८+७=शेष १ रविवार। यहां मई के ऊपर २ अंक लिखा है इससे मई का मासांक २ हुआ। सब का योग ७८ था, ७ का भाग देने से १ बचा, १ के नीचे इतवार लिखा है। इससे प्रकट हुआ कि २३ मई सन् १९४३ को इतवार का दिन था।

बीसवीं सदी में उपर्युक्त नियम से तारीख का दिन निकालना है। परन्तु इसके पहिले की गत सदी की तारीख जानने के लिए प्रति सदी में २ अधिक जोड़ना और भविष्य की सदी में २ अंक घटा देना होगा, तब ठीक तारीख निकलेगी।

लीप फरवरी हो तो लीप वर्ष में जनवरी और फरवरी की तारीख से दिन निकालने में कुछ सावधानो की आवश्यकता है। ऊपर चक्र में लीप फरवरी और लीप जनवरी जहां लिखा है उस वर्ष उसके ऊपर लिखा मासांक लो अर्थात् लीप जनवरी का निकालने को लीप जनवरी का विशेषांक ० या ७ लेना और लीप फरवरी के लिए मासांक ३ लेना। क्योंकि लीप फरवरी के ऊपर ३ अंक लिखा है। यदि लीप वर्ष न हो तो साधारण जनवरी का अंक १ और फरवरी का साधारण अंक ४ लेना जैसा पहिले चक्र में बता चुके हैं।

लीप वर्ष (Leap year)=प्लुत वर्ष। जिस वर्ष में सन् ईस्वी में ४ का पूरा २ भाग चला जाय या पूर्ण सदी हो तो उसमें ४०० का भाग पूरा २ चला जाय अर्थात् भाग देने से शेष कुछ न बचे तो वह लीप इयर (प्लुतवर्ष) कहलाता है। जैसे ४, ८, १२, ८८, ९२, १६ में ४ का भाग पूरा २ चला जाता है। शेष कुछ नहीं बचता तो ये सब लीप वर्ष होंगे। और ४००, ८००, १२००, १६००, २०००, इत्यादि इन ईस्वी में जिसमें सदी शेष कुछ नहीं बचता तो ये सब लीप वर्ष कहलायेंगे,

सन् १९०० ईसवी यह पूरी सदी तो है (अर्थात् सैकड़ा के २ शून्य इसमें तो हैं) परन्तु ४०० का भाग पूरा पूरा नहीं जाता, ४०० का भाग देने से शेष बचता है। इससे यह लीप वर्ष नहीं है। १९१६ में ४ का भाग देने से कुछ नहीं बचता, इस कारण लीप वर्ष होगा।

लीप वर्ष में फरवरी २९ दिन की होती है। साधारण फरवरी में २८ दिन होते है शेष महीनों में कोई ३० दिन का कोई ३१ दिन का होता हैं। जनवरी, मार्च, मई, जुलाई, अगस्त, अक्टूबर और दिसम्बर में ३१ दिन, शेष महीनों में ३० दिन होते हैं।

आगे इसी को सरल जंत्री अनन्त वर्षो की बनाई गई है, जिससे किसी भी सन् की तारीख से दिन या दिन से तारीख सरलता से जान सकते हो।

अनन्त वर्षो की जन्त्री

अंग्रेजी महीना	सन् ईस्वी का नम्बर						
७ लीप जनवरी, अप्रैल, जुलाई	१	२	३	४	५	६	७
६ सितम्बर, दिसम्बर	२	३	४	५	६	७	१
५ जून	३	४	५	६	७	१	१
४ फरवरी, मार्च, नवम्बर	४	५	६	७	१	२	३
३ लीप फरवरी अगस्त	५	६	७	१	२	३	४
२ मई	६	७	१	२	३	४	५
१ जनवरी, अक्टूबर	७	१	२	३	४	५	६

१	८	१५	२२	२९	रवि.	सो.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.
२	९	१६	२३	३०	सो.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	र.
३	१०	१७	२४	३१	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	र.	सो.
४	११	१८	२५	—	बु.	गु.	शु.	श.	र.	सो.	म.
५	१२	१९	२६	—	गु.	शु.	श.	र.	सो.	मं.	बु.
६	१३	२०	२७	—	शु.	श.	र.	सो.	मं.	बु.	गु.
७	१४	२१	२८	—	श.	र.	सो.	मं.	बु.	गु.	शु.
		तारीख						दिन			

जन्त्री रखने की रीति

इस जन्त्री से किसी भी सन् की तारीख या दिन जान सकते हो। जिस सन् ईस्वी की तारीख खोजना हो उसका नम्बर आगे बताई हुई रीति से निकालो। साल में एक बार सन् का नम्बर खोज लेने से वह नम्बर वर्ष भर काम देता है।

जिस महीने की तारीख जाननी है वह अंग्रेजी महीना बाई ओर खोजो। ऊपर अंग्रेजी महीना लिखा है, उसके नीचे इष्ट महीना मिलेगा। उस महीने के सीध में

दाहिनी ओर इष्ट सन् का नम्बर खोजो। सन् ईस्वी का नम्बर जहाँ लिखा है उसी के नीचे सन् ईस्वी का नम्बर मिलेगा। जहाँ सन् ईस्वी का नम्बर मिले उसके नीचे उसी खड़ी पंक्ति में दिन की पंक्ति है। उसी दिन की पंक्ति में सबसे ऊपर कौन वार है इसका ध्यान रखो। क्योंकि अपनी तारीख इसी वार पंक्ति के अनुसार निकलेगी। दिन पंक्ति के बांई ओर तारीख की पंक्तियाँ हैं। जहाँ तारीख लिखा है उसके ऊपर तारीखें दी हैं और जहाँ दिन लिखा है उसके ऊपर दिन की पंक्तियाँ हैं।

दिन की प्राप्त पंक्ति के बांई ओर जो तारीखें दी हैं उनमें से इष्ट दिन की तारीख या इष्ट तारीख का दिन खोज लो। दिन की प्राप्त पंक्ति का उपयोग करते समय शेष दी हुई दिन की पंक्तियों पर कोई ध्यान मत दो। यह पंक्ति महीना भर काम देगी। दूसरे महीने की उसी सन् के नम्बर के नीचे दूसरी पंक्ति निकलती है।

उदाहरण—सन् १९४३ का नम्बर ५ है (सन् का नम्बर निकालना आगे बताया है) जून के महीने की तारीख और दिन देखना है। बांई ओर ऊपर अंग्रेजी महीनों के नीचे तीसरी पंक्ति में जून दिया है, उसके आगे सन् के नम्बर के नीचे सन् का नम्बर ५ खोजा (क्योंकि इष्ट सन् का नम्बर ५ है) यह तीसरी खड़ी पक्ति में मिला, इसके ठीक नीचे दिन की पंक्ति में दिन खोजने से दिन की पंक्ति मिलेगी। उसमें सबसे ऊपर मंगल लिखा है तो मंगलवार को पहली तारीख होगी। दिन के बाईं ओर इष्ट दिन की तारीख खोज लो। उसी दिन की पंक्ति से जिसमें आदित्यवार मंगलवार है दिन से तारीख या इष्ट तारीख का दिन निकाल लेना चाहिए। जैसे ३० तारीख कौन दिन पड़ेगा देखना है तो ३० के सीध में बुधवार है। इससे प्रगट हुआ ३० तारीख को बुधवार होगा। इसी प्रकार जून की १० तारीख गुरुवार को पड़ेगी। तारीख १७भी गुरुवार को होगी। सोमवार की तारीख देखनी है तो सोमवार के आगे ७, १४, २१, और २८ तारीखें दी हैं इनमें से जिस तारीख की आवश्यकता हो ले लेना। यहाँ तारीख २१ तक दी है, परन्तु जून महीने में केवल ३० दिन होते हैं। इस कारण ३० तारीख तक इस महीने में लेंगे बाकी छोड़ देंगे।

सन् का नम्बर जानने का चक्र

	सन् का नम्बर							शेष सदी से	तक	पंक्ति
सन	७	१	२	३	४	५	६	०	९९	१
का	५	६	७	१	२	३	४	१००	१९९	२
नम्बर	३	४	५	६	७	१	२	२००	२९९	३
	१	२	३	४	५	६	७	३००	३९९	४

शेष वर्ष (सन् के इकाई दहाई के अंक)

०	१	२	३	×	४	५	सन् ÷ ४००
६	७	×	८	९	१०	११	शेष जो बचे
×	१२	१३	१४	१५	×	१६	=शेष सदी ।
१७	१८	१९	×	२०	२१	२२	शेष सदी की
२३	×	२४	२५	२६	२७	×	इकाई दहाई
२८	२९	३०	३१	×	३२	३३	=शेष वर्ष ।
३४	३५	×	३६	३७	३८	३९	सैकड़ा का
×	४०	४१	४२	४३	×	४४	अंक + १ =
४५	४६	४७	×	४८	४९	५०	पंक्ति ।
५१	×	५२	५३	५४	५५	×	पंक्ति के सीध
५६	५७	५८	५९	×	६०	६१	में और शेष
६२	६३	×	६४	६५	६६	६७	वर्ष के ऊपर
×	६८	६९	७०	७१	×	७२	सन् का
७३	७४	७५	×	७६	७७	७८	नम्बर
७९	×	८०	८१	८२	८३	×	मिलेगा ।
८४	८५	८६	८७	×	८८	८९	
९०	९१	×	९२	९३	९४	९५	
×	९६	९७	९८	९९	×		

शेष वर्ष (सन् के इकाई दहाई के अंक)

सन् ईसवी का नम्बर निकालने की रीति ।

सन् ÷ ४००=शेष सदी । सन् ईसवी यदि ४०० से अधिक हो तो ४०० का भाग दो जो शेष बचे उसे लो । जो इस प्रकार का शेष बचता है उसे शेष सदी कहते हैं । यदि ४०० से कम सन् हो तो चक्र के अनुसार ही पंक्ति का नम्बर होगा, जैसे:—

शेष ० से ९९ तक=पंक्ति १
शेष १०० से १९९ तक=पंक्ति २
शेष २०० से २९९ तक=पंक्ति ३
शेष ३०० से ३९९ तक=पंक्ति ४

४०० का भाग देने पर जो शेष सदी मिले उसमें फिर १०० का भाग दो जो शेष बचे वह=शेष वर्ष हुआ । और उसमें जितने बार १०० का भाग जाय वह लब्धि हुई । इस लब्धि में १ और जोड़ना तो वह पंक्ति का नम्बर होगा । अर्थात् उस सदी के इकाई दहाई के अंक शेष वर्ष कहलाये जो शेष वर्ष चक्र में दिया है और उस सैकड़ा के अंक में १ और जोड़ो तो वह पंक्ति का नम्बर होगा ।

ऊपर चक्र में पंक्ति का नम्वर अन्त में १ से ४ तक दिया है। अपने इष्ट सन् के शेष वर्ष के ऊपर और इष्ट पंक्ति में जो सन् का नम्बर मिले वही इष्ट सन् का नम्वर होगा।

वर्तमान सदी की पंक्ति ४ है। इस कारण वर्तमान सदी में सबसे नीचे की पंक्ति ४ के सन् का नम्वर लेना।

उदाहरण—

(१) सन् १९०० ÷ ४००=४ $\frac{३००}{४००}$=शेष ३०० हुआ। शेष ३०० ÷ १०० ३ वार भाग गया—लब्धि ३+१=४ पंक्ति हुई, शेष ० बचा तो=शेष वर्ष ० हुआ। अब शेष वर्ष चक्र में ० के ऊपर और ४ पंक्ति की सीध में देखा तो सन का नम्बर १ मिला। सन् का नम्बर १ हुआ।

(२) सन् २०० ÷ ४००=$\frac{२००}{४००}$=शेष २०० ÷ १००+लब्धि २+१=३ पंक्ति, शेष, शेष वर्ष० पंक्ति ३। यहाँ इकाई दहाई में शून्य है १०० का भाग देने से शेष ० रहेगा। इस कारण शेष वर्ष ० हुआ। शेष वर्ष चक्र में ० के ऊपर पंक्ति ३ के सीध में खोजने से सन् का नम्बर ३ मिला।

(३) सन् १९४८ ÷ ४०० शेष सदी ३४४ हुई। इसमें इकाई दहाई में ४४ है तो शेष वर्ष ४४ हुए। शेष ३४४ के सैकड़ा के स्थान में ३ हैं ३+१=४ पंक्ति या ३४४ ÷ १००=३ लब्धि+१=४ पंक्ति। शेष ४४=शेष वर्ष ४४ हुए। शेष वर्ष ४४ के ऊपर और पंक्ति ४ के सीध में सन् का नम्वर ७ मिला।

(४) सन् १८०१ ÷ ४००=शेष सदी २०१, इकाई दहाई में ०१ है तो शेष वर्ष ०१ अर्थात् १ हुआ। २०१ में सैकड़ा के स्थान में २ है। २+१=३ पंक्ति हुई। या २००+१००=लब्धि२+१=३ पंक्ति। शेष १=शेष वर्ष १ हुआ। शेष वर्ष १ के ऊपर पंक्ति ३ के सीध में खोजा तो सन् का नम्वर ४ मिला।

यहाँ ४०० का भाग देने के उपरान्त जो शेष सदी प्राप्त होती है उसमें फिर १०० का भाग देना बताया है, परन्तु यदि ऊपर पंक्ति का चक्र देखो तो वहाँ ही लिखा है कि शेष कितने से कितने के बीच में बचने पर कौन पंक्ति होती है। इस कारण सुविधा के लिए ऊपर ही चक्र के दाहिनी ओर लिख दिया है। सन् में केवल ४०० का भाग देकर शेष सदी निकाल लो। शेष सदी के इकाई दहाई के अंक शेष वर्ष होते हैं। उसी शेष वर्ष के ऊपर इष्ट पंक्ति की सीध में सन् का नम्वर मिल जाता है। वर्ष में केवल १ वार सन् का नम्वर निकालना पड़ता है और वह नम्वर उसी वर्ष भर काम देता है।

कुछ निकाले हुए सन् के नम्बर

	सन् के नं. १	२	३	४	५	६	७
सन् ईसवी	१७९८	१७९९	१८००	१८०१	१८०२	१८०३	÷
	१८०४	१८०५	१८०६	१८०७	+	१८०८	१८०९
	१८१०	१८११	+	१८१२	१८१३	१८१४	१८१५
	+	१८१६	[illegible]	१८१८	१८१९	+	१८२०
	१८२१	१८२२	१८२३	+	१८२४	१८२५	१८२६
	१२२७	+	१८२८	१८२९	१८३०	१८३१	+
	१८३२	१८३३	१८३४	१८३५	+	१८३६	१८३७
	१८३८	१८३९	+	१८४०	१८४१	१८४२	१८४३
	+	१८४४	१८४५	१८४६	१८४७	+	१८४८
	१८४९	१८५०	१८५१	+	१८५२	१८५३	१८५४
	१८५५	+	१८५६	१८५७	१८५८	१८५९	+
	१८६०	१८६१	१८६२	१८६३	+	१८६४	१८६५
	१८६६	१८६७	+	१८६८	१८६९	१८७०	१८७१
	+	१८७२	१८७३	१८७४	१८७५	+	१८७६
	१८७७	१८७८	१८७९	+	१८८०	१८८१	१८८२
	१८८३	+	१८८४	१८८५	१८८६	१८८७	+
	१८८८	१८८९	१८९०	१८९१	+	१८९२	१८९३
	१८९४	१८९५	+	१८९६	११९७	१८९८	१८९९
	१९००	१९०१	१९०२	१९०३	+	१९०४	१९०५
	१९०६	१९०७	+	१९०८	१९०९	१९१०	१९११
	+	१९१२	१९१३	१९१४	१९१५	+	१९१६
	१९१७	१९१८	१९१९	+	१९२०	१९२१	१९२२
	१९२३	+	१९२४	१९२५	१९२६	१९२७	+
	१९२८	१९२९	१९३०	१९३१	-|-	१९३२	१९३३
	१९३४	१९३५	÷	१९३६	१९३७	१९३८	१९३९
	+	१९४०	१९४१	१९४२	१९४३	+	१९४४
	१९४५	१९४६	१९४७	+	१९४८	१९४९	१९५०
	१९५१	+	१९५२	१९५३	१९५४	१९५५	+
	१९५६	१९५७	१९५८	१९५९	+	१९६०	१९६१
	१९६२	१९६३	+	१९६४	१९६५	१९६६	१९६७

सन के नं.	१	२	३	४	५	६	७
	+	१९६८	१९६९	१९७०	१९७१	+	१९७२
	१९७३	१९७४	१९७५	+	१९७६	१९७७	१९७८
	१९७९	+	१९८०	१९८१	१९८२	१९८३	+
सन् ईस्वी	१९८४	१९८५	१९८६	१९८७	+	१९८८	१९८९
	१९९०	१९९१	+	१९९२	१९९३	१९९४	१९९५
	+	१९९६	१९९७	१९९८	१९९९	+	२०००
	२००१	२००२	२००३	+	२००४	२००५	२००६
	२००७	+	२००८	२००९	२०१०	२०११	+
	२०१२	२०१३	२०१४	२०१५	+	२०१६	२०१७

जंत्री बनाने की रीति

यह जंत्री बनाना कठिन नहीं है स्वतः बना सकते हो। इस ढंग से यह बनाई गई है जिससे अपनी स्मरण शक्ति से ही जब आवश्यकता हो बड़ी सरलता से कोई भी इसे बना सके।

आरम्भ में मास के अंक उलटे क्रम से बाइं ओर रखो अर्थात् पहिले ७ फिर उसके नीचे ६ फिर ५ इत्यादि और उस मासांक के आगे उस नम्बर के महीने लिख दो। पहिले बता चुके हैं कि कौन महीने का क्या नम्बर होता है। उनको कंठस्थ कर लेना कोई कठिन नहीं है। इस प्रकार ७ पंक्तियों में सब १२ महीने (लीप जनवरी और लीप फरवरी भी) आ जाते हैं।

महीने की पंक्ति के आगे दाहिनी ओर सन् के नम्बर की पंक्तियाँ हैं। इसका भरना बहुत सरल है। खड़ी पंक्ति में ऊपर से नीचे १, २, ३, ४ आदि क्रम पूर्वक ७ अंक तक लिख लो। फिर सबसे ऊपर की पंक्ति में भी बाइं ओर से १ के आगे २, ३, ४ आदि क्रम पूर्वक लिखते जाओ और ७ अंक तक लिख लो। शेष कोठों में उसके आगे के अंक लिख कर सब कोठे भर दो। ७ अंक के बाद फिर १ अंक लिख कर उसके आगे के अंक क्रमानुशार लिखना पड़ता है।

सन् के नम्बर के कोठों के नीचे दिन की पंक्तियाँ हैं। इसमें रविवार से आरम्भ कर शनिवार तक आड़े और खड़े कोठों में दिन भर दो। जिस प्रकार सन् का नम्बर भरा था उसी रीति से क्रमानुसार दिन सब कोठों में लिख दो।

इसके बाई ओर महीने की पंक्ति के नीचे तारीख की पंक्तियाँ हैं, उनमें १ से लेकर ३१ तक क्रमानुसार तारीख के अंक भर दो। बस, इस प्रकार अनन्त वर्षों की जंत्री तैयार हो गई। जंत्री बनाने की इतनी सरल रीति और कहीं न मिलेगी।

सन् का नम्बर निकालने का भी चक्र बनाना बहुत सरल है। पंक्ति ४ में १ से लेकर ७ कोठों में क्रमानुसार ७ अंक लिख लो, और उसके ऊपर तीसरी पंक्ति में

प्रत्येक अंक में २ जोड़ कर लिख दो, ७ के बाद १ अंक लिखना ८ नहीं लिखना। इसी प्रकार दूसरी और पहली पंक्ति में सबमें क्रम से २-२ अंक बढ़ा कर लिख दो तो पंक्ति के अनुसार सन् के नम्बर के अंक सब पंक्तियों में लिख जायेंगे।

१०० के भीतर पहिली पंक्ति की शेष सदी, २०० के भीतर दूसरी पंक्ति, ३०० के भीतर तीसरी, और ४०० के भीतर चौथी पंक्ति सन् ईस्वी की शेष सदी की होती हैं।

शेष वर्ष चक्र बनाना भी सरल है। पंक्ति ४ के सीध में १ से ७ तक सन् के नम्बर के अंक लिखे हैं। उसके नीचे ० से लेकर १, २, ३ आदि शेष वर्ष के अंक भरना आरम्भ करो। ४-४ अंक लिख लेने पर लीप वर्ष आता है। लीप अंग्रेजी शब्द है। इसका अर्थ है कूदना। इससे एक कोठा कूद कर अर्थात् लीप इयर को १ कोठा छोड़ कर आगे लिखो। जैसे सन् के नम्बर के नीचे, ० फिर २ के नीचे १, ३ के नीचे २, और ४ के नीचे ३ क्रमानुसार ४ अंक शेष वर्ष के लिख चुके। इसके उपरान्त चौथा वर्ष ४ लीप इयर का होता है। इस कारण एक कोठा आगे का छोड़ कर अर्थात् सन् का नम्बर ५ के नीचे × चिह्न लगाकर आगे के कोठे में (सन् का नम्बर ६ के नीचे) ४ शेष वर्ष लिखो, आगे क्रमानुसार ४, ५, ६, ७ तक लिखने के बाद १ कोठा छोड़ कर ८ लिखो क्योंकि ८ लीप वर्ष है। इसी प्रकार सब कोठों में क्रमानुसार ९९ तक अंक अपने मन में भरते चले जाओ। जिस वर्ष के पहिले × ढ़ेरा का चिह्न खाली जगह में है उसे लीप वर्ष समझना।

दो सदी के सन् के नम्बर इसी प्रकार निकाल कर आगे चक्र में दिये हैं, जिससे सन् के नम्बर खोजने में कोई अड़चन न हो। इसी प्रकार इसके आगे के सन् के नम्बर निकालने का चक्र बना सकते हो। केवल लीप वर्ष का ध्यान रखना। यदि लीप वर्ष है तो आगे नम्बर के नीचे खाली ढ़ेरे का चिह्न लगा कर उसके आगे के नम्बर के नीचे वह लीप वर्ष लिखना। इस चक्र के देखने से ही सब समझ में आ जायगा। सन् १८०० में ४०० का भाग नहीं गया तो यह लीप वर्ष नहीं माना गया, क्योंकि पूरी सदी में ४०० का भाग पूरा-पूरा लगने से लीप वर्ष माना जाता है। परन्तु साधारण वर्ष में पूरा ४ का भाग लग जाय तब लीप वर्ष माना जाता है।

मुसलमानी सन् हिजरी के महीनों की तारीख जानना

मुसलमानी महीना	सन् का नम्बर						
मोहर्रम १। सव्वाल १०	१	२	३	४	५	६	७
जमादिउल अव्वल ५	२	३	४	५	६	७	१
रविउल आखिर ४। रमजान ९	३	४	५	६	७	१	२
सावान ८	४	५	६	७	१	२	३
रविउल अव्वल ३। जिलहिज १२	५	६	७	१	२	३	४
सफर २। रज्जव ७	६	७	१	२	३	४	५
जमादिउल आखिर ६। जीकैद ११	७	१	२	३	४	५	६

१	८	१५	२२	२९	शनि.	रवि.	सोम.	मंगल.	बुध.	गुरु	शुक्र.
२	९	१६	२३	३०	रवि.	सोम.	मंगल	बुध.	गुरु.	शुक्र.	शनि.
३	१०	१७	२४	—	सोम.	मंगल.	बुध.	गुरु.	शुक्र.	शनि.	रवि.
४	११	१८	२५	—	मंगल.	बुध.	गुरु.	शुक्र.	शनि.	रवि.	सोम.
५	१२	१९	२६	—	बुध.	गुरु.	शुक्र.	शनि.	रवि.	सोम.	मंगल.
६	१३	२०	२७	—	गुरु.	शुक्र.	शनि.	रवि.	सोम.	मंगल.	बुध.
७	१४	२१	२८	—	शुक्र.	शनि.	रवि.	सोम.	मंगल.	बुध.	गुरु.

जंत्री देखने की रीति–पहिले नीचे वताई विधि से हिजरी सन् का नम्बर खोज लो। वह नम्बर वर्ष भर काम देगा। फिर इष्ट मास के सामने की पंक्ति में प्राप्त सन् का नम्बर जहाँ मिले उस नम्बर के नीचे जिस दिन की खड़ी पंक्ति मिले उसके सामने बांई ओर दी हुई तारीख खोज लो या इष्ट तारीख का दिन उसी प्राप्त दिन की पंक्ति से खोज लो।

जैसे हिजरी सन् १३७३ के दूसरे महीने सफर की पहिली तारीख किस दिन होगी जानना है नीचे वताई रीति से हिजरी १३७३ का नम्बर खोजा तो ६ मिला। अव सफर महोने के आगे सन् का नम्बर ६ खोजा, वह पहिली पंक्ति में मिला। उस ६ के नीचे दिन की पंक्ति जो शनिवार से आरम्भ होती है, ली। शनिवार के आगे बाई ओर १ तारीख दी है। तो प्रगट हुआ कि शनिवार को मुसलमानी सफर की पहिली तारीख होगी।*

हिजरी सन् का नंबर निकालने का चक्र

हिजरी सन् का नम्बर								सदी
२	६	४	१	६	३	७	५	अ
६	३	७	५	२	६	४	१	ब
०	१	२	३	४	५	६	७	
८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	
१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	हिजरी सदी के शेष वर्ष
२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	
३२	३३	३४	३५	३६	३७	३८	३९	
४०	४१	४२	४३	४४	४५	४६	४७	
४८	४९	५०	५१	५२	५३	५४	५५	
५६	५७	५८	५९	६०	६१	६२	६३	
६४	६५	६६	६७	६८	६९	७०	७१	
७२	७३	७४	७५	७६	७७	७८	७९	
८०	८१	८२	८३	८४	८५	८६	८७	
८८	८९	९०	९१	९२	९३	९४	९५	
९६	९७	९८	९९	०	०	०	०	

*—इसमें तिथि के कारण कभी-कभी एक दिन का अन्तर पड़ जाता है।

सन् का नंबर निकालने की रीति

हिजरी सदी } ÷ ४०० =शेष १०० या ३००=अ सदी
=शेष २०० या ०=ब सदी

हिजरी के इकाई दहाई के अंक=शेष वर्ष

हिजरी के इकाई दहाई के अंक छोड़ कर पूरी सदी लो, उसमें ४०० का भाग दो। यदि शेष १०० या ३०० बचे तो=अ=सदी होगी। यदि शेष २०० या ० बचे तो=ब=सदी होगी।

वह हिजरी अ या ब जिस प्रकार की सदी हो, उस पंक्ति में और शेष वर्ष के ऊपर जो सन् का नम्बर मिले वह इष्ट सन् का नम्बर होगा।

जैसे हिजरी सन् १३७३ में इकाई दहाई के अंक ७३ शेष वर्ष हुए। इनको छोड़ कर सदी १३०० ली÷४००=शेष १००=अ=सदी हुई। अब शेष वर्ष ७३ के ऊपर और अ पंक्ति में खोजा तो ६ मिला। यही १३७३ के हिजरी सन् का नम्बर हुआ।

हिजरी सन् के नम्बर खोजने का अन्य प्रकार का चक्र

	हिजरी सन् का नम्बर				हिजरी की सदी के शेष वर्ष												
सन् का नम्बर	२	६	२	६	०	८	१६	२४	३२	४०	४८	५६	६४	७२	८०	८८	९६
	६	३	३	१	१	९	१७	२५	३३	४१	४९	५७	६५	७३	८१	८९	९७
	४	६	४	७	२	१०	१८	२६	३४	४२	५०	५८	६६	७४	८२	९०	९८
	१	५	१	५	३	११	१९	२७	३५	४३	५१	५९	६७	७५	८३	९१	९९
	६	२	६	२	४	१२	२०	२८	३६	४४	५२	६०	६८	७६	८४	९२	०
	३	६	३	६	५	१३	२१	२९	३७	४५	५३	६१	६९	७७	८५	९३	०
	७	४	७	४	६	१४	२२	३०	३८	४६	५४	६२	७०	७८	८६	९४	०
	५	२	५	१	७	१५	२३	३१	३९	४७	५५	६३	७१	७९	८७	९५	०
सदी	अ	ब	अ	ब													

	अ	ब	अ	ब
सदी	१००	२००	३००	४००
	५००	६००	७००	८००
	९००	१०००	११००	१२००
	१३००	१४००	१५००	१६००
	१७००	१८००	१९००	२०००
	२१००	२२००	३३००	२४००
	२५००	२६००	२७००	२८००
	२९००	३०००	३१००	३२००
	३३००	३४००	३५००	३६००
	३७००	३८००	३९००	४०००
	४१००	४२००	४३००	४४००
	४५००	४६००	४७००	४८००
	४९००	५०००	०	०

हिजरी का नम्बर खोजने की रीति—

कोई हिजरी के इकाई दहाई के अंक छोड़कर पूरी सदी लो। सदी के ऊपर और शेष वर्ष (हिजरी के इकाई दहाई के अंक) के सामने जो नम्बर मिले वही सन् का नंबर होगा। जैसे हिजरी १३७३ की सदी १३०० हुई और शेष वर्ष ७३ हुए। अब १३०० सदी के ऊपर देखो यह सदी अ प्रकार की है। इसके ऊपर और शेष वर्ष ७३ के सामने बांई ओर देखो तो ६ मिला। यही ६ सन् का नम्बर हिजरी १३७३ का हुआ।

हिजरी १२११=१२०० सदी के ऊपर और ११ के सामने बांई ओर देखा ५ मिला यही ५ सन् का नम्बर हुआ। यह सदी २

प्रकार की है। बस इस प्रकार प्राप्त सन् के नम्बर से इष्ट मास की तारीख ऊपर बताई रीति से खोज लो। पहले बताई हुई सन् के नम्बर खोजने की रीति और यह रीति एक ही है। यहाँ उदाहरण के लिए ५००० हिजरी तक देकर सन् का नम्बर खोजना बताया गया है।

राष्ट्रीय जंत्री National calender (Gragarion calender)

अभी तक सन् ईस्वी का दिनांक प्रचलित था, परन्तु यह राष्ट्रीय नहीं है, इस विचार से भारत सरकार ने दिनांक २२ मार्च ईसवी सन १९५७ से राष्ट्रीय जंत्री प्रचलित की है।

दिनांक २१ मार्च को वसन्त सम्पात Vernal equinox होता है, जब दिन रात बराबर होती है और सूर्य ६ बजे उदय होता है। उस दिन राष्ट्रीय वर्ष का अन्त समझ कर दूसरे दिन २२ मार्च से राष्ट्रीय चैत्र मास आरम्भ होता है। उस दिन राष्ट्रीय चैत्र की १ तिथि (दिनांक) शाका १८७९ से यह राष्ट्रीय वर्ष की तिथि आरम्भ होती है।

यह राष्ट्रीय दिनांक अर्द्ध रात्रि से अर्द्ध रात्रि तक ईसवी सन् के दिनांक के अनुसार ही माना जायगा। राष्ट्रीय वर्ष दिन ३६५ घण्टा ५ मिनट ४ से०४८ का माना गया है। लीप इयर (प्लुत वर्ष) में हर चौथे वर्ष (सन् ईसवी के अनुसार ही) चैत्र मास ३१ दिन का होगा। साधारण वर्ष में चैत्र ३० दिन का ही होगा। आगे वैशाख से भाद्रपद तक ५ महीने ३१ दिन के शेष ६ महीने ३० दिन के होंगे।

राष्ट्रीय मास	दिन	आरम्भ का अंग्रेजी दिनांक	राष्ट्रीय मास	दिन	आरम्भ का अंग्रेजी दिनांक
लीप चैत्र	३१	२२ मार्च से	आश्विन	३०	२३ सितम्बर से
साधारण चैत्र	३०	,, ,,	कार्तिक	३०	२३ अक्टूबर ,,
वैशाख	३१	२१ अप्रैल ,,	मार्गशीर्ष	३०	२२ नवम्बर ,,
ज्येष्ठ	३१	२२ मई ,,	पौष	३०	२२ दिसम्बर ,,
आषाढ़	३१	२२ जून ,,	माघ	३०	२१ जनवरी ,,
श्रावण	३१	२३ जुलाई ,,	फाल्गुन	३०	२० फरवरी ,,
भाद्रपद	३१	२३ अगस्त ,,			

लीप वर्ष में राष्ट्रीय वैशाख मास और उसके आगे के मास आरम्भ होने की तारीख से एक दिन अधिक बढ़ जायगा। परन्तु फरवरी २९ दिन की होने से अन्त में फाल्गुन की ३० तिथि दिनांक २१ मार्च को ही पड़ जायगी जिससे २२ मार्च से फिर चैत्र आरम्भ होगा।

सरकारी पत्र व्यवहार में राष्ट्रीय दिनांक के अतिरिक्त सन् ईस्वी का दिनांक भी दिया जाता है।

पञ्चांग में दी हुई तिथि और राष्ट्रीय दिनांक (तिथि) में अन्तर है। आज कल पंचांगों में तिथि और अंग्रेजी दिनांक के अतिरिक्त राष्ट्रीय दिनांक भी दिया रहता है।

अध्याय ३८

दिनमान जानना

यहाँ स्थूल रूप से दिनमान जानने की रीति बताई जाती है। सूक्ष्म रूप से दिनमान जानना गणित खण्ड में बताया गया है।

अयन संक्रान्ति से (अर्थात् सायन कर्क और सायन मकर संक्रान्ति से) गत दिन कितने हुए निकालो। गत दिन को ३ से गुणा कर १५३० जोड़ो और ६० का भाग दो। जो लब्धि मिले वह कर्क संक्रान्ति की गणना करने से रात्रिमान और मकर संक्रान्ति से गणना करने पर दिनमान निकलेगा।

जैसे सम्वत् २००० में २२ दिसम्बर की रात को सायन मकर की संक्रान्ति हुई थी। २३ मई का दिनमान जानना है तो दिसम्बर के शेष दिन ३१−२२=९+जनवरी ३१ के, + फरवरी २८ के, + मार्च ३१ के, + अप्रैल ३० के + मई २३ के=सर्व दिन १५२। १५२ दिन × ३=४५६+१५३०=१९८६ ÷ ६०=३३ घ. ६ पल. ∴ दिनमान ३३ घ. ६ प. हुआ।

```
६० ) १९८६ ( ३३ घड़ी
     १८०
     ----
      १८६
      १८०
      ----
        ६ पल
```

रात्रिमान=(६०—दिनमान)=६०—(३३—६)=२६ घ. ५४ प. रात्रिमान

२१ दिसम्बर को सायन मकर संक्रान्ति और २१ जून को सायन कर्क संक्रान्ति प्रायः होती है।

दिनमान से सूर्योदय जानना पञ्चांग देखने के प्रकरण में बता चुके हैं।

चंद्रोदय अस्त ज्ञान (स्थूल रूप से)

चन्द्रोदय—पूर्णिमा के उपरान्त, प्रतिदिन २० घड़ी=५४ मिनट के उपरान्त चन्द्रोदय होता है। अर्थात् कृष्ण पक्ष आरम्भ होने पर इतनी देर बाद प्रतिदिन चन्द्र उदय होगा। तिथि में २० घड़ी का गुणा कर जान सकते हो कि उस तिथि में (कृष्ण पक्ष में) कितनी घड़ी उपरान्त चन्द्रोदय होगा।

यदि शुक्ल पक्ष है तो उतने घड़ी पल (या घण्टा मिनट) गये पर चन्द्र अस्त होगा। यह बहुत मोटा हिसाब है। दिनमान के अनुसार इसमें अन्तर पड़ता है।

चंद्रोदय का समय जानना—

रात्रिमान को वर्तमान तिथि से गुणा करो। कृष्ण पक्ष हो तो गुणनफल में २ घटा दो। शुक्ल पक्ष हो तो गुणनफल में २ जोड़ दो। उपरान्त १५ का भाग दो,

लब्धि चन्द्रोदय की घड़ी निकलेगी। १५ का भाग देने से जो बचे उसमें ६० का गुणा कर १५ का भाग देने से पल निकलता है।

जैसे ज्येष्ठ कृष्ण चतुर्थी को दिनमान ३३ घ. ६ प. है तो रात्रिमान २६ घण्टा ५४ प. हुआ।

[रात्रिमान तिथि / २६-५४×४]—२ कृष्ण पक्ष होने से / १५ = घ. प. (१०७-३६)—२ / १५ = घ. प. १०५-३६ / १५ = घ. प. ७-२

रात्रिमान २६ घ. ५४ प.
×४
१०७—३६
—२ कृष्ण पक्ष होने से घटाया।
१५) १०५-३६ (७ घड़ी
१०५
०
१५°) ३६ (२ पल
३०
६

=सूर्यास्त होने के ७ घ. २ प. होने के उपरान्त चन्द्रोदय होगा।

अस्त जानना

पौष शुक्ल ७ दिनमान २६-३० रात्रिमान ३३-३० को चन्द्र के अस्त का समय जानना है।

रात्रिमान ३३-३०
×७ तिथि
२३४-३०
+२ शुक्ल पक्ष
२३६-३० होने से

१५)२३६-३०(१५ घड़ी
१५
८६
७५
११×६०=
६६०
+३०
१५) ६९० (४६
६०
९० पल
९०

=१५ घ. ४६ प. रात्रि गये उपरान्त चन्द्र अस्त होगा।

तारा देखकर रात्रिमान जानना

(१) सूर्य नक्षत्र से, सिर के ऊपर जो नक्षत्र हो उस तक गिनो, गिनने से जो संख्या आवे उसमें ७ घटा कर २० का गुणा करना और ९ का भाग देना तो जो अंक शेष रहे वह गत रात्रि स्पष्ट होगी ।

(२) या सूर्य नक्षत्र से, सिर के ऊपर जो नक्षत्र हो उस तक गिनने में जो संख्या आवे उसमें ७ घटाकर २ का गुणा कर २ घटा दो तो रात्रि स्पष्ट होगी ।

पूर्वाषाढ़ा, अनुराधा, ज्येष्ठा, आश्लेषा, रेवती और विशाखा सिर के ऊपर हों तो अष्टम में उदय होता है । मृगशिर और मूल नक्षत्र में हो तो नवम में उदय होता है और जब कोई नक्षत्र शिर के ऊपर हो तो अष्टम में उदय होता हैं । सूर्य नक्षत्र जो होता है वह सूर्योदय के साथ उदय होता है और सूर्य अस्त के समय वही नक्षत्र अस्त स्थान पर आ जाता है । इस कारण सूर्य नक्षत्र से सिर के ऊपर तक जो नक्षत्र हों उनको यहाँ गिनना बताया है और सिर के नक्षत्र से पूर्व की ओर गिनो तो ऊपर बताये अनुसार अष्टम या नवम नक्षत्र उदय स्थान में रहेगा ।

मान लो सूर्य मूल नक्षत्र पर है और रात्रि को देखा अश्विनी नक्षत्र सिर पर है । मूल से अश्विनी तक गिना तो १० नक्षत्र हुए । इनमें ७ घटा कर २० का गुणा कर ९ का भाग दिया ।

(१०—६) × २० ÷ ९ = (२ × २०) ÷ ९ = ६० ÷ ९ = ६$\frac{६}{९}$ = ६ घड़ी ४० पल इतनी रात्रि गत हुई ऐसा जानना ।

दिनमान में गत रात्रि जोड़ने से उस समय का इष्ट काल होगा, जैसे उस दिन २६-४ दिनमान में ६-४० गत रात्रि जोड़ा तो ३२-४४ इष्ट काल हुआ ।

दूसरी रीति से सूर्य नक्षत्र से सिरे के ऊपर का नक्षत्र आश्विनी तक १० हुए । इसमें ७ घटाये ३ बचे, २ से गृणा किया=६ हुए । इसमें से २ घटाये ४ घड़ी रहे । इस रीति से कुछ अन्तर पड़ जाता है ।

सिर पर नक्षत्र आश्विनी है इससे आठवां नक्षत्र पुष्य हुआ । इस कारण इस समय पुष्य नक्षत्र या कर्क राशि उदय हो रही है अर्थात् कर्क लग्न होगी ।

रात्रि का समय जानना

पहिले देखो सिर पर कौन तारा है और उस तारे का क्या विषुवांश है । नाक्षत्र काल से १ घण्टा कम या अधिक जिस तारे का विषुवांश है वह तारा उस रात्रि को बिलकुल नही दिखेगा । जिस तारे का विषुवांश ६ घण्टा अधिक हो वह तारा सूर्य अस्त होने के समय सूर्य के ६ घण्टा आगे होने से सिर पर उस समय होगा । उससे अधिक १२ घण्टा विषुवांश जिस तारे का है वह रात्रि को और कभी सिर पर आयेगा ।

जो तारा सिर पर दिखे उसका विषुवांश आगे दिए हुए चक्र में से देख कर लिख लो । उसमें से उस दिन का नाक्षत्र काल घटा दो । जो घण्टा मिनट बचे उतने घण्टा

मिनट आगे वह तारा मध्यम रवि के आगे हैं ऐसा समझना। अर्थात् उतने बजे होंगे समझना। क्योंकि मध्यम रवि १२ बजे सिर पर आता है और इसके उतने घण्टा मि० आगे वह तारा है। इस कारण समझ लेना कि उतने बजे होंगे।

जैसे १ जनवरी को रात्रि में यह जानना है कि घड़ी में क्या बजा होगा। ५ जनवरी को दोपहर को मध्यम रवि का विषुवांश १९ घण्टा हैं। जैसा पहिले चक्र में दे चुके हैं अपने को १ जनवरी की रात्रि को जानना है। (ता० ५-१ ता०)=४ अन्तर दिन। इसमें दोपहर रात तक ½ दिन घटाया तो=३½ हुए। अर्थात् ४ दिन से आधा दिन इस कारण घटाया कि अपना समय ५ ता० के पहिले का है। ३½ दिन × ४मि० गति=० घ० १४ मि० ता० ५ को १९ घण्टा विषुवांश था। इसमें से ०—१४ मि० घटा दिये तो शेष १८ घण्टा ४६ मि० बचे—यह उस दिन का नाक्षत्र काल या मध्यम रवि का विषुवांश हुआ।

मान लो उस दिन सिर पर अश्विनी नक्षत्र है। अश्विनी का विषुवांश चक्र में १ घण्टा ४९ मि० दिया है। इसमें से नाक्षत्र काल १८ घं० ४६ मि० घटाया तो नहीं घटता, २४ घण्टा जोड़ कर घटाया तो शेष ७ घं० ३ मि० रहे। अर्थात् १२ बजे दोपहर को जब मध्यम रवि मध्याह्न पर था उससे ७ घं० ३ मि० आगे यह तारा है अर्थात् ७घं० ३ मि० रात के बजे हैं।

घं०	मि०
१	— ४९
—१८	— ४६
शेष ७	— ३

समय देखते समय सिर के ऊपर कोई पहचान का तारा न मिले तो कुछ समय ठहरो, जब कोई पहिचान का तारा सिर पर आवे तो उससे गणित कर अपनी घड़ी मिला लो।

ऊपर के उदाहरण में नाक्षत्रकाल १८—४६ आया है। यदि इससे १ घण्टा कम या अधिक जिस तारा का नाक्षत्र काल हो अर्थात् १७-४६ या १९-४६ हो तो वह तारा इस रात को बिलकुल नही दिखेगा। जैसे १ जनवरी को पूर्वाषाढा उत्तराषाढा और श्रवण नहीं दिखेंगे, क्योंकि जनवरी में मकर संक्रान्ति होती है तो धन और मकर के नक्षत्र नहीं दिखेंगे। जिस तारे का विषुवांश इससे ६ घण्टा आगे हो अर्थात् (१८-४६)+६=० घण्टा ४६ मि० हो तो वह तारा सूर्यास्त के समय ६ घण्टा आगे होगा जैसे उ० भाद्रपद नक्षत्र, उससे १२ घण्टा अधिक हो (०-४६)+१२.४६ तो विषुवांश का तारा रात्रि को कभी सिर पर आवेगा जैसे हस्त।

तारों का होरात्मक विषुवांश

इनमें स्थिति के अनुसार बहुत थोड़ा अन्तर पड़ता है, क्योंकि प्रतिवर्ष इनकी गति ३-४ सेकण्ड के लगभग है।

	नक्षत्र	घं०	मि०	से०		नक्षत्र	घं०	मि०	से०		नक्षत्र	घ०	मि०	से०
१	अश्विनी	१	९४	२३.४	११	पूर्वा फाल्गुनी	११	९	१५.४	२१	उत्तराषाढ़ा	१८	३६	४३.३
२	भरणी	२	४४	२६.६	१२	उत्तराफाल्गुनी	११	४४	१२.९	२२	अभि०	१८	३३	४३.३
३	कृत्तिका	३	४१	५०.१	१३	हस्त	१२	२४	५६.९	२३	श्रवण	१९	४६	८.९
४	रोहिणी	४	३०	२८.१	१४	चित्रा	१३	२०	११.२	२४	धनि०	२०	३५	१३ ५
५	मृग०	५	२९	५४.१	१५	स्वाती	१४	११	१९ ७	२५	शत०	२२	४७	३९.५
६	आर्द्रा	६	०२	१३.५	१६	विशाखा	१५	४५	३७.३	२६	पूर्वा भाद्रपद	३३	००	१.७
७	पुनर्वसु	७	३९	१७.६	१७	अनुराधा	१५	३४	४२.८	२७	उत्तरा भाद्रपद	०	८	२० ६
८	पुष्य	८	३९	१७.६	१८	ज्येष्ठा	१६	२३	६४.५	२८	रेवती	१	८	४६.०
९	अश्लेषा	८	५०	२२.४	१९	मूल	१७	१७	९.४			१	२५	१२.२
१०	मघा	१०	३	१८.८	२०	पूर्वाषाढ़ा	१८	२२	६.५					

स्थूल रीति से छाया से दिन का इष्ट जानना—

परम दिन जो २१ जून को होता है। पहिले बता चुके हैं कि किस अक्षांश पर कितना परम दिन [बड़े से बड़ा दिन] होता है।

(१) (परमदिन—अपना दिनमान)+ ॰ॖ॰= (अ) = दिन मध्य छाया (घड़ी पल में)।

अपना दिनमान ५६

(१२ अंगुल शंकु की छाया)—(अ=दिन मध्य छाया) +१२ अगुल शंकु÷दिन की गत या गम्य घटी पल अर्थात दोपहर के पहिले इतना दिन चढ़ा या दोपहर के बाद का इष्ट है तो इतना दिन शेप रहा जानना।

गत=इतने घड़ी पल बीत गया ।

गम्य= ,, ,, बीतने को है ।

(२) दूसरा प्रकार

१२१ ÷ [इष्ट छाया का पैर का नाप +६] =लब्धि घड़ी पल (दिन की गत, गम्य घटी पल)

(३) व=मेष से तुला संक्रान्ति तक=१ घटाना

तुला व मीन ,, में=३ ,,

वृश्चिक व कुम्भ ,, में=४ ,,

धन व मकर ,, में=५ ,,

तीसरा प्रकार—

१०५ ÷ [(छाया नाप+७)--व] =गत गम्य घटी

गत दिन=दिनार्द्ध के पूर्व में इतने घड़ी पल दिन चढ़ा।

गम्य=दिन के उत्तरार्द्ध में इतने घड़ी पल शेष रहा ।

उदाहरण—

(१) मान लो अपना अक्षांश २३ अंश है । यहाँ का परम दिन १३ घं० २० मि० =३३ घ० २० पल का होता है जैसा पहिले समझा चुके हैं ।

अपने स्थान का परम दिन
३३ घड़ी २० पल है ।
इष्ट दिन का दिनमान
(माल लो) २६—१७ है

अन्तर ७ १७

अब १ शंकु (सलाका) १२ अंगुली का लिया, उसको सीधा खड़ा कर छाया नापी तो २५ अंगुली छाया निकली ।

अन्तर ७—१७ × ७/५ अ=दिन मध्य छाया

७—१७=१० घ० ११ प०
×७

५) ५०-५९ (१० घड़ी
५०
०
५) ५९ (११ पल
५
९
५
४

शंकु छाया २५ अंश-०
—दिन मध्य छाया १०--११

अन्तर (शेष)= १४--४९
+ शंकु नाप १२--०
योग २६--४९

दिनमान

२६--१७ × ६=१५७ घ. ४२ प.=९४६२ पल

योग २६--४९ २९--४१ १६०--९ पल
=५ घ. ५२ प. दिन शेष रहा
मध्याह्न के बाद होने के कारण

(२) दूसरीरीति

१२१ ÷ (छाया + ६)

=१२१ ÷ (१४ छाया + ६)

=१२१ ÷ २०=६ घ. ३ प.

=६ घ. ३ प. दिन शेष रहा

मान लो इष्ट काल में अपनी छाया को अपने पैर से नापा तो, नाप में १४ पैर निकली। यह छाया मध्याह्न के उपरान्त की है।

२०) १२१ (६ घड़ी
१२०
१×६०
२०) ६० (३ पल
६०

(३) तीसरी रीति

१०५ ÷ [(छाया+७)−व]

=१०५ ÷ [(१४ छाया+७)−५]

=१०५ ÷ (२१−५)

=१०५ ÷ १६=६ घ. ३३ प.

=६ घ. ३३ प. दिन शेष रहा।

यह सब स्थूल रीति है इसका ध्यान रहे।

मान लो छाया का नाप वही १४ पांव है और धन संक्रान्ति होने से धन के ५ घटाना पड़ेगा तो व=५ हुआ।

१६) १०५ (६ घड़ी
९६
९×६०
१६) ५४० (३३ पल
४८
६०
४८
१२



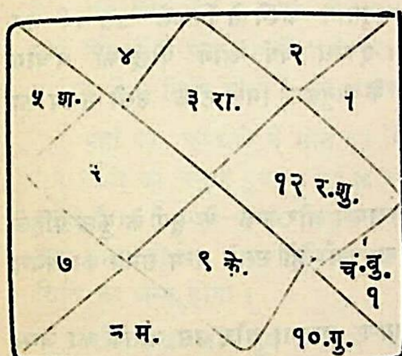
अध्याय ३९

केवल कुण्डली पर से जन्म समय मास-पक्ष आदि का ज्ञान

केवल कुंडली चक्र किसी का देख कर उस जातक की आयु, जन्म मास, अयन, ऋतु, पक्ष, जन्म तिथि, नक्षत्र, योग, करण, जन्म दिन में या रात मे हुआ, जन्म का समय आदि स्थूल रूप से जान सकते हो। इन सवको जानने की रीति पृथक २ समझाते हैं।

(१) वर्ष ज्ञान—

कुंडली में शनि की राशि और वर्तमान सम्वत् में शनि की राशि देखो। शनि २॥ वर्ष में एक राशि पूरी करता है। कुण्डली की शनि की राशि से शनि की वर्तमान राशि तक गिन कर २॥ से गुणा करो तो गत आयु आयगी। वर्तमान सम्वत् में वह संख्या घटा दो तो लगभग जन्म का सम्वत् निकल आवेगा। शनि लगभग ३० वर्ष में १२ राशि घूम लेता है। इसके भीतर की आयु इससे प्रगट हो जायगी। यदि जातक देखने में ३० से अधिक आयु का जान पड़े तो शनि के फेरे के अनुसार ३०-३० वर्ष जोड़ते जाय तो आयु निकल आयगी। इस कारण पहिले देखकर अनुमान लगा लेना चाहिए कि कितनी आयु होगी और शनि के कितने फेरे हो गये होंगे। यदि जातक पास नहीं है तो पूछ सकते हो कि जातक बाल, युवा, अधेड़ या वृद्ध हैं तब जन्म समय बताना।



इस कुण्डली में शनि सिंह का है। सम्वत् २००० में वृप का शनि है। सिंह के आगे कन्या से वृप तक गिना ९ राशि हुई ९ × २॥=२२॥ वर्ष हुए। अब इस की आयु २२॥ वर्ष या २२॥ + ३०= ५२॥ वर्ष, या ५२॥ + ३०=८२॥ वर्ष की होगी। अब जातक को देखकर आयु का अनुमान कर बता दो। या पूछने से प्रगट हुआ कि अधेड़ से और कुछ उमर हो गई है तो ५२॥ वर्ष की आयु होगी। इसे इष्ट सम्वत् में घटाया (सम्वत् २०००—५२½=१९४७½ आया) तो कह सकते हैं कि सम्वत् १९४७ के लगभग का जन्म होगा। इसमें एकाध वर्ष का अन्तर पड़ सकता है।

इसी प्रकार कुंडली में गुरु की राशि से इस समय के गुरु की राशि तक गिन कर आयु जान सकते हो। गुरु १२ वर्ष में पूरा भगण (१२ राशि) घूम लेता है। १ महीने में १ राशि घूमता है।

कुडली में गुरु मकर का था। सम्वत् २००० में मिथुन का गुरु है। मकर के आगे कुम्भ से गिना मिथुन तक ५ राशियाँ हुई=५ वर्ष। शनि के साथ ही साथ इस का विचार करना चाहिए। जैसे शनि से तो ५२॥ वर्ष की आयु निकली थी तो इस में गुरु के ४ फेरे हो चुके। ४ आवृत्ति × १२ वर्ष=४८ वर्ष + ५ वर्ष=५३ वर्ष वर्तमान सम्वत् तक आया। सम्बत् २००० सम्वत् १९४७ का जन्म निकालना है। अब इस में इन के अंशों —५३ का विचार करो तो और भी ठीक हिसाब आयु का जम

जाता है। १९४७में जन्म के समय गुरु १४ अंश पर है अर्थात् आधी राशि भुक्त हो चुकी है तो ५३ में आधा वर्ष घटा दिया तो वही ५८।। वर्ष आ जाते हैं।

इसी के साथ २ राहु का भी विचार करना चाहिए। राहु सदा वक्री रहता है और १८ वर्ष में पूरा भचक्र घूम लेता है। कुण्डली के राहु से वर्तमान राहु तक उलटे क्रम से गिनो, जो संख्या हो उसे १।। से गुणा करो, क्योंकि राहु १।। वर्ष में १ राशि पार करता है। जो गुणन फल आवे उस पर से आयु विचारना।

जैसे कुण्डली में राहु मिथुन का है सम्वत् २०००में कर्क का है। मिथुन से उल्टे क्रम से आगे वृष फिर मेष आदि गिना तो ११ राशि हुई। ११ × १।।=१६½ वर्ष + ३६ वर्ष (राहु के २ फेरा)=५२।। वर्ष आयु। यदि कुण्डली में ग्रह स्पष्ट दिये हों तो इन ग्रह के अंशों पर से ठीक विचार करने पर आयु का हिसाब ठीक जम सकता है।

जिस सम्वत् की आयु कुण्डली देखकर अनुमान करने से निकले उस वर्ष का पंचांग (यदि पुराने पंचांग पास हों तो) या एकाध वर्ष आगे पीछे का पंचांग देखो। जिसमें ग्रहों की ठीक स्थिति कुण्डली के अनुसार मिले ठीक उसी समय का जन्म जानना।

(२) कुण्डली से अयन जानना

अयन—मकर के सूर्य के कुछ पहिले उत्तरायण और कर्क के सूर्य के कुछ पहिले दक्षिणायन होता है। कुण्डली में जिस राशि का सूर्य हो उससे जन्म समय का अयन जानना

जैसे कुण्डली में मीन का सूर्य है तो उत्तरायण जानना और उस जातक का जन्म उत्तरायण में हुआ है कहना।

(३) जन्म की ऋतु और मास जानना

जन्म मास—सूर्य की राशि से चन्द्रमास का अनुमान इस प्रकार करना

सूर्य की राशि	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धन	मकर	कुंभ	मीन
मास	वैशाख	ज्येष्ठ	असाढ़	श्रावण	भादों	कुआँर	कार्तिक	अगहन	पूस	माघ	फागुन	चैत

जैसे मीन का सूर्य कुण्डली में है तो चैत्र में जन्म हुआ होगा।

(४) ऋतु

चन्द्र मास के अनुसार इस प्रकार ऋतु होती हैं—

ऋतु	वसन्त १	ग्रीष्म २	वर्षा ३	शरद ४	हेमन्त ५	शिशिर ६
मास	चैत्र	जेठ	सावन	कुआँर	अगहन	माघ
	वैशाख	आसाढ़	भादों	कातिक	पूस	फागुन

सूर्य मीन का होने से चैत्र मास हुआ। चैत्र में वसन्त ऋतु होती है। इस कारण जातक का जन्म वसन्त ऋतु में हुआ है कहना।

(५) जन्म का पक्ष जानना

कुण्डली में ७ राशि के भीतर चन्द्र हो तो शुक्ल पक्ष और ७ राशि के बाहर चन्द्र हो तो कृष्ण पक्ष जानना।

जैसे ऊपर कुण्डली मे मीन का का सूर्य है और चन्द्र कुम्भ का है। मीन गिना तो ७ राशि कन्या हुई। इसके आगे कुम्भ का चन्द्र है, इससे ज्ञान पड़ा कि सूर्य से चन्द्र ७ राशि के बाहर है, इस कारण जातक का जन्म कृष्ण पक्ष होगा कहना।

(६) जन्म की तिथि जानना

कुण्डली में जहाँ सूर्य हो वहाँ अमावस्या जानो, क्योंकि अमावस्या को सूर्य और चन्द्र एकत्र रहते हैं। उसके आगे जैसे जैसे तिथि बढ़ती है, चन्द्रमा आगे बढ़ते जाता है। इस कारण कुण्डली में देखो चन्द्रकहाँ है और सूर्य से कितने घर के अंतर पर चन्द्र है। एक कोठे में (१ राशि में) २॥ तिथि के हिसाब से तिथि होती है। क्योंकि मोटे हिसाब से चन्द्र ३० दिन में १२ राशि घूमता है तो १ राशि में २॥ दिन पड़ा। १ दिन में १ तिथि होती है इस कारण १ राशि में २॥ तिथि होती हैं।

यहाँ पर कुण्डली में मीन का सूर्य है और चन्द्र कुम्भ का है। दोनों के बीच ११ राशि का अन्तर हुआ। ११ × २॥=२७॥ तिथियाँ हुई। अमावस्या को ३०तिथि कहते हैं। (२७॥—१५)=शेष १२॥ तिथि। २७॥ में पूर्णिमा तक की १५ तिथि घटा दिया तो शेष १२॥ तिथि कृष्ण पक्ष की निकल आई। अर्थात् कृष्ण पक्ष की १३ तिथि का जन्म होगा।

यदि चन्द्र और सूर्य के अंशों का विचार किया जाय तो और भी ठीक तिथि निकल आती है। यहाँ सूर्य मीन के ५° में हैं (११ रा–५°) और चन्द्र कुम्भ के ३° (१० रा–३°) पर है अर्थात् लगभग बराबर अंश दोनों के हैं। जब सूर्य और चन्द्र के बीच १२° का अन्तर पड़ता है तो १ तिथि होती है। यहाँ दोनों का अन्तर निकाला।

सूर्य ११ रा–५ अंश=शेष १ रा–२°
—चन्द्र १०–३ = ३२° ÷ २१ अंश
शेष = १—२ = २॥ लगभग तिथि

हुई अर्थात् २॥ तिथि चन्द्र और चलता तो अमावस्या हो जाती। इस कारण अमावस होने को २॥ तिथि शेष है। पूरी १५ तिथि से २॥ घटाये तो १२॥ तिथि हुई। अर्थात् १२ तिथि पूरी हो चुकी है तेरहवीं तिथि वर्तमान है तो जन्म कृष्ण पक्ष की १३ तिथि का हुआ।

चन्द्र में से सूर्य घटाने से स्पष्ट तिथि ज्ञात होती है। यहाँ चन्द्र १०—रा०—३° में से सूर्य ११—रा०—५° घटाया तो शेष १०–रा०–५अंश रहे, इसके ३२४°हुए। १२° की एक तिथिहोती है, इसमें १२ का भाग दिया तो २७$\frac{1}{3}$ तिथि हुई। इसमें से १५ घटाया तो कृष्ण पक्ष की १२$\frac{1}{3}$ तिथि हुई तिथि अर्थात् जन्म तिथि १३ हुई।

चन्द्र १०—रा०—३°
सूर्य ११—५
शेष १०-२८

१२) ३२८° (२७
२४
——
८८
८४
——
४

यदि सूर्य के आगे चन्द्र ७ घर के भीतर है तो समझना अमावस्या को पार कर चन्द्र आगे बढ़ रहा है और अमावस्या के आगे शुक्ल पक्ष की तिथि आरम्भ हो गई हैं। सूर्य के ठीक सन्मुख सातवें घर में चन्द्र हो तो पूर्णिमा समझना। इसके आगे चन्द्र जाने पर कृष्ण पक्ष का आरम्भ होता है और चन्द्र जब सूर्य के पास आ जाता है तो अमावस्या होती है।

(७) कुण्डली से जन्म का वार जानना

कुण्डली से जो जन्म का मास जान पड़े चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से गिन कर डेढ़ गुना करो। गत पक्ष के दिन जोड़ कर ७ का भाग दो। जो शेष रहे उसे जन्म वर्ष के राजा से गिन कर जन्म का वार कहना। पहले बता चुके हैं कि चैत्र शुक्ल १ तिथि को जो वार होता है वही उस वर्ष का राजा कहलाता है। वर्ष के राजा का चक्र पहिले दे चुके हैं। जैसे जन्म चैत्र कृष्ण १३ का है जैसा ऊपर निकाल चुके हैं। चैत्र शुक्ल १ से फागुन कृष्ण ३० तक ११ महीने हुए। ११ × १॥=१६॥ दिन+फागुन शुक्ल पक्ष के १५ दिन +और चैत्र कृष्ण १३ तक गत दिन १२ हुए। १६॥+१५+१२=४३॥ ÷ ७ शेष १॥ बचा। इस वर्ष का राजा सोमवार था तो सोमवार से १॥ गिना, मंगलवार हुआ। जन्म दिन मंगलवार कहना।

(८) कुण्डली से जन्म नक्षत्र जानना

कुण्डली में जो जन्म मास निकले कार्तिक से उस मास तक गिन कर दूना करो और गत पक्ष के दिन भी जोड़ कर एक और मिला दो। इसमें २७ का भाग दो, शेष जो बचे अश्विनी से गिन कर नक्षत्र जानना।

जैसे कुण्डली से प्रगट हुआ चैत्र का जन्म है तो गत मास फागुन हुआ। कार्तिक को १ गिना। इस प्रकार कार्तिक से फागुन तक गिना ५ मास हुए। ५ × २=१०+ गत १३+१=१० + १४=२४, अश्विनी से गिना चौबीसवां नक्षत्र शतभिषक का जन्म हुआ।

(९) कुण्डली से जन्म का योग जानना

पुष्य नक्षत्र से सूर्य नक्षत्र तक गिनो और श्रवण नक्षत्र से चन्द्र नक्षत्र तक गिनो। दोनों संख्या जोड़कर २७ का भाग दो, जो शेष बचे उसी क्रम से गिन कर योग जानना।

सूर्य चन्द्र की राशि अंश पर से पहले वताये होड़ा चक्र में दिए हुए अंशों पर से इनका नक्षत्र जान सकते हो जैसा सूर्य ११–रा०–५° है अर्थात् मीन के ५° पर है। होड़ाचक्र में ११–रा२—३°—२०° तक पूर्वा भाद्रपद का चौथा चरण दिया है। इष्ट सूर्य ११—रा०—५° है इससे जाना गया कि सूर्य पूर्वा भाद्रपद का चौथा चरण पार करके उत्तरा भाद्रपद नक्षत्र में गया है। उत्तरा भाद्रपद का पहिला चरण ११—रा०–६ -४० तक होता है, इस कारण सूर्य जन्म समय उत्तरा भाद्रपद नक्षत्र पर था।

पुष्य नक्षत्र से उत्तरा भाद्रपद (सूर्य नक्षत्र) तक गिना १९ हुए। जन्म नक्षत्र (चन्द्र नक्षत्र) शतभिषक है (ऊपर निकाल चुके हैं)। श्रवण से चन्द्र नक्षत्र शतभिषक तक गिना ३ हुए। १९+३=२२ वां योग=साध्य योग आया। यदि योग २७ से अधिक आवे तो २७ का भाग देने पर जो शेष रहता उसे लेते। यहाँ जन्म का योग साध्य निकला।

(१०) कुण्डली से जन्म का करण जानना

कुण्डली में जो जन्म की तिथि मिले उस तिथि तक शुक्ल प्रतिपदा से गिनो और उस संख्या में २ का गुणा कर १ घटाकर ७ का भाग दो जो शेष बचे वही करण परार्द्ध में जानना।

स्थिर करण। शुक्ल प्रतिपदा के पूर्वार्द्ध में किंस्तुघ्न और परार्द्ध में वव, कृष्ण १४ को, परार्द्ध में शकुनि। अमावस्या के पूर्वार्द्ध में शकुनि। अमावस्या के पूर्वार्द्ध में चतुष्पद और परार्द्ध में नाग सदा रहते हैं। यदि इनमें से कोई तिथि का जन्म हो तो इसी के अनुसार करण जानना। शेष का उपरोक्त रीति से जानना।

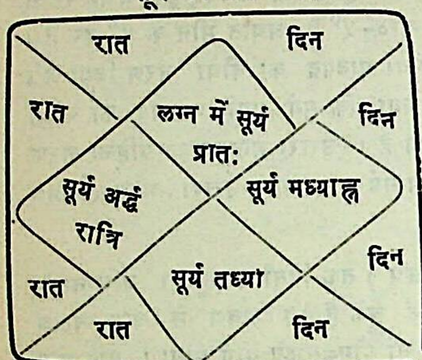
जैसे कृष्ण १३ का जन्म है। शुक्ल प्रतिपदा से पूर्णिमा तक १५ दिन कृष्ण पक्ष के १३ दिन। १५+१३= २८×२=५६–१=५५÷७= शेष ६। छठा करण वणिज हुआ। यह त्रयोदशी के परार्द्ध में हुआ। इसके पूर्वार्द्ध में इसके पहिले का अर्थात् पांचवा गर करण जानना।

इतनी खटपट न करके पहिले जो करण चक्र दे चुके हैं उससे इष्ट तिथि का ठीक करण जान सकते हो।

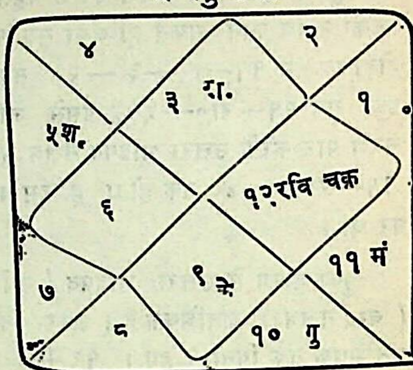
(११) दिन या रात का जन्म है कुण्डली देखकर जानना

कुण्डली में जहाँ सूर्य हो वहाँ से जन्म लग्न ६ घर के भीतर हो तो दिन का जन्म कहना और सातवें स्थान में हो तो संध्या का जन्म, ७ से १२ स्थान तक लग्न हो तो रात्रि का जन्म कहना। लग्न में सूर्य हो तो प्रातःकाल का जन्म, दशम में सूर्य हो तो दोपहर का जन्म और चतुर्थ में सूर्य हो तो अर्द्धरात्रि का जन्म कहना जैसा यहाँ सूर्य के समय चक्र में वताया गया है। लग्न कुण्डली देखा तो सूर्य दशम स्थान

सूर्य का समय चक्र



लग्नकुण्डली



में है यहाँ से लग्न चौथे घर में है अर्थात् ६ घर के भीतर ही है, इस कारण दिन का जन्म कहना। सूर्य दशम स्थान में है जिससे प्रगट होता है कि मध्याह्न काल का जन्म है।

(१२) कुण्डली से जन्म समय जानना

ऊपर जो सूर्य का समय चक्र दिया है उसमें केन्द्र में सूर्य रहने से जो समय होता है वतला दिया गया है। अब उनके बीच के स्थान से भी समय जानना बतलाते हैं।

दिन रात की ६० घड़ी में सूर्य, कुण्डली में १२ राशि (लग्न के अनुसार) घूम लेता है। १ राशि में ५ घड़ी या २ घण्टा पड़ा।

कुण्डली में सूर्य से लग्न जितने घर दूर हो उसका ५ गुना करो तो इष्ट काल की घड़ी निकल आयगी।

अपनी कुण्डली में सूर्य दशम भाव में है वहाँ से लग्न ३ घर अन्तर पर है। ३X५ =१५ घड़ी अपना इष्ट हुआ। अर्थात् कुण्डली से प्रगट हुआ कि जातक का जन्म लगभग १५ घड़ी इष्ट पर हुआ होगा।

यहां ध्यान रहे कि १ राशि में ३०° होते हैं। ३०° में ५ घड़ी का अन्तर पड़ता है तो ६° में १ घड़ी या १° में १० पल का अन्तर पड़ता है। सूर्य से लग्न जितने राशि अंश के आगे है देख कर इष्ट घड़ी का विचार कर लो। जैसे सूर्य ११ रा ५° (मीन के ५°) पर और लग्न २ रा २२° (मिथुन के २२ अंश) पर है तो सूर्य को आगे २५ अंश और चलना पड़ेगा तब मीन राशि का अन्त होगा। इस कारण (२ रा २२ अं) लग्न११ (० रा २५ अंश)=३ रा १७ अंश= यह सूर्य और लग्न का अन्तर हुआ। ३ राशि = (३ X ५) = १५ घड़ी और १७ अंश = (१७ X १०) = १७० पल = २ घ. ५० प.। सब मिल कर १७ घड़ी ५० पल के लगभग इष्ट हुआ। यह जन्म का इष्ट हुआ। परन्तु यह भी स्थूल मान है इसका ध्यान रहे।

कुण्डली पर से जन्म समय आदि का ज्ञान कैसे किया जाता है यह बता चुके। इस पर से जान सकते हो कि यह कुण्डली चक्र कितने महत्व का है और इस कुण्डली चक्र से कितनी महत्वपूर्ण बातें जानी जा सकती हैं। जिसके पास कुण्डली है और वह शुद्ध बनाई गई है तो उससे जन्म समय के सम्बन्ध की बहुत सी उपयोगी बातों का ज्ञान हो सकता है। इस कारण जितनी शुद्धता पूर्वक कुण्डली तैयार की जायगी उतना शुद्ध फल निकलेगा।

यहाँ केवल प्रारम्भिक ज्ञान कराने के निमित ही कुंडली सम्बन्धी सम्पूर्ण बातें स्थूल रूप से बता दी गई हैं। इससे स्थूल रूप से कुण्डली बनाना आ जायगा और फल विचारने का अनुभव बढ़ेगा।

सूक्ष्म रूप से गणित द्वारा कुंडली आदि तैयार करना और तत्सम्बन्धी पूरा गणित खण्ड में उदाहरण देकर समझाया गया है, जिससे इतना ज्ञान होने के उपरान्त आगे की सब बातें सरलता पूर्वक समझ में आने लगेगी।



अध्याय ४०

ग्रहों का बल विचार

कुण्डली में सब ग्रहों में कौन बलवान है कौन बलहीन है यह जानने की आवश्यकता पड़ती है। इस कारण ग्रहों के बल का विचार करना संक्षेप में बतलाते हैं।

ग्रहों का बल ६ प्रकार से विचारते हैं और उन सबको मिलाकर प्रत्येक ग्रह के बल का विचार करते हैं। क्योंकि बलवान ग्रह पूर्ण फल देता है। बलहीन ग्रह फल देने में असमर्थ होता है। ग्रहों का बल ६ प्रकार का है।

(१) स्थान बल, (२) दिग्बल, (३) कालबल, (४) चेष्टा बल, (५) नैसर्गिक बल, (६) दृग् बल।

(१) स्थान बल----५ प्रकार के बल के योग से यह बल बना है।

(१) उच्च बल, (२) सप्तवर्गी बल, (३) युग्मायुग्म बल, (४) द्रेष्काण बल, (५) केन्द्रादि बल।

(१) उच्च बल—जो ग्रह अपने उच्च में होता है वह पूर्ण बली होता है। जो अपने नीच में होता है वह शून्य बली होता है। इसके बीच में ग्रह हो तो अनुपात से बल निकालना पड़ता है।

(२) सप्तवर्गी बल—ग्रहों के गृह, होरा, द्रेष्काण आदि सप्तवर्गीबल साधन करना गणित खण्ड में बताया है। जो ग्रह अपने मित्र के घर में अपने मूल त्रिकोण

या स्वगृह में होता है वह वली होता है। शत्रु के स्थान में होता है उसका वल घट जाता है।

(३) युग्मायुग्म वल—सम राशि स्त्री संज्ञक होती है ; चन्द्र व शुक्र ग्रह स्त्री ग्रह है। स्त्री राशि में स्त्री ग्रह हो तो वलवान होता है। विषम राशि पुरुष ग्रह है, उपर्युक्त ग्रहों को छोड़कर शेष ग्रह पुरुष हैं। इनमें नपुंसक ग्रह भी पुरुष में शामिल है। पुरुष राशि में पुरुष ग्रह वलवान होते हैं। राशि स्त्री है या पुरुष राशि गुणधर्म चक्र में दिया है। ग्रह का लिंग, ग्रह गुण धर्म चक्र में दिया है।

(४) द्रेष्काण वल—एक राशि के ३ भाग करने से प्रत्येक भाग की द्रेष्काण संज्ञा होती है। पहिले द्रेष्काण में पुरुष ग्रह वली होता है। अन्त के द्रेष्काण में स्त्रीग्रह और मध्य के द्रेष्काण में नपुंसक ग्रह वली होता है।

(५) केन्द्रादि वल—केन्द्र में ग्रह पूर्ण वली होता है। पणफर में मध्यम अर्थात् आधावल, आपोक्लिम में चौथाई वल होता है। केन्द्रादि भाव संज्ञा पहिले समझा चुके हैं।

इन सवके वल का योग करने से ग्रह के स्थान सम्वन्ध से वल का पता लगता है; इस कारण इसे स्थान वल कहते हैं।

दिग्वल—यह अकेला ही है। इसमें दिशा के अनुसार ग्रहों का बल निकालते हैं। जैसे लग्न (पूर्व) में वुध और गुरु वली होते हैं। सप्तमभाव (पश्चिम) में, शनि वली होता है। चतुर्थभाव (उत्तर) में शुक्र और चन्द्र वली, दशम भाव (दक्षिण) में सूर्य वलवान होता है। इनसे सातवें घर में ये ग्रह हीन बल होते हैं। जैसे सूर्य दशम भाव अर्थात् सिर पर जव होता है तव वलवान होता है, पाताल (चतुर्थ भाव) में वलहीन होता है वीच का वल अनुपात से निकाला जाता है। भाव की दिशायें पहले समझ चुके हैं।

३ काल बल—४ प्रकार का वल मिलाकर काल वल वनता है।

(१) नतोन्नत वल, (२) पक्ष वल, (३) दिन रात्रि त्रिभाग वल (४) वर्षादि बल।

(१) नतोन्नत वल—चन्द्र मंगल शनि रात्रि में वली, अर्द्ध रात्रि में पूर्ण वली, सूर्य शुक्र गुरु दिन में वली, मध्याह्न में पूर्ण वली, और वुध सदा वली रहता है।

जो मध्याह्न में पूर्ण वली होते हैं वे अर्द्धरात्रि में वलहीन हो जाते हैं, और जो अर्द्ध रात्रि में वली होते हैं वे मध्याह्न में बलहीन हो जाते हैं, इसमें भी वीच के समय का वल अनुपात से (गणित द्वारा) निकाला जाता है।

(२) पक्षवल—पापग्रह=सूर्य, मंगल, शनि, कृष्णपक्ष में वली।

शुभग्रह=चन्द्र, गुरु, शुक्र, वुध, शुक्ल पक्ष में वली।

(३) दिन रात्रि त्रिभाग वल=दिन के और रात के पृथक२, भाग ३, करना।

दिन के प्रथम भाग में वुध, द्वितीय में सूर्य-तृतीय में शनि वली।

रात्रि के ,, चन्द्र ,, शुक्र, ,, मंगल ,,।

गुरु (दिन और रात्रि में) सदा वली होता है ।

इससे देखा जाता है कि दिन या रात्रि में जन्म हुआ है और दिन या रात्रि के कौन से भाग में जन्म हुआ है । जिस भाग में जन्म हुआ है उस भाग का सूचक ग्रह वली होगा । शेष ग्रह वलहीन होंगे ।

(४) वर्षादि वल—जिस होरा में किसी का जन्म हो उस होरा स्वामी का वल $\frac{३}{४}$ मिलेगा और जिस मास में जन्म हो उस मास स्वामी का वल $\frac{१}{२}$ (आधा) और वर्ष के स्वामी का वल $\frac{१}{४}$ मिलता है । इनको छोड़कर और दूसरे ग्रहों को बल नहीं मिलता ।

(४) चेष्टा वल—उत्तरायण (१०, ११, १२, १, २, ३ राशि के सूर्य में) चन्द्र और सूर्य चेष्टा वल पाता है और भौमादि ग्रह चन्द्र समागम होने से या वक्र होने से चेष्टा वली होते हैं । और यदि ग्रह युद्ध हुआ तो जो ग्रह जीतता है वह चेष्टा वली होता है ।

(५) नैसर्गिक वल—रवि, चन्द्र, शुक्र, गुरु, बुध, मंगल और शनि ये ग्रह शनि से उलटे क्रम से एक दूसरे के वली होते हैं अर्थात् शनि सवसे कम वल पाता है, उससे बली मंगल, मंगल से बुध बली, बुध से गुरु वली, गुरु से शुक्र वली, शुक्र से चन्द्र वली और चन्द्र से सूर्य बली होता है । सूर्य सवसे वली होता है और ऊपर वताये क्रम से ग्रह एक दूसरे से वल में हीन होते हैं ।

(६) दृग् वल—जिस प्रकार ग्रहों की दृष्टि ग्रह या भाव पर पड़ती हो उसका दृष्टि चक्र वनाना पहले वता चुके हैं, उसी प्रकार अपनी कुण्डली देखकर ग्रहों की दृष्टि का चक्र वनाया जाता है, जिससे प्रगट होता है कि किस ग्रह पर किस किस ग्रह की दृष्टि है । फिर उसमें विचारते हैं कि उस ग्रह पर कितने पाप ग्रहों की और कितने शुभ ग्रहों की दृष्टि है । सर्व शुभ ग्रह की दृष्टि का योग कर उसका चतुर्थांश निकालते हैं और शुभ योग चतुर्थांश से पाप योग चतुर्थांश घटाने से जान पड़ता है पाप दृष्टि अधिक है या शुभ दृष्टि अधिक है शुभ दृष्टि अधिक हो तो अच्छा और पाप दृष्टि अधिक हो तो बुरा समझा जाता है ।

ऊपर जो ग्रह का वल विचार करना वताया गया है वह बल गणित से निकाला जाता है फिर प्रत्येक ग्रहों के वल को जोड़ कर देखा जाता है कि कौन ग्रह कितना वलवान है । ग्रह जितना बली होगा उतना ही फल देगा । वलहीन ग्रह फल नही देता उलटे हानि करता है । इस कारण वल का विचार किया जाता है ।

वल निकालने का पूरा गणित उदाहरण सहित गणित खण्ड में दिया है । यहाँ प्रारम्भिक ज्ञान के निमित्त ही वल का वर्णन किया गया है ।

अध्याय ४१

नक्षत्र गुण-धर्म

क्रम	नक्षत्र	वर्ण	वश्य	योनि	गण	नाड़ी	वैर (योनि)	लोचन (नेत्र)	मुख	नाम
१	अश्वि.	क्षत्रिय	चतुष्पद	अश्व	देव	आदि	भैंस	मंद	तिर्यक्	लघु
२	भरणी	,,	,,	गज	मनुष्य	मध्य	सिंह	मध्य	अधो	उग्र
३	कृतिका	क्ष १ वैश्य ३	,,	छाग	राक्षस	अन्त	वानर	सुलो.	अधो	मिश्र
४	रोहिणी	वैश्य २	,,	सर्प	मनुष्य	अन्त	नकुल	मंद	ऊर्ध्वं	ध्रुव
५	मृग०	वैश्य २ शूद्र २	चतु. २ नर २	सर्प	देव	मध्य	नकुल	मंद	तिर्यक्	मृदु
६	आर्द्रा	शूद्र	नर	श्वान	मनुष्य	आदि	हरिण	मध्य	ऊर्ध्व	तीक्ष्ण
७	पुन०	शूद्र ब्रा० १	नर ३ जल १	मार्जार	देव	आदि	उन्दुरु	सुलो०	तिर्यक	चर
८	पुष्य	ब्राह्मण	जलचर	छाग	देव	मध्य	वानर	अंध	ऊर्ध्व	लघु
९	आश्ले०	,,	,,	मार्जार	राक्षस	अन्त	उन्दुरु	मंद	अधो	तीक्ष्ण
१०	मघा	क्षत्रिय	चतुष्पद	मूषक	,,	,,	मार्जार	मध्य	,,	उग्र
११	पू० फा०	,,	,,	,,	मनुष्य	मध्य	,,	सुलो	,,	,,
१२	उ० फा०	क्ष० १ वैश्य ३	चतु० १ नर० ३	गौ	मनुष्य	आदि	व्याघ्र	अन्ध	ऊर्ध्व	ध्रुव
१३	हस्त	वैश्य	नर	महिष	देव	आदि	अश्व	मन्द	तिर्यक	लघु
१४	चित्रा	वैश्य २ शूद्र २	नर	व्याघ्र	राक्षस	मध्य	गाय	मध्य	,,	मृदु
१५	स्वाती	शूद्र	नर	महिष	देव	अन्त	अश्व	सुलो०	तिर्यंक	चर
१६	विशाखा	शूद्र ३ ब्रा० १	नर कीट १	व्याघ्र	राक्षस	,,	गाय	अन्त	अधो	मिश्र
१७	अनु०	ब्राह्मण	कीट	मृग	देव	मध्य	श्वान	मध्य	तिर्यंक	मृदु
१८	ज्ये०	,,	,,	,,	राक्षस	आदि	,,	मध्य	,,	तीक्ष्ण
१९	मूल	क्षत्रिय	नर	श्वान	,,	,,	हरिण	सुलो०	अधो	,,
२०	पूषा	क्षत्रिय	नर ।। चतु०३।।	मर्कट	मनुष्य	मध्य	मेढा	अन्ध	अधो	उग्र
२१	उ. षा.	क्ष० १ वैश्य ३	चतुष्पद	नकुल	मनुष्य	अन्त	सर्प	मन्द	ऊर्ध्व	ध्रुव

२२ अभि.	०	०	नकुल	मनु०	अन्त	सर्प	मध्य	०	लघु
२३ श्रवण	वैश्य	चतु.१॥ जल. २॥	मर्कट	देव	,,	मेढ़ा	सुलो.	उर्ध्वं	चर
२४ धनि.	वैश्य२ शूद्र२	जल २ नर २	सिंह	राक्षस	मध्य	गज	अन्ध	ऊर्ध्वं	चर
२५ शत.	शूद्र	नर	अश्व	राक्षस	आदि	भैंस	मन्द	ऊर्ध्व	चर
२६ पू. भा.	शूद्र ३ ब्रा. १	नर ३ जल १	सिंह	मनुष्य	आदि	गज	मध्य	ऊर्ध्वं	उग्र
२७ उ. भा.	ब्राह्मण	जलचर	गौ	मनुष्य	मध्य	व्याघ्र	सुलो.	ऊर्ध्वं	ध्रुव
२८ रेवती	ब्राह्मण	जलचर	गज	देव	अन्त	सिंह	अन्ध	तिर्यक	मृदु

इन नक्षत्र गुण धर्म चक्र में दिये हुए वर्ण वश्य योनि गण और नाड़ी का विवाह आदि में विचार किया जाता है। संक्षिप्त जन्म पत्रिका (टिप्पणी) में ये सब लिखना पड़ता है। इस कारण यहाँ चक्र में दिया है।

वर्ण में कृत्तिका नक्षत्र में क्षत्रिय १, वश्य दिया है। इसका अर्थ यह है कि नक्षत्र में ४ चरण होते हैं, उनमें पहिला १ चरण में क्षत्रिय और अन्त में शेष ३ चरण में वैश्य वर्ण होता है। आगे भी इसी प्रकार का विचारना। जिसमें एक ही वर्ण दिया है वहाँ चारों चरण में एक ही वर्ण समझना। इसी प्रकार वश्य में भी समझना। जैसे मृगशिर में वश्य में पहिले २ चरण में चतुष्पद और अन्त के२ चरण में नर समझना।

वश्य में चतुष्पद=चौपाया, नर=द्विपद=मनुष्य। कीट=कीड़े=रेंगने वाले बिना पैर के (अपद) जलचर=जल में चलने वाले जीव।

योनि—छाग=बकरा या मेढ़ा। मार्जार=बिल्ली। महिष=भैंस। श्वान=कुत्ता, मर्कट=बन्दर, वानर। उंदुरु=चूहा, मूषक। गौ=गाय। नकुल=न्योला। व्याघ्र=बाघ, शेर। अश्व=घोड़ा। गज=हाथी।

लोचन—कोई वस्तु खोई हो उसके विचार में काम आता है। सु०=सुलोचन। मुख=तिर्यक=तिरछा। अधो=उलटा, औंधा। ऊर्ध्व=चित।

नक्षत्र नाम—इन नक्षत्रों के नाम के अनुसार कार्य करने में शुभ होता है।

●

अध्याय ४२

संक्षिप्त जन्मपत्री बनाना

किसी बालक का जन्म समय बतला कर संक्षिप्त जन्म पत्रिका बनाने को कहा जावे तो कैसे बनाना यहाँ समझाते हैं।

मान लो बालक का जन्म नरसिंहपुर में तारीख २-१०-१९३८ ई० के १० बजे दिन हुआ है। इसकी जन्म-पत्री बनानी है।

उस सन् का पंचाङ्ग देखो। कर्मवीर पंचाङ्ग जवलपुर का सम्वत् १९९५ का मिला, उसे देखा। आश्विन शुक्ल ९ रविवार सम्वत् १९९५ शाका १८६०, तारीख के अनुसार मिला।

आश्विन शुक्ल पक्ष तिथि ९ रविवार ६० घ. ० प., नक्षत्र पू०षा० २७-४५, शोभन योग ३-४६, उपरान्त अतिगंड योग, वालव कारण २९-१, दिनमान २९-३२, मिश्रमान ४५-५२ का मिश्रकालीन सूर्य ५ रा, १५ अंश २९'-३६" दिया है। चन्द्र मकर का ४४-२१ उपरान्त होगा।

उपर्युक्त तिथि आदि जवलपुर की है। वहाँ से नरसिंह पुर का देशान्तर ४ मिनट पश्चिम=१० पल है। पश्चिम होने से उपर्युक्त मान से घटाना पड़ेगा। इसमें फल छोड़ देते हैं, क्योंकि चर संस्कार आदि का ज्ञान अभी नहीं कराया गया है। इस कारण अभी कुछ कठिनाई मालूम पड़ेगी। यह विषय गणित खण्ड में विस्तार पूर्वक उदाहरण देकर समझाया गया है। अभी काम चलाने को स्थूल रूप से ही टिप्पणी तैयार करते हैं।

इष्ट साधन

	घं०	मि०			घड़ी	पल
जन्म	१०	०	(दिन को)	३ घं०=	७	२०
सूर्योदय	६	६	(पंचाङ्ग के अनुसार)	५४ मि०=	२	१५
शेष=	३ — ५४		=९ ०घ ४५ प. इष्ट।	योग=	९—४५	इष्ट हुआ

रविवार को पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र २७-४५ है। पंचाङ्ग में देखो यह नक्षत्र इसके पहिले शनिवार को कितना था। शनिवार को मूल नक्षत्र २१ घ० ३३ प० दिया है।

	घ० पल		घ० प०
पूर्ण घटी	६०—०	शनिवार को पू. षा.	३८--२७
भुक्त मूलनक्षत्र	२१--३३ (शनिवार को)	+ रविवार को पू. षा.	२७--४५
शेष	=३८--२७ शनिवार को	योग	६६--१२

यह पूर्वाषाढ़ा वचा — भभोग पूर्वाषाढ़ा का

शनिवार को पूर्वाषाढ़ा ३८-२७ था पूर्ण पूर्वाषाढ़ा=६६-१२

+ रविवार को इष्ट काल ९-४५ ∴ १ चरण=$\frac{६६\text{-}१२}{४}$ = घ० १६ पल ३३

∴ भुक्त पूर्वाषाढ़ा ४८-१२=भयात

शनिवार को मूल नक्षत्र २१-३३ भुक्त होने के वाद पर्वाषाढ़ा लगा। शनिवार को पूर्वाषाढ़ा ३८-२७ रहा और रविवार को २७-४५ तक था। सव मिलकर पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र का भोगकाल ६६—१२ हो गया। इसे भभोग या सर्वर्क्ष कहते हैं। भभोग का चौथाई भाग करने पर १ चरण का भोग निकलता है। भभोग ६६—१२ में ४ का भाग देने से १ चरण का भोग १६—३३ आया। अव देखना है कि जन्म समय

अर्थात् इष्ट काल तक पूर्वाषाढ़ा कितना झुका हुआ था। शनिवार के शेष पूर्वाषाढा में इष्ट काल जोड़ने से पूर्वाषाढ़ा का भुक्त काल ४८–१२ निकला। इसे भयात या भक्तर्क्ष कहते हैं।

अव देखना है पूर्वाषाढ़ा के कौन चरण का जन्म है। भयात में १ चरण घटाया तो शेष ३१—३९ वचे। दूसरा चरण घटाया तो शेष १५-६ वचे, अव तीसरा चरण नहीं घटाया तो तीसरे चरण का जन्म समझो।

	घ०	प०	
भयात	४८	१२	
१ चरण	१६	३३	
शेष	३१	३९	
दूसरा चरण	१६	३३	घटाया
शेष	१५	६	
तीसरा चरण	१६	३१	नहीं घटता, इससे तीसरे चरण का

जन्म हुआ।

पूर्वाषाढ़ा के तीसरे चरण में होड़ाचक्र के अनुसार नामाक्षर "फा" निकला। धनु राशि हुई। फा अक्षर पर से फतेहसिंह नाम रखा।

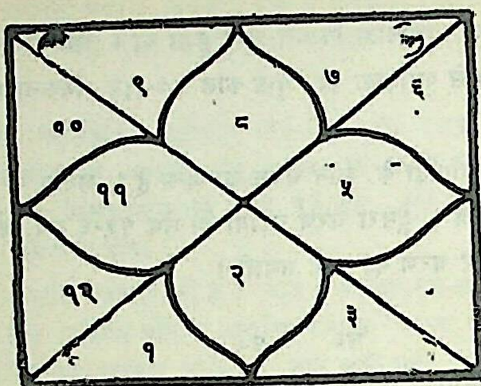
अव नक्षत्र गुण धर्म चक्र देखा।

पूर्वाषाढ़ा के तीसरे चरण में जन्म होने से=क्षत्रिय वर्ण, चतुष्पद वश्य, मर्कट योनि, मनुष्य गण, मध्य नाड़ी हुई। धन राशि है जिसका स्वामी गुरु हुआ।

अव लग्न कुण्डली वनाने के लिए पहिले लग्न निकालना है। लग्न निकालने को लग्नसारिणी देखी। सूर्य ५ रा १५° है अर्थात् कन्या के १५° पर है। सारिणी में कन्या के १५° के नीचे ३१-२५-१ दिया है। इसमें सारिणी इष्ट ९—४५ जोड़ा तो योग ४१—१०—१ हुआ। इसे सारिणी में खोजा ४१–६–१२ तक वृश्चिक के ७° होते हैं और ४१-१७-३२ तक ८° होते हैं अपना इष्ट युक्त सारिणी अंक दोनों के वीच में हैं। इस कारण लगभग ७।।° वृश्चिक लग्न के आते हैं। वृश्चिक लग्न निकाली। अब वृश्चिक लग्न को बीच में रख कर कुंडली तैयार की। इस प्रकार कुंडली चक्र वन कर तैयार हुआ।

अंक	३१-२५-१
+ इष्ट	९-४५-०
योग	४१-१०-१

अव इसमें ग्रह भरने के लिए पंचाङ्ग देखा। पंचाङ्ग में अष्टमी का मिश्रमान ४५-५४ का ग्रह इस प्रकार दिया है। जन्म नवमी का है। इस कारण उसके समीप की पंक्ति (पंचाङ्ग के ग्रह) यही हैं।

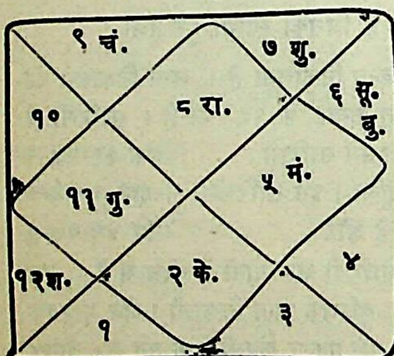


पंक्ति	सूर्य	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु
	५-१४°	४-२१°	५-८°	१०-५°	६-२३°	१११४°	७-०°-२५'	१-०°-२६'

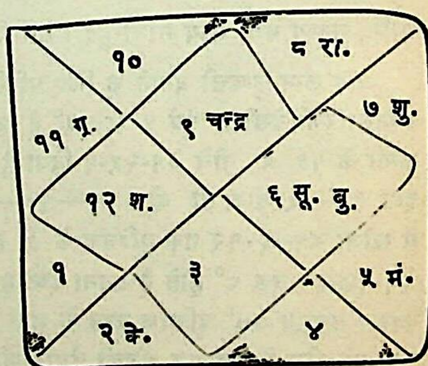
अब पंचाङ्ग में देखो कि पंक्ति से इष्ट काल तक कोई ग्रहों में परिवर्तन हुआ है क्या ? अष्टमी के आगे नवमी के इष्ट काल तक पंचाङ्ग में इन ग्रहों में कोई परिवर्तन नहीं दिया, इस कारण इसीके अनुसार अपनी कुण्डली में ग्रह स्थापित करेंगे।

सूर्य ५-४° है अर्थात् कन्या का है, मंगल=सिंह का, बुध=कन्या का, गुरु कुम्भ का, शुक्र तुला का शनि मीन का राहु वृश्चिक का, केतु वृष का है। इसी प्रकार कुण्डली में जहां इन राशियों के अंक हैं वहाँ ये ग्रह स्थापित करेंगे।

लग्नकुंडली



चन्द्रकुंडली



राशि पहिले ही जान चुके हैं धन राशि है अर्थात् धन राशि का चन्द्र है, इस कारण चन्द्र को धन राशि पर रखा। लग्न को बीच में लग्न स्थान पर रखकर जो कुण्डली बनाई जाती है वह लग्न कुण्डली है और चन्द्र राशि को बीच में (लग्न स्थान पर) रख कर जो कुंडली बनाई जाती है वह चन्द्र कुंडली है।

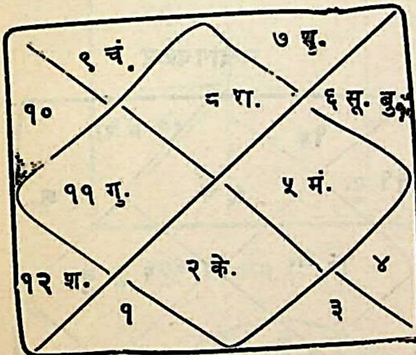
अब इसी को लिखने की रीति आगे बताई गई है। पहिले मंगलाचरण में गणेश, ईश्वर आदि की बन्दना लिखने के उपरान्त ये सब बातें क्रमानुसार लिख दी जातीहैं।

श्री गणेशाय नमः

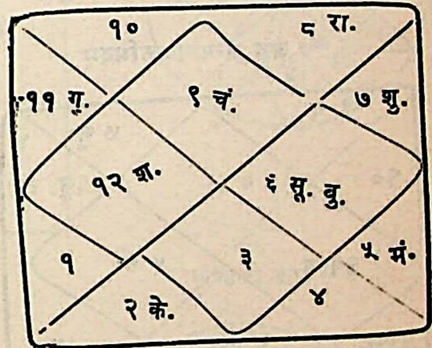
स जयति सिन्धुरवदनो देवो, यत्पादपंकजस्मरणम्।
वासरमणिरिव तमसां राशि नाशयति विघ्नानाम्॥
ब्रह्मा करोतु दीर्घायुः, विष्णुः कुर्याच्च संपदाम्।
हरो रक्षतु गात्राणि, यस्यैषा जन्मपत्रिका॥

अथास्मिन् शुभे विक्रमार्क सम्वत् १९९५, शालिवाहन शाके १८६०, सायन दक्षिणायने गते, याम्यगोले शरदृतौ महामांगल्यप्रदे आश्विनमासे शुभे शुक्लपक्षे, तिथौ ९ घटचादिकम् ६।१० रविवासरे। पूर्वाषाढ़ानक्षत्रे घटचः २७।४५, शोभननाम योगे घटचादिकं ३।४६ तदुपरि अतिगंडनामयोगे। बालवकरणे घटचः २९।१ एवं पंचाङ्ग शुद्धिः। तत्र दिनप्रमाणं घटचः २९।३२ रात्रिप्रमाणं घटचः ३०।२८ श्रीसूर्योदयादिष्ट-घटचादिकं ९।४५ कन्यार्के गतांशाः १५। वृश्चिकलग्ने गतांशाः ७। एवम् शुभग्रहा-वलोकिन्यां कल्याणवतीवेलायां श्रीमतो नाथूरामसिंहस्य ठाकुरगृहे भार्या सौभाग्यवती अम्वा कुक्षेः पुत्ररत्नमजीजनत्॥ तस्याभिधानं शतपदचक्रानुसारेण पूर्वाषाढ़ातृतीयचरणे "फ" काराक्षरे अकारस्वरे फतहसिंह इति प्रतिष्ठितम्। अस्य राशिः धनुः। स्वामी गुरुः। क्षत्रिय वर्णः। चतुष्पद वश्यः, मर्कट योनिः मनुष्य गणः। मध्य नाड़ी। इत्यादि विवाहादौ विचारणीयम्। अयं च कुलदेव्याः प्रसादात् दीर्घायुर्भूयात्।

लग्नकुंडली



चन्द्रकुंडली



दूसरा प्रकार टिप्पणी (जन्म पत्री) लिखने का

श्रीगणेशाय नमः

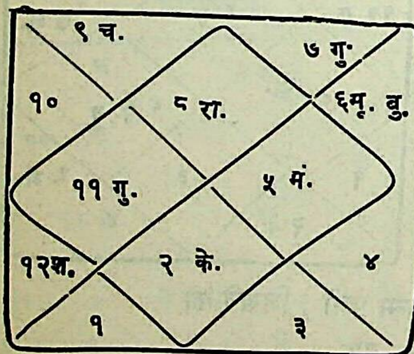
श्रीसरस्वत्यै नमः

स जयति सिंधुरवदनो देवो, यत्पादपंकजस्मरणम्।
वासरमणिरिव तमसां, राशि नाशयति विघ्नानाम्॥

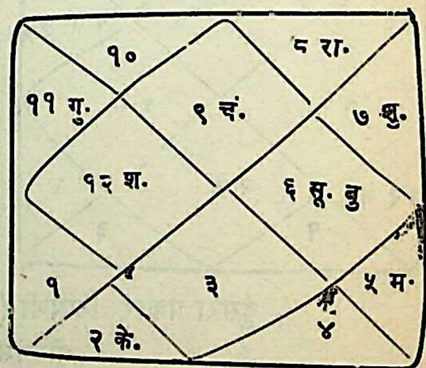
आदित्याद्या ग्रहाः सर्वे सनक्षत्राः सराशयः ।
आयुः कुर्वंतु ते सर्वे यस्यैषा जन्मपत्रिका ॥

अथास्मिन् श्रीमन्नृपतिविक्रमादित्यराज्योदयात् गताब्दाः श्री सम्वत् १९९५ शाके १८६० ॥ श्री सूर्ये दक्षिणायने ॥ शरद् ऋतौ ॥ मासानामुत्तमे आश्विनमासे ॥ शुभे शुक्लपक्षे ॥ तिथौ नवम्यां ॥ रविवासरे । घट्यादि ६०।० ॥ पूर्वाषाढ़ानक्षत्रे घट्यादि २७।४५ ॥ शोभननामयोगे घट्यादि ३।४६ ॥ तदनन्तरम् अतिगंडनामयोगे ॥ बालवकरणे २६।१ ॥ एवं पंचांगशुद्धावद्यदिने श्रीसूर्योदयादिष्टघट्यादि ९।४५ ॥ तत्समये वृश्चिकलग्नोदये श्रीठाकुरनाथूरामसिंहजी तस्य गृहे सौभाग्यवत्या भार्यायाः कुक्षौ पुत्ररत्नमजीजनत् ॥ पूर्वाषाढ़ानक्षत्रस्य भुक्तर्क्षघट्यादि ४८।१२ ॥ भोग्यर्क्षघट्यादि १८।० ॥ सर्वर्क्षघट्यादि ६६।१२ ॥ अतः पूर्वाषाढ़ानक्षत्रस्य तृतीयचरणे जातत्वात् अवकहड़ाचक्रानुसारेण चि० फतेहसिंह नाम प्रतिष्ठितम् ॥ सच देवद्विजप्रसादाद् दीर्घायुर्भवतु ॥ धन-राशिः ॥ क्षत्रिय-वर्णः ॥ चतुष्पद वश्यः ॥ मर्कट-योनिः॥ मनुष्य गणः ॥ मध्य नाड़ी ॥ एतद्विवाहादौ विचारणीयम् ॥ वृश्चिकलग्नगतांशाः ७ ॥ कन्यार्कगतांशाः १५ ॥ इयं जन्मपत्रिका जबलपुरस्य कर्मवीरपंचाङ्गानुसारेण निर्मिता ॥ आंग्लमतानुसारेण जन्मसमय १० बादने दिने दिनांक २।१०।१९३८ ईसवी ॥ शुभमस्तु ॥

अथ जन्मांगचक्रमिदम्



चन्द्रांगचक्रम्

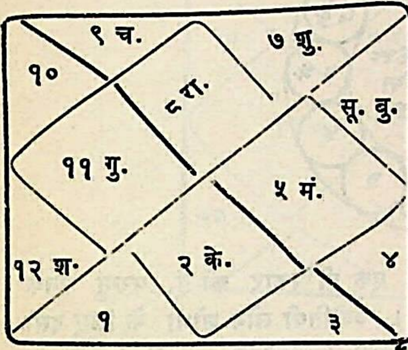


कुण्डली के प्रकार

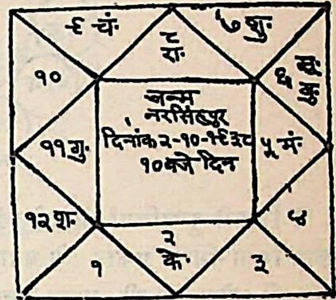
कुण्डली कई प्रकार की बनाई जाती हैं। उनके बनाने की भिन्न २ रीतियाँ आगे बताई जाती हैं।

भिन्न-भिन्न प्रकार की कुण्डलियाँ।

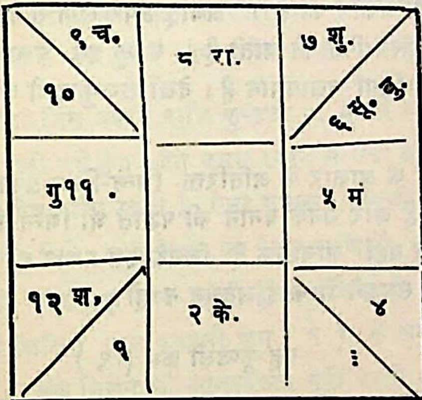
कुण्डली क्रम (१)



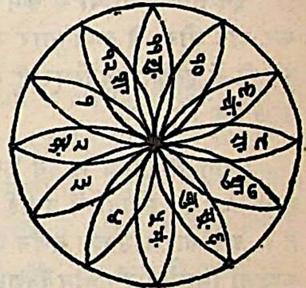
कुंडली क्रम (२)



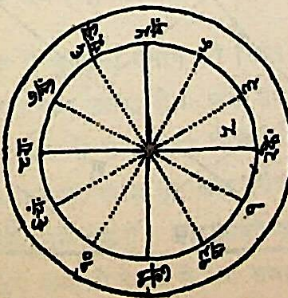
कुण्डली क्रम (३)



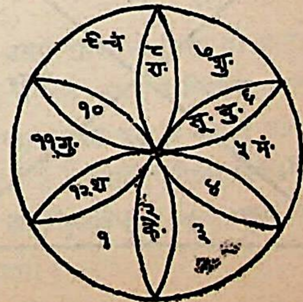
कुण्डली क्रम (४)



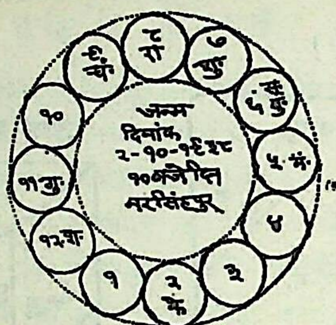
कुण्डली क्रम (५)



कुण्डली क्रम (६)



कुण्डली क्रम (७)

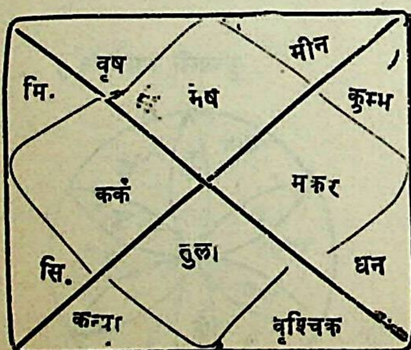


ये जितनी कुण्डलियाँ बनाई गई हैं, सब एक ही प्रकार की हैं, परन्तु उनके आकार भिन्न-भिन्न प्रकार के बनाये गये हैं। ज्योतिषी लोग शोभा के लिए इसी प्रकार की अनेक रूप की सुन्दर कुंडलियाँ जन्मपत्री में बनाते हैं। उनमें रंग भी भर देते हैं।

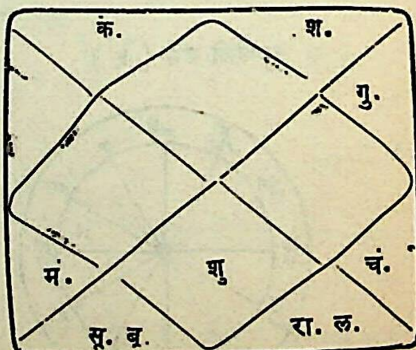
इन सब कुंडलियों में क्रम एक ही प्रकार का है। अर्थात् ऊपर लग्न से आरम्भ कर बांई ओर से क्रमानुसार राशियाँ स्थापित की जाती है। परन्तु इस प्रकार की कुंडली में इनके भाव स्थिर हैं केवल राशियाँ चलायमान हैं। देखो लग्नकुण्डली क्रम १ से ७ तक।

परन्तु भारतवर्ष में इन कुण्डलियों के आकार के अतिरिक्त भिन्न-भिन्न प्रकार से कुण्डलियाँ कई स्थानों में बनाई जाती हैं और उनके बनाने की पद्धति भी भिन्न-भिन्न हैं। इस कारण उनका वर्णन कर देना यहाँ आवश्यक है जिससे इस प्रकार की कोई कुण्डली मिलने पर नवीन विद्यार्थी को समझने में कोई अड़चन न हो।

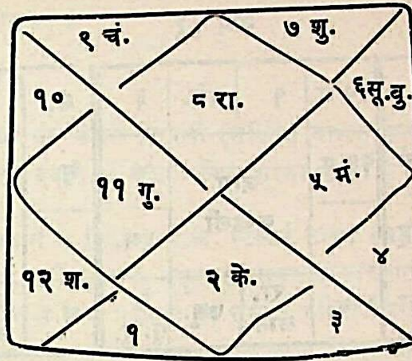
राशि कुण्डली क्रम (८)



ग्रह कुण्डली क्रम (९)



लग्न कुण्डली क्रम (१)



केशव दैवज्ञ की जातकपद्धति (केशव जातक) में राशि को स्थिर मानकर कुंडली बनाई गई है और उसमें भाव चलित बताये गये हैं।

यहाँ जिस प्रकार राशि कुण्डली ८ बनाई गई है, उसी के अनुसार राशियाँ सदा स्थिर मानी गई हैं। जैसे दशम स्थान में सदा दशवीं मकर राशि और लग्न में सदा पहिली मेष राशि रहती है, ऐसा मानकर कुण्डली बनाई जाती है। इसमें राशियों के अंक नहीं लिखे जाते केवल ग्रह जिस राशि में हो उस राशि के स्थान में लिख दिये जाते हैं, और जहाँ लग्न होती है लग्न लिख दी जाती है जैसे ग्रह कुण्डली क्रम (९) में पूर्व लिखित लग्न कुण्डली क्रम (१) के अनुसार ग्रह भर दिये गये हैं। इसमें राशि के अंक लिखने की आवश्यकता नहीं रहती। लग्न कुण्डली क्रम (१) और कुंडली क्रम (९) से मिलान करो। उसमें कितना अन्तर दिखाई देता है और नवीन विद्यार्थी को कुण्डली क्रम (९) अटपटी जान पड़ेगी।

दक्षिण में कुण्डली बनाने की भिन्न पद्धति है। उसमें राशि को स्थिर तो माना है परन्तु उसका क्रम उलटा है। जैसे उपर्युक्त कुण्डली में अंक ऊपर से लिखना आरम्भ होकर बाईं ओर से क्रमानुसार लिखे गये हैं, परन्तु यहाँ विरुद्ध क्रम से अर्थात् दाहिनी ओर से क्रमानुसार राशि के अंक स्थापित किये जाते हैं। इसमें राशियाँ स्थिर और भाव चलित माने गये हैं। और जहाँ लग्न हो वहां लग्न लिख दिया जाता है। यहाँ नीचे दी हुई कुण्डली देखने से सब समझ में आ जायगा।

स्थिर राशि कुण्डली
क्रम १०

मीन	मेष	वृष	मि,
कुम्भ	राशि कुंडली		कर्क
मकर			सिंह.
धन	वृश्चिक	तुला	कन्या

ग्रह कुण्डली
क्रम ११

१२ श.	१	२के.	३
११ गु.	जन्म कुण्डली		४
१०			५मं.
९ चं.	८ रा. लग्न	७शु.	६ सू. बु.

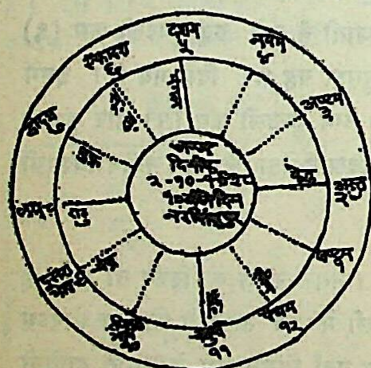
ग्रह कुण्डली
क्रम १२

श.		के	
सू.	जन्म कुण्डली		
			मं.
चं.	रा. लग्न	शु.	सू.बु.

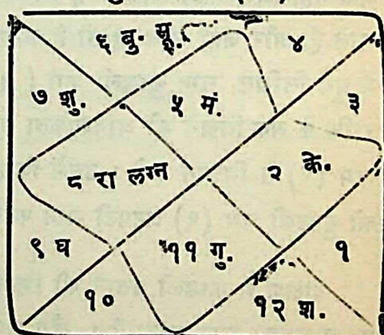
इसमें जहाँ लग्न लिखा है उसके आगे भाव गिना जाता है। जैसे लग्न में वृश्चिक का राहु है, धन भाव में धन राशि का चन्द्र है इत्यादि प्रकार से कुण्डली कम ११ में भाव समझना। परन्तु जो कुण्डली (११) में समझाने के लिए राशि के अंक दिये हैं वे नहीं रहते। केवल कुण्डली क्रम (१२) के अनुसार लग्न-कुण्डली में ग्रह बता दिये जाते हैं।

पाश्चात्य पद्धति से कुण्डली इस प्रकार बनती है कि कुण्डली में दशम भाव ऊपर रहता है, चतुर्थ भाव नीचे रहता है, बांई ओर लग्न का स्थान (पूर्व) और दाहिनी ओर अस्त (पश्चिम) स्थान रहता है। इसमें भाव स्थिर और राशियाँ चलायमान बतलाते हैं।

पाश्चात्य पद्धति से कुण्डली क्रम (१३)



कुण्डली क्रम (१४)



भाव स्थिर है इस कारण भाव में जिन-जिन राशियों के जितने २ अंश होते हैं भाव स्थान में लिख दिये जाते हैं और जो ग्रह जितने अंश पर होता है उसके नीचे लिख दिया जाता है। बीच में जन्म समय स्थान आदि लिखा रहता है। देखो कुंडली क्रम १३।

इसी कुण्डली को कुण्डली क्रम (१) सरीखा भी बनाते हैं, जिसमें कि लग्न के स्थान में दशम स्थान ऊपर रखते हैं जैसा कि कुण्डली क्रम १४ में बताया गया है। देखो कुण्डली क्रम (१४)।

जन्म पत्रिका

यहाँ विद्यार्थियों को केवल टिप्पणी (संक्षिप्त जन्मकुण्डली) बनाना बताया गया है। पूरी जन्मपत्रिका बनाने में बहुत गणित करना पड़ता है।

जन्मपत्रिका बनाने के लिये जन्म के स्टेन्डर्ड टाइम (घड़ी के समय) को स्थानिक समय बनाकर, काल समीकरण के अनुसार उसका संस्कार कर शुद्ध इष्ट काल बनाया जाता है। जिस पर से जन्म पत्रिका का सम्पूर्ण गणित होता है, इस पर से प्रत्येक ग्रहों की गति के अनुसार चालन बनाकर ग्रह स्पष्ट किया जाता है। फिर अपने स्थान का अक्षांश निकाल कर उससे पलभा बनाकर चरखण्ड निकाल, लंकोदय में उसका संस्कार कर स्वोदय बनाया जाता है। अयनांश निकाल कर सूर्य स्पष्ट से सायन सूर्य बनाकर लंकोदय पर से दशम भाव निकाल कर, फिर सब भाव संधियां निकाल कर सम्पूर्ण भाव स्पष्ट किया जाता है। फिर भाव का रूपात्मक भाव बल विश्वाबल चय क्षय फल निकाला जाता है। फिर भावकुण्डली बनाई जाती है और तात्कालिक एवं नैसर्गिक मैत्री पर से पंचधा मैत्री चक्र बनाया जाता है। होरा द्रेष्काण आदि कई प्रकार की वर्ग-कुण्डलियाँ बनाई जाती हैं। दशवर्ग चक्र बना कर उत्तम पारिजातक आदि संज्ञादर्शक चक्र बनाया जाता है। ग्रह पर ग्रहदृष्टि चक्र; भाव पर ग्रह-दृष्टि चक्र, शुभ अशुभ दृष्टि चक्र बनाया जाता है। ग्रह का और भाव का पृथक २ बल निकाल कर षडबल चक्र बनाया जाता है। इष्ट कष्ट, इष्ट बल, कष्ट बल,इष्ट दृष्टि, कष्ट दृष्टि, शुभ अशुभ चक्र, शुभ अशुभ पंक्ति आदि के कई चक्र बनाये जाते हैं। अष्टक वर्ग शुभ रेखा चक्र बना कर राशि पिंड ग्रह पिंड बना कर, अष्टक वर्ग आयु साधन, व उसकी दशा अन्तर्दशा साधन का साधन किया जाता है और अंशायु, पिंडायु, जीवशर्योक्त आयु, मिश्रायु, आदि आवश्यक आयु, निकाल कर उसकी दशा अन्तर्दशा आदि भी निकाली जाती है और विंशोत्तरी, अष्टोत्तरी, योगिनी आदि दशा निकाल कर उनकी अन्तर्दशा विदशा आदि निकाल कर उनका समय निकाला जाता है। इस प्रकार जन्मपत्रिका में अनेक चक्र बनाये जाते हैं।

इन सब विषयों को पृथक रूप से गणित खण्ड में प्रत्येक का उदाहरण देकर पूरी गणित क्रिया देकर पूर्ण रूप से समझाया गया है। जिसमें गणित करने की सम्पूर्ण रीतियाँ भी दी हैं और लग्नसारिणी, दशमसारिणी, दिनमानसारिणी आदि भिन्न सारिणियाँ भी बनाकर उनके बनाने की रीति समझाई गई है, जिसके द्वारा बिना किसी सहायता के विद्यार्थी स्वयं जन्मपत्रिका बना सकेगा।

जब पंचाङ्ग न हो तो अहर्गंग निकाल कर मध्यम ग्रह बनाकर ग्रह स्पष्ट करने की सारिणियाँ और रीति भी उदाहरण सहित दे दी गई हैं, जिससे पत्रिका बनाने का कोई विषय शेष नहीं रह जाता। पूरी जन्मपत्रिका बनाकर फिर उसका फल निकाला जाता है।

अध्याय ४३

फलित सम्बन्धी स्थूल विचार

ज्योतिष सम्बन्धी नियमों को समझाने के पश्चात् पंचाङ्ग का ज्ञान, कुण्डली का निर्माण इत्यादि विषय समझाया जा चुका है। कुण्डली निर्माण के उपरान्त प्रत्येक विद्यार्थी को यह उत्सुकता हृदय में होती है कि अब इसका फल जाने। गणित विषय जितना कठिन व सूक्ष्म है उतना ही कठिन व सूक्ष्म फलित विषय है।

फलित विषय को उत्तमता तथा पूर्ण रूप से जानने के लिए ज्योतिष सम्बन्धी सम्पूर्ण गणित, ग्रहों का समावेश, स्थिति तथा देशकाल आदि सब ही बातों का जानना आवश्यक है। किन्तु जिस प्रकार इस ज्ञान खण्ड में स्थूल मान से ज्योतिष के प्रारम्भिक ज्ञान का प्रदर्शन किया गया है उसी प्रकार से स्थूल मान से फलादेश जानने के कुछ नियमों का उल्लेख आवश्यक समझ कर आगे बताया जायगा। साथ ही साथ गोचर ग्रह, अढैया शनि, साढ़े साती शनि, आयुर्दाय का स्थूल रूप से विचार मारकेश विचार, विंशोत्तरी दशा साधन आदि भी संक्षेप में बताया जायगा, जिससे विद्यार्थी इस ओर रुचि बढ़ा कर उसका अभ्यास कर अनुमान प्राप्त करें।

इन सब का उदाहरण देकर समझाने से पुस्तक का आकार बहुत बढ़ जाता, इस कारण यह सब संक्षिप्त में ही दिया है, क्योंकि इन सब विषयों का पृथक वर्णन फलित खंड में विस्तारपूर्वक होगा।

बहुत लोग शंका करते हैं कि सूर्य की गरमी का प्रभाव एक ही स्थान पर एक ही समय एक सा ही पड़ना चाहिए, परन्तु फलादेश में भिन्न रूप से कैसे कहा जाता है।

इसके समझाने को मध्याह्न के समय भिन्न २ प्रकार की धातुओं के बर्तन में बराबर २ पानी भर कर किसी निश्चित स्थान में निश्चित समय तक रखो। उपरांत देखने से प्रगट होगा कि किसी बर्तन के पानी मे गरमी (टेंपरेचर) अधिक होगी, किसी में कम। मान लो ताबां, लोहा कांसा और पीतल ऐसे ४ प्रकार के भिन्न २ धातुओं के बर्तन में पानी रखा था। देखने से ज्ञात हुआ कि तांबे के बर्तन का पानी अधिक उष्ण होगा, फिर लोहे का, पीतल का और सबसे अल्प उष्णता का प्रभाव

कांसे के बर्तन पर पड़ा। यह भिन्न भिन्न प्रकार की धातुओं के कारण हुआ। जिसमें दाहक शक्ति अधिक होगी उसमें गरमी का प्रभाव शीघ्र पड़ेगा और जिसमें अल्प होगी उसमें अल्प प्रभाव पड़ेगा।

ठीक उसी प्रकार संसार के समस्त जड़ और चैतन्य पदार्थ मनुष्य आदि सब ही पर सब ग्रहों का प्रभाव भिन्न २ रूप से पड़ता रहता है। जिस वस्तु पर प्रभाव पड़ रहा है उसकी स्थिति पात्र के समान समझनी चाहिए।

इस प्रकार जो जिस लग्न और ग्रह स्थिति में और जिस स्थान में उत्पन्न हुआ है उसीके अनुसार उसकी प्रकृति बन जाती है और उसी प्रकृति के अनुसार भिन्न २ मनुष्यों पर भिन्न २ प्रभाव ग्रहों का पड़ता रहता है।

फलादेश कहते समय आगे बताई हुई बातों का विचार करना चाहिए और अपनी कल्पना शक्ति का उपयोग कर भिन्न २ फलों को तौल कर और विचार कर फल कहना चाहिए। और उसका अभ्यास करते-करते अनुभव बढ़ाना चाहिए, क्योंकि अनुभव से ही ज्ञान बढ़ता है।

फलित का स्थूल ज्ञान होने की सामग्री आगे दी है।

फलित का विचार इन रीतियों से किया जाता है:—

१ गोचर से—केवल जन्म राशि पर से पंचाङ्ग में दिये हुए ग्रहों की स्थिति पर से प्रत्येक मास या पक्ष आदि का फल जाना जाता है।

१ जन्म कुण्डली से --जन्म कुण्डली देख कर ग्रहों की स्थिति के अनुसार, ग्रह फल, भाव फल, दृष्टि फल, योग फल आदि का पूर्ण विचार कर फल कहा जाता है।

३ वर्षफल—जन्म कुंडली पर से प्रत्येक वर्ष की, वर्ष कुण्डली बनाकर और उस के भीतर प्रत्येक मास की या यदि आवश्यकता हुई तो प्रत्येक दिन की भी कुण्डली बनाकर वर्ष, मास या प्रतिदिन का फल जाना जा सकता है।

४ प्रश्नकुण्डली—किसी भी समय जब कोई प्रश्नकर्ता किसी विषय पर प्रश्न करता है और उसका उत्तर चाहता है तो उस समय जो लग्न होगी, उस पर से प्रश्न कुण्डली बनाकर उस कुण्डली पर से उस विषय का पूरा निर्णय किया जाता है।

फल का समय—किसी विशेष फल का समय जानने को भिन्न प्रकार की दशाओं का साधन किया जाता है और उस ग्रह की दशा अन्तर्दशा या विदशा किस समय तक रहेगी गणित से निकाला जाता है। जिससे ठीक तिथि फल की जानी जा सकती है।

किसी ग्रह की दशा का जो समय है उसके विभाग करने से अन्तर्दशा का समय निकलता है और अन्तर्दशा के समय का विभाग करने से विदशा का समय निकलता है। इस प्रकार फल का सूक्ष्म समय निकाला जा सकता है।

फल कहने के लिये इन बातों का जानना आवश्यक है

(१) शुद्ध इष्ट काल परसे बनाई हुई कुण्डली।

(२) यह देखना कि कुण्डली में कौन ग्रह किस किस स्थान में हैं।

(३) भाव में जो राशि है उसका स्वामी कौन ग्रह है। अर्थात् ग्रहों का स्वस्थान सबसे पहिले जानना चाहिए।

(४) ग्रहों के उच्च नीच स्थान, मूल त्रिकोण स्थानों का विचार कर देखना कि कोई ग्रह इन अधिकारों में है क्या ?

(५) ग्रहों की नैसर्गिक तात्कालिक और पंचधा मैत्री का विचार कर ग्रहों का परस्पर मैत्री सम्बन्ध देखना।

(६) ग्रह की दृष्टि प्रत्येक ग्रह और भाव पर विचार कर उसका दृष्टि द्वारा सम्बन्ध का विचार करना।

(७) ग्रह गुण धर्म, राशि गुण धर्म और नक्षत्र गुणधर्म पर विचार करना।

(८) ग्रहों के अस्त वक्री मार्गी पर विचार।

(९) भिन्न-भिन्न भाव के पृथक नाम और सामूहिक रूप से उनका नाम जो हो, उनमें ग्रहों का विचार।

(१०) प्रत्येक भाव से क्या क्या विचार किया जा सकता है, इसको जान कर विचारणीय विषय का भाव खोजना।

(११) विचारणीय भाव का स्वामी कौन ग्रह है और किस स्थान में है ? जहां भाव स्वामी है उसके भाव से मैत्री सम्बन्ध का विचार करना।

(१२) विचारणीय भावपर भावेश या और किन ग्रहों की दृष्टि है। इन बातों के विचारने का प्रारम्भिक ज्ञान करा दिया गया है, परन्तु इसके अतिरिक्त फल विचारने के लिए और अनेक बातों को जानने की आवश्यकता है जिनको जानने पर फल कह सकते हैं।

(१) ग्रहों की भिन्न-भिन्न प्रकार की अवस्थाएँ और उनका फल।

(२) ग्रहों के भिन्न-भिन्न राशियों में रहने का फल।

(३) भाव में भिन्न-भिन्न राशियों के रहने का फल।

(४) प्रत्येक भाव के अनुसार प्रत्येक ग्रह का फल।

(५) भाव स्वामी के भिन्न-भिन्न स्थानों में रहने का फल।

(६) ग्रहों की मैत्री के अनुसार फल।

(७) ग्रहों की ग्रहों पर दृष्टि के अनुसार फल।

(८) प्रत्येक भाव पर पृथक पृथक ग्रहों की दृष्टि का फल।

(९) भाव में एक से अधिक ग्रह रहने का पृथक पृथक फल।

(१०) कारक ग्रह, मारक ग्रह, अरिष्ट योग, अरिष्ट भंग योग आदि का ज्ञान।

(११) ग्रहों के विशेष योग—जैसे अल्पायु योग, दीर्घायु योग, मृत्यु योग, राज योग, राजभंग योग, राज दंड योग, धन योग, दारिद्रय योग, अन्धा काना लंगड़ा आदि होने के विशेष योग और नाभस आदि अनेक योगों का विचार कर देखना कि कुण्डली में कौन कौन योग पड़े हैं और उनका क्या फल होता है।

(१२) ग्रह की विशेष परिस्थिति के अनुसार फल का विचार।

(१३) जन्म समय का सम्वत, अयन, ऋतु, मास, पक्ष, दिन आदि अनेक बातों के विचार से भिन्न-भिन्न फल।

(१४) चन्द्र की राशि, नक्षत्र, चरण आदि के विचार के विशेष फल जानना।

(१५) लग्न और लग्नेश के विचार से विशेष फल जानना।

(१६ आयुर्दाय का ज्ञान।

इत्यादि अनेक बातों का विचार कर ग्रह और भाव के बलाबल और परिस्थिति विचार कर देश, काल, आयु, प्रथा आदि पर विचार करते हुए फल कहना पड़ता है। फिर उनकी दशा निकाल कर वह फल होने का समय निश्चित किया जाता है।

फल कहने के लिए विचार—

जिस सम्बन्ध का फल विचार करना है उसके लिये देखो वह फल किस भाव से सम्बन्ध रखता है। जैसे सन्तान का विचार करना है तो पंचम भाव से उसका विचार होगा क्योकि पंचम भाव का नाम सुत भाव है। संतान विचारने के लिए मुख्य भाव तो पंचम है। परन्तु और भी भाव हैं जिनसे संतान का विचार होता है। इस प्रकार देखना कि उस भाव का विचार और कौन कौन भाव से सम्बन्ध रखता है। जिस भाव के सम्बन्ध से विचार करना है उस भाव के सम्बन्ध से इन बातों का विचार करना पड़ता है—

(१) भाव का कितना बल है ?

(२) भाव में कोई ग्रह है या नहीं।

(३) भाव में शुभ या अशुभ ग्रह है।

(४) भाव में लग्नेश है क्या ?

(५) भाव में कोई ग्रह हो तो उस भाव का बलाबल उच्च-नीच आदि अधिकार का विचार।

(६) भावस्थ ग्रह, त्रिकोण, केन्द्र, त्रिक, आदि स्थानों के स्वामी होने का विचार।

(७) भाव में कौन २ ग्रहों की दृष्टि है और द्रष्टा ग्रह कैसा है। .

(८) भाव में अनेक ग्रहों का योग पर विचार।

(९) भाव भावेश युक्त या दृष्ट है ?

(१०) भावस्थ ग्रह और भावेश के योग दृष्टि मैत्री अदि सम्बन्ध का विचार।

(११) भाव, भावस्थ ग्रह और भावेश के सम्बन्ध से विशेष परिस्थिति और विशेष योगों पर विचार।

(१२) भावेशों का परिवर्तन योग (भावेश का परस्पर एक दूसरे के स्थान में होना)।

(१३) भाव के कारण ग्रह की स्थिति और योग दृष्टि मैत्री आदि से भाव से सम्बन्ध होने का विचार।

(१४) आयुर्दाय का विचार कर मारकेश का विचार।

इन सब के विचार करने के प्रथम भावस्थ ग्रह या भावेश की पूरी स्थिति इस प्रकार विचार कर लेनी चाहिए।

(१) भावेश पाप या शुभ या मिश्र ग्रह है।

(२) भावेश वक्री मार्गी अस्त आदि विचार से क्या है ?

(३) भावेश के बलाबल का विचार।

(४) भावेश का उच्च, मूल त्रिकोण स्वगृही आदि अच्छे अधिकार पर विचार।

(५) भावेश का नीच शत्रु-गृही अस्त आदि बुरे अधिकार पर विचार।

(६) भावेश की भिन्न-भिन्न अवस्थाओं पर विचार।

(७) भावेश किसी ग्रह के साथ है या अकेला है।

(८) भावेश का शुभ ग्रह युक्त या दृष्ट होने से अच्छी स्थिति पर विचार।

(९) भावेश का अशुभ ग्रह युक्त या दृष्ट होने से बुरी स्थिति पर विचार।

(१०) भावेश का मित्र ग्रह युक्त या दृष्ट होने से वल प्राप्त करने पर विचार।

(११) भावेश का शत्रु ग्रह युक्त या दृष्ट होने से निर्बलता आने पर विचार।

(१२) भावेश केन्द्र कोण आदि शुभ स्थानों में होने से अच्छी स्थिति पर विचार।

(१३) भावेश त्रिक (६-८-१२) स्थानों में होने या इनके स्वामी होने आदि की बुरी स्थिति पर विचार।

(१४) भावेश का केन्द्र त्रिकोण स्वामियों के साथ रहने से अच्छी स्थिति पर विचार।

(१५) भावेश का त्रिकेश के साथ रहने से बुरी स्थिति पर विचार।

(१६) भावेश के वर्ग के अनुसार शुभ या अशुभ वर्ग में होने का विचार।

(१७) भावेश का नवांश में उच्च-नीच आदि स्थिति में होने पर विचार।

(१८) भावेश शुभ या अशुभ स्थान है।

इत्यादि बातों का विचार कर ग्रहों की और भाव की पूरी स्थिति और सम्बन्ध आदि का विचार कर फल कहना पड़ता है।

अध्याय ४४

फलित विचार करने के लिये संक्षेप में कुछ साधारण नियम

(१) नीच का ग्रह अशुभ होता है जैसे मकर का गुरु।

(२) उच्च का ग्रह (जैसे मेष का सूर्य)=शुभ फल देता है, फल में वृद्धि करता है।

(३) परमोच्च ग्रह (जैसे गुरु कर्क के ५° पर हो तो)=भाव फल उत्तम देता है।

(४) मूल त्रिकोण में ग्रह (जैसे शुक्र १२° पर)=यह उच्च से अधिकार में कुछ कम है, परन्तु उच्च के सदृश ही शुभ फल देता है।

(५) स्वक्षेत्री ग्रह (जैसे मिथुन का बुध)=फल की वृद्धि करता है। शुभ सदृश फल देता है। इसका फल मूल त्रिकोण से कुछ हल्का है।

(६) मित्र क्षेत्री ग्रह (जैसे मेष का सूर्य)=फल वृद्धि करता है, अशुभ फल कम देता है।

(७) अधिमित्र गृही ग्रह=शुभ फल दायक होता है (पंचधा मैत्री के अनुसार अधि मित्र लेना)।

(८) उच्च या मित्र, या वलवान ग्रह से युक्त या दृष्ट ग्रह=शुभ होता है। जैसे मीन का शुक्र उच्च का होता है, यह बुध के साथ चतुर्थ भाव में हो तो बुध अच्छा फल देगा। या बुध चतुर्थ में हो उस पर दसम भाव से उसका मित्र शुक्र पूर्ण दृष्टि से देखता हो तो शुभ है।

(९) सम क्षेत्री ग्रह (जैसे शनि की राशि मकर में बैठा मंगल)=सम फल देता है

(१०) शत्रु क्षेत्री ग्रह=(जैसे बुध चंद्र के स्थान कर्क में हो)=अशुभ और हानि कारक होता है।

(११) ग्रह नीच का होकर शत्रु क्षेत्री भी हो=तो उस भाव का फल नाश करता है। जैसे तुला का नीच सूर्य अपने शत्रु शनि की राशि ११ में बैठा हो।

(१२) मित्र राशि या उच्च राशि में स्थित पाप ग्रह भी=शुभ हो जाता है। जैसे मकर का मंगल जो उच्च का है या सिंह का मंगल अपने मित्र सूर्य के घर का।

(१३) शुभ ग्रह यदि नीच या शत्रु गृही या अस्त हो तो बुरा फल देता है। जैसे नीच मकर का गुरु या शत्रु स्थानी मिथुन का गुरु या अस्त सूर्य के साथ गुरु।

(१४) पाप ग्रह नीच का सब फल नाश करता है जैसे कर्क का मंगल।

(१५) अस्त ग्रह (जो सूर्य के साथ रहने से अस्त हो)=अशुभ है बुरा फल देता है।

(१६) शुभ ग्रह उदय हो (अस्त न हो) और वक्री हो और निर्मल कांति हो अर्थात् देखने में प्रकाशवान दिखे तो अच्छा फल देता है ।

(१७) पाप ग्रह वक्री हो तो अशुभ है !

(१८) पाप ग्रह युक्त या भाव स्वामी के शत्रु से युक्त या दृष्ट ग्रह अनिष्ट फल देता है । जैसे चतुर्थ में वृश्चिक का बुध पाप ग्रह राहु से युक्त हो तो पाप युक्त होने से बुध बुरा हुआ । यदि दशम स्थान में वृष का राहु है जो चतुर्थेश मंगल का शत्रु है तो बुध पर राहु की दृष्टि पड़ने से बुरा फल देगा ।

(१९) शुभ ग्रह जैसे शुभ या अशुभ स्थान में हो उसके शुभ या अशुभ फल को बढ़ाते हैं ।

पाप ग्रह अच्छे और बुरे दोनों प्रकार के फलों को घटाते हैं । इसलिए शुभ ग्रह शुभ स्थान में अति शुभ और अशुभ ग्रह अशुभ स्थान में हो तो उसके अशुभ फल को कम करने के कारण अच्छे होते हैं और अशुभ ग्रह शुभ घर में बैठ कर उसके शुभ प्रभाव को घटाने के कारण हानिकारक होते हैं ।

(२०) शुभ स्थान=१, ४, १०, ५, ९, ११ भाव । सदा अशुभ स्थान=६, ८, १२ अशुभ स्थान=२ और ७ घर मारक स्थान हैं । इनमें अशुभ ग्रह हों तो ये अशुभ होते हैं । परन्तु इनमें शुभ ग्रह हो तो समान भाव हो जाता है ।

सम स्थान=३ भाव (यह न शुभ है और न अशुभ है) ।

(२१) ग्रह जिस स्थान को देखता है उसके बल को बढ़ाता है । यदि भाव स्वामी होकर उस भाव को देखे तो अच्छा फल देता है । जैसे लाभ स्थान में मिथुन का गुरु पंचम भाव अपने स्वस्थान (धन राशि) को पूर्ण दृष्टि से देखता है तो पंचम भाव का फल अच्छा होगा ।

(२२) बुरे भी ग्रह हों परन्तु अच्छे घर में हों जैसे त्रिकोण, केन्द्र या लाभ में तो अच्छा फल देते हैं । जैसे सूर्य पाप ग्रह है परन्तु दशम (केन्द्र) स्थान में अच्छा होता है ।

(२३) शुभ ग्रह केन्द्र या त्रिकोण में हों तो अच्छा फल देते हैं ।

(२४) ग्रह जो ३, ६, ११ या, २, ७, ८ भाव के स्वामी न हों तो शुभ फल देते हैं ।

(२५) ग्रह जो एक दूसरे से १–१२ भाव में या ६-८ घर में हों तो बुरा प्रभाव करते हैं ।

अर्थात् एक ग्रह दूसरे भाव में हो और दूसरा उससे बारहवें भाव में हो तो उसका सम्बन्ध बुरा है । या एक छठे दूसरा वहाँ से आठवें स्थान में हो तो उनका सम्बन्ध बुरा होता है । जैसे लग्न में मंगल है और छठे स्थान में शनि है तो ये एक दूसरे से ६-८ स्थान में हुए । मंगल पूर्ण दृष्टि से शनि को देखता है तो दृष्टि द्वारा सम्बन्ध हो गया यह बुरा है ।

(२६) भाव में पाप ग्रह हों या उन पर शुभ ग्रह की दृष्टि हो तो उस भाव की वृद्धि होती है। जैसे पंचम भाव में शुक्र शुभ ग्रह हो या उसकी दृष्टि हो तो अच्छा है।

(२७) भाव में पाप ग्रह हो या उस पर पाप दृष्टि हो तो बुरा फल देता है। जैसे चतुर्थ में शनि हो उसकी दृष्टि हो तो बुरा है।

(२८) यदि भाव में शुभ और अशुभ ग्रह दोनों हों तो मिश्रित फल होगा। या भाव पर शुभ और अशुभ दोनों की दृष्टि हो तो मिश्रित फल होगा।

(२९) जिस भाव में नीच या शत्रुक्षेत्री ग्रह हों उस भाव की हानि करते हैं। यदि स्वक्षेत्री; मूलत्रिकोण, उच्च के या मित्रक्षेत्री ग्रह हों तो वह भाव शुभ फल देता है।

(३०) भाव, शुभ ग्रह या भावेश युक्त या दृष्ट हो और पापयुक्त या दृष्ट न न हो तो शुभ फल होता है।

यदि पाप युक्त या दृष्ट होने से शुभ फल देने वाले भी बुरे हो जाते हैं। और शुभ युक्त या दृष्ट होने से अशुभ फल देने वाले भी अच्छे हो जाते हैं।

(३१) भाव में, भाव स्वामी के अतिरिक्त यदि शुभ ग्रह अस्त, नीच या शत्रु स्थानी हो तो अच्छा फल नहीं देता।

यदि पाप ग्रह अस्त नीच या शत्रुस्थानी हो तो भाव फल को पूर्ण नाश कर देता है।

(३२) भाव में शुभ स्थान का स्वामी हो या उसकी दृष्टि हो और वह भाव दुष्ट ग्रह या दुष्ट भावेश के साथ न हों या इनकी दृष्टि न हो तो अच्छा फल देता है।

(३३) बुरे या भले भाव किसी ग्रह से युक्त या दृष्ट न हों तो मध्यम फल देते हैं।

(३४) जिस भाव में लग्नेश हो उस भाव की उन्नति होती है।

(३५) भावेश-मित्र गृही, स्वगृही, मूलत्रिकोण या उच्च का हो तो अच्छा फल देता है।

यदि अष्टम में या अस्त या शत्रु या नीच राशि में हो और शुभ ग्रह युक्त या दृष्ट न हो तो भाव फल नाश हो जाता है।

(३६) भावेश, पाप ग्रह भी हो परन्तु नीच, अस्त या शत्रुगृही न हो तो ऐसे भावेश से युक्त या दृष्ट भाव बुरा नहीं होता।

(३७) भावेश अपनी राशि में उच्च का हो परन्तु नवांश में नीच का हो तो अच्छा फल नहीं देता।

इसी प्रकार अपनी नीच राशि में होकर अपने नवांश में उच्च राशि का हो जावे तो अच्छा फल देता है।

जैसे मीन का शुक्र राशि में उच्च का है और अपने नवांश में कन्या राशि का अर्थात् नीच का हो जावे तो अच्छा फल नहीं देगा। यदि राशि में कन्या (नीच) राशि का शुक्र हो परन्तु नवांश में मीन (उच्च) का हो जावे तो अच्छा फल देगा : (नवांश निकालना अन्त में बताया है)।

(३८) भावेश अस्तंगत या नीच का हो तो केन्द्र या त्रिकोण में रहने पर भी शुभ फल विशेष रूप से नहीं देता, अड़चन और कष्ट के उपरान्त फल देता है।

(३९) किसी भाव का फल, पहिले भावेश से विचारना, क्योंकि भावेश, उस भाव का स्वामी है और भावस्थित ग्रह उस भाव रूपी घर का किरायेदार ठहरा। भाव में बैठा शुभ ग्रह उस भाव को बाहरी चमक-दमक अवश्य देता है, परन्तु भावेश के बुरे होने पर भाव से उत्पन्न फल की प्राप्ति में अड़चन होती है। इस कारण भावस्थ ग्रह से भावेश प्रबल है।

(४०) भावेश, लग्न से केन्द्र या त्रिकोण या लाभ में हो तो वह भाव फल की वृद्धि करता है।

(४१) ३, ६, ८ या ११ भाव के स्वामी जिस भाव में हों, बुरे होते हैं। ५ और ९ भाव के स्वामी अच्छे होते हैं।

केन्द्र स्थानों के स्वामी यदि शुभ ग्रह हों तो बुरे फल देते हैं।

केन्द्र स्थानों के स्वामी यदि पाप ग्रह हो तो अच्छे फल देते हैं।

(४२) लग्नेश जिस भावेश के साथ हो उस भाव के फल की वृद्धि करता है, परन्तु लग्नेश यदि अष्टमेश के साथ हो तो उस भाव की हानि करता है। लग्नेश जिस भाव में हो या जिस भाव स्वामी के साथ हो उस भाव का वह फल देगा, परन्तु भाव स्वामी बली हो तब अच्छा फल देगा. यदि बलहीन हो तो दुःख देगा।

(४३) लग्नेश यदि अष्टश मे भी हो जाय तो शुभ समझा जाता है।

(४४) लग्नेश ६, ८, १२ भाव के स्वामियों के साथ हो तो बुरा है। लग्नेश जहाँ है उस भाव का स्वामी ६, ८, १२ भाव में हो तो बुरा है।

(४५) लग्नेश अष्टम में हो परन्तु शुभ दृष्टि हो तो बुरा फल नहीं देता।

(४६) लग्नेश जिस ग्रह से युक्त या दृष्ट है उस ग्रह का स्वस्थान क्या है मालुम करो, लग्नेश के प्रभाव से उसी स्थान के फल में वृद्धि होगी, जैसे नवम स्थान में लग्नेश बुध कुम्भ राशि का है वह चन्द्र से युक्त है, चन्द्र का स्वस्थान कर्क हैं, जो धन भाव में हैं तो बुध लग्नेश के प्रभाव से उस स्थान की वृद्धि होगी।

(४७) जिस भाव या भावेश या ग्रह के एक ओर पाप ग्रह हो और दूसरी ओर शुभ ग्रह हो तो मिश्रित फल देगा। यदि दोनों ओर शुभ ग्रह हैं तो शुभ फल देगा। यदि दोनों ओर पाप ग्रह हैं तो पाप ग्रहों से घिरा रहने के कारण बुरा फल देगा। जैसे तीसरा भाव लो, इसके एक ओर दूसरे भाव में मंगल हो और चौथे भाव में शनि हो तो यह भाव दोनों ओर पाप ग्रहों से घिर जाने के कारण बुरा

है। यदि दूसरे भाव में गुरु है और चौथे भाव में शक्र हो तो यह शुभ ग्रहों से घिरा होने के कारण अच्छा है। यदि दूसरे भाव में शनि और चौथे भाव में गुरु हो तो एक ओर शुभ और दूसरी ओर अशुभ से घिरा होने के कारण मिश्रित फल देगा।

(४८) यदि कोई भाव स्वामी पाप ग्रह हो और तीसरे घर में पड़ जाय तो अच्छा फल देगा। परन्तु शुभ ग्रह तीसरे घर में पड़ जाय तो मध्यम फल देता है।

(४९) त्रिषडाय (३, ६, ११ भाव) ये अशुभ स्थान कहलाते हैं,क्योंकि इनके स्वामी शुभ ग्रह हों तो बुरे होते हैं और पाप ग्रह हों तो शुभ फल देते हैं।

(५०) त्रिक स्थान (६-८-१२ भाव)=दुष्ट स्थान है, शुभ ग्रह त्रिक में उस भाव के फल की हानि करते हैं और पापग्रह उस भाव की वृद्धि की हानि करते हैं।

(५१) किसी भाव का स्वामी त्रिक में हो या त्रिकेश जिस भाव में हो उस भाव के फल का नाश होता है। परन्तु शुभ ग्रह उसे देखता हो तो शुभ हो जाता है। जिस भाव का स्वामी त्रिक में हो वह उस भाव के अच्छे फल को बुरा और बुरे फल को अच्छा करता है।

(५२) कोई भाव स्वामी जिस राशि में हो उस राशि का स्वामी यदि दुष्ट स्थान में हो तो उस भाव की सब बातों में बुरा फल देगा।

(५३) कोई दुष्ट स्थान (त्रिक) का स्वामी अपने स्वस्थान में हो और उसका यदि दूसरा भी स्वस्थान हो जो दुष्ट भाव में पड़ता हो तो वह दुष्ट स्थान का भी स्वामी कहलायगा, परन्तु उस दुष्ट स्थान का फल न देगा, अपने ही स्थान का जहाँ पर वह है, फल देगा। जैसे लाभ स्थान में मेष का मंगल स्वस्थानी है, इसका दूसरा स्वस्थान वृश्चिक छठे घर में पड़ने से यह मंगल षष्टेश भी हुआ, परन्तु उसका हानि कारक फल न देगा, लाभ स्थान का ही फल देगा।

(५४) किसी भाव का स्वामी केन्द्र या त्रिकोण में हो तो अच्छा फल देगा।

(५५) केन्द्र में शुभ ग्रह हो यदि वे केन्द्र स्वामी न हों तो बहुत शुभ होते हैं। क्योंकि केन्द्र स्वामी शुभ ग्रह बुरा फल देता है और पाप ग्रह केन्द्रेश हो तो अच्छा फल देता है।

(५६) यदि पाप ग्रह केन्द्रेश होकर त्रिषडाय पति भी हो तो पाप कारक होते हैं। यदि पाप ग्रह केन्द्रेश होकर त्रिकोणेश भी हों तो शुभ फल देने में बलवान होते हैं।

(५७) चार शुभ ग्रहों में से केन्द्रेश होने पर कौन सब से बुरा है इसका विचार-गुरु शुक्र में विशेष शुभता होने से विशेष बुरे है।

बुध कभी पाप ग्रह के साथ रह जाने से पाप ग्रह हो जाता है, इससे गुरु शुक्र की अपेक्षा बुध में अल्प दोष आता है।

चन्द्रमा ये पूर्ण रहने से शुभ है क्षीण होने से पाप हो जाता है, इससे बुध की अपेक्षा चन्द्र का दोष न्यून होता है। अर्थात् सब शुभ ग्रहों में चन्द्रमा में बहुत कम बुरा फल होता है।

(५८) त्रिकोण में लग्न भी ली जाती है।

पंचम नवम भाव में चाहे शुभ या अशुभ ग्रह हों शुभ फल देते हैं।

(५९) उच्च का ग्रह त्रिकोण में बहुत अच्छा होता है, परन्तु नीच का ग्रह त्रिकोण में बुरा फल देता है।

(६०) केन्द्र स्वामी का शुभ फल का परिणाम परिश्रम से होता है। परन्तु त्रिकोण में बुरा फल देता है।

(६१) केन्द्रेश या त्रिकोणेश यदि त्रिक स्थान में हो तो अपने सम्बन्ध वाले भाव में अशुभ प्रभाव डालते हैं।

(६२) कोई भावेश अपने भाव से केन्द्र या त्रिकोण में पड़े तो शुभ फल देता है। जैसे तृतीयेश बुध, तीसरे भाव से केन्द्र (सप्तम) में पड़े अर्थात तीसरे भाव से सातवाँ, नवम भाव आया तो यदि नवम भाव में तृतीयेश बुध पड़े तो शुभ फल देगा।

(६३) यदि केन्द्रेश त्रिकोणेश के साथ हो तो अच्छा है। यदि दूसरे त्रिकोण के स्वामी से भी योग या दृष्टि द्वारा सम्बन्धित हो तो बहुत अच्छा फल देता है। जैसे वृष लग्न है, चतुर्थ में सिंह का सूर्य और बुध हैं तो केन्द्रेश सूर्य है, त्रिकोणेश (पंचमेष) बुध का यहाँ साथ हो गया। तब दूसरा त्रिकोणेश (नवमेश) शनि है, यदि वह दशम स्थान में स्वस्थानी है, चतुर्थ के ग्रहों को देखता है तो अच्छा है।

(६४) द्विर्द्वादश भाव (१-१२ भाव) विचार।

धनेश और व्ययेश अपने स्वभाव अनुसार फल नहीं देते। ये जिस शुभ या अशुभ घर में रहते हैं या जिस शुभ या अशुभ भावेश के साथ रहते हैं या जिस स्थान के वे स्वामी हैं वहाँ जैसी शुभ या अशुभ राशि हो उसीके अनुसार शुभ या अशुभ फल देते हैं। अर्थात २ और १२ भाव के स्वामियों का स्वतः का कोई विशेष गुण दोष नहीं है, उनके गुण दोष विचारने को देखो कि इन भावेश की राशि का स्वामी किस भाव में है ये किस ग्रह के साथ है और ये भावेश किस भाव में पड़े हैं। इन तीनों रीति से इनका गुण दोष विचारना। अर्थात २-१२ भाव के स्वामी शुभस्थान में या शुभ युक्त हो तो शुभ हैं। यदि अशुभ स्थान (६-८-१२ भाव) में या अशुभ युक्त हों तो अशुभ हैं।

(६५) छठा भाव यह ऋण रोग शत्रु का मुख्य स्थान है, यदि पाप ग्रह इसमें हो तो उस भाव के बुरे फल को नष्ट करेगा अर्थात इनके नाश होने से वह सुखी होगा। यदि शुभ ग्रह हो तो इनको बढ़ने नहीं देंगा, परन्तु अधिक लाभ नहीं कर सकते। यदि छठे भाव का स्वामीअ पने घर षष्ठ में हो तो अच्छा समझा जाता है।

(६६) अष्टम भाव में सूर्य चन्द्रमा बलवांन नहीं होते, परन्तु ये अष्टमेश हों तो अच्छे समझे जाते हैं। और अष्टमेश यदि लग्नेश भी हो तो वह अच्छा समझा जाता है।

अष्टमेश अशुभ है परन्तु यह त्रिकोणेश भी हो तो शुभ है। अष्टमेश त्रिषडाय का भी स्वामी हो तो अशुभ कारक है। अष्टम में शुभ ग्रह हो तो अशुभता कम हो जाती है और कुछ शुभ भी हो जाता है। जिस भाव में अष्टमेश हो उस भाव का नाश हो जाता है।

(६७) व्ययेश व्यय भाव में हो तो शुभ समझा जाता है।

(६८) पाप ग्रह १, ८, १२ भाव में बुरा फल करते हैं। क्षीण चन्द्र १, ६, ८, १२ भाव में अशुभ है। पाप ग्रह ३, ६, ११ भाव में अच्छे हैं। शुभ ग्रह सब स्थानों में अच्छा फल देते हैं। गुरु शुक्र सदा शुभ हैं चाहे वे नीच के हों या ऐसों के साथ हों। परन्तु बुरी परिस्थिति में रहने के कारण उनकी भलाई करने की शक्ति घट जाती है।

व्ययेश के विचार से स्थानों के स्वामियों की अच्छाई बुराई का विचार–

किसी भी भाव के व्ययेश से उस भाव के स्वामी की स्थिति पर विचार।

१ लग्नेश—यह धन भाव का व्ययेश हुआ, धन अपने तन की रक्षा के लिए व्यय कराने में, लग्नेश शुभ हुआ।

२ द्वितीयेश—यह तृतीय भाव का व्ययेश हुआ। तृतीय भाव सहज पराक्रम और आयु का स्थान है। इस कारण इसके व्यय कारण होने से द्वितीयेश अशुभ और मारक कहलाता है।

३ तृतीयेश—यह चतुर्थ का व्ययेश हुआ। चतुर्थ से सुख आदि का विचार होता है। इससे तृतीयेश यह सुख का व्ययकारक होने से अशुभ होता है।

४ चतुर्थेश—यह पंचम का व्ययेश हुआ। पंचम विद्या का स्थान है यदि वह पापी होकर विद्या का नाश करता है तो उचित ही है। यदि शुभ होकर विद्या का नाश करता है तो अनुचित है। इस कारण चतुर्थेश शुभ हो तो अशुभ और पाप ग्रह हो तो शुभ कारक कहा जाता है।

५ पंचमेश—यह षष्ठ भाव का व्ययेश हुआ। षष्ठ रोग, शत्रु आदि का स्थान है, उसका नाशक पंचमेश हुआ। इससे पंचमेश अच्छा कहा जाता है।

६ षष्ठेश—यह सप्तम स्थान का व्ययेश हुआ। इस कारण सप्तम स्त्री का नाशक षष्ठेश हुआ।

७ सप्तमेश—अष्टम का व्ययेश हुआ। अष्टम आयु का स्थान है जिसका नाशक सप्तमेश हुआ, जिससे सप्तमेश मारक कहलाया।

८ अष्टमेश—यह नवम का व्ययेश हुआ। नवम भाग्य का स्थान है, जिसका व्ययकारक होने से अष्टमेश अशुभ हुआ।

९ नवमेश—यह दशम भाव का व्ययेश है। दशम कर्म स्थान अर्थात् संसार का बन्धन है। इस कारण सांसारिक बन्धन अर्थात कर्म का व्यय करने वाला होने के कारण नवमेश शुभ हुआ।

१० दशमेश—यह लाभ स्थान का व्ययेश है। लाभ का व्यय अर्थात हानिकारक होने से यह अशुभ कहलाता है।

दशमेश पाप ग्रह होकर अशुभत्व के फल का नाशक होने से शुभ समझा जाता है और शुभ ग्रह अशुभ बढ़ाने के कारण बुरा समझा जाता है।

११ लाभेश—यह व्यय का व्ययेश हुआ। व्यय का नाश करता है। खर्च नहीं होने देने के कारण बुरा है, क्योंकि पैसा रहने पर भी व्यय नहीं करने दे तो आवश्यक सामग्री अन्न वस्त्र आदि प्राप्त करना कठिन हो जायगा। इससे लाभेश अशुभ कहा गया है।

१२ व्ययेश—यह लग्न का व्ययेश है। लग्न शरीर है उसका व्ययकारक होने से यह अशुभ हुआ।

इससे प्रगट हुआ कि—

त्रिषडाय—(३-६-११) भाव के स्वामी पापकारक होते हैं।

त्रिकोण—(५-९) भाव के स्वामी शुभ कारक होते हैं।

केन्द्र के स्वामी—शुभ हों तो अशुभकारक होते हैं। और पाप हों तो शुभकारक होते हैं।

२-८-१२ भाव के स्वामी—अपने साथी और स्थान आदि के अनुसार फल देते हैं। २ और ७ भाव–मारक स्थान हैं–इनके स्वामी मारकेश कहलाते हैं।



अध्याय ४५

गोचर विचार

गो का अर्थ है तारा (नक्षत्र या ग्रह) और चर अर्थात चलना। सूर्यादि नवग्रह प्रतिदिन दैनिक गति के प्रमाण से भ्रमण करते हैं, जिनकी साप्ताहिक या दैनिक स्थिति पंचांग मे दी रहती है।

इन्हीं ग्रहों की गति के अनुसार भिन्न भिन्न समय में भिन्न राशियों पर ग्रह सदा चलते रहते हैं और उस भ्रमण से जो प्रभाव भिन्न राशियों पर पड़ता है उसे गोचर फल कहते हैं।

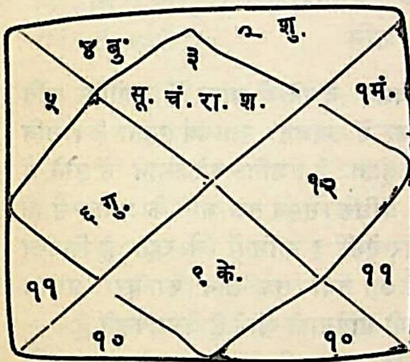
गोचर के अनुसार ग्रह का फल जानने की यह रीति है कि जन्म समय के चन्द्र की जो अपनी राशि हो, उसको प्रथम स्थान मान कर उसपर से प्रत्येक स्थान के फल का क्रमानुसार विचार होता है। उसी जन्म राशि को प्रथम स्थान मान कर उसपर प्रत्येक ग्रह का स्थान गिनकर जानना चाहिए। जैसे किसी की कुम्भ राशि है तो जब

कभी गोचर फल देखना हो तो पचांग में जो कुण्डली ग्रहस्थिति के अनुसार दी रहती है उस कुण्डली में जहाँ कुम्भ राशि दी हो उसे पहिला स्थान माने और उसके आगे के स्थानों की क्रमानुसार गणना करो। तन धन आदि द्वादश स्थान लग्न-कुण्डली में जैसे गिनते हैं उसी प्रकार यहाँ भी पहिले स्थान को तन स्थान समझ कर स्थानों की गणना करना।

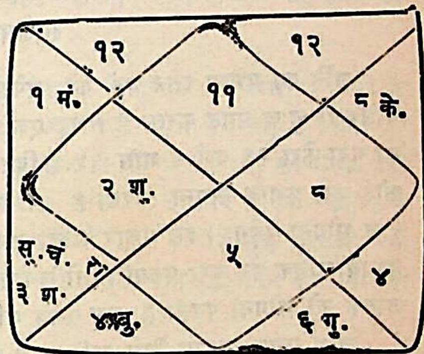
उदाहरण के लिए सम्वत् २००२ आषाढ़ कृष्ण अमावस्या की कुंडली पंचांग से ली। जन्म राशि कुम्भ का विचार करना है।

जन्म समय चन्द्र कुंभ राशि का था, इस कारण राशि कुंभ कहलाई। पंचांग की कुण्डली को घुमाकर इस प्रकार रखो कि अपनी राशि लग्न स्थान पर आ जावे।

पंचांग में दी हुई कुण्डली



अपनी गोचर कुण्डली



कुम्भ राशि को लग्न स्थान में लिख कर शेष राशियां क्रमानुसार बांई ओर से लिख कर उसमें वे ही ग्रह स्थापित कर दो जो पंचांग की कुंडली में दिये हैं, तो अपनी गोचर कुंडली बन जायगी, जैसा यहां बताया है। जिस राशि पर जो ग्रह पंचांग की कुंडली में दिये रहते हैं उसी के अनुसार गोचर कुंडली में रहते हैं, केवल अन्तर यही रहता है कि पंचांग में सूर्य जिस राशि पर रहता है वह लग्न के स्थान में सबसे ऊपर दिया रहता है, अपनी गोचर कुंडली में लग्न स्थान पर अपनी राशि रहती है। अपनी इसी गोचर कुण्डली पर से फल का विचार करना पड़ता है।

अपनी कुण्डली में मेष का मंगल तीसरे स्थान में है और वृष का शुक्र चौथे स्थान में है। पंचम में मिथुन का सूर्य चन्द्र शनि और राहु हैं। षष्ठ में कर्क का बुध, अष्टम में कन्या का गुरु और लाभ स्थान में धन का केतु है। बस, इसी के अनुसार फल का विचार करना पड़ेगा।

गोचर फल विचारने का चक्र प्रत्येक पंचांग में दिया रहता है उससे देख लेना। इसका पूरा फल विचारना पृथक फलित खण्ड में दिया जायगा।

जन्म राशि और जन्म लग्न में क्या अन्तर है ध्यान में रखना चाहिए। जन्म समय जो राशि पूर्व में उदय हो रही है वह जन्म लग्न है और जन्म समय चन्द्रमा जिस राशि में रहता है वह राशि जन्मराशि कहलाती है। यहाँ गोचर फल जन्मराशि से विचार किया जाता है।

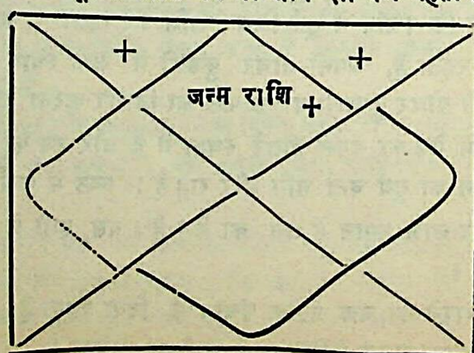
अध्याय ४६

शनि का विशेष विचार

साढ़ेसाती शनि

शनि का प्रभाव इतर ग्रहों को अपेक्षा विशेष देखने में आता है, क्योंकि शनि अधिकतर दुःख प्रगट करता है। यह एक राशि में लगभग २॥ वर्ष रहता है। शनि का पूरा फेरा २९ वर्ष ५ मास १५.६ दिन में होता है। शनि बुरे स्थान में होने से कोई बुरा प्रभाव उत्पन्न करता है तो सबसे अधिक समय तक शनि के प्रभाव से ही दुःख भोगना पड़ेगा। इस प्रकार शनि लगातार ऐसी ३ राशियों में रहता है जिनका प्रभाव जातक पर बुरा पड़ता है तो लगातार ७॥ वर्षो तक शनि का बुरा प्रभाव जातक को भोगना पड़ता है. उस समय शनि की साढ़ेसाती आई है ऐसा कहते हैं।

जन्म समय चन्द्रमा जिस राशि पर हो वह जन्मराशि कहलाती है। जब शनि अपनी जन्म राशि के समीप की राशि पर आता है तो वह पीड़ा देना आरम्भ करता है। यह राशि जन्मराशि से बारहवीं होती है। वहाँ २॥ वर्ष शनि रहता है। फिर आगे चल कर शनि जब जन्मराशि में आता है तो यहां भी २॥ वर्ष रहता है। उपरान्त जन्म राशि से दूसरी राशि पर भी शनि २॥ वर्ष रहता है।



इस प्रकार जब लगातार ३ अशुभ स्थानों में शनि ७॥ वर्ष रहता है तब इसी को साढ़ेसाती कहते हैं। इस कुण्डली में जहाँ-जहां पर शनि रहने से अशुभ स्थान शनि का माना गया है वहाँ + चिह्न देकर समझाया गया है। जब शनि की साढ़ेसाती होती है तो इस साढ़ेसाती में अशुभ फल होता है।

जिस राशि के जितने अंश पर जन्म समय चन्द्र रहता है उस राशि के समीप बारहवें स्थान पर जब शनि का प्रवेश होता है तो साढ़ेसाती का आरम्भ होता है, और शनि नेत्र पर आया है ऐसा कहते हैं। शनि जब जन्मराशि और उसके अंश पर आ[illegible] है तो साढ़ेसाती का मध्य भाग होता है उस समय शनि उदर में आया कहते हैं जन्म राशि के आगे के (दूसरे) स्थान में अंश के बराबर शनि आता है तो साढ़ेसातं अन्त्य भाग में प्रवेश हुआ है या शनि चरणों में आया है ऐसा कहते हैं। इस प्रकार जन्मराशि से बारहवाँ, पहिला और दूसरा स्थान तक शनि रहने के काल को शनि की साढ़ेसाती कहते हैं।

इस काल में नाना प्रकार के कष्ट और भिन्न२ मनुष्यों को जन्म कुण्डली के अनुसार शनि के प्रभाव से भिन्न२ प्रकार की आपत्तियाँ आती हैं। इस में किसी की मृत्यु होती है, किसी के माता पिता का मरण होता है, किसी की स्त्री की मृत्यु होती है, किसी का घर जलता है, किसी की जीविका जाती है इत्यादि अनेक प्रकार के संकटमय प्रसंग आते हैं। परन्तु विशेष परिस्थिति में यह कभी२ शुभ फल भी देता है। जब शनि की अशुभ साढ़ेसाती हो तो लोहे की अंगूठी पहिरना, शनि की उपासना करना, जप दान आदि करना चाहिए।

किसी को भी साढ़ेसाती आने पर फिर ३० वर्ष में साढ़ेसाती आती है। एक मनुष्य को ३ बार से अधिक साढ़ेसाती नहीं आती। चौथी साढ़ेसाती लाखों में विरला मनुष्य भोगता है।

शनि की साढ़ेसाती का शुभाशुभ जो फल मिलता है नीचे चक्र में बताया है कि किस राशि वाले को किस प्रकार पीडा आदि देता है।

राशि समय और प्रभाव	राशि समय और प्रभाव
१ मेष बीच के २॥ वर्ष अनिष्ट	७ तुला अंत के २॥ वर्ष अनिष्ट
२ वृष आरंभ के २॥ वर्ष अनिष्ट	८ वृश्चिक पहिले २॥ वर्ष अच्छे शेष अनिष्ट
३ मिथुन अन्तके ,, ,,	९ धन अंत के २॥ अच्छे शेष अनिष्ट
४ कर्क पहिले २॥ वर्ष अच्छे शेष अनिष्ट	१० मकर २॥ वर्ष किंचित् अनिष्ट
५ सिंह अन्त के २॥ श्रेष्ठ शेष अनिष्ट	११ कुंभ सब अच्छा
६ कन्या पहिले २॥ वर्ष अनिष्ट	१२ मीन अंत के २॥ वर्ष अनिष्ट

मतान्तर—कोई कहते है धन के पूर्ण ७॥ वर्ष अनिष्ट, मकर के पहिले ५ वर्ष और कुंभ के पहिले २॥ वर्ष अनिष्ट कारक होते है।

विशेष अनुभव से यह सिद्ध हुआ है कि साढ़े साती का शुभाशुभ फल जातक के जन्म शनि के ऊपर निर्भर है।

जब शनि जन्म राशि से

१२ वें स्थान में आता है तो=शरीर कष्ट, अधिक खर्च, व्यापार में अड़चन, धन की हानि और शरीर नेत्र में पीड़ा करता है।

जन्म स्थान में आता है तो—उदर विकार, जमीन-सम्पत्ति तथा पशु-वाहन की हानि, अधिकारियों से मनमुटाव और अपयश करता है।

दूसरे स्थान में आता है तो=निरर्थक आज्ञा, कुटुम्ब तथा शत्रु विरोध, कुटुम्ब वियोग, राजमार्ग में झंझट उपस्थित हो।

शनि का स्वस्थान मकर और कुम्भ है। जब शनि अपने स्वस्थान या उच्च स्थान पर आता है तो जन्मकुण्डली की स्थिति के अनुसार वह जातक को लाभ भी करता है।

अढैया का चरण विचार—

जब शनि जन्मराशि से चतुर्थ या अष्टम स्थान में होता है तो उसे अढैया शनि कहते हैं। इसमें भी शनि कष्ट देता है, जिसका फल इस प्रकार होता है :—

चतुर्थ में-शरीर तथा माता पिता को कष्ट, राज मार्ग से चिंता, सम्पत्ति सम्बन्धी झंझटें, धन खर्च।

अष्टम में शरीर व शत्रु भय, मानसिक चिन्ता और धन का अपव्यय।

शनि का चरण विचार—

शनि जब एक राशि छोड़ कर दूसरी राशि में जावे उस समय देखो शनि अपनी जन्म राशि से कितने स्थान में है, उसके अनुसार निम्नलिखित फल का विचार करना।

१–६–११ स्थान में हो तो=सुवर्णपाद=फल=सौख्य फल।
२–५–९ ,, ,, =रजत पाद=फल=हर्ष काम फलप्रद।
३–७–१० ,, ,, =ताम्र पाद=फल=मध्यम फल प्रद।
४–८–१२ ,, ,, लोह पाद =फल दुःख दारिद्रय दायक।



अध्याय ४७

आयुर्दाय

आयु के ३ भेद हैं। (१) अल्पायु, (२) मध्यायु, (३) दीर्घायु।
साधारण प्रकार से आयु का विचार लग्नेश और अष्टमेश से होता है।

	दीर्घायु			मध्यमायु			अल्पायु		
आयु	(८० से १२० वर्ष तक)			(४० से ८० वर्ष तक)			(३० से ४० वर्ष तक)		
लग्नेश	चर	स्थिर	द्विस्वभाव	चर	स्थिर	द्विस्वभाव	चर	स्थिर	द्विस्वभाव
अष्टमेश	चर	द्विस्व०	स्थिर	स्थिर	चर	द्विस्व०	द्विस्व०	स्थिर	चर

स्पष्टीकरण

(१) दीर्घायु—लग्नेश अष्टमेश दोनों चर राशि में हों या एक स्थिर दूसरा द्विस्वभाव राशि में हो।

(२) मध्यमायु—लग्नेश अष्टमेश में से एक चर दूसरा स्थिर में या दोनों द्विस्वभाव में हों।

(३) अल्पायु—लग्नेश अष्टमेश मे मे एक चर दूसरा द्विस्वभाव मे हो या दोनों स्थिर राशि मे हों।

१ इस प्रकार राशि जिसमें लग्नेश (लग्न स्वामी) और अष्टमेश (अष्टम स्थान का स्वामी) हो, विचारना कि वह राशि चर स्थिर या द्विस्वभाव है। उस पर से ऊपर बताये चक्र के अनुसार आयु का विचार करना यह पहली रीति हुई।

२ इसी प्रकार दूसरी रीति यह है कि लग्न या सप्तम भाव में चन्द्र हो तो लग्न और चन्द्र से विचार करना। यदि वहाँ चन्द्र न हो तो शनि और चन्द्र से ऊपर बताये अनुसार आयु का विचार करना।

३ तीसरा प्रकार यह है कि लग्नेश और अष्टमेश की तरह लग्न और होरा लग्न से भी ऊपर बताये अनुसार विचार करना अर्थात् चर आदि उस राशि की संज्ञा का विचार कर आयु का विचार करना।

इस प्रकार तीनों बताई हुई रीति से या २ प्रकार की रीति से जो आयु प्राप्त हो नीचे चक्र के अनुसार आयु का विचार करना।

आयु	दीर्घायु			मध्यमायु			अल्पायु		
आयु वर्ष	१२०	१०८	१३	८०	७२	६४	४०	३६	३८
कितने प्रकार से आई हुई आयु	३	२	१	६	२	१	१	२	६

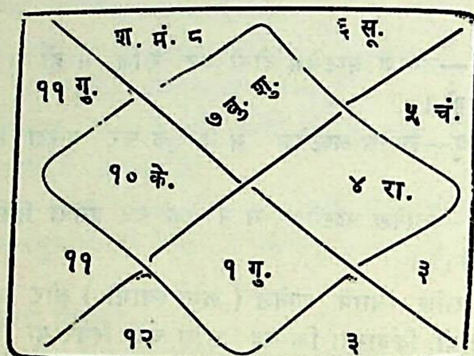
जैसे दीर्घायु ३ प्रकार से आने पर १२० वर्ष, २ प्रकार से १०८ वर्ष केवल एक प्रकार से ९६ वर्ष। इसी प्रकार ऊपर चक्र के अनुसार आयु का विचार करना।

इसके आगे और भी गणित द्वारा आयु स्पष्ट की जाती है। यहाँ केवल प्रारंभिक ज्ञान के लिये दिया है। पूरी आयु निकालना व लग्न और होरा लग्न गणित द्वारा निकालना गणित खण्ड में दिया है : सूक्ष्म रूप से आयुर्दाय गणित करने से ही निकलता है। आरंभ में विद्यार्थी को सबसे ऊपर बताये हुए स्थूल प्रकार से आयु निकाल कर संतोष भर लेना चाहिए। जैसे

(१) यह महात्मा गांधी जी की कुंडली है।

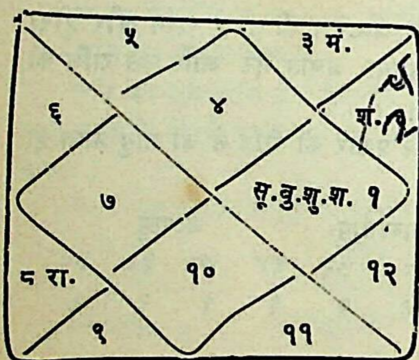
(१) यहाँ लग्नेश शुक्र लग्न में तुला राशि का है तुला चर लग्न है (२) और अष्ट मेश भी शुक्र होने से चर लग्न में हुआ, दोनों चर आने पर दीर्घायु हुई।

(१) दीर्घायु योग

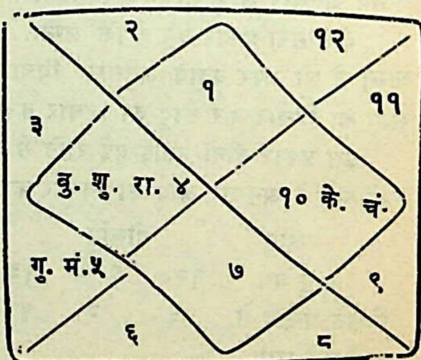


(२) में लग्नेश चन्द्र वृष राशि में है जो स्थिर राशि है। अष्टमेश शनि मेष चर राशि में हैं। एक चर दूसरा स्थिर होने से मध्यमायु हुई।

(२) मध्यमायु योग



(३) अल्पायु योग



(३) लग्न मेष है लग्नेश मंगल हुआ। यह मंगल सिंह राशि में है जो स्थिर राशि है। अष्टम भाव में वृश्चिक राशि का स्वामी मंगल अष्टमेश हुआ। यह मंगल स्थिर राशि सिंह में है। दोनों स्थिर राशि में होने से अल्पायु हुई।

अध्याय ४८

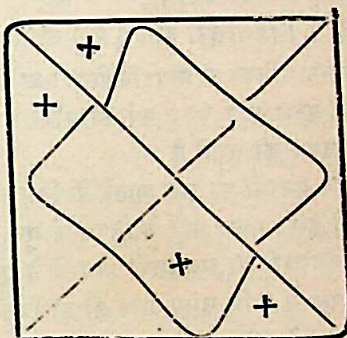
मारक स्थान और मारकेश विचार

जन्म कुण्डली में विशेष स्थान जिस से मृत्यु होने का विचार होता है उसे मारक स्थान कहते हैं। मारक स्थान का स्वामी मारकेश कहलाता है।

ज्योतिष में मृत्यु शब्द का अर्थ विस्तीर्ण है।

यहाँ मृत्यु शब्द में=व्यथा, दुःख, भय, लज्जा, रोग, शोक, मरण तथा अपमान भी सम्मिलित हैं।

मारक स्थान।



(१) लग्न से अष्टम स्थान और अष्टम से अष्टम स्थान अर्थात् तीसरा स्थान।

इन दोनों का व्यय स्थान (बारहवाँ स्थान अर्थात् अष्टम, का व्यय स्थान सप्तम हुआ और तीसरे का व्यय स्थान दूसरा भाव हुआ। अर्थात् दूसरा तीसरा सप्तम और अष्टम स्थान, कुंडली में जहाँ + चिह्न हैं, मारक स्थान कहलाते हैं। इन चारों में द्वितीय और सप्तम मुख्य और बलवान मारक स्थान है। इन मारक स्थानों के स्वामी मारकेश कहलाते हैं।

मारकेश विचार (संक्षिप्त में)

कुण्डली में अल्प, मध्य, पूर्ण आयु के विचार के उपरांत मारकेश का विचार करना चाहिए।

(१) शनि और केतु की महामारक संज्ञा है। ये मारकेश होते हैं तो अति अनिष्ट प्रभाव पहुँचाते हैं।

(२) सूर्य और चन्द्र को छोड़ कर शेष सब ग्रह, राहु केतु भी मारक स्थान के स्वामी होने पर मारकेश होते हैं।

(३) चन्द्र जब बुरे स्थान में हो तो उसकी अंतर्दशा में भी मृत्यु हो जाती है।

(४) शनि जब पाप ग्रह के साथ हो तो मारकेश होने पर सब ग्रहों को दबा कर मृत्यु कारक होता है।

(५) मारकेश की मुख्य दशा व मारक स्थान में स्थित क्रूर ग्रह की अंतर्दशा में या पाप ग्रह की महादशा में जब पाप ग्रह का अन्तर (अन्तर्दशा) हो तो मृत्यु होती है।

(६) बलवान ग्रह की दशा में जब वह मारकेश होता है तो मृत्युतुल्य कष्ट, रोग, भय, शोक, अग्नि भय, चोर भय, आदि दुःखद प्रभाव उत्पन्न करता है।

अध्याय ४६

दशासाधन

ग्रहों का जो फल होता है उस फल की प्राप्ति का समय जानने को दशा साधन करना पड़ता है।

दशा कई प्रकार की हैं परन्तु उनमें साधारण प्रकार से मुख्य ३ दशाएँ उपयोग में आती हैं। इतर दशाओं के साधन में कुछ गणित करना पड़ता है और कहीं कहीं अधिक गणित करना पड़ता है, इस कारण उनको यहाँ छोड़ देते हैं। गणित खंड में उनका वर्णन होगा।

३ प्रकार की दशा।

(१) विंशोत्तरी दशा (२) अष्टोत्तरी दशा (३) योगिनी दशा।

जन्म पत्रिका में प्रायः विंशोत्तरी या अष्टोत्तरी दशा निकाली जाती है। विंशोत्तरी दशा में परम आयु १२० वर्ष की और अष्टोत्तरी दशा में १०८ वर्ष की मान कर दशां साधन की जाती है।

इन दशाओं का फल जानने के लिये जैसा ग्रह का फल होगा वैसा फल उसकी दशा में होगा। उन ग्रहों के विषय में गुण दोष अच्छी तरह जान लेना चाहिये।

विंशोत्तरी या अष्टोत्तरी दशा में से एक कोई दशा कासाधन करना चाहिये। यदि शुक्ल पक्ष में रात्रि समय जन्म हो तो विंशोत्तरी दशा और कृष्णपक्ष में दिन का जन्म हो तो अष्टोत्तरी दशा लेनी चाहिए।

शुक्ल पक्ष में दिन के समय या कृष्ण पक्ष में रात्रि के समय जन्म हो तो योगिनी दशा साधन करना चाहिए। परन्तु बहुधा ज्योतिषी लोग विंशोत्तरी और योगिनीदशा दोनों साधन करते हैं। अष्टोत्तरी दशा अधिकतर दक्षिण तथा गुजरात में प्रचलित है। मुख्य दशा होने के कारण यहाँ केवल विंशोत्तरी दशा निकालना बतलाते हैं।

विंशोत्तरी दशा साधन

विंशोत्तरी दशा में परम आयु १२० वर्ष की मानी गई है। जिस नक्षत्र में अपना जन्म हुआ हो उस नक्षत्र के विचार से ग्रह की आरम्भ दशा निकाली जाती है।

इस दशा मे ग्रहों की दशा का क्रम और वर्ष एवम् उनके नक्षत्र नीचे चक्र में वताये गये हैं। कृत्तिका को आदि नक्षत्र मान कर एक एक नक्षत्र मे एक एक ग्रह भोगता है। इस प्रकार ९ ग्रह २७ नक्षत्र भोगने से प्रत्येक ग्रह को ३-३ नक्षत्र मिलते हैं।

विंशोत्तरी महादशा चक्र

क्रम	१	२	३	४	५	६	७	८	९
ग्रह	आदित्य (सूर्य)	चंद्र	कुज (मंगल)	राहु	जीव (गुरु)	शनि	बुध	केतु	शुक्र

संकेत अक्षर	आ०	चं०	कु०	रा०	जी०	श०	बु०	के०	शु०
वर्ष	६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२०
चंद्र नक्षत्र	कृतिका	रोहिणी	मृग.	आर्द्रा	पुन.	पुष्य	आश्ले.	मघा	पू. फा.
	उ. फा.	हस्त	चित्रा	स्वाती	विशा.	अनु.	ज्ये.	मूल.	पू. षा.
	उ. षा.	श्रवण	धनि.	शत.	पू.भा.	उ.भा.	रेवती	अश्वि.	भरणी.

ग्रहों का क्रम ऊपर दिये संकेताक्षर से पंडित लोग स्मरण रखते हैं।

ग्रह की दशा निकालना—

कृत्तिका नक्षत्र से अपने जन्म नक्षत्र तक गिनने में जो संख्या आवे उसमें ९ का भाग दो। जो शेष बचे आ० चं० कु०रा०जी० श० बु० के० शु० इस प्रकार क्रम पूर्वक गिनो जो ग्रह आवे उस ग्रह की महादशा में जन्म हुआ ऐसा जानना।

जैसे आर्द्रा नक्षत्र में जन्म हुआ है तो कृत्तिका से आर्द्रा तक गिना ४ संख्या हुई। यह संख्या ९ से अधिक होती तो ९ का भाग देते, शेष ४ ही रहा। आ० १ चं० २ कु० ३ रा० ४ गिनने से चौथी राहु की महादशा आई।

ऊपर चक्र दिया है, उसमें गिनने की आवश्यकता नहीं है। जन्म नक्षत्र आर्द्रा के ऊपर क्रम का ४ दिया है, नीचे राहु लिखा है और नीचे १८ वर्ष लिखे हैं। इससे प्रगट हुआ कि राहु की महादशा में जन्म हुआ है और यह महादशा १८वर्ष रहती है।

आर्द्रा नक्षत्र कुछ भुक्त हो चुका होगा उसी अनुपात से राहु के वर्ष भी भुक्त हो गये होंगे। जन्म नक्षत्र कितना भुक्त हो चुका है और कितना भोगने को शेष है और पूरा नक्षत्र कितने घड़ी पल का है जान कर उसी अनुपात से दशा के भुक्त वर्ष निकाले जाते हैं।

(भयात × महादशा वर्ष) ÷ भभोग=भुक्त वर्ष मास दिन आदि।

(महादशा वर्ष—भुक्त वर्ष) = भोग्य वर्ष महादशा के (गणित आगे दिया है)

अंतर्दशा

महादशा का समय बहुत बड़ा रहता है। उससे सूक्ष्म समय निकालने को अंतर्दशा निकालनी पड़ती है। अंतर्दशा से भी सूक्ष्म समय प्रत्यंतर दशा में और उससे भी सूक्ष्म समय विदशा साधन करने से निकलता है। यह सब गणित खंड में दिया है। यहाँ केवल अंतर्दशा निकालना बतलाते हैं।

जिस ग्रह की महादशा में अंतर्दशा निकालनी हो तो पहिले उस ग्रह की अंतर्दशा होगी जिसकी महादशा है। उसके उपरान्त उसके आगे क्रमानुसार जो ग्रह चक्र में दिये हैं उनकी अंतर्दशा होगी।

अंतर्दशा के ग्रहों के वर्ष निकालने के लिये अंतर्दशा में जो ग्रह पड़ा है उस के वर्ष और महादशा के वर्ष की संख्या गुणा कर=$\frac{१२०}{१२}$=१० का भाग दो तो अंतर्दशा के मास दिन आदि की संख्या निकल आवेगी। १२ मास से अधिक हों तो १२ का भाग देकर वर्ष बना लो। १० का भाग देने से जो बच रहे उसमें ३ का गुणा कर देने से

दिन की संख्या आ जायेगी। जैसे सूर्य वर्ष ६ है। सूर्य को महादशा में पहिले सूर्य ही की अंतर्दशा होगी।

अंतर्दशा सूर्य वर्य ६ + महादशा सूर्य वर्ष ६ = ६ × ६ = ३६ ÷ १० = ३ मास १८ दिन। ३६ में १० का भाग दिया तो लब्धि ३ के ३ मास हुए, शेष ६ × ३ = १८ दिन हुए। इसी प्रकार सब ग्रहों की अन्तंदशा निकाली जाती है। यहाँ पहिले सूर्य में सूर्य की अन्तंदंशा हुई। इसके आगे चन्द्र, फिर मंगल की इत्यादि क्रमानुसार अन्तंदशा होगी। सब अन्यर्दशाओं के वर्ष का योग, महादशा की वर्ष संख्या के बराबर होता है। आगे प्रत्येक ग्रहों के अन्तंदशा का चक्र और उसका वर्ष आदि दिया है।

विंशोत्तरी अन्तर्दशा चक्र—

सूर्य की अन्तर्दंशा				चन्द्र की अन्तर्दंक्श				मंगल की अन्तर्दंशा				राहु की अन्तर्दंशा				गुरु की अन्तर्दंशा			
ग्रह	व.	मा.	दि.	ग्रह	व.	मा,	दि.	ग्रह	व.	मा.	दि.	ग्रह	व.	मा.	दि.	ग्रह	व.	मा.	दि.
सूर्य	०	३	१८	चन्द्र	०	१०	०	मं.	०	४	२७	राहु	२	८	१२	गुरु	२	१	१८
चन्द्र	०	६	०	मं.	०	७	०	राहु	१	०	१८	गुरु	२	४	२४	शनि	२	६	१२
मं.	०	४	६	राहु	१	६	०	गुरु	०	११	६	शनि	२	१०	६	बुध	२	३	६
राहु	०	१०	२४	गुरु	१	४	०	शनि	१	१	९	बुध	२	६	१८	केतु	०	११	६
गुरु	०	९	१८	शनि	१	७	०	बुध	०	११	२७	केतु	१	०	१८	शुक्र	२	८	०
शनि	०	११	१२	बुध	१	५	०	केतु	०	४	२७	शुक्र	३	०	०	सूर्य	०	९	१८
बुध	०	१०	६	केतु	०	७	०	शुक्र	१	९	०	सूर्य	०	१०	२४	चन्द्र	१	४	०
केतु	०	४	६	शुक्र	१	८	०	सूर्य	०	४	६	चन्द्र	१	६	०	मं.	०	११	६
शुक्र	१	०	०	सूर्य	०	६	०	चन्द्र	०	७	०	मं.	१	०	१८	राहु	२	४	२४
योग	६	०	०	योग	१०	०	०	योग	७	०	०	योग	१८	०	०	योग	१६	०	०

शनि की अन्तर्दंशा				बुध की अन्तर्दंशा				केतु की अन्तर्दंशा				शुक्र की अन्तर्दंशा			
ग्रह	वर्ष	मा.	दि.	ग्रह	वर्ष	मा.	दि.	ग्रह	वर्ष	मा.	दि.	ग्रह	वर्ष	मा.	दि.
शनि	३	०	३	बुध	२	४	२७	केतु	०	४	२७	शुक्र	३	४	०
बुध	१	८	९	केतु	०	११	२७	शुक्र	२	१	०	सूर्य	१	०	०
केतु	१	१	९	शुक्र	१	२०	०	सूर्य	०	४	६	चन्द्र	१	८	०
शुक्र	३	२	०	सूर्य	०	१०	६	चन्द्र	०	७	०	मं.	१	२	०
सूर्य	०	११	१२	चन्द्र	१	५	०	मं.	०	४	२७	राहु	३	०	०
चन्द्र	१	७	०	मं.	०	११	२७	राहु	१	०	१८	गुरु	२	८	०
मं.	१	१	९	राहु	२	६	१८	गुरु	०	११	६	शनि	३	२	०
राहु	१	१०	६	गुरु	२	३	६	शनि	१	१	९	बुध	२	१०	०
गुरु	२	१	१२	शनि	२	८	९	बुध	०	११	२७	केतु	१	२	०
योग	१९	०	०	योग	१७	०	०	योग	७	०	०	योग	२०	०	०

दशा साधन और दशा का समय निकालने का उदाहरण

जिसकी जन्म कुण्डली में विंशोत्तरी दशा निकालनी है उसके लिये जन्म नक्षत्र का भयात और भभोग निकालना चाहिए।

(देखो कुण्डली बनाने का गणित)

मान लो सम्वत् १९९५ इष्ट कालीन सूर्य कन्या के गतांश १५ (५ रा १५°) (यहाँ सूर्य स्पष्ट ठीक नहीं मालुम है केवल राशि अंश मालुम हैं। इस कारण कला विकला को छोड़ कर सूर्य के केवल राशि अंश लिया है)।

जन्म नक्षत्र पूर्वाषाढ़ा भयात (भुक्त घड़ी) ४८ घ. १२ प, भभोग (पूर्ण नक्षत्र) ६६ घ. १२ प. है। इसका विंशोत्तरी मत से दशा साधन करना है।

विंशोत्तरी दशा चक्र में पू. षा. जन्म नक्षत्र से शुक्र की महादशा होती है। इसके पूर्ण वर्ष २० हैं तो शुक्र की महादशा में जन्म हुआ है ऐसा कहेंगे। शुक्र के २० वर्ष में कितने वर्ष भुक्त हो चुके हैं और कितने वर्ष भोगने को रहे हैं गणित से निकालते हैं।

(भयात × महादशा वर्ष) ४८ घ. १२ प. × २० वर्ष=२८९२ प. × २० वर्ष=५७८४०
———————————=——— ————————=———————————
भभोग ६६—१२ ३९७२ पल ३९७२

घड़ी के पल बनाये

४८ घ. १२ प. × ६० = २८८० + १२ = २८९२ पल भयात

६६ घ. १२ प. × ६० = ३९६० + १२ = ३९७२ पल भभोग

३९७२)५७८४०(१४ वर्ष
३९७२
१८१२०
१५८८८
२२३२
× १२ मास
३९७२)२६७८४(६ मास
२३८३२
२९५२
× ३० दिन

३९७२)८८५६०(२२ दिन
७९४४
९१२०
७९४४
११७६

=१४ वर्ष ६ मा. २२ दिन भुक्त व.

शुक्र वर्ष-मास-दिन
पूर्ण वर्ष—२०, ० ०
भुक्त वर्ष—१४ ६ २२
[शेष ५ ५ ८ भोग्य वर्ष

शुक्र की महादशा शुक्र के वर्ष. मा. दि. और भोगने को रही।
५ ५ ८

विंशोत्तरी दशा चक्र

ग्रह	वर्ष	मास	दिन
शुक्र	५	५	८
सूर्य	६	०	०
चंद्र	१०	०	०
मंगल	७	०	०
राहु	१८	०	०
गुरु	१६	०	०
शनि	१९	०	०
बुध	१७	०	०
केतु	७	०	०

अंतर्दशा साधन

शुक्र की महादशा केवल ५ व० ५ मा० ८ दि० भोगने को शेष रही है। अब इसमें देखना है, शुक्र के अन्तर्गत कौन ग्रह की अन्तर्दशा भोगने को रही है। शुक्र महादशा की अन्तर्दशा के वर्ष उलटे क्रम से घटाते जाना चाहिए। अर्थात् अन्त की अन्तर्दशा के वर्ष घटने पर और शेष रहे तो उसके पहिले जो ग्रह हो उस की दशा घटाना, इसी प्रकार जब तक घटते जावे उलटे क्रम से घटाते जाना चाहिए। जो शेष रहे वहाँ से अन्तर्दशा का समय गिनना चाहिए। शुक्र की अन्तर्दशा में इस प्रकार वर्ष हैं।

देखो अंतर्दशा चक्र—

ग्रह	वर्ष	मास
१ शुक्र	३	४
२ सूर्य	१	०
३ चंद्र	१	८
४ मंगल	१	२
५ राहु	३	०
६ गुरु	२	८
७ शनि	३	२
८ बुध	२	१०
९ केतु	१	२
योग	२०	०

	व०	मा०	दि०	
शुक्र भोग्य वर्ष	५	५	८	
—९ अंत का केतु	१	२	०	घटाया
शेष	४	३	८	
—८ बुध	२	१०	०	घटाया
शेष	१	५	८	
—७ शनि	३	२	०	नहीं घटा

यहाँ उलटे क्रम से अन्तर्दशा के वर्ष घटाना आरम्भ किया। केतु और बुध के वर्ष घट गये, शनि के वर्ष नहीं घटे। इससे प्रगट हुआ कि शनि की अन्तर्दशा में जन्म हुआ था और शनि की अन्तर्दशा १ व० ५ मा० ८ दि० भोगने को शेष रह गई है।

इसी के अनुसार अन्तर्दशा चक्र बनाया।

शुक्र महादशा की अंतर्दशा

ग्रह	वर्ष	मास	दिन
शनि	१	५	८
बुध	२	१०	०
केतु	१	२	०
योग	५	५	८

इसके आगे सूर्य की महादशा आरम्भ होगी। उसके अन्तर्दशा वर्ष, चक्र के अनुसार ही उद्धृत कर देना और आगे महादशाओं की अन्तर्दशा भी चक्र के अनुसार स्थापित करना।

महादशा और अन्तर्दशा का समय निकालना

जन्म सम्वत् और जन्म समय का सूर्य स्पष्ट लो और इसमें ग्रह की महादशा या अन्तर्दशा के वर्ष मास दिन आदि इसमें जोड़ते जाना तो दशा का समय (जब तक वह दशा रहेगी) निकल आयगा। जोड़ने के लिए सम्वत् में वर्ष, सूर्य की राशि में मास, अंश में दिन, कला में घड़ी और सूर्य की विकला में दशा के पल जोड़ना।

सम्वत्=वर्ष

सूर्यराशि=मास

सूर्य अंश=दिन

सूर्य कला=घड़ी

सूर्य विकला=पल

इसका उदाहरण देकर नीचे समझाया है।

महादशा चक्र बनाकर उसमें जन्म का सम्वत् और जन्म समय का सूर्य स्पष्ट राशि अंश कला विकला जोड़ना पड़ता है।

उदाहरण में सूर्य स्पष्ट नहीं निकाला। सूर्य की केवल राशि अंश ज्ञात है, इससे केवल राशि अंश लिया है। कला विकला ज्ञात न होने से छोड़ दिया है।

	सम्वत्	सूर्यराशि	अंश
जन्म समय	१९९५	५	१५
शुक्र महादशा वर्ष	५	५	८
=तक शुक्र=	२०००	१०	२३
+सूर्य महा. के	६	०	०
तक सूर्य=	२००६	१०	२३
+चन्द्र महा. के	१०	०	०
तक चन्द्र=	२०१६	१०	२३

	२०१६	१०	२३
+मंगल महा के	७	०	०
तक मंगल =	२०२३	१०	२३
+राहु महा. के	१८	०	०
तक राहु=	२०४१	१०	२३
+गुरु म. के	१६	०	०
तक गुरु=	२०५७	१०	२३
+ शनि म. के	१९	०	०
तक शनि	२०७६	१०	२३
+बुध. के	१७	०	०
तक बुध=	२०९३	१०	२३
+केतु के	७	०	०
तक केतु	२१००	१०	२३

अन्तर्दशा चक्र

	सम्वत् सूर्य राशि, अंश
जन्म समय	१९९५—५—१५
+शनि की अन्तर्दशा	१—५— ८
तक शनि=	१९९६—१०–२३
+बुध की	२—१०—०
तक बुध=	१९९९—८—२३
+केतु	१—२— ०
तक केतु=	२०००—१०–२३

इस प्रकार शुक्र की महादशा में अन्तर्दशा वर्ण हुए।

अंश जोड़ते समय ३० अंश से अधिक होने पर राशि में एक वढ़ा दो और राशि जोड़ते समय १२ से अधिक हो तो वर्ष में एक बढ़ा देना।

इस प्रकार जोड़ कर महादशा या अन्तर्दशा का समय निकाल लेना। अब इन सबको इस प्रकार चक्र बनाकर लिखेंगे।

साधन किया हुआ महादशा चक्र

ग्रह	वर्ष	मास	दिन	सम्वत्	सूर्य की रा.	अंश	
				१९९५	५	१५	जन्म
शुक्र	५	५	८	२०००	१०	२३	तक
सूर्य	६	०	०	२००६	१०	२३	,,
चन्द्र	१०	०	०	२००६	११	२३	,,
मं०	७	०	०	२०२३	१०	२३	,,
राहु	१८	०	०	२०४१	१०	२३	,,
गुरु	१६	०	०	२०५७	१०	२३	,,
शनि	१९	०	०	२०७६	१०	२३	,,
बुध	१७	०	०	२०९३	१०	२३	,,
केतु	७	०	*	२१००	१०	२३	,,

शुक्र की अन्तर्दशा का चक्र

ग्रह	वर्ष	मास	दि.	सम्वत्	सूर्य की रा.	अंश	
				१९९५	५	१५	जन्म
शनि	१	५	८	१९९६	१०	२३	तक
बुध	२	१०	०	१९९९	८	२३	,,
केतु	१	२	०	२०००	१०	२३	,,

इसके आगे सूर्य की अन्तर्दशा के वर्ष इसमें जोड़ते जाओ तो सूर्य की अन्तर्दशा का चक्र बन जायगा। आगे चन्द्र, मंगल, राहु आदि की अन्तर्दशा इसी प्रकार निकाल लो। चक्र से प्रगट होगा कि इतने सम्वत् में जब सूर्य उतने राशि अंश पर आयेगा तब तक वह दशा रहेगी। जैसे शुक्र महादशा सम्वत् २००० में सूर्य जब १० राशि २३ अंश पर आयगा उस समय तक रहेगी। इसी प्रकार और भी ग्रहों की दशा या अन्तर्दशा के विषय में समझना।

सूर्य की कौन राशि किस चान्द्र मास में पड़ती है पहिले बता चुके हैं, उसके अनुसार उस सम्वत् का मास जान सकते हो। मोटे हिसाब से सूर्य १ दिन में १ अंश चलता है। इस हिसाब से जितने अंश हों उतने दिन जान लो। यदि पंचांग पास हो तो पंचांग देख कर उस समय की तारीख निकाल लो, जिससे प्रगट हो कि किस तारीख से किस तारीख तक कौन ग्रह की दशा रहेगी। जैसे कन्या राशि का सूर्य है तो कुआँर में कन्या राशि आती है। इसी प्रकार समय का अनुमान कर लेना।

●

अध्याय ५०

कार्य सिद्ध योग

जब यह जानना है कि कोई विशेष कार्य सिद्ध होगा या नहीं, तो उस समय घड़ी देखकर लग्न निकाल कर उस समय के ग्रह पंचांग से देखकर कुंडली बना लो। यही प्रश्न कुण्डली हुई। इसी पर से किसी प्रश्न का विचार करना पड़ता है। जिस प्रश्न का विचार करना हो वह प्रश्न किस भाव से सम्बन्ध रखता है, खोजो। जैसे किसी ने स्त्री सम्बन्ध का प्रश्न किया तो यह सप्तम भाव से सम्बन्ध रखता है, इस कारण सप्तम भाव कार्य स्थान कहलाया। कार्य भाव का स्वामी कार्येश कहलाता है। मान लो सप्तम स्थान में वृष राशि है तो वृष का स्वामी शुक्र होता है। इस कारण कार्येश यहाँ शुक्र हुआ। फिर लग्नेश कार्येश और उनकी दृष्टि आदि सम्बन्ध से निम्न रीति से प्रश्न का विचार करो।

(१) लग्नेश, कार्येश लग्न में हो।

(२) लग्नेश कार्येश दोनों कार्य स्थान में हों।

(३) लग्नेश कार्य स्थान में हो और कार्येश लग्न स्थान में हो।

(४) किसी स्थान में लग्नेश, कार्येश साथ हों!

(५) लग्नेश लग्न में कार्येश कार्य स्थान में हो।

(६) लग्नेश कार्येश कहीं हों परन्तु उनकी दृष्टि हो।

(७) लग्नेश कार्येश अपने अपने उच्च या स्वगृह के हों।

इनमें से किसी योग के होने पर कार्य सिद्ध होगा और इनमें से कोई योग न हो तो कार्य सिद्ध नहीं होगा :

कार्य सिद्धि समय

(१) चन्द्र की दृष्टि और योग से जो समय आवे उस समय में या अब लग्नेश या कार्येश का मिलाप हो पंचांग देख कर समय का विचार करना ।

(२) प्रश्न काल में जो लग्न हो और वर्तमान में ज़ो लग्न का उदित नवांश हो और उसका जो ग्रह नवांश स्वामी हो उनके अनुसार समय की अवधि जानना ।

ग्रह	रवि	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
अवधि	अयन (६ मास)	क्षण	दिन	ऋतु	मास	पक्ष	वर्ष

कार्य सिद्ध कितने मास अयन क्षण या कितने दिन में होगा जानने को लग्न के उदित अंश देखना, जितने अंश पर हो, उतनी ही संख्या कहना ।

अध्याय ५१

नवांश ज्ञान

किसी राशि के ९ सम विभाग करो तो एक विभाग को नवांश कहते हैं । ३०°/९ = ३°—२०=का १ नवांश हुआ । किसी राशि के आरम्भ होने से अन्त होने तक, इस प्रकार ९ नवांश पूरे हो जाते हैं ।

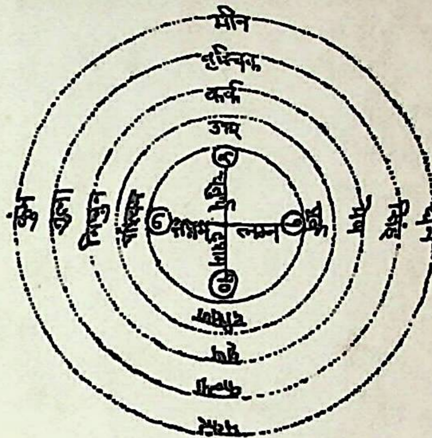
अब यह जानने को कि किस राशि में पहिले कौन नवांश उदय होता है, राशियों की दिशाओं पर ध्यान दो । जिस राशि की जो दिशा है उसका जो भाव है स्मरण रखो तो राशि के आरम्भ नवांश का पता लग जायगा ।

(१) यहाँ लग्न की दिशा पूर्व है जिसकी राशियां १, ५, ९ हैं तो लग्नभाव १ होने से इन राशियों का नवांश मेष से आरम्भ होगा ।

(२) उसके बाद दशम की दिशा दक्षिण है जिसकी राशियां २, ६, १० हैं, तो ये राशियाँ दशम भाव १० की होने से, इनमें १० राशि का नवांश पहिले उदय होगा ।

(३) इसके बाद सप्तम की पश्चिम दिशा की राशियां ३, ७, ११ हैं तो ये राशियाँ सप्तम भाव ७ की होने से ७ राशि से इनका नवांश आरम्भ होगा ।

(४) उपरान्त चतुर्थ की उत्तर दिशा होने से इनकी राशियों ४, ८, १२ का



चि०—८८

दिशाओं की राशियाँ और भाव

नवांश ४ राशि से आरम्भ होगा, क्योंकि ये चतुर्थभाव उत्तर की राशियाँ हैं। (देखो चित्र संख्या ८८)

आरम्भ की उदित नवांश (आरम्भ का नवांश) की राशियाँ ऊपर बता चुके हैं। इनके आगे क्रमशः आगे की राशियों का उदय होगा। यहाँ नवांश चक्र देते हैं जिससे नवांश समझ लेना।

(राशियों की दिशायें राशि गुण धर्म चक्र में दे चुके हैं)

सचित्र ज्योतिष-शिक्षा

बी० एल० ठाकुर

ज्योतिष के अधिकतर ग्रन्थ संस्कृत में ही हैं। किन्तु संस्कृत से अनभिज्ञ व्यक्तियों के लिए इस माध्यम से विषय का अध्ययन कठिन है। इसलिए हिन्दी में एक ऐसी पुस्तक की आवश्यकता थी, जिसके माध्यम से कोई भी व्यक्ति ज्योतिष का सरलता से अध्ययन कर सके।...

इस प्रयोजन को ध्यान में रखकर ही प्रस्तुत पुस्तक सात खण्डों में प्रकाशित की गई है। ये सात खण्ड प्रारम्भिक ज्ञान, गणित, फलित, वर्ष-फल, प्रश्न मुहूर्त्त तथा संहिता खण्ड हैं।

प्रारम्भिक ज्ञान खण्डः इस खण्ड के अध्ययन से ज्योतिष-सम्बन्धी बहुत-सी बातें समझ में आ जाती हैं, जैसे किसी का जन्म का सम्वत्, मास, पक्ष, दिन, समय आदि ज्ञात न हो, तो केवल कुण्डली-चक्र देखकर सभी बातें बताई जा सकती हैं। बिना पंचाङ्ग [illegible] नक्षत्र, करण, वार, सूर्य, चन्द्र आदि स्पष्ट बताए जा सकते हैं। केवल इसी भाग [illegible] से संक्षिप्त जन्म-पत्रिका बनाई जा सकती है। अन्त में फलित-सम्बन्धी मुख्य [illegible] संक्षेप में बताई गई हैं।

गणित खण्डः इसके दो भाग हैं। इसमें पूरी जन्मपत्री बनाने की विधि है। प्रत्येक ग[illegible] की सोदाहरण रीति देकर पूरी गणित-प्रक्रिया दी गई है।

प्रथम भागः १००; द्वितीय भागः [illegible]

फलित खण्डः प्रथम भागः इसमें फलित-सम्बन्धी बातें दी गई हैं और महापुरुषों की कुण्डलियों से उदाहरण देकर समझाया गया है। ८५

द्वितीय भागः इसमें ग्रहों की दृष्टि, योग, वर्ग, स्थान आदि ज्योतिष के आवश्यक विषयों पर सूक्ष्म विवेचन किया गया है। (अ) ८५; (स) १४०

तृतीय भागः इसमें विस्तृत दशा-विचार के साथ भाग्य, धर्म, कीर्ति, विद्या, बुद्धि, सुख-दुःख आदि विषयों पर विचार प्रकट किया गया है, माता-पिता, भाई-बन्धु आदि सम्बन्धों पर ग्रह-प्रभाव का ज्ञान प्राप्त करने के लिए इस ग्रन्थ की उपादेयता अनुपम है। ९५

वर्ष-फल खण्डः इसमें वर्ष-फल बनाने का पूरा गणित उदाहरण देकर समझाया गया है। ४५

प्रश्न-खण्डः इसमें प्रश्न-ज्योतिष सम्बन्धी बातें दी गई हैं और किसी प्रश्न का उत्तर देने का अभ्यास उदाहरण देकर समझाया गया है। ४०

मुहूर्त्त-खण्डः इसमें मुहूर्त-सम्बन्धी सम्पूर्ण जानकारी उपलब्ध है। शुभाशुभ मूहूर्त्तों का विवरण दिया गया है। ६०

संहिता-खण्डः इसमें राष्ट्रीय ज्योतिष-सम्बन्धी विषयों पर विस्तार से विचार किया गया है। अनुकूल अथवा प्रतिकूल परिस्थितियों के अनुसार देश या नगर की राशि स्थिर करने के प्रकार बताए गए हैं। किसी भी देश के भविष्य की जानकारी के लिए ज्योतिर्विद् इस खण्ड का सफल उपयोग कर सकते हैं। भविष्यवाणी में प्राच्य और पाश्चात्य दोनों रीतियों का सुविशद व सारगर्भित वर्णन है। ६५

मोतीलाल बनारसीदास

दिल्ली वाराणसी पटना बंगलौर मद्रास

मूल्यः रू० ६५